और बापूजीमें धैर्य भी कितना था? मनुष्यका स्वयं अपने अपुर जितना विश्वास हो अुससे कहीं अधिक विश्वास बापूजी अुस पर करते थे। हर व्यक्तिकी कमजोर श्रद्धाको वे मजबूत बनाते थे और अन्तमें मनुष्यकी सामान्य शक्तिसे अधिक काम सहज ही अुससे करा लेते थे।

गांधीजीके सार्वजनिक लेख और भाषण देशके सामने है और जो लोग गांधी-साहित्यका महत्त्व समझते हैं अुन्हें अब अुस साहित्यका गहरा अध्ययन करनेका मौका भी मिला है। लेकिन गांधीजीका पत्र-साहित्य अुनके भाषणों और लेखोंसे कम नहीं है; कम महत्त्वका तो वह है ही नहीं। वहां अुनकी लेखन-शैली भी बिलकुल अनोखी होती है। किसी व्यक्तिकी रग-रगको पहचानकर अुसे तालीम देने, अुसका मार्गदर्शन करने, अुसे सभालने और आश्वासन या प्रेरणा देनेका काम करनेमें वे कभी थकते ही नहीं थे। अेक ही बातको अुन्हीं शब्दोंमें बार-बार कहनेमें वे अुकताते नहीं थे। जैसे दो व्यक्तियोंके बीच यह होड लगी हो कि किसमें धैर्य ज्यादा है! अेक शिक्षकसे किसीने पूछा, "तुम अेक ही चीजको बीस बीस दफा, बार बार क्यों समझाते हो?" शिक्षकने अपने स्वधर्म-सुलभ धैर्यके साथ कहा, "अिसलिअे कि अुन्नीस बार कही हुअी बात बेकार न जाय।"

हमारे पास बहनोंको लिखे गये बापूजीके पत्रोंके कुछ संग्रह हैं और अुनसे भी ज्यादा भविष्यमें प्रकाशित होंगे। अुन सबमें कुछ बातें तो समान रूपसे दिखाअी देंगी, क्योंकि मनुष्य सब जगह अेकसा ही रहता है। और फिर भी प्रत्येक व्यक्तिके साथ किये गये पत्र-व्यवहारमें बापूजीका मार्ग अलग अलग दिखाअी देता है। अुनके सम्पर्कमें आअी हुअी विदेशी महिलाओंमें से दो महिलाओंको लिखे गये पत्र हमारे पास हैं —मीराबहनको लिखे गये पत्र और अेस्थर फेरिंगको लिखे गये पत्र। कुमारी फेरिंगने बादमें विवाह कर लिया और श्रीमती मेनन बन गअीं। अेक मिशनरी बालिका भारतमें आकर अीसाके प्रेमका प्रचार करने लगती है, स्वयं अेक भारतीय युवकके प्रेममें पडती है और भिन्न वंशके लोगोंके बीचमें होनेवाले विवाहकी दिक्कतोंको महसूस करती है।

जिसमें अीसाअी धर्मका प्रश्न, सरकारी नीतिका प्रश्न, दोनों ओरके कुटुम्बोंका प्रश्न और सबसे ज्यादा अलग अलग धर्मोंको माननेवालोंके आध्यात्मिक प्रश्न — ये सब प्रश्न अुस भोली बालिकाके सामने खड़े होते हैं और वह अीसा मसीह जितनी ही श्रद्धा बापूजी पर रख कर अुनसे आश्वासन प्राप्त करना चाहती है। अुसे लिखे गये पत्र अलग प्रकारके हैं और मीराबहनको लिखे गये पत्र अलग प्रकारके।

स्वदेशियोंमें भी पटियाला तरफकी अेक अूंचे मुस्लिम खानदानकी कुमारी अम्तुस्सलाम गांधीजीकी धर्मनिष्ठासे आकर्षित होकर अुनके पास आती हैं। पवित्र कुरानके प्रति अुनकी निष्ठा, अुज्ज्वल देशभक्ति और अुनकी तेजस्विताको देखकर गांधीजी अुनको रास्ता दिखाते हैं। अुनको लिखे गये पत्रोंका सारा संग्रह दूसरे ही प्रकारका है। अेक अत्यंत सत्कारी वृद्ध पुरुषको स्वेच्छासे पतिके रूपमें पसन्द करनेवाली और अुनके कार्यमें शत-प्रतिशत ओतप्रोत होनेवाली श्रीमती कुसुमबहन देसाअी, विधवा होनेके बाद, आश्वासनके लिअे बापूजीके पास आती हैं, पूज्य बाका हृदय जीत लेती हैं, लेकिन आश्रमका - अंग बनकर नहीं रहना चाहतीं — अिन कुसुमबहनको लिखे गये पत्र भिन्न प्रकारके हैं। कुसुमबहनकी सारी शक्ति अुनकी पतिनिष्ठामें प्रगट होती है। अुस निष्ठाको प्रोत्साहन देकर अुसीके द्वारा बापूजी अुन्हें समाज-सेवा करने और अपनी अुन्नति करनेकी प्रेरणा देते हैं।

बिहारके नेता व्रजबाबूकी पुत्री और समाजसत्तावादी जयप्रकाश-नारायणकी पत्नी प्रभावतीबहन तो गांधीजीकी विशेष पुत्री रही हैं। अुनकी कोमल वृत्तिको संभालनेके लिअे गांधीजीने कितनी सावधानी बरती है!

बापूजीने भारतमें आकर अपना काम शुरू किया और राष्ट्र-सेविकाके रूपमें अुनकी नजर श्रीमती सरलादेवी चौधरी पर पड़ी। अिस शक्तिशाली गर्वीली स्त्रीको तालीम देनेका बापूजीका सारा तरीका अलग था। जब कि सब प्रकारसे तैयार होनेके बाद गांधीकार्य करनेके लिअे अपने

पास आओी हुओी राजकुमारी अमृतकौरसे काम लेनेकी बापूजीकी पद्धति अलग थी।

भोली भक्तिसे बापूजीके पास आश्वासन और प्रेरणा लेनेके लिअे आओी हुओी बुजुर्ग गंगाबहनको लिखे गये पत्र अेक प्रकारके हैं; तो कॉलेजकी आधुनिक शिक्षा प्राप्त करके अपनी चर्चा-परायणता और हृदयकी निष्ठा दोनोंको बापूजीके चरणोंमें अर्पित करनेवाली प्रेमाबहनको लिखे गये पत्र दूसरे प्रकारके हैं।

अेक अेक व्यक्तिको लिखे गये गांधीजीके पत्रोंका सग्रह गांधीजीका व्यक्तित्व समझनेके लिअे बहुत अुपयोगी है। अिसलिअे कुमारी प्रेमाबहन कंटकसे मैंने कहा कि अिन पत्रोंको समझानेके लिअे पहले वे थोड़ा अपने बारेमें लिख दें और स्वयं बापूजीके प्रति और अुनके कामके प्रति कैसे आकर्षित हुआ यह भी लिख दें।

बीस साल तक अखंड रूपसे चलनेवाले अिस पत्र-व्यवहारके दिनोंमें बापूजीके जीवनमें जो अनेक परिवर्तन हुअे और अुनके (प्रेमाबहनके) अपने जीवनमें भी जो परिवर्तन हुअे अुनका प्रतिबिंब अिन पत्रोंमें कैसे पड़ता है, यह समझानेके लिअे बीच बीचमें छोटी प्रस्तावना और टिप्पणियां कड़ीके रूपमें देने और बापूजीके चले जानेके बाद अुनका काम आगे बढ़ानेमें अुन्हें स्वयं जो अनुभव हुअे वे अनुभव देकर सारी पुस्तक पूरी करनेकी बात मैंने प्रेमाबहनसे कही।

*

अनेक पहाड़ों, प्रदेशों और तरह तरहकी भूरचनाओंमें से पानीके प्रवाह आकर जिस तरह गंगा, सिंधु, ब्रह्मपुत्र, नर्मदा या कृष्णा जैसी नदियोंमें मिलते हैं, अुसी तरह भिन्न भिन्न प्रकारके संस्कारोंसे जिनका व्यक्तित्व बना था अैसे स्त्री-पुरुष गांधीजीसे आकर मिले और अुन्होंने गांधी-कार्यमें अपना अपना हिस्सा अदा किया। जिसमें प्रेमाबहनका हिस्सा तर्कप्रधान किन्तु श्रद्धाघन महाराष्ट्रका हिस्सा माना जायगा। आखिरी दो-तीन पीढ़ियोंमें जो लोग महाराष्ट्रके वातावरणमें छोटेसे बड़े हुअे

अुन सब पर शिवाजी, रामदास, ज्ञानेश्वर और तुकाराम आदि लोकोत्तर विभूतियोंका असर पड़ा मालूम होता है। देशकी आजादी और आध्यात्मिक अुन्नति — अिन दोनों अुत्कट भावनाओंका मेल अिन पीढ़ियोंमें देखनेको मिलेगा। अिन दोनों भावनाओंके लिअे घरबारका त्याग करके, संसार-सुखको तिलांजलि देकर कोअी अद्भुत काम (something tremendous) करनेकी धुनके दर्शन अिन सबमें कम-ज्यादा मात्रामें होते हैं। माताकी अिच्छाका आदर करके विवाहके लिअे तैयार हुअे युवक नारायण पुरोहितोंके मुंहसे 'सुमुहूर्ते सावधान' की चेतावनी सुनते ही चौंककर विवाह-मंडपसे भाग गये और १२ वर्ष तक तपस्या करके समर्थ रामदास बने — यह प्रसंग प्रत्येक महाराष्ट्रीके हृदयमें बसा हुआ है। श्री रामदास स्वामीने छत्रपति शिवाजीकी मदद की और अध्यात्म तथा राजनीतिका समन्वय किया, यह श्रद्धा महाराष्ट्रके हृदयमें दृढ़ है। श्रीकृष्ण और अर्जुन, शिवाजी और रामदास, विद्यारण्य और विजयनगरके राजा — अिस प्रकारकी जोड़ियां ढूंढ़ निकालनेमें महाराष्ट्रको बहुत रस आता है। चन्द्रगुप्तका राजगुरु महामात्य चाणक्य मुख्यतः वैराग्यशील तपस्वी ब्राह्मण था। अुसने अपना राजनीतिक मिशन सफल बनानेके लिअे चाहे जितने दांवपेंच किये हों, लेकिन अन्तमें अपने शत्रु अमात्य राक्षसको ही समझा-बुझाकर चन्द्रगुप्तका राज्य सौंपा और स्वयं गम्भीर प्रायश्चित्त करनेके लिअे जंगलमें चला गया। अिस प्रकार अध्यात्म और राजनीतिका समन्वय करनेका प्रयत्न हमारे देशमें हमेशा होता आया है। और अिसमें जो सफल नहीं हुअे अुन्होंने राजनीतिके अंतमें अध्यात्मकी ही शरण ली है।

बापूजीने असत्य, कपट और हिंसाको टाला, 'सर्वभूतहिते रतः' जैसे आदर्शके द्वारा राजनीति और अध्यात्म दोनोंके द्वन्द्वको मिटाकर दोनोंको अेक ही कर दिया।

पहले साधना और बादमें सेवा अैसा क्रम भी महाराष्ट्रमें — बल्कि सारे भारतमें माना जाता रहा है। पहले साधनाके द्वारा योग्यता हासिल करो और अुसके बाद चाहे जितनी समाज-सेवा करो; तब वह तुम्हारे

जीवनमें बाधक नहीं होगी, अैसा कहा जाता था। यह भी कहा जाता था कि सेवा करके तृप्त हो जानेके बाद अन्तमें धारणा, ध्यान और समाधिका ही मार्ग अपनाना है। बापूजीने यहां भी द्वैतको दूर करके सेवाको ही साधनाका रूप दे दिया। सेवा करनी हो तो वह पक्षपात-रहित विश्वात्मैक्य-बुद्धि धारण करके सबकी करनी चाहिये। जो हमारे पासके लोग हैं, हमारी सेवाके विशेष अधिकारी हैं, अुन्हींकी शुद्ध सेवासे प्रारम्भ करना चाहिये — अिस स्वदेशी तत्त्वको गांधीजीने सेवाका नियम और साधनाका आधार बनाया। हम अगर शुद्ध भाव और शुद्ध रीतिसे सेवा करते जायंगे, तो हमारे योग्य क्षेत्र भगवान हमें देगा ही, अिस विश्वासके साथ अुन्होंने सेवारूपी साधना की। अितना ही नहीं, बल्कि अिस सेवाको ही मुकुट ध्यानका साधन बनाया, और अिस योगके द्वारा ही अुन्होंने अपना जीवन पूरा किया। ध्यानमें बैठकर समाधिमें हम पहुंचते हैं तब शरीर अपने आप नष्ट हो जाता है। यह आदर्श हम पढते आये हैं। भौतिक नियमोंके अनुसार शरीर-धारणकी जरूरत न रहने पर शरीर अपने आप नष्ट हो जाता होगा। लेकिन शरीरके नष्ट हो जानेके प्रकार अीश्वरके यहां अनन्त होते हैं। शिवि राजाने अपना शरीर अर्पित किया, गजेन्द्रका मोक्ष हुआ अुस समय भी भगवद्भक्ति द्वारा अुसे समाधि-लाभ ही हुआ था। अनासक्त सेवा करते करते चित्त प्रार्थनामय हो गया, अुस समय रामनामके स्मरणके साथ शरीर छूट गया, यह भी योग द्वारा देह छोड़नेके अनेक प्रकारोंमें से ही अेक प्रकार माना जाना चाहिये।

दूसरी दृष्टिसे देखें तो गांधीजीने माता-पिताकी सेवा करते हुअे पारिवारिक सद्गुणोंका विकास किया। अुसमें से वे सारे कुटुम्बियोंको अभेद दृष्टिसे देखने लगे। कुटुम्बका अर्थ अुनकी दृष्टिमें विशाल होता गया। अैसा करते करते 'अपने' और 'पराये' का भेद ही नहीं रहा। अुनका चिन्तन अिस तरह चला कि किसी भी व्यक्ति या पक्षका द्रोह न हो, और अुनमें विश्वात्मैक्य-बुद्धि दृढ हुअी। अिस प्रकार प्राचीन कालकी अनेक साधना-परम्पराओंमें गांधीजीने समन्वयके अेक नये प्रकारकी वृद्धि की।

हमारे जमानेमें अध्यात्म और समाज-सेवाके प्रयोग करनेवाले तीन महापुरुषोंको हम जानते हैं: स्वामी विवेकानन्द, श्री अरविन्द घोष और महात्मा गांधी। तीनोंके प्रति महाराष्ट्रके साधकोंका असाधारण आकर्षण है। अिसी तरहके आकर्षणके कारण प्रेमाबहन बापूजीके पास आओ। स्त्री-सुलभ व्यक्तिपूजा अुनमें भरपूर दिखाओी देती है। बापूजी अिस प्रकारकी व्यक्तिपूजाके पीछे रही भावनाका आदर करते थे, लेकिन अुसे प्रोत्साहन नहीं देते थे। व्यक्तिपूजासे मुक्त होकर हमें गुण-पूजक होना चाहिये और अुससे भी आगे जाकर अिन गुणोंकी प्रेरणा देनेवाले चेतनको — आत्मशक्तिको हमें अपनाना चाहिये — यह थी अुनकी अध्यात्म-साधना। व्यक्तिपूजा, वस्तुपूजा, मूर्तिपूजा आदि जडपूजाको वे अच्छी तरह समझ सकते थे और अिसीलिअे अिस भूमिकावाले लोगोंको आगेका रास्ता दिखाना अुनके लिअे संभव हुआ। आत्मशुद्धि, चित्तकी शान्ति और देशकी सेवा अिन तीनोंका गांधीजीने शुरूसे आखिर तक समन्वय किया था।

अैसा मालूम होता है कि प्रेमाबहनके सामने ज्ञानेश्वरकी छोटी बहन मुक्ताबाओी, नामदेवके घरकी दासी जनाबाओी और राजस्थानके राज-परिवारकी मीराबाओी अिन तीनोंके आदर्श अेकत्र हुअे हैं। अिसीसे अुनकी बापूभक्ति अितनी अुत्कट है। राष्ट्रसेवामें मार्गदर्शकके रूपमें गांधीजीको पसन्द करते हुअे अुनके सत्याग्रह पर प्रेमाबहनका मन मानो चिपक गया और अुन्होंने समझ लिया कि सत्याग्रहकी योग्यता हासिल करनी हो तो अुसके लिअे आश्रम-जीवन अनिवार्य है। अिसीलिअे सत्याग्रह आश्रमके साथ वे अितनी अेकरूप हो सकीं। साबरमतीका सत्याग्रह आश्रम छोड़नेके बाद भी अुन्होंने सासवडमें आश्रम-जीवन ही शुरू किया और अुसकी प्रवृत्तियोंको आगे बढ़ाया। आज वे सारी प्रवृत्तियां समेट लेने पर भी अुनका जीवन और वृत्ति आश्रममय ही है। और यह आश्रम-जीवन ही अेक अैसी साधना है, जिसमें अध्यात्म और

व्यवहार, समाज-सेवा और आत्म-चिन्तन, कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग और ध्यानयोग सब अेक हो जाते हैं।

आश्रमके व्रतोंकी जांच करने पर ही यह चीज स्पष्ट होगी। अिन व्रतोंके अनुसार चलनेकी आवश्यकता जिनमें होगी, वे ही अूपरके कथनकी सत्यताको स्वीकार करेंगे।

बापूजीके पत्रोंमें पग-पग पर अुनकी जीवन-साधना प्रगट होती है। स्वयं अपनेको भूल जाना, शून्य बन कर रहना, अपने दोष देखना, दूसरे लोगोंके गुण देखना, अपने प्रति कठोर बनना, दूसरेके प्रति अुदार रहना, जो दूर हैं अुन्हें समझनेके लिअे विशेष प्रयत्न करना — आदि बातें अुनके लेखोंमें बहुत देखनेको नहीं मिलतीं, परन्तु अुनके पत्रोंमें विशेष रूपसे दिखाअी देती हैं। और जो लोग अुनकी दृष्टिमें निकटके साधक थे या जिन्हें वे आश्रमके आदर्शोंके मुताबिक ढालना चाहते थे, अुन्हें लिखे गये पत्रोंमें बापूजीने अपनेको और अपनी साधनाको अुत्कट रूपमें प्रगट किया है।

पाठक यह न भूलें कि यह पत्र-व्यवहार अुन लोगोंके बीच हुआ है, जो पारमार्थिक भावसे अुत्कट रूपमें सेवामय जीवन जीना चाहते हैं। अिसमें दम्भके लिअे कोअी स्थान ही नहीं होता। अपने दोषोंको छिपानेकी और सामनेवाले मनुष्यकी दृष्टिमें अच्छे दिखाअी देनेकी वृत्ति भी अिसमें नहीं होती। जिस खरेपनके गुणके कारण गांधीजीकी 'आत्मकथा'को दुनियाके तमाम राष्ट्रोंके लोगोंमें आदर मिला है, वही खरेपनका गुण अिस पुस्तकमें पग-पग पर दिखाअी देता है।

अिन पत्रोंमें से चुनकर निकाले हुअे ९० पत्रोंका अनुवाद कअी साल पहले प्रकाशित हुआ था। अुसके लिअे मैंने प्रस्तावना लिख दी थी। अुस पुस्तकका सम्पादन भी मेरे हाथों हुआ होता तो अेक-दो पत्रोंमें मैंने काफी काटछांट की होती। मैं गम्भीर बीमारीमें फंस गया और वे पत्र जैसेके तैसे छप गये। अुन परसे महाराष्ट्रमें काफी चर्चा और टीका हुअी। अुस टीकाका थोड़ासा प्रसाद मुझे भी मिला। गांधी-सेवा-संघके

अुस समयके अध्यक्ष श्री किशोरलालभाअीने अुस पुस्तकको वापस ले लेनेकी मुझे सूचना की। मैंने अपनी अशक्ति बता कर अुन्हींसे अिसकी जिम्मेदारी लेनेकी प्रार्थना की। अन्तमें यह मामला पूज्य बापूजीके पास गया। अुन्होंने कहा कि जिन पत्रोंको लेकर अितनी टीका हुअी है अुनके छपनेसे कुछ भी नुकसान नहीं हुआ है, और अेक बार प्रकाशित होनेके बाद वे पत्र वापस तो लिये ही नहीं जा सकते।

अिस बार अिस सारे संग्रहका संपादन मेरे हाथों हुआ है। शिष्टाचारकी दृष्टिसे जो नाम प्रकाशित नहीं किये जा सकते अुन्हें छोड़ दिया गया है। कहीं कहीं अर्थको स्पष्ट करनेके लिअे कोष्ठकमें शब्द जोड़े गये हैं। अिस बार भी कुछ ज्यादा काटछाट करनेकी मेरी अिच्छा थी, लेकिन गांधीजीको गये आज बारह वर्ष हो गये हैं। दुनियाभरके लोग अुनकी जीवन-साधनाके बारेमें अधिक जाननेकी अिच्छा प्रगट करते रहे हैं। ब्रह्मचर्यकी बात हमारे देशमें अेक ओर पुरानी है और दूसरी ओर रूढ़िके चौखटेमें बंधी हुअी है, जिसे गांधीजी बाड़ा कहते थे। ब्रह्मचर्य अेक अद्‌भुत शारीरिक तप है, आध्यात्मिक साधना है और अब यह सबसे बड़ा सामाजिक प्रयोग भी बन गया है। स्त्री-पुरुषके बीचका समग्र संबंध दुनियाकी गहरी चर्चाका विषय बन गया है। अैसे समयमें गांधीजी जैसे सत्यनिष्ठ और लोकोत्तर श्रद्धावाले व्यक्तिने जिस आदर्शका विकास किया और तत्सम्बन्धी जो अनुभव प्राप्त किया, दुनियाके अभ्यासियोंके लिअे अुसका बहुत बड़ा महत्त्व है। अिस विषय पर पश्चिमके समाजशास्त्रियों और वैद्यकके विशारदोंने बहुत लिखा है। समाजशास्त्री तो दुनियाके अनेक वंशोंमें प्रचलित रिवाजोंको और अनेक धर्मोंके साधकोंने जो अच्छे-बुरे अनुभव प्राप्त किये हैं अुन अनुभवोंको अिकट्ठा करके अुन्हींका गहरा अध्ययन करते हैं।

धर्मशास्त्रोंने प्राचीन कालसे अिस विषयसे संबंधित अनुभव और कल्पनाअें बिना संकोच समाजके सामने पेश की हैं। हमारे देशके पारमार्थिक ग्रंथकारोंने कभी भी अिस विषयसे घृणा नहीं की।

व्यवहार, समाज-सेवा और आत्म-चिन्तन, कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग और ध्यानयोग सब अेक हो जाते हैं।

आश्रमके व्रतोंकी जांच करने पर ही यह चीज स्पष्ट होगी। जिन व्रतोंके अनुसार चलनेकी आतुरता जिनमें होगी, वे ही अूपरके कथनकी सच्चाईको स्वीकार करेंगे।

बापूजीके पत्रोंमें पग-पग पर अुनकी जीवन-साधना प्रगट होती है। स्वयं अपनेको भूल जाना, शून्य बन कर रहना, अपने दोष देखना, दूसरे लोगोंके गुन देखना, अपने प्रति कठोर बनना, दूसरेके प्रति अुदार रहना, जो दूर हैं अुन्हें समझनेके लिअे विशेष प्रयत्न करना — आदि बातें अुनके लेखोंमें बहुत देखनेको नहीं मिलतीं, परन्तु अुनके पत्रोंमें विशेष रूपसे दिखाओ देती हैं। और जो लोग अुनकी दृष्टिमें निकटके साधक थे या जिन्हें वे आश्रमके आदर्शोंके मुताबिक ढालना चाहते थे, अुन्हें लिखे गये पत्रोंमें बापूजीने अपनेको और अपनी साधनाको अुत्कट रूपमें प्रगट किया है।

पाठक यह न भूलें कि यह पत्र-व्यवहार अुन लोगोंके बीच हुआ है, जो पारमार्थिक भावसे अुत्कट रूपमें सेवामय जीवन जीना चाहते हैं। जिसमें दम्भके लिअे कोओ स्थान ही नहीं होता। अपने दोषोंको छिपानेकी और सामनेवाले मनुष्यकी दृष्टिमें अच्छे दिखाओ देनेकी वृत्ति भी जिसमें नहीं होती। जिस सचेतनके गुणके कारण गांधीजीकी 'आत्मकथा' को दुनियाके तमाम राष्ट्रोंके लोगोंमें आदर मिला है, वही सचेतनका गुण जिस पुस्तकमें पग-पग पर दिखाओ देता है।

जिन पत्रोंमें से चुनकर निकाले हुअे ९० पत्रोंका अनुवाद कओ साल पहले प्रकाशित हुआ था। मुझसे लिखे मैंने प्रस्तावना लिख दी थी। अुस पुस्तकका सम्पादन भी मेरे हाथों हुआ होता तो अेक-दो पत्रोंमें मैंने काफी काटछांट की होती। मैं गम्भीर बीमारीमें पड़ा था और वे पत्र जैसेके तैसे छप गये। अुन परसे महाराष्ट्रमें काफी चर्चा और टीका हुओ। अुस टीकाका थोड़ासा प्रसाद मुझे भी मिला। गांधी-सेवा-संघके

अुस समयके अध्यक्ष श्री किशोरलालभाअीने अुस पुस्तकको वापस ले लेनेकी मुझे सूचना की। मैंने अपनी अशक्ति बता कर अुन्हींसे अिसकी जिम्मेदारी लेनेकी प्रार्थना की। अन्तमें यह मामला पूज्य बापूजीके पास गया। अुन्होंने कहा कि जिन पत्रोंको लेकर अितनी टीका हुअी है अुनके छपनेसे कुछ भी नुकसान नहीं हुआ है, *और अेक बार प्रकाशित होनेके बाद वे पत्र वापस तो लिये ही नहीं जा सकते।*

अिस बार अिस सारे संग्रहका संपादन मेरे हाथों हुआ है। शिष्टाचारकी दृष्टिसे जो नाम प्रकाशित नहीं किये जा सकते अुन्हें छोड दिया गया है। कहीं कहीं अर्थको स्पष्ट करनेके लिअे कोष्ठकमें शब्द जोडे गये हैं। अिस बार भी कुछ ज्यादा काटछांट करनेकी मेरी अिच्छा थी, लेकिन गांधीजीको गये आज बारह वर्ष हो गये हैं। दुनियाभरके लोग अुनकी जीवन-साधनाके बारेमें अधिक जाननेकी अिच्छा प्रगट करते रहे हैं। ब्रह्मचर्यकी बात हमारे देशमें अेक ओर पुरानी है और दूसरी ओर रूढिके चौखटेमें बंधी हुअी है, जिसे गांधीजी बाडा कहते थे। ब्रह्मचर्य अेक अद्‌भुत शारीरिक तप है, आध्यात्मिक साधना है और अब यह सबसे बडा सामाजिक प्रयोग भी बन गया है। स्त्री-पुरुषके बीचका समग्र *संबंध दुनियाकी गहरी चर्चाका विषय बन गया है। अैसे समयमें गांधीजी* जैसे सत्यनिष्ठ और लोकोत्तर श्रद्धावाले व्यक्तिने जिस आदर्शका विकास किया और तत्संबन्धी जो अनुभव प्राप्त किया, दुनियाके अभ्यासियोंके लिअे अुसका बहुत बडा महत्त्व है। अिस विषय पर पश्चिमके समाजशास्त्रियों और वैद्यकके विशारदोंने बहुत लिखा है। समाजशास्त्री तो दुनियाके अनेक देशोंमें प्रचलित रिवाजोंको और अनेक धर्मोंके साधकोंने जो अच्छे-बुरे अनुभव प्राप्त किये हैं अुन अनुभवोंको अिकट्ठा करके अुन्हींका गहरा अध्ययन करते हैं।

धर्मशास्त्रोंने प्राचीन कालमें अिस विषयके सर्वविध अनुभव और कल्पनाअें बिना संकोच समाजके सामने पेश की हैं। हमारे देशके पारमार्थिक ग्रंथकारोंने कभी भी अिस विषयसे घृणा नहीं की।

लोगोंको गलत रास्ते ले जानेके लिअे या विकारोंका अधम कोटिका आनन्द भोगनेके लिअे जो साहित्य लिखा और छापा जाता है, अुसकी बात दूसरी है। अुससे तो अेक प्रकारका पागलपन ही पैदा होता है। लेकिन जीवनके अूंचे आदर्शोंको सिद्ध करनेकी कोशिश करनेवाले लोकोत्तर साधकोंके अनुभव और वचन जिसमें भिन्न होते हैं। अुनका पठन तो तीर्थस्नान जैसा माना जाता है। अुन्हें पढ़ने और अुन पर मनन करनेसे मनुष्यकी आत्म-शुद्धि होती है।[1]

नयी दिल्ली,
१०-१-'६०

काका कालेलकर

---

१. मूल गुजराती संस्करणकी प्रस्तावना।

पूर्वरंग

फूल मगाअू हार बनाअू। मालिन बनकर आअू ॥ध्रु॥
गलेमें सैली हाथमें मुरली। बाजत बाजत घर जाअू ॥१॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर। बैठत हरिगुन गाअू ॥२॥

*

पूज्य महात्माजीके प्रति बचपनसे ही मेरा आकर्षण हो गया था। वे सन् १९१५ में दक्षिण अफ्रीकासे भारत वापस आये, तब मैं सिर्फ ९ सालकी थी। बबअीकी अेक मराठी शालामें मैं चौथी कक्षामें पढ़ती थी। मुझे याद है कि विद्यार्थिनीके नाते मैं सबसे अलग ही पडती थी। वह शाला थी तो लडकोंकी, लेकिन हर कक्षामें थोडी थोडी लडकियोंको भी प्रवेश मिलता था। सन् १९१५ के बाद लडकियोंके लिअे अलग शाला होने लगी। लेकिन मेरे ४ साल तो लडकोंमें ही बीते। शिक्षकोंकी मुझ पर कृपा थी, क्योंकि मैं पढनेमें आलस्य नहीं करती थी। छुट्टीमें जब सारे बालक खेलते थे तब मैं पढती थी।

अेक विद्वान और कुशल अध्यापक जीवनमें (अुस छोटी अुम्रमें भी) मेरा मार्गदर्शन करते थे। अुन्होंने मुझे वाल्मीकि रामायण (मराठी अनुवाद) पढनेको दिया। अुसे पूरा करनेके बाद व्यासकृत महाभारतके बडे बडे पर्व पढनेके लिअे दिये। वे मैंने स्त्रीपर्व तक पढ लिये। नौ वर्षकी छोटी अुम्रमें गम्भीर या गहरे तत्त्वज्ञानकी चर्चा समझमें आवे या न आवे, तो भी अुन्हें पढ जानेका मैं प्रयत्न करती थी। अेकाध अुपनिषद् या स्मृति भी मैंने पढ डाली थी, अैसा मुझे याद आता है। ये सब पुस्तकें मूल संस्कृत ग्रंथोंका मराठी अनुवाद थीं। फिर अुन अध्यापकने मुझे महाराष्ट्रका अितिहास पढ़ाया। अुसमें से श्री शिवाजी महाराज और अुनके गुरु समर्थ रामदास स्वामी अिन दोनों महापुरुषोंका मुझ

पर गहरा असर पड़ा। मुझे बताया गया कि हमारा देश आजाद नहीं है, गुलाम है। अुस पर अंग्रेजोंका आधिपत्य है। लोकमान्य तिलक महाराज जैसे व्यक्ति अुसे तोड़नेका प्रयत्न कर रहे हैं। फलस्वरूप धर्म और अध्यात्मकी नींव पर वीरता और पराक्रमके संस्कारोंकी अिमारत खड़ी हो गअी! मेरे मनमें अैसा लगने लगा कि हमें भी देशकी आजादीके लिअे पराक्रम करना चाहिये और अुसके लिअे ध्रुव और रामदास स्वामीकी तरह तपस्या करनी चाहिये।

अैसे समय छुट्टीके दिनोंमें अेक बार अुन अध्यापक (नाम श्री मुळे) को अुनके कअी दूसरे साथियोंके साथ बातचीत करते मैंने देखा। मैं तो छुट्टीके समयमें भी अुनके साथ ही अधिकांश समय बिताती थी। वे आपसमें जो बातचीत कर रहे थे वह तो अब याद नहीं है, लेकिन जिसके बारेमें चर्चा चल रही थी अुसका नाम याद है। बैरिस्टर गांधी! वे गांधीजीकी तारीफमें कह रहे थे कि अिस आदमीने दक्षिण अफ्रीकामें बड़ी वीरता दिखाकर वहांकी सरकारको हरा कर विजय पाअी है, और अब अिस देशमें वापस आया है। अेक शिक्षक बोले, "देखो तो सही, अितने बड़े बैरिस्टर है, लेकिन कितने सादे हैं? धोती पहनते हैं और पैरोंमें देशी जूते हैं!" अेक मराठी मासिक पत्रमें अुनका चित्र छपा था। वह चित्र वे सबको दिखाने लगे। मैंने भी अेक नजर अुस चित्र पर डाली। कुर्सियों पर बैठे हुअे बहुतसे लोगोंकी कतारमें गांधीजीका चित्र देखा। वे काठियावाड़ी पोशाकमें थे!

अिस प्रकार मुझे अुनका प्रथम परिचय हुआ, लेकिन बादके २-३ सालोंमें अुनका ज्यादा परिचय प्राप्त करनेका कोअी खास प्रसंग नहीं आया। अंग्रेजी शालामें भरती होनेके बाद अैसा जाननेको मिला कि देशका वातावरण धीरे धीरे गरम होता जा रहा है। सन् १९१९ में देशमें युग-प्रवर्तक वातावरण पैदा हुआ और महात्मा गांधीका नाम जनताकी जबान पर चढ़ गया। मैं भी अुनकी पुजारिन बन कर अुनके जीवन, विचार और पुरुषार्थके बारेमें अधिक जाननेका प्रयत्न करने लगी।

मेरे घरका वातावरण धार्मिक वृत्तियाका पोषक था। धार्मिक संस्कार, देवपूजा, विधि-विधान, त्योहार, अुत्सव सभी कुछ होते रहते थे। मेरे पिताजी बडे श्रद्धालु और अध्यात्म तथा धर्मके अभ्यासी थे। सरकारी नौकरीमें और साधारण मध्यम वर्गके होनेके कारण अुनकी प्रवृत्तियो पर मर्यादा लगी हुअी थी, लेकिन महात्मा गाधीजीके प्रति अुनका बडा आकर्षण था। महात्मा गाधी 'यग अिडिया' के सम्पादक हुअे तबसे पिताजी अुसके पाठक बने। वाचनालयसे हर हफ्ते 'यग अिडिया' का अक नियमित रूपसे वे लाते थे, स्वय पढते थे और मुझे भी पढनेके लिअे देते थे। तब मैं अग्रेजीकी चौथी कक्षामें पढती होअूगी। मुझे अग्रेजीका अितना ज्ञान कहासे होता? फिर भी मैं अुसे भक्तिपूर्वक और रस लेकर पढती थी और बादमें अच्छी तरह समझने भी लगी थी। पिताजी या मैं 'यग अिडिया' का अेक भी अक पढना चूके नहीं। गर्मीकी छुट्टियोमें मैं कभी महीने डेढ महीनेके लिअे बाहर जाती, तो पिताजी अुतने सप्ताहके सारे अक सभाल कर रख लेते थे और मैं वापस आती तब मुझे पढनेके लिअे देते थे। अुस समय राष्ट्रीय साहित्य या महात्माजी सबधी साहित्य मराठीमें बहुत नही था। लेकिन मेरे सौभाग्यसे अग्रेजी शालामें दो अच्छे शिक्षक आये, जिनसे समय समय पर दोनो प्रकारके साहित्यके बारेमें मुझे जानकारी मिलने लगी। मैं अग्रेजी चौथीमें थी तब श्री कृ० वे० गजेन्द्रगडकर नामके अेक शिक्षकने अेक वर्ष तक पढाया। वे कॉलेजमें तत्त्वज्ञानके विद्यार्थी, महाराष्ट्रके प्रसिद्ध तत्त्वज्ञानी प्रो० रानडेके विद्यार्थी, स्वामी विवेकानन्दके भक्त और स्वदेशकी मुक्तिके लिअे लगन रखनेवाले व्यक्ति थे। अुनके कारण मुझे भारतीय और यूरोपीय तत्त्वज्ञानियोका परिचय हुआ। कोअी अेक साल बाद वे शाला छोड कर चले गये। अुसके बाद भी अुनके साथ वर्षों तक मेरा सबध बना रहा। आगे चल कर प्रो० गजेन्द्रगडकर नासिकके हसराज प्रागजी ठाकरसी कॉलेजमें पहले प्राध्यापक बने और बादमें आचार्य हुअे।

अुनके जानेके बाद दूसरे साल श्री भालचन्द्रशास्त्री धुरन्धर शिक्षकके रूपमें आये। वे श्री अरविन्दबाबूके पुजारी, योगके अभ्यासी और महात्मा गांधीके भक्त थे। अहमदाबाद कांग्रेसमें वे शामिल हुअे थे, खादी पहनने लगे थे और पांडिचेरी जाकर श्री अरविन्दबाबूसे मुलाकात भी कर आये थे। अुनसे मुझे सत्याग्रह आश्रमके बारेमें जाननेको मिला। बार बार वे महात्माओंके बारेमें चर्चा करते थे और यूरोप तथा अमेरिकाके विचारकों और साहित्यिकोंका परिचय भी कराते थे।

अिन दो सज्जनोंके बाद अेक तीसरे महापुरुषने विद्यार्थी-जीवनमें मेरे मन पर गहरा प्रभाव डाला। बंबअीमें ठाकुरद्वारमें चलनेवाले स्टुडेन्ट्स लिटररी अेन्ड सािअन्टिफिक सोसािअटीके गर्ल्स हािअस्कूलमें मैं पढ़ती थी। यह अुस समयका प्रसिद्ध विद्यालय था। न्यायमूर्ति चंदावरकर जैसे बड़े बड़े समाज-सेवक यहां स्त्रीशिक्षाको प्रोत्साहन देनेके लिअे अवैतनिक शिक्षकके रूपमें अपनी सेवायें अर्पित करते थे। अुसके सुपरिन्टेन्डेन्ट थे स्व० श्री गजानन भास्कर वैद्य। वे अेनी बेसेन्टके मित्र, थियोसॉफिस्ट और स्त्रीशिक्षा तथा समाज-सुधारके बड़े हिमायती थे। हिन्दू धर्म और तत्त्वज्ञानके लिअे अुन्हें गर्व था। अुन्होंने धर्म-प्रचारके लिअे हिन्दू मिशनरी सोसािअटीकी स्थापना की थी। विद्यालयमें रोज सुबह-शाम प्रार्थना होती थी; सुबहकी प्रार्थनामें गीताजीके श्लोक पढ़े जाते थे और हर शनिवारको सुबह श्री वैद्य स्वयं प्रवचन करते थे। अुनकी प्रभावशाली वाणी और विचारोंने मेरे मन पर गहरा असर डाला। हमें वे अुपदेश देते थे कि, "तुम सब ब्रह्मचारिणी बन जाओ, शंकराचार्य बन जाओ। सारी दुनियामें घूम कर हमारे धर्मका और गीताजीका प्रचार करो।" अिस अुपदेशसे मुझे सदा प्रेरणा मिलती थी।

मैंने स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, भगवान बुद्ध और दूसरे अनेक महात्माओंका साहित्यिक परिचय प्राप्त कर लिया। मुझे पढ़ना अच्छा लगता था। लेकिन समय बीतनेके साथ ललित साहित्यमें मेरी रुचि नहीं रही, परन्तु धर्म, अध्यात्म, अितिहास, राजनीति, समाजशास्त्र,

मानसशास्त्र, अर्थशास्त्र अिन सब विषयोंके प्रति मेरी अभिरुचि बढनी गअी। और मराठी या अंग्रेजी भाषामें अुपरोक्त विषयों पर जो भी पुस्तकें मेरे हाथमें आती अुन्हें मैं पढ़ती गअी। महाराष्ट्रका सन्त-साहित्य मुझे बहुत प्रिय लगता था। सत-महिलायें ब्रह्मचारिणी मुक्ताबाअी और जनाबाअीके प्रति मेरा बडा आकर्षण था। राजस्थानकी सत-महिला मीराबाअीका चरित्र मैंने पढा और मनमें यह आकाक्षा जागी कि मैं भी मीराबाअीकी तरह भगवानको पति मान कर पवित्र जीवन बिताअू तो कैसा हो!

पिताजीके साथ मैं कीर्तन-प्रवचन सुनने भी नियमपूर्वक जाती थी। हाअीस्कूलमें थी तभी योगमार्गकी ओर मेरा विशेष आकर्षण हुआ था, लेकिन परिस्थिति अनुकूल न होनेकी वजहसे अुस क्षेत्रमें मैं प्रयोग न कर सकी।

अिस प्रकार मैं विविध सस्कार ग्रहण कर ही रही थी कि पजाबमें अत्याचार हुअे और फिर असहयोग आन्दोलन शुरू हुआ। मुझे अुसमें बड़ा रस आता था। अिस प्रसगके बाद कभी कभी अखबार पढ़नेको मिलते थे। मेरे पिताजीकी अिजाजत लेकर १९२१ से मैंने खादी पहननी शुरू की। पिताजीने स्वय भी कुछ समय तक खादी पहनी। वे मेरे लिअे अेक चरखा भी ले आये और मैं कातने लगी। 'यग अिंडिया' में महात्माजी जो विचार प्रगट करते थे अुन पर अपने जीवनमें अमल करनेका प्रयत्न मैं करने लगी। १९२२ में महात्माजी गिरफ्तार हुअे तब अदालतमें अुन्होंने जो बयान दिया अुसे मैं पढ गअी। अुससे मुझे नया जीवन मिला! अुन्हें ६ वर्षकी सजा मिलनेके समाचार पढकर मैं रो पडी। मनमें धुन सवार हुअी कि किसी दिन अुनके सत्याग्रह आश्रममें जाकर तालीम लूगी। लेकिन अब ६ सालमें क्या होगा, आश्रम टिकेगा भी या नहीं, अैसा डर मनमें पैदा हो गया!

पूज्य महात्माजी जेलमें गये तो भी देश अुन्हें भूला नहीं। सभायें होती थी, जुलूस निकलते थे। मैं भी अुनमें भाग लेने जाती थी।

लेकिन पिताजी मुझ युवा लड़कीको अकेले नहीं जाने देते थे। अिसलिअे मैं अपनी बड़ी बुआ सौ० श्री राधाबाअी मजूमदारसे आग्रह करके अुनके साथ जाती थी। बुआ राष्ट्रीय वृत्तिवाली थीं। कुछ समय तक अुन्होंने स्वयं और अुनके कुटुम्बियोंने खादीका ही प्रयोग किया और चरखा चलाकर अपने और मेरे सूतका कपड़ा बुनवाया, जिसके कपड़े बनवाकर अुनके दो लड़कोंको यज्ञोपवीत संस्कारके समय पहनाये गये थे। बम्बअीके मारवाड़ी हाअीस्कूलके सभा-भवनमें हर महीनेकी १८ तारीखको (पूज्य महात्माजीको १८ मार्चके दिन ६ वर्षकी सजा हुअी थी) भगिनी-समाजकी ओरसे बहनोंकी सभा होती थी। अुसमें मैं और बुआ बार बार शरीक होती थी। वहीं मुझे अली भाअियों, श्री सरोजिनीदेवी नायडू, श्री कृ० प्र० खाडिलकर वगैरा नेताओंके भाषण सुननेका मौका मिला।

पूज्य महात्माजीको मैंने देखा नहीं था। सन् १९२४ में वे जेलसे रिहा हुअे। अुस अवसर पर बम्बअीकी म्युनिसिपैलिटीने अुन्हें मानपत्र दिया। तब मैं विल्सन कॉलेजमें पढ़ती थी। कावसजी जहांगीर हॉलमें यह अुत्सव हुआ अुस समय मैं भी महेलियोंके साथ वहां गअी थी। महात्माजीके हॉलमें प्रवेश करनेसे लेकर विदा होने तक मेरी नजर अुन पर टिकी रही। मैं अेकटक अुन्हींको देखती रही। वे स्वयं अपना भाषण लिखकर लाये थे। वही भाषण अुन्होंने सभामें पढ़ा। अंग्रेजी और गुजराती दोनों भाषाओंमें वे बोले। वह भाषण तो मैं भूल गअी हूँ, लेकिन अेक वाक्य अब तक मेरे मानस-पटल पर अंकित है। वह यह है: 'Politics without religion is dangerous!' धर्मके अभावमें राजनीति खतरनाक चीज हो जाती है। अुनके शब्द आज भी मेरे कानोंमें गूजते हैं और अुनके मुखका भाव आज भी मेरी आंखोंके सामने स्पष्ट हो अुठता है।

दूसरे दिन भगिनी-समाजकी ओरसे मारवाड़ी विद्यालयके सभा-भवनमें पूज्य महात्माजीका स्वागत हुआ। मैं भी अुसमें हाजिर थी। वहां महात्माजीको नजदीकसे देखनेका मौका मिला। अुनका गुजराती भाषण

मैंने अेकाग्रतासे सुना। सभा विसर्जित होने पर अुन्हें थैली अर्पण की गअी और फुटकर पैसाकी भेंट भी अुन्हें दी गअी। मन्त्रमुग्धकी तरह मैं भी अुनके पास गअी। वे व्यासपीठ पर अुल्टी पलथी मार कर बैठे थे। मेरे पास पैसे कहांसे होते! लेकिन अेक आना था। वही मेरे लिअे लाख रुपयेके बराबर था। जिनकी मैं मन ही मन पूजा करती थी, अुन्हें अपना सारा धन (!) अर्पित करनेकी अुत्कट अिच्छाके साथ मैं अुनके सामने जाकर खड़ी हुअी और अपना अेक आना मैंने अुनके आगे रखा। अुनके चरण-स्पर्श करनेकी अिच्छा थी लेकिन पैर तो पलथीमें दबे हुअे थे। फिर भी किसी प्रकारका संकोच मनमें रखे बिना मैंने अपनी अुंगलीसे अुनके घुटनेको छुआ और प्रणाम किया। अुन्होंने चौंककर मेरी ओर देखा मुझे प्रणाम किया और दूसरी ओर देखने लगे। अुन्हें क्या मालूम कि अुनका स्पर्श करके अेक हृदय अपूर्व गौरवसे खिल अुठा था! अुस पवित्र और पावन स्पर्शसे मेरे सारे शरीरमें बिजली-सी दौड़ गअी और आनन्दमें मस्त होकर मैं घर गअी।

*

फिर तो धीरे धीरे राजनीतिक काम शुरू हुअे। मुझे कॉलेजकी शिक्षा पूरी करनी थी। मेरी अुम्र बढ़ती गअी और मैं युवती बन गअी, अिसलिअे लोग पिताजीको मेरा विवाह कर देनेके लिअे कहने लगे। मेरी मां मुझे दस महीनेकी छोड़ कर मर गअी थी। लगभग १० सालकी अुम्र तक मैं अपने ननसालमें पली और फिर पिताजीके पास रहने आअी थी। पिताजीकी दो शादियां और हुअी थीं। मेरे पांच भाअी हुअे, लेकिन बहन अेक भी नहीं है! बुआ और नाना मेरे विवाहके लिअे अुत्सुक थे, लेकिन पिताजीका विचार कुछ और ही था। वे स्वयं अिंटर तक पहुंचकर रुक गये थे, अिसलिअे वे सोचते थे कि लड़की बी० अे० हो जाय तो अच्छा। फिर मेरे आचार विचार या अभिरुचिमें अुन्हें अैसा कुछ दिखाअी नहीं देता था जो पढ़ाअीमें बाधक हो। और, मुझे छात्र-वृत्तियां और अिनाम मिला करते थे, अिसलिअे भी अुन्होंने मुझे आखिर

तक पढ़ने दिया। लेकिन अुनके मनमें अैसी कोअी कल्पना नहीं थी कि मैं आजन्म ब्रह्मचारिणी रहूँ।

पिताजीकी मदद और आशीर्वाद तथा मेरे प्रयत्न दोनोंके फलस्वरूप बी. अे. का लक्ष्य पूरा हुआ। दुर्भाग्यसे अुसी अरसेमें अैसी घटनाअें घटीं, जिनसे पारिवारिक वातावरण दूषित हो गया। अुनके कारण मेरी अनिच्छा होते हुअे भी मुझे अपने पिताजीके कोपका शिकार होना पड़ा। अुनके और मेरे बीच मतभेद हो गया और अुन्होंने आज्ञा दी, "मेरी बात न माने तो मेरे घरमें मत रह।" अुस आज्ञाको शिरोधार्य करके मैं थोड़े ... लिअे अपनी मौसीके यहाँ चली गअी। बादमें बाम्बा गार्डी रोड पर बने हुअे लेडीज होस्टलमें भरती हुअी। वहाँ दो वर्ष तक रही। अुस बीच टयूशन करके मैं पैसे कमाती थी और अेम. अे. की पढ़ाअी करती थी।

अिस होस्टलकी सचालिका श्री कृष्णाबाअी अुर्फ ताअी तुळमकर थीं। वे छह साल अमेरिकामें रह कर अेम. अे. करके अपने देशको वापस लौटी थीं। अूँची नौकरी छोड़कर अुन्होंने असहयोग आन्दोलनमें भाग लिया था। अुस समय वे लोकमान्य राष्ट्रीय कन्या पाठशालाका सचालन कर रही थीं। कांग्रेसकी कार्यकर्त्री बहनोंसे अुनका अच्छा परिचय था और पूज्य महात्माजीके साथ भी अुनकी अच्छी पहचान थी। वे 'यंग अिंडिया' की ग्राहक थीं। अिसलिअे होस्टलमें अुनके सहवासमें मुझे अनेक प्रकारसे लाभ हुआ।

आश्रमके बारेमें सुना था तभीसे पढ़ाअी पूरी करनेके बाद वहीं जाकर रहनेका मैंने सोचा था। लेकिन यह रहस्य मैंने अपने मनमें ही रखा था, पिताजी, बुआ, सगे-सम्बन्धियों या सहेलियोंमें से किसीको भी नहीं बताया था। प्रियजन, सबधी और सहेलिया मेरे भविष्यके बारेमें सोचनेकी मुझे सलाह देते थे। अेक अंग्रेजी हाअीस्कूलके प्रिंसिपालकी जगह मिलनेका मौका आया और अुसे स्वीकार करनेकी मुझे सलाह दी गअी। लेकिन मैंने अिनकार कर दिया। विवाह करनेका तो अिरादा था ही नहीं। लेकिन मनमें दो आकर्षण थे १ समर्थ रामदास स्वामी और स्वामी विवेकानन्दकी तरह पहले तपस्या, अीश्वरकी प्राप्ति और फिर सार्वजनिक सेवा करना, २ देशकी आजादीके लिअे सीधे राजनीतिके क्षेत्रमें कूद पडना। लेकिन तपस्याके बिना राजनीति खोखली मालूम पडती थी।

स्वामी रामदासके जीवन-प्रसग याद आये। १२ वर्षकी अुम्र तक वे पढे। अुसी साल विवाहके समय ब्राह्मणोंने 'सावधान' मत्र बोलते ही वहासे भाग कर सीधे नासिक पहुचे और वहा अेकान्तमें १२ वर्ष तक मत्रजाप और तपस्या की। भगवान रामचन्द्र प्रसन्न होकर अुनके सामने प्रगट हुअे और अनुग्रहपूर्वक आज्ञा दी, "अब तुम जगतके अुद्धारका काम करो।" लेकिन स्वामी रामदासने कहा, "मुझे अभी पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करनी है।" भगवानकी आज्ञा मिलने पर फिर १२ वर्ष तक अुन्होंने देशमें हिमालयसे रामेश्वर तक पदयात्रा की, सारे देशकी परि-स्थिति देखी और सेवा करनेकी योजना मनमें तैयार की। अुसके बाद भगवानने फिर आज्ञा दी, "अब काम शुरू करो।" अुस आज्ञाको मानकर समर्थ रामदास स्वामी कृष्णाके किनारे पर बस गये और अनेक योग्य शिष्योंका अेक प्रभावशाली सगठन अुन्होंने खडा किया। जगह जगह मठोंकी स्थापना करके वहा कुशल शिष्योंको नियुक्त किया और श्री शिवाजी महाराजका स्वराज्य प्राप्तिका काम शुरू हो अुससे पहले अनुकूल वातावरण पैदा किया। बादमें तो गुरु-शिष्यकी जोडीका काम खूब

तेजीसे चला! अुमका प्रभाव लगभग दो सौ साल तक सारे देशमें दिखाअी दिया।

मुझे लगता था कि प्रभावशाली सेवाकार्यके लिअे योग्यता प्राप्त करनी चाहिये और यह योग्यता तपस्यासे ही मिल सकती है। समर्थ रामदास स्वामीके कितने ही वचन मुझे कंठस्थ थे, जो मेरे मनमें हमेशा घूमा करते थे :

सामर्थ्य आहे चळवळीचें। जो जो करील तयाचें।
परन्तु तेथें भगवंताचें। अधिष्ठान पाहिजे॥

आन्दोलन और आन्दोलनके नेता दोनोंमें शक्ति तो होती है, लेकिन सच्ची स्थायी शक्ति प्राप्त करनी हो तो वहां भगवानका अधिष्ठान होना चाहिये।

और,

अनन्य राहे समुदाव। अितर जनांस अुपजे भाव।
अैसा आहे अभिप्राव। अुपायाचा॥
मुख्य हरिकथा-निरूपण। दुसरे तें राजकारण।
तिसरे तें सावधपण। सर्व विषयीं॥
चौथा अत्यन्त साक्षेप। फेडावे नाना आक्षेप।
अन्याय थोर अथवा अल्प। क्षमा करीत जावे॥

'अुपाय' का अर्थ है वह कार्य जिसे करनेसे अनुयायी लोग नेताके प्रति अनन्य श्रद्धा रखें और अन्य लोगोंके मनमें भी श्रद्धा और विश्वास अुत्पन्न हो। (अुसके लिअे चार जरूरी बातें बताते हैं) मुख्य वस्तु हरिकथा-निरूपण (अर्थात् भगवानका अधिष्ठान), दूसरी राजनीति, तीसरी हर बातमें सावधानी रखना और चौथी साक्षेप यानी जी-जानसे कोशिश करना। (दूसरोंकी) अनेक प्रकारकी शंकाओंका समाधान करनेकी कला नेतामें होनी चाहिये। छोटे-बड़े अन्यायोंके लिअे क्षमा करने जितना अुदार हृदय अुसे रखना चाहिये।

अैसे नेताको ही (साथियोंका) समुदाय मिलता है।

अैसे आदर्श नेताके पास जाकर तालीम लेनेकी मेरी अिच्छा थी। बवअीके राजनीतिक क्षेत्रमें सेवाकार्य करनेको मेरे लिअे चाहिये अुतनी गुजाअिश थी।[1] बम्बअी राज्य (अुस समय प्रान्त) और बबअी शहरकी युवक-परिषद समितिकी मैं सदस्या चुनी गअी थी। श्री नरीमान हमारे अध्यक्ष थे। श्री बालासाहब खेर अुपाध्यक्ष थे तथा श्री मेहरअली श्री बाटलीवाला वगैरा युवक सहयोगी कार्यकर्ता थे। सबमें भरपूर अुत्साह था। फिर साम्यवादी युवक कार्यकर्ताओंसे भी मेरा परिचय हुआ। श्री डांगे, श्री निमकर श्री शौकत अुस्मानी श्री स्प्रैट वगैरासे पहचान हुअी। मैं मराठी और अंग्रेजीमें भाषण देती थी। आदोलनमें स्त्रियोंकी बहुत कमी होनेके कारण जो अिनी गिनी बहन अुसमें शामिल होती थी, अुनका मूल्य बहुत आका जाता था। लेकिन मुझे सस्ती लोकप्रियता नहीं चाहिये थी। मैंने देखा कि युवक-युवतियोंमें अुत्साह तो बहुत है, लेकिन सयम नहीं है, चिन्तनशीलता नहीं है। तालीमके महत्त्व और आवश्यक्ताको कोअी स्वीकार नहीं करते। कॉग्रेस पर धरना देने जाने तब ज्यादातर कार्यकर्ता अिस बातकी अपेक्षा रखते कि समय समय पर चाय मिठाअी वगैरा अुन्हें मिलती रहे। अेक भी सभा खाने-पीनेके आखिरी कार्यक्रमके बिना पूरी नहीं होती थी। देशका कगाल बनानेके लिअे अग्रेज सरकारको गाली देनेवाले लोग खुद जनताके पैसाको खान-पीने और मौज शौक करनेमें अुड़ाना चाहें यह मुझे अनुचित मालूम होता था। अैसे कार्यक्रमोंमें मैं शामिल नहीं होती थी।

बबअी म्युनिसिपैलिटीके चुनावके समय कअी बहनें कांग्रेसके समर्थनमें चुनावके लिअे खड़ी हुअी थीं। श्री अवंतिकाबाअी गोखले[1] के लिअे

[1] बम्बअीकी यह महाराष्ट्री महिला बर्षों तक कांग्रेसकी कार्यकर्त्री थीं। पूज्य महात्माजीकी 'आत्मकथा' में भी अुनका नाम आया है। मराठीमें पूज्य महात्माजीका चरित्र सबसे पहले अुन्होंने लिखकर छपवाया था। अुस पुस्तककी प्रस्तावना लोकमान्य तिलकने लिखी थी। भारत महिला समाजकी स्थापना श्री अवन्तिकाबाअीने की और जीवनपर्यन्त

प्रचार करनेका काम मुझे सौंपा गया था। सुबहसे दोपहर तक मैंने काम किया। दोपहरकी छुट्टीमें श्री अवन्तिकाबाओ मुझे और दूसरी स्वयं-सेविकाओंको खानेके लिओ बुलाने आओ। अुस समय मुझे मालूम हुआ कि अपने खर्च पर प्रचारकों और सहायकोंको खिलाना-पिलाना अुम्मीदवारोंका फर्ज माना जाता है। लेकिन मुझे यह पसन्द नहीं आया। अपना घर हो, खाने-पीनेकी सुविधा हो, तो फिर सेवाका बदला क्यों लिया जाय? मैं तो होस्टलमें आकर खा आओ। मेरा आदर्श निरपेक्ष सेवाका आदर्श था।

मुझे लगा कि जिन युवक-युवतियोंको योग्य तालीम न मिली तो अिनमें से अधिकांश आन्दोलनमें टिकेंगे नहीं; और जो टिकेगा अुसे नैतिक बल नहीं मिलेगा। कमसे कम मैं तो तालीम लिये बिना नहीं रहूंगी। सैनिक बननेके लिओ कवायद और दूसरे अनेक संस्कार ग्रहण करने पड़ते हैं। तब क्या सत्याग्रहीके लिओ योग्य तालीम जरूरी नहीं है?

कुछ लोग यह मानते थे कि सेवा करते करते तालीम मिल जाती है। यह मत मुझे स्वीकार नहीं था। गुरु बिना तालीम कैसी? भारतकी आजादीके लिओ सत्याग्रहकी पद्धतिसे ही आन्दोलन करना हो, तो सत्याग्रह आन्दोलनके नेता ही योग्य गुरु हो सकते थे।

मुझे अीश्वरके अधिष्ठानका महत्त्व समझमें आता था, लेकिन अुसके लिओ श्री अरविन्दबाबू जैसे योगी और तत्त्वज्ञानीके प्रति मुझे आकर्षण नहीं हुआ। वे अेकान्तमें रहते थे, लोगोंमें घुलते-मिलते नहीं थे। युवावस्थामें पराक्रमका आकर्षण मुख्य रहता है। श्री अरविन्दबाबूके व्यक्तित्वका यह पहलू अुस वक्त जनताकी दृष्टिसे ओझल था।

अुसका संचालन किया। सत्याग्रहके सिलसिलेमें अुन्होंने जेल भी भोगी थी। युवावस्थामें अुन्होंने अेक साल विलायतमें बिताया था। काफी अरसे तक बम्बअीके साप्ताहिक 'हिन्द महिला' की सम्पादिका थीं। जहां तक मुझे याद आता है वे तीन साल तक बम्बअी म्युनिसिपैलिटीकी सदस्या रहीं।

समर्थ रामदास स्वामीने 'दासबोध' में लिखा है

शिष्यास न लविनी साधन। न करविती अिंद्रिय-दमन।
अैसे गुरु आडवयाचे तीन। मिळाले तरी टाकावे॥

जो अपने शिष्योंसे साधना नहीं कराते, जो अुनसे अिंद्रिय-दमन नहीं कराते, अैसे गुरु टकेके तीन मिले तो भी अुनका त्याग करना चाहिये।

अैसे निकम्मे गुरुओंके लिअे अुनके मनमें तिरस्कार था। समर्थ रामदास स्वामीके अिस आदर्शसे मिलते-जुलते अेक ही गुरु मेरी आंखके सामने थे और वे थे पूज्य महात्मा गांधी।

बारडोलीका आन्दोलन चल रहा था, अुस समय विचित्र रीतिसे बारडोली जानेका मुझे मौका मिला। श्री ताअी तुळसकरके छात्रावासमें श्री कमलाबाअी साअिलस नामकी अेक अीसाअी बहन थी। अुनके साथ मेरी मित्रता हुअी। ये बहन बबअीकी सेवासदन सस्थामें शिक्षिका थी। राष्ट्रीय वृत्तिकी थी। अुनके मारफत अेक गुजराती परिवारमें मुझे ट्यूशन मिली थी। अिस कुटुम्बमें श्री मणिबहन कापडिया नामकी अेक प्रौढ प्रेमल बहन थीं। (कुछ साल बाद अिसी परिवारके मकानके अूपरके हिस्सेमें श्री किशोरलालभाअीके गुरु श्री नाथजी रहने लगे।) अिन मणिबहनके साथ बारडोली जानेका मुझे मौका मिला। श्री कमलाबहन साअिलस भी साथ थीं। बारडोलीमें सरदार पटेलसे मुलाकात हुअी, बातचीत हुअी। फिर मेरे आग्रहके वश होकर मणिबहन और कमलाबहन अहमदाबाद-साबरमती तक मेरे साथ गअीं।

हम साबरमती सुबह पहुंची। रिमझिम रिमझिम पानी बरस रहा था। वर्षोंसे मनमें स्वप्नकी तरह बसे हुअे आश्रमके अब प्रत्यक्ष दर्शन होनेवाले थे। और मेरे जीवनके आदर्श पुरुषसे भेंट भी होनेवाली थी। अुनके साथ बातचीत करनेका मौका मिलनेवाला था, अिसलिअे हृदय हर्षसे अुछल रहा था। आश्रममें श्री गंगाबहन ज्वेरी नामकी अेक महिला थी, जिनसे मणिबहनका अच्छा प्रेम सबध था। गंगाबहनसे मिलकर हमने प्रात कर्म पूरे किये। मालूम हुआ कि बापूजी सुबहकी सैरको गये हैं।

में दर्शन करनेकी बहुत अुतावली हो रही थी। मैंने पूछा, "हम अुनके पीछे ही क्यों न चलें?" अुन सज्जन बहनोंने मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और हमारा छोटासा जुलूस चला। हम थोड़ी ही दूर गये होंगे कि सामनेसे पूज्य महात्माजी लौटते हुअे दिखाअी दिये। अुन्होंने काला कम्बल ओढ़ रखा था। अुनके साथ अेक बहन गुम्मी छतरी लेकर चल रही थी। गंगाबहनने कहा, "यह बहन जयप्रकाशबाबूकी पत्नी प्रभावतीदेवी हैं।" अुनके कंधे पर हाथ रखकर महात्माजी चल रहे थे! मैं अधीर और बावली हो गअी। साथकी बहनोंको छोड़कर आगे दौड़ गअी। लेकिन थोड़ासा अन्तर रह गया तब कुछ खयाल हुआ और गर्वोंचसे खड़ी रह गअी। सामनेसे महात्माजी मदहास्य करते आ रहे थे और पीछे बहनें हंस रही थीं। "कैसे रुक गअीं? आगे दौड़ो।" शायद गंगाबहनने यह कहा होगा। पूज्य महात्माजी पास आये तब मैंने दौड़कर अुनके चरण-कमलों पर सिर रखा। शुभ सुखद स्पर्शसे कृतार्थताका अनुभव हुआ। फिर खड़े होकर मैंने हाथ जोड़े और आंसुओंसे भीगी आंखें अुनके मुख-मंडल पर टिका कर मनमें कहा : "अजि म्यां ब्रह्म पाहिलें।" —आज मैंने ब्रह्मका साक्षात्कार किया; —नहीं, अुसके साथ अद्वैत भावका अनुभव किया!!

बहनें पास आअीं। गंगाबहन हंसते हंसते कुछ अिस तरह बोलीं, "कैसी पागल लड़की है!" पूज्य महात्माजीने मुझसे हालचाल पूछे। मैंने बारडोलीके और सरदारके कुशल-समाचार सुनाये। हम अंग्रेजीमें बातचीत कर रहे थे। आश्रम पहुंचनेसे पहले मैंने अुनसे विशेष बातचीत करनेके लिअे समय मांग लिया। महात्माजीने कहा, "शामको घूमने जाते समय मुझसे मिलना।" महात्माजीके साथ बात करनेका पहली बार सौभाग्य मिला, जिससे प्रसन्न होती हुअी मैं बहनोंके साथ निवास पर गअी।

दोपहर तक मैंने सारा आश्रम देख लिया। वहांके जीवनके बारेमें भी गंगाबहनसे जान लिया। फिर दोपहरको हम गुजरात विद्यापीठ देखने गयीं। आचार्य कालेलकरसे मेरी पहली भेंट अुसी समय हुअी। मैंने अुनके

बारेमें सुन तो रखा था, लेकिन अुनके दर्शन करनेका अवसर नहीं आया था। धाबासाहब जैसे विद्वान पुरुषके साथ बातचीत करनेमें मुझे संकोच हुआ, लेकिन काकासाहब तो अैसे बोलते थे मानो किसी समान वयवाले मित्रके साथ बात करते हों। बातचीत मराठीमें शुरू हुअी, अिसलिअे मेरा संकोच दूर हो गया और साबरमती आनेका अपना हेतु मैंने अुन्हें बता दिया। तालीम लेनेके लिअे आश्रममें भरती होनेकी मेरी अिच्छाका अुन्होंने स्वागत किया। फिर हम संस्थाको देखकर आश्रममें वापस आयीं।

ग्रामकी सैरके समय पूज्य महात्माजीसे मिलनेके लिअे हम निकलीं तो देखा कि लोगोंका अेक खासा अच्छा दल अुनके चारों ओर अिकट्ठा हो गया था। अुसमें कुछ लडकियां भी थीं। मैं परेशानीमें पड़ी कि अिस हालतमें बातचीत कैसे हो सकेगी। अेकके बाद अेक व्यक्ति अपनी बारी पूरी करके वापस लौट रहा था। कुछ समय बाद मेरी बारी आअी। बहुत संकोचके साथ संक्षेपमें मैंने अपने जीवनका परिचय देकर महात्माजीको अपना ध्येय बताया और आश्रममें प्रवेश करनेकी अिजाजत मांगी।

लेकिन पूज्य महात्माजीने मुझे प्रोत्साहन नहीं दिया। तटस्थ भावसे अुत्तर दिया।

वे कहने लगे, "यहां शरीर-श्रम करना पड़ता है। सफाअी करना, रसोअी बनाना, पीसना, कातना आदि काम करने पड़ते हैं।"

मैंने कहा, "मुझे मालूम है। मुझे शरीर-श्रमकी आदत है। मैं अपने घरमें भी ये सब काम करती थी।"

"सुबह चार बजे अुठना पड़ता है।"

"अुसमें कोअी दिक्कत नहीं आयेगी।"

"पाखाना-सफाअी करनी पड़ती है।"

मैंने कहा, "मुझे मालूम है। यहांके पाखाने मैंने देख लिये हैं। मुझे घृणा नहीं आयेगी।"

फिर भी महात्माजी ज्यादा मुश्किलें बताते ही गये। मैं भी हर परिस्थितिमें संतोषपूर्वक रहनेकी अपनी तैयारी बताती ही गअी।

अन्तमें अुन्होंने पूछा, "तुम अवन्तिकाबाअी गोखलेको जानती हो?"

"जी हां।"

"अुनसे मिलकर आश्रम-जीवनके बारेमें पूछ लेना।"

मैंने कहा, "आप कहते हैं तो पूछ लूंगी, लेकिन मुझे अुसकी जरूरत मालूम नहीं होती। मैंने तो सत्याग्रहकी तालीम पानेके लिअे अिस आश्रममें भरती होनेका निश्चय कर लिया है।"

मेरी दृढ़ताको देखकर अुनकी कड़ी आवाज कुछ नरम पड़ी। कहने लगे, "आश्रममें प्रवेश मिलनेमें तुम्हे कठिनाअी नहीं होगी, लेकिन पूरी तरह विचार करनेके बाद कदम बढ़ाना ठीक होगा।"

अिस आश्वासनसे मुझे कुछ राहत मिली। मैंने कहा, "मैं तो जल्दीसे जल्दी आना चाहती हूं, लेकिन मेरी अैसी अिच्छा है कि मैं यहां आअूं अुस समय आप भी यहां रहें। परन्तु मैंने सुना है कि आन्तर-राष्ट्रीय धर्म-परिषदके अधिवेशनमें भाग लेनेके लिअे आप थोड़े ही दिनमें यूरोप जानेवाले हैं।"

"अुसका विचार जरूर चल रहा है।"

"आप यूरोप जायें तो वापस आनेमें कुछ महीने तो जरूर लगेंगे?" (अुस समय यात्रा जहाजमें होती थी। आजकी तरह हवाअी जहाजका प्रचार नहीं हुआ था।)

"अैसा जरूर हो सकता है। लेकिन मैं यहां न होअूं तो भी क्या? और लोग तो यहां रहेंगे ही। तुम आकर रह सकती हो।"

"नहीं, यह नहीं हो सकता। मैं तो आपके आनेके बाद ही यहां आअूंगी। थोड़े महीने बाद मेरी परीक्षा है। परीक्षा देकर मैं आ जाअूंगी।"

"जैसी तुम्हारी अिच्छा। तुम जब भी आओगी, आश्रमके द्वार तुम्हारे लिअे खुले ही होंगे।" (Whenever you come, the doors of the Ashram will be open to you.)

अिसके बाद बारडोलीके आन्दोलनके बारेमें कुछ प्रश्नोत्तर हुअे और हम अलग हुअे।

मैं शामकी प्रार्थनामें हाजिर थी। श्री पंडितजीको भी पहली ही बार मैंने देखा। मुझे प्रार्थना तो अच्छी लगी, लेकिन मुझ पर अैसी छाप पड़ी कि भजन और धुन गाते समय पंडितजी तल्लीन नहीं हो पाये।

रातको बम्बअी वापस लौटी। दो दिनमें तीन महापुरुषोंके दर्शन हुअे अुसके आनन्दमें मन मग्न हो रहा था।

*

मैं आश्रममें आकर रहने लगी अुसके बहुत समय बाद पूज्य महात्माजी समय समय पर प्रार्थनाके वक्त, व्यक्तिगत बातचीतमें या पत्रोंमें मेरी तारीफ करने लगे। फिर अेक दिन बातचीतमें मैंने अुन्हें ताना मारा, "महात्माजी, यहांकी ज्यादातर बहनें कहा करती हैं कि हमें बापूजी यहां बुला लाये। कोअी अपने पतिके साथ, कोअी भाअीके साथ, कोअी पिताके साथ यहां आअी। लेकिन केवल मैं ही अैसी हूं, जो स्वयं ही कुत्तेके बच्चेकी तरह आपके पीछे दौड़ी चली आअी हूं। लेकिन आपने कैसा व्यवहार किया? पहली ही भेंटमें मेरे प्रति अविश्वास दिखाया और मुझे आश्रम-जीवनकी मुसीबतें ही बताने लगे! मेरे अुत्साह पर ठंडा पानी डालने लगे। लेकिन अब तो विश्वास हुआ न?"

पूज्य महात्माजीने हंसते-हंसते कहा, "तेरी बात सच्ची है। मुझे पहले तो विश्वास ही नहीं हुआ। मुझे लगा कि यह पढ़ी लिखी बम्बअीकी लड़की है। अंग्रेजी बघारती है, आश्रममें आनेकी बात करती है, लेकिन आयेगी नहीं, आयेगी भी तो अिसे आश्रम-जीवन अच्छा नहीं लगेगा, यह आश्रममें टिकेगी नहीं। लेकिन तू सच्ची निकली। मैं अपनी हार स्वीकार करता हूं!"

*

बम्बअी आनेके बाद अध्ययन, अध्यापन और रोजका कार्यक्रम शुरू हुआ। सार्वजनिक सेवाका काम तो मौका आने पर चलता ही था। बम्बअीसे करीब ४०-५० मील दूर समुद्रके किनारे सासवने नामका अेक गांव है। वहां मेरी अेक सहेली कु० कृष्णाकुमारी घुमटकर (छोटेमें 'किसन')

के पिनाका मकान और खेतीवाडी है। किसनके साथ मैं दो तीन बार वहा गओी थी। अुस गावमें वैश्य-विद्याश्रम नामक राष्ट्रीय शिक्षाकी अेक सस्था थी। सस्थामें चरखे चलते थे और सारे शिक्षक तथा विद्यार्थी खादी ही पहनते थे। खास प्रसग पर राष्ट्रीय नेता वहा आ जाते थे। पूज्य महात्माजी भी वहा अेक बार आ चुके थे। वही श्री गंगाधरराव देशपाडे, श्री जमनालालजी बजाज, श्री किशोरलाल मशरुवाला वगैरासे मेरा परिचय हुआ था और अुनके साथ बातचीत करनेका सौभाग्य भी मिला था। सार्वजनिक जीवनमें शुद्ध आचरणवाले सज्जनों तथा अुदार-हृदय व्यक्तियोंसे जैसे जैसे मेरा परिचय होता गया वैसे वैसे अुसमें मेरा रस भी बढता गया। वैश्य-विद्याश्रमके सचालक श्री ढवण और अन्य कार्यकर्ता स्व० श्री नाना काणे और श्री शास्त्रीजी वगैरासे भी परिचय हुआ। बादमें मैं महाराष्ट्रमें सेवा करने लगी तब यह परिचय और भी दृढ होता गया।

अप्रैल १९२९ में परीक्षा देनी थी। अुससे दो महीने पहिले मैंने पूज्य महात्माजीको पत्र लिखनेका सोचा। वे यूरोप नहीं गये। लेकिन बारडोली आदोलनके बाद भावी आन्दोलनके चिह्न दिखाओी देने लगे थे। अुनके पास जल्दी पहुचनेके लिअे मेरा दिल भी अुछल रहा था। श्री ताओीने महात्माजीको पत्र लिखकर याद दिलानेकी मुझे सलाह दी। मुझे यह सलाह ठीक लगी और मैंने पूज्य महात्माजीको पहला पत्र लिखा। अत्यन्त भक्तिभावसे रगीन कागज पर सुन्दर अक्षर बनाकर पत्र लिखा। अुसमें अपनी मुलाकातका वर्णन किया, अुनके आश्वासनका स्मरण कराया और लिखा, "अप्रैलमें परीक्षा पूरी होने पर वहा आनेका मेरा विचार है। लेकिन आप वहा लबे अरसे तक रहेंगे अैसी आशा तो रखती ही हूं।"

जिस दिन दोपहरको अुनके अुत्तरका कार्ड (अुनका भी पहला पत्र) मुझे मिला, अुस दिन मेरे आनदका पार न रहा। अुसे बार बार पढ़ कर दौडती हुओी मैं ताओीके पास गओी और बोली, "ताओी, ताओी, देखिये तो सही! महात्माजीके हाथका लिखा हुआ अुत्तर मुझे मिला है।"

यह कहकर यह कार्ड मैंने अुन्हें दिया। देनेसे पहले हर्षोन्मादमें मैंने अुसको (पत्रको) चूम लिया।

ताअी हसने लगी। मुझे छातीसे लगाकर कहने लगी, "प्रेमावहन, तुम कैसी पागल हो!"

भावनाओंका वेग कम होनेके बाद मैंने विचार किया। महात्माजी सफरमें ही फंसे हुअे मालूम हुअे। लेकिन आन्ध्र जाते वक्त बबअी होकर जानेवाले थे। मुझे लगा कि अुस वक्त मैं अुनसे मिलकर बात करू।

मणिभवनमें वे ठहरे तब मैंने अुनसे मुलाकात की। अुसमें निश्चय किया कि आन्ध्रसे वापस लौटते समय वे बबअी आयें, तब अुनके साथ ही साबरमती चली जाअू। मालूम हुआ कि यह मअीमें ही हो सकेगा।

मैं खुश हुअी। अब मेरे सगे-सबधी और प्रियजनोंको मेरा आश्रम जानेका निर्णय मालूम हो गया था। युवक-परिषदके कार्यकर्ताओंको भी अिसका पता चला था। अिस सिलसिलेमें अलग अलग मत मेरे पास आने लगे। मेरे हाअीस्कूलके शिक्षक श्री धुरधर अुस वक्त बबअीके मराठी पत्र 'नवाकाळ' में सह-सपादक थे। हमारा परिचय बढ गया था और हम बार बार मिलकर आदर्शोंकी चर्चा और विचारोंका आदान-प्रदान करते थे। अुन्होंने मेरे निर्णयका स्वागत किया और मुझे प्रोत्साहन दिया, मदद करनेकी तैयारी भी बताअी। युवक-परिषदके कार्यकर्ताओं और सहयोगी बधुओंको मेरा यह निश्चय अच्छा नहीं लगा। आश्रम और जगलमें अुन्हें कोअी खास फर्क नहीं मालूम होता था। अुन लोगोंकी मान्यता यह थी कि बबअीमें रहकर ही सेवा, पुरुषार्थ और जीवनका विकास होगा। मेरे पिताजीका क्रोध शांत नहीं हुआ था, अिसलिअे मैं अुनके पास गअी ही नहीं। दूसरे सगे-सबधियों और सहेलियोंकी रायें अलग अलग मिलीं

"अिस जीवनमें कूद पडनेसे पहले दीर्घ विचारकी जरूरत है। देशभक्तिका जोश तो तात्कालिक होता है। भविष्यका क्या? शरीर-

स्वस्थ और मजबूत है तब तक शक्ति हमारी होती है। शक्ति समाप्त होने पर कौन मदद करेगा?"

"देशभक्तिके रास्तेमें पैसा नहीं मिलता। धन न हो तो कोओ बात नहीं पूछता। सावधान रहना। धनवानोंको छोड़कर जानेसे धोबीके कुत्ते जैसी हालत होगी — न घरका न घाटका!"

"पहले धन कमाओ, फिर देशभक्ति करो। धनवान देशभक्तोंका ही दुनिया मान करती है, दरिद्रोंका नहीं।"

"तू विचार कर। तू स्त्री है, पुरुष नहीं। पुरुष या जवान लड़का चाहे जो कर सकता है। लड़का देशमें दुनियामें प्रवेश करे तो भी अुसका कुछ नहीं बिगड़ता। लेकिन लड़कीकी स्थिति भिन्न है। वह अधिक समय तक सही-सलामत नहीं रह सकती।"

"लड़कीकी पूंजी अुसका सतीत्व है। तू तो दूसरे प्रदेशमें, दूसरे लोगोंमें, दूसरी भाषा बोलनेवालोंके बीच रहने जा रही है। कलको कोओ आफत आ पड़े तो स्वजन पास नहीं होंगे। स्त्रीका सतीत्व चला जाय तो अुसकी सारी जिंदगी बरबाद हो जाती है। अिसका पूरी तरह विचार कर।"

"महात्माजीका सहारा भी स्थायी रूपमें मिलनेवाला नहीं है। वे आज बाहर हैं, कल जेल चले जायेंगे। फिर तेरा क्या होगा? वहांके सब लोग क्या अुन्हींके जैसे होंगे? कौन तेरा भार अुठायेगा? और मान ले कि वे जेल नहीं गये। लेकिन बूढ़े आदमीकी जिंदगीका क्या भरोसा? अुनका अवसान हो जाय तो तू क्या करेगी?"

"ब्रह्मचर्यका पालन सरल नहीं है। अनुभवियोंसे पूछ ले। जिन्होंने विवाह किया है वे पागल थोड़े ही हैं। आज देशभक्तिके अुत्साहमें तुझे दूसरा कुछ सूझता नहीं है। लेकिन यह जोश अुतरनेके बाद बड़ी अुमरमें तू शादी करना चाहे, तो किस माका लड़का तुझसे शादी करनेको राजी होगा? — हमारी जातिका तो राजी नहीं ही होगा! फिर क्या तू ... की तरह मुसलमानसे शादी करेगी? फिर तो धर्म और जातिसे बाहर रहना पड़ेगा। अुससे क्या लाभ होगा?" वगैरा वगैरा।

ये सब बातें मैं सन १९२९ के सालकी कह रही हू। हितैषियोंने अपनी मर्यादाके अनुसार कओी शकायें अुपस्थित की। शकाओंका अत ही नही है। अुनका निराकरण भी कैसे हो? अेक जवान लडकी अेक अनोखा प्रयोग करनेका निश्चय कर रही थी। भविष्य अज्ञात था। अपनी शक्ति पर अुसे विश्वास नही था। फिर दूसरोके सामने दलील कैसे करे? फिर भी बचपनसे भगवान पर मेरी अटल श्रद्धा थी। मेरा विश्वास था कि सत्यके मार्गमें कोओी डर नही है।

सत्य सकल्पाचा दाता भगवान। सर्व करी पूर्ण मनोरथ ॥

सत तुकारामका यह वचन मेरे लिअे दीपस्तम्भकी तरह था। सत्य सकल्पकी प्रेरणा ओीश्वर ही देता है और अपनी कृपासे सब मनोरथ पूरे करता है। अिस सत्यमें मेरा शत-प्रतिशत विश्वास था। मेरी अैसी श्रद्धा थी कि अब तक मेरा जीवन जिस प्रकार बनता गया और ध्येयको पानेके लिअे जो जो अनुकूलतायें मुझे मिलती गओी, वह सब ओीश्वरकी अिच्छाके अनुसार ही हुआ।

जेथें जाता तेथें तू माझा सागाती।
चालविमी हातीं धरुनिया ॥

सत तुकाराम भगवानको लक्ष्य करके कहते हैं, "मैं जहा जहा जाता हूं वहा तू ही मेरा साथी होता है। मेरा हाथ पकडकर मुझे चलाता है।" मुझे भी वैसा ही अनुभव हुआ था। मैंने सोचा कि अपने जीवनके विकासके लिअे और देशका ऋण चुकानेके लिअे मुझे सत्याग्रही सैनिक बनना है। साधारण सैनिक जब युद्धके लिअे जाता है, तब "मेरा क्या होगा? मैं मर जाअूगा? या घायल हो जाअूगा? अपग होकर जीअूगा तो मेरा क्या होगा? मेरे बाल-बच्चोंका क्या होगा?" अैसा विचार नही करता। 'स्वधर्मे निधन श्रेय' को मानता है। मुझे भी वैसा ही करना है। जो होना होगा वह होगा। भगवानका यह आश्वासन है कि 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।' अिस प्रयागमें

हम बरबाद हो जाय तो भी जीवन अुज्ज्वल हो गया कहा जायगा। जीवित रहे तो जीवनके विकासका लाभ मिलेगा ही।

मैंने अपनी तैयारी की। बुआ, मौसी और किसनकी मां (जिनके निरपेक्ष प्रेमके कारण हम अुन्हें 'भारतमाता' कहते थे) का आशीर्वाद लिया तथा स्नेहियों और सहेलियोंसे विदा ली। २५ मअी, १९२९ की रातको मैं पूज्य महात्माजीके साथ बबअीसे अहमदाबादके लिअे रवाना हुअी, यद्यपि मैं स्त्रियोंके डिब्बेमें बैठी थी। महात्माजीके डिब्बेमें बहुत भीड़ होनेकी वजहसे अुनकी आज्ञाके मुताबिक मैं अलग बैठी थी। २६ को सुबह अहमदाबाद स्टेशन पर मिले। फिर अुनके साथ ही मोटरमें सत्याग्रह आश्रम पहुची।

हृदयकुंजमें बैठकर पूज्य महात्माजी गरम पेय पीने लगे। मुझे आज्ञा दी, "अगर अेक सप्ताहके अंदर तुम्हें गुजराती बोलना आ जाय तो ठीक है, नहीं तो यहासे निकाल बाहर करूगा।" बात अंग्रेजीमें की।

कोशिश करके गुजरातीका थोड़ा परिचय तो मैंने प्राप्त कर लिया था, लेकिन बोलना नहीं आता था। मुझे हृदयकुंजमें ही अेक कमरा दिया गया। अुसमें श्री दमुमती बहन पंडित नामकी अेक बहन रहती थी। लेकिन अुस समय वे बाहर गअी हुअी थी। मुझे अेक खाट भी मिली। मैंने देखा कि पूज्य महात्माजी बाहर आगनमें खाट डालकर आकाशके नीचे खुलेमें सोते हैं। मैंने भी अपनी खाट अुनके साथ थोड़ी दूरी पर बिछा ली और तबसे मैं बाहर ही सोने लगी। रोज सुबह अुठते ही महात्माजीका दर्शन सबसे पहले होता था!

पहली रातको ही सोनेसे पहले अुन्होंने मुझसे पूछताछ की। फिर मैंने पूछा, "मुझे यहा क्या काम करना है? दिनमें क्या क्या काम करू?"

अुन्होंने प्रश्न किया, "तुमको चित्रकला आती है?"

मैंने कहा, "थोड़ी थोड़ी आती है। पाठशालामें सीखी थी और बादमें स्वयं कोशिश करके अभ्याससे जो प्राप्त की अुतनी ही आती है।"

तो फिर रोज सुबह बाल-मंदिरमें जाकर अेक घंटे तक बच्चोंको चित्रकला सिखाती रहो।"

'दूसरा कुछ?"

'रसोओीमें अेक घंटा देना।"

'तीसरा?'

"रोज अेक घंटा कातना।"

अिस तरह अुन्होंने मुझे रोज तीन घंटेका काम दिया, लेकिन मेरे लिअे समयकी यह मर्यादा टूट गअी। सेवाकार्यका समय बढ़ता गया। अेक दिन मैंने खुद होकर पाखाना-सफाअीमें भाग लिया। महात्माजीको मालूम हुआ तो खुश होकर अुन्होंने मुझे शाबाशी दी।

मेरे वहां जानेके बाद पूज्य महात्माजी अेकाध हफ्ते ही आश्रममें रहे होंगे। फिर सफर पर चल गये। लेकिन जानेसे पहले अेक रात नौ बजनेसे पहले मुझे अपनी खाटके पास बिठाकर मेरे घरकी बहुतसी बातें पूछने लगे। मेरे जीवनका ज्यादा परिचय पा लेनेकी अुनकी अिच्छा थी।

घरकी बातें करनेमें मुझे थोड़ा संकोच तो जरूर हुआ। अुस वक्त तो हमारे बीचमें अन्तर मालूम होता था। मैं अभी नअी ही थी। अिसलिअे संक्षेपमें बात की। लेकिन जब जीवनके दृष्टिकोण और ध्येयके बारेमें बातें चली तो मुझे रस आ गया और मैं अुन्हें अपने आदर्शके बारेमें विस्तारसे बताने लगी। 'भावी सत्याग्रहके संग्राममें भाग लेनेके लिअे मेरा हृदय तड़प रहा है। मुझे सैनिक बनना है। अुसके लिअे तालीम लेनी है।' अैसी अैसी बातें मैंने कीं।

गंभीर बनकर पूज्य महात्माजी मेरी बात सुन रहे थे। अुन्होंने मुझे कहने तो दिया, लेकिन फिर वे आश्रम-जीवनके बारेमें बात करने लगे। मैं अधीर हो गअी। मैंने कहा "महात्माजी, यहांके काम करनेमें मेरी ना नहीं है। वह तो मैं करती ही हूं। लेकिन अुनका सत्याग्रहसे क्या संबंध है, यह मेरी समझमें नहीं आता। मुझे सत्याग्रहके संस्कार चाहिये,

जब कि आप दूसरी ही बात करते हैं। आप मुझे कहां ले जा रहे हैं?
(Where are you leading me to?)"

"मैं तुम्हें सत्याग्रहके रास्ते पर ले जा रहा हूं। (I am leading you to the path of Satyagraha!)" वे बोले, "जिसी मार्ग पर सत्याग्रह है, देशभक्ति है, सेवा है।"

मैंने कहा, "But I want to do something tremendous! (लेकिन मुझे तो कोभी प्रचंड कार्य करना है!)"

अुन्होंने विनोद किया, "The only tremendous thing that you can do now is to go to sleep. (अभी तो जो प्रचंड कार्य तुम कर सकती हो वह सिर्फ सो जानेका है।)"

*

आश्रममें आकर हृदयकुंजमें रहने पर भी पूज्य महात्माजीका सहवास दिन-रात नहीं मिलता था। दिनमें दोनों ही अलग अलग जगह काममें लगे रहते थे। खानेके समय दोनों बार मैं अुनके सामने ही बैठती थी। शामको घूमने जाते तब लड़कियोंके साथ मैं भी अुनके साथ जाती थी। प्रार्थनामें दोनों समय शरीक होती थी और रातको अुनके समीप सोनेको मिलता तब अधिकतर रोज ही अुनके साथ कुछ न कुछ बातचीत होती थी।

पूज्य महात्माजीने कहा था कि, "यहां आनेके बाद पहलेका पढ़ा हुआ सब कुछ भूल जाना चाहिये और यहां नजी दिशा और नया जीवन प्राप्त करना चाहिये।" अुनके आदेशका पूरी तरह पालन करते हुओ जीवनका विकास करनेकी मैं जी-जानसे कोशिश करने लगी। अुनके पास सारा दिन बितानेको मिले, अैसी अिच्छा तो कभी मनमें भी नहीं अुठी थी। मेरे काम और मेरी तपस्या या साधनाके द्वारा अुन्हें सन्तोष करानेकी लगन मुझे लगी थी। मेरे बारेमें अुनका जो अविश्वास था वह निकल जाय और आदर्श जीवनके लिअे मेरी योग्यता सिद्ध हो जाय, तो मैं अुनकी कृपाकी पात्र बन जाअूंगी, अैसी मेरी श्रद्धा थी। वे जैसे

अध्यात्म-वीर थे, वैसे ही संग्राम-वीर भी थे। मेरे आदर्श मुझे अुनमें मूर्तिमंत दिखाओ देते थे। अिसलिअे वे जो मार्ग बतायें अुस पर चलकर अपने आदर्शों तक पहुचनेकी मेरी आकाक्षा थी।

मेरे आश्रम पहुचनेके थोडे दिन बाद वे बाहर गये। जाते समय मुझसे कह गये थे कि "मुझे पत्र लिखना।" मैंने विचार किया कि अुसके लिअे मुझे गुजरातीका ज्यादा अभ्यास करना चाहिये। बहनोंके साथ मैं टूटी-फूटी गुजरातीमें बात करने लगी थी। लेकिन अुससे क्या बनता? आठ दिनामें भूल किये बगैर गुजरातीमें बोलना मुझे कैसे आ सकता था? फिर हिन्दीभाषी लोग भी आश्रममें थे। मैं तो भाषा-रसिक थी। आश्रममें भारतके लगभग सभी प्रातोके सेवक अिकट्ठे हुअे थे। अिसलिअे कअी भाषाओका परिचय प्राप्त कर लेनेका मौका अनायास हाथ लग गया। लेकिन सेवाके काममें ज्यादा समय देना पडता था, अिसलिअे भाषाका ज्ञान प्राप्त करनेके लिअे समय नही मिलता था। पढना भी नही हो पाता था, तब भाषाओका अभ्यास तो कहासे होता? मुश्किलसे गुजराती, हिन्दी और अुर्दूका परिचय हुआ।

पूज्य महात्माजी सफर पर गये अुसके थोडे ही दिन बाद अेक रात मैंने स्वप्न देखा। मैंने देखा कि पूज्य महात्माजी आसन पर पलथी मारकर बैठे है। अुनकी गोदमें मैं छोटी बच्ची बनकर लेटी हू। अुनके वक्षस्थलसे शुभ्र, सुदर दूधका प्रवाह बह रहा है और वह सीधा मेरे मुहमें गिर रहा है। वह मधुर दूध मैं पी रही हू। पूज्य महात्माजी कह रहे हैं, "पी, पी और पी।" दूधसे मैं धाप गअी, पटमें जगह नही रही, तो भी दूधका प्रवाह निकल ही रहा है और पूज्य महात्माजी भी ज्यादा पीनेके लिअे आग्रह कर रहे हैं! आखिर अुस प्रवाहने मुझे सिरसे पैर तक प्लावित कर दिया, तो भी प्रवाह चालू रहा। मैं घबरा कर नीदसे जाग अुठी।

अिस स्वप्नसे मनमें कुतूहल जागा! पूज्य महात्माजीको आश्रमसे जो पहला पत्र लिखा अुसमें मैंने अिस स्वप्नके विषयमें विस्तारसे लिख भेजा।

गुजराती लिखना अच्छी तरह नहीं आता था, अिसलिअे जहां तक मुझे याद है मैंने श्री गंगाबहन झवेरीकी मदद ली। स्वप्नका अर्थ पूछा और दूसरी बातें लिखकर पत्र समाप्त किया।

पूज्य महात्माजीका अुत्तर आया। छोटासा था। अुनके सारे पत्र छपनेसे पहले नकल करानेको दिये गये थे, तब कभी पत्र खो गये। अुनमें से यह भी अेक था। लेकिन अुस पत्रकी कुछ पंक्तियां याद हैं, जो यहां दे रही हूं।

चि० प्रेमाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। स्वप्न सात्त्विक और राजस भी होते हैं। तुम्हारा स्वप्न सात्त्विक कहलायेगा। अुसका अर्थ यह है कि तुम अपने आपको मेरे पास सुरक्षित समझती हो। . . .

बादके वाक्य याद नहीं हैं। मुझे पत्र अच्छा लगा। लेकिन अुसमें मेरे लिअे 'बहन' संबोधन था, जो मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगा।

सफरसे लौटनेके बाद पू० महात्माजी रोजकी तरह अेक दिन घूमने निकले। लड़कियोंकी टोली अुन्हें घेरकर चल रही थी। मैं पीछे थी। अचानक महात्माजीने 'रमा रमा' की आवाज लगाअी। अपनी धुनमें मुझे लगा कि मेरा ही नाम लेकर अुन्होंने पुकारा है। अिसलिअे मैं झटसे आगे जाकर पूछने लगी, "मुझे कैसे बुलाया?"

वे बोले, "मैंने तुम्हें नहीं बुलाया। मैं रमाको बुला रहा था।"

मैं शरमा गअी। "मुझे लगा कि आपने मेरा ही नाम लिया।" अैसा कहकर खिसकने ही वाली थी कि वे बोले, "तुम्हें बुलाअूं तो मैं 'प्रेमाबहन' न कहूं?"

मुझे मौका मिल गया। नाराजी जाहिर करते हुअे मैंने कहा, "मैं कितनी छोटी हूं? आप मुझे बहन कहकर क्यों बुलाते हैं? पत्रमें भी आपने अिसी तरह मुझे संबोधित किया। वह मुझे जरा भी पसंद नहीं आया।"

पूज्य महात्माजीने विनोद किया: "मेरी अिच्छा हो तो मैं तुम्हें प्रेमा कहकर बुलाअूं, प्रेमली कहूं या प्रेमी भी कहूं!"

यह विनोद मुझे अच्छा लगा। बातचीत तो अभी अंग्रेजीमें ही होती थी — अिसलिअे 'तुम' और 'तू' का भेद मालूम नहीं होता था। मैं पत्र तो गुजरातीमें लिखनेकी कोशिश करती थी, लेकिन अभी पू० महात्माजीके साथ गुजरातीमें बातचीत करनेकी हिम्मत नहीं होती थी।

पूज्य महात्माजी अुत्तर प्रदेशके दौरे पर गये तब अुन्होंने मुझे जो पत्र लिखा (९–९–'२९), अुनमें बहनके बिना ही सम्बोधन किया था। अुससे मैं खुश तो हुअी, लेकिन अुसमें सम्मानसूचक तुमका प्रयोग किया था। यह मुझे खटका! अिसलिअे मैंने फिर अुनसे झगड़ा किया। मेरी यह हठ भी अुन्होंने मंजूर की।

आषाढ़में मेरी वर्षगांठ आअी, तब सुबह जल्दी नहा-धोकर मैं पूज्य महात्माजीके दर्शनोंके लिअे गअी। अुस समय वे आश्रममें ही थे और मैं अुनके पास पहुंची तब वे हृदय-कुंजके बरामदेमें खड़े खड़े कुछ देख रहे थे। मैंने झुककर प्रणाम किया तो जरा आश्चर्यसे अुन्होंने पूछा, "आज क्या है?"

मैंने कहा, "मेरी वर्षगांठ है, अिसलिअे प्रणाम किया!"

अुन्होंने पूछा, "कौनसा साल लगा?"

मैंने कहा, "चौबीसवां!" फिर मैं चली गअी।

अुसके बाद हर वर्षगांठ पर अुनका आशीर्वाद लेनेका रिवाज मैंने आखिर तक चलाया। बाहर होती तो पत्र लिखकर प्रणाम भेजती। आशीर्वाद तो मिलते ही थे। अुनके पास होती तो प्रत्यक्ष प्रणाम करनेका मौका मिलता। फिर पीठ पर जोरका धप्प मिलता। वही अुनका आशीर्वाद होता।

हृदय-कुंजमें पारिजातका अेक वृक्ष था। बरसातमें रोज सुबह झाड़के नीचे फूलोंका गलीचा बिछ जाता था। मेरे मनमें आया, 'अेक बार अिन फूलोंका हार बनाकर महात्माको पहनाना चाहिये।' अिसलिअे अेक दिन सुबह जल्दी अुठकर मैंने हार बनाया और अुसे टोकरीमें पत्तोंके नीचे छिपाकर महात्माजीके पास गअी। वे मगन-कुटीरमें लिखने बैठे थे।

दरवाजेके पास आकर खड़ी रही तो अुन्होंने देखा और पूछा, "कैसे आओी?"

मैंने कहा, "मैंने पारिजातके फूलोंका हार बनाया है। आपको पहनानेकी अिच्छा है।"

"आज क्या है?"

कुछ न कुछ जवाब देना चाहिये, अिसलिअे मैंने कहा, "पवित्र दिन!"

"देखूं तो हार कहां है?"

मैंने पत्तोंके नीचेसे टोकरी निकालकर सामने रखी।

"सुन्दर है। अच्छा, अैसा कर। मुझे हार पहना दे अुसके बाद मैं यह तुझे वापस दूंगा। तू अुसके दो टुकड़े करना और आश्रममें जो दो भाओी (नाम बताये) बीमार हैं अुनके पास जाकर दोनोंको अेक अेक टुकड़ा देना और अुनके समाचार मुझे बताना।"

मैं खुश हुआी। अुन्हें हार पहनाकर अुनकी अनुपम शोभा मैंने देखी। हार वापस मिला तो अुनकी आज्ञाके अनुसार मैंने सब कुछ कर दिया। भक्तिप्रेमकी परिणति सेवामें होनी चाहिये, यह पाठ महात्माजीने मुझे सिखाया। वे काममें रुके होंगे यह सोचकर बीमारोंके समाचार मैंने तुरत अुनके पास नहीं पहुंचाये। रातको कहने गओी तब डांट मिली। "सेवा और राजनीतिके कार्य सब समान महत्त्वके हैं। कहा हुआ काम तुरन्त करना चाहिये।" अैसा अुपदेश मिला।

मेरे दिन आनंदमें गुजर रहे थे। रोज शामको लड़कियों और पू० महात्माजीके साथ घूमने जाती तब बड़ा आनन्द आता। बारी बारीसे लड़कियोंके कंधे पर पूज्य महात्माजी हाथ रखते थे। लड़कियां मुझे चिढ़ानेकी कोशिश करतीं, "प्रेमाबहन, बापूजी हमारे कंधे पर हाथ रखते हैं। आपके कंधे पर नहीं रखते।"

मैंने पूछा, "क्यों न रखेंगे? मैं तुम्हारी तरह जबरन् बीचमें घुसने-वाली नहीं हूं।"

"नही, आपके कधे पर रखेंगे ही नही। आश्रमका नियम है कि जिसकी अुमर सोलह वर्षसे अूपर हो अुसके कधे पर बापूजी हाथ न रखें।"

"यह नियम क्या बापूजीने बनाया है?"

"नही, आश्रमके मत्री छगनलालभाअीने बनाया है।"

मुझे यह बात सच्ची मालूम नही हुअी। मैंने पूज्य महात्माजीसे पूछा, "मे लडकिया कहती हैं कि जिसकी अुमर १६ सालसे अूपर हो अुसके कधे पर आप हाथ नही रखते और यह नियम छगनलालभाअीने बनाया है। यह बात सच है?"

पूज्य महात्माजीने अुत्तर दिया, हा, बात सच है।" फिर बोले, "तुझे कधे पर मेरा हाथ रखवाना हो तो छगनलालभाअीकी अिजाजत ले आ।"

मेरे अभिमानको धक्का लगा। गुस्सेसे अपना सिर हिलाकर मैंने कहा, "आपके हाथकी अैसी मुझे क्या गरज है जो मैं छगनलालभाअीकी अिजाजत लेने जाअू?"

"तुझे हाथ न रखवाना हो तो दूसरी बात है!" महात्माजीने विरक्त भावसे जवाब दिया।

लेकिन भगवान देनेवाला हो वहा कौन रोक सकता है?

पूज्य महात्माजीने खुराकके बहुतसे प्रयोग किये थे। अुनमें से कच्चे आहारका प्रयोग अुस समय चल रहा था। तीन महीने तक गाडी चलती रही और अुन्हें अपना प्रयोग सफल होता हुआ दिखाओी दिया। अिसलिअे स्वभावके अनुसार अुन्होंने आश्रमवासियोंमें कच्चे आहारका प्रचार किया। लोगोंने थोडे अरसे तक तो चलाया, फिर छोड दिया। अुन सब बातोंमें मैं यहा नही जाती, यद्यपि वह भी अेक बडा मजेदार प्रकरण है। अन्तमें पूज्य महात्माजी अकेले रह गये और अुन्हे भी आवके दस्त होने लगे। पूज्य महात्माजीके स्नानगृहमें ही कमोड रहता था। रोज दो बार शौचके लिअे वे वही जाते थे। पेचिशके शिकार होने पर ज्यादा

बार जाना पड़ता था। जहां तक मुझे याद है पहले ही दिनकी यह घटना है। दिन भर काममें लगी रहनेके कारण अिस बीमारीके बारेमें मुझे बिलकुल मालूम नहीं था। बरसातके दिन होनेकी वजहसे हृदय-कुंजमें ही सोते थे। बरामदेके अेक ओर पूज्य महात्माजीका कमरा था, जिसके तीन ओर ही दीवारें थीं। बरामदेकी ओर वह खुला था। अुस कमरेमें पूज्य महात्माजी और पूज्य बा खाट डालकर सो गये। मणिबहन झवेरी, वसुमतीबहन और मैं बरामदेमें खाट डालकर सो गये। महात्माजीको पेचिश हो गअी थी, जिसलिअे कमोड हृदय-कुंजमें ही रखना चाहिये था, लेकिन मालूम नहीं यह बात क्यों किसीको नहीं सूझी? आधी रातको पूज्य महात्माजीकी खड़ाअूकी आवाजसे मैं जागी। लालटेन हाथमें लेकर वे बाहर जानेके लिअे निकले थे। मैंने वसुमतीबहनसे शब्द सुने, "बापूजी, मैं साथ चलूं?" पूज्य महात्माजीने मना किया। फिर मैंने भी पूछा, "मैं आअूं?" "नहीं, नहीं," वे फिर बोले और चलने लगे। अुनकी खड़ाअूकी आवाज अैसी आती थी, मानो अुनके पैर लड़खड़ा रहे हों। बादमें मुझे लगा कि हम साथ जाती तो वे नाराज नहीं होते। लेकिन वे गये। हम फिर सो गये। लेकिन कुछ ही मिनट बाद मैं फिर जागी। देखा तो चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा था। मैं सोच रही थी पूज्य महात्माजी वापस आ गये होंगे क्या? जितनेमें ही वसुमतीबहन मेरे पास आकर कहने लगीं "प्रेमाबहन, बापूजी अभी तक वापस नहीं आये।" मैं तुरंत अुछलकर बरामदेकी सीढ़ियों पर कूद पड़ी और गुसलखानेकी तरफ दौड़ी। दो बाड़े पार करके जाना पड़ता था। बाहर भी अंधेरा ही था। आकाश बादलोंसे घिरा हुआ था, जिसलिअे घोर अंधकार फैला था। हलकी बरसात भी होने लगी। मैं स्नानगृहके दरवाजेके सामने थोड़ी दूर खड़ी होकर देखने लगी। दरवाजेकी सन्धिमें से अुजाला दिखाअी दिया, लेकिन किसी प्रकारकी हलचल नहीं मालूम होती थी। मैं सोचने लगी कि अन्दर महात्माजी होशमें तो होंगे? कहीं बेहोश तो नहीं हो गये? दरवाजा खटखटाकर पूछूं या नहीं? अैसा सोचते सोचते थोड़ी देर खड़ी

रही होअूगी कि अन्दरसे पानीकी आवाज सुनाअी दी। मुझे भी शांति हुअी और मैं दरवाजेके पास जाकर खड़ी हो गअी। थोड़ी देरमें दरवाजा खुला और हाथमें लालटेन लिये हुअे पूज्य महात्माजी मुझे दिखाअी दिये। "मेरा सहारा लीजिये" अैसा कहनेकी मेरी हिम्मत नहीं हुअी। मैंने अितना ही कहा "मुझे लालटेन दे दीजिये।" पूज्य महात्माजीने लालटेन दी कि अेकदम अुनका शरीर मेरे शरीर पर आ गिरा! मैं चौंकी, फिर खयाल आया कि मेरे कंधे पर सहारेके लिअे हाथ रखते समय शरीरमें बिलकुल ताकत न होनेकी वजहसे वह अपंग होकर मेरे अूपर आ पड़ा। मेरे अेक हाथमें लालटेन थी। दूसरे हाथसे मैंने कमरके पाससे पकड़ा और अुनके शरीरको सीधा रखा। मेरे कंधे पर रखा हुआ अुनका हाथ तो बर्फ जैसा ठंडा लग रहा था। हम चलने लगे, लेकिन पूज्य महात्माजीसे किसी भी तरह पैर अुठाया नहीं जाता था। अुनका सारा शरीर कांप रहा था। नाकसे सांस और मुंहसे 'हा हा' शब्द निकल रहे थे।

"महात्माजी, आप बिलकुल कमजोर हो गये हैं।"

वे धीरेसे बोले, "हां, मुझे कल्पना ही नहीं थी कि कच्चे आहारका अैसा परिणाम होगा।"

'आपसे तो बिलकुल नहीं चला जाता!'

'चला जायगा' अैसा कहकर वे पैर अुठाने लगे। लेकिन शरीरमें मनके जितनी ताकत नहीं थी।

जवानीमें मेरे शरीरमें पठानकी-सी शक्ति थी। मैंने महात्माजीको पूछा, 'मैं आपको दोनों हाथोंमें अुठा कर ले चलूं?'

पूज्य महात्माजी जल्दीसे बोले, 'नहीं नहीं, मैं चलूंगा।'

लेकिन तो भी आगे चल नहीं सके। मैंने पूछा, "चौकीदारको बुलाअूं?" जिसके लिअे भी अुन्होंने मना कर दिया। मैं अंधेरेमें देखने लगी। कोअी नजर आ जाय तो! लेकिन कोअी दिखाअी नहीं दिया। जैसे तैसे करके पूज्य महात्माजी करीब अेक मिनटमें अेक कदमकी गतिसे चलने लगे।

हम अेक बाड़ा पार करके दूसरे बाड़े तक पहुंचे तब वसुमतीबहन खड़ी दिखाओी दीं। अुन्हें मददके लिअे बुलाने पर पूज्य महात्माजीको दूसरी ओर भी मदद मिली और हम तीनों बरामदेकी सीढ़ियों तक आ पहुंचे। सीढ़ी अेक फुटमें अूंची थी। पूज्य महात्माजी अुतना अूंचा पैर नहीं अुठा सके। तब मैंने अुनकी अिजाजतके बिना ही अुन्हें दोनों हाथोंसे अुठाकर अूपर ले लिया और खाट पर सुला दिया।

दूसरे दिन अिस घटनाका सबको पता चला। लड़कियां मुझसे बातें पूछनेके लिअे मेरे पास आकर अिकट्ठी हुआीं। मैंने कहा, "लो, अब क्या हुआ? बापूजीके हाथकी अधिकारिणी तुम सब कल रातको कहां थीं? और नियम बनानेवाले छगनलालभाओी कहां थे? बोलो।"

पूज्य महात्माजी थोड़े दिन बिस्तरमें ही रहे। फिर थोड़ा-थोड़ा घूमने-फिरने लगे, तब अेक दिन अुन्होंने अेक हाथमें लकड़ी ली और दूसरा मेरे कंधे पर रखकर चलने लगे। लड़कियां बड़बड़ाओीं, "बापूजी, प्रेमाबहनके कंधे पर हाथ क्यों रखते हैं? यह तो नियमका भंग हुआ!"

लेकिन पूज्य महात्माजीने कहा, "देखती नहीं हो? मैं बीमार हूं और मुझे सहारा चाहिये। यहां नियम क्या हो सकता है?"

फिर अच्छे होने पर भी मेरे कंधे पर हाथ रखकर वे घूमने लगे। मुझे तो मजा आया! मौनवारको कोओी भी लड़की अुनके साथ घूमने जानेको तैयार नहीं होती थी। लेकिन मैं तो रोजका नियम छोड़ती नहीं थी और पूज्य महात्माजीके मौनमें भी अुनका पवित्र और प्रिय सहवास पाकर शुभ संस्कारोंका लाभ अुठाती। कारण, फूलोंकी सुगंध जैसे वातावरणको सुगंधित कर देती है वैसे ही संतोंका अन्तःकरण भी शुद्ध होनेसे सन्त भी अपने आसपास आनन्द और पवित्रता फैलाते हैं। अकेली मुझे ही मौनवारके दिन अपनी अनुगामिनी होते देखकर वे मुझे 'The only faithful' (अेकमात्र वफादार) कहने लगे।

अुन दिनों वातावरण सत्याग्रहके भावी आंदोलनकी हवासे भर गया था। आश्रममें देशके बड़े बड़े नेता आते थे। बातें चलती थीं।

अुत्साहका प्रचड प्रवाह बहता था। कोअी महान रोमाचकारी घटना समीप आ रही थी। अुसके अुदगीत कानमें सुनाअी दे रहे थे। अिसलिअे मुझे नया चेतन मिलने लगा था। अेक दिन शामको घूमते समय पूज्य महात्माजीका हाथ मेरे कधे पर था। अुसे सहलाते हुअे गौरवपूर्ण धन्यताके भावसे मैंने कहा, "जिस हाथने अंग्रेजी साम्राज्यका सिंहासन हिला दिया वह हाथ मेरे कधे पर है, यह कैसी हृदयको अुत्फुल्ल कर देनेवाली बात है।" और मैंने हर्षोन्मादमें अुनके कोमल, पवित्र हाथको चूम लिया!!

पूज्य महात्माजी हंसे। "हम कितने महान हैं!" अैसा दरबारी रोब दिखाकर, छाती फुलाकर और सिर अूचा करके 'कदम, कदम' बढाते हुअे पूज्य महात्माजी चलने लगे! अुनके हाथकी महानताके सम्बन्धमें यह नअी कल्पना आसपासकी लडकियोंको बडी पसन्द आ गअी।

*

पहाडकी गोदमें निर्भय होकर अुछलते-कूदते जल-प्रपातकी तरह मेरा जीवन आश्रममें सुख और आनन्दमें बह रहा था। महात्माजी दाडी-कूच पर निकले अुस वक्त तक मुझ पर किसी प्रकारकी जिम्मेदारी नहीं थी। पढना, पढाना, कातना, बुनाअीका काम सीखना, रसोअीघरमें और जहां जहां जरूरत हो वहां वहां काम करना — अितना ही मेरा कार्यक्रम था। अिस तरह दिनके आठ घटे काममें बीतते, फिर भी कष्ट महसूस नहीं होता था। सब काम खेल जैसे लगते थे। दिन बीतते गये वैसे वैसे पूज्य महात्माजीकी व्यक्तिगत सेवा करनेका भी सौभाग्य मिला। अुनका बिस्तर बिछाना, पैरोंमें घी मलना, बाहरसे आयें तब अुनके पैर धोना वगैरा सेवायें मैं करने लगी। और बादमें तो?

नित सेवा नित कीर्तन ओच्छव, नीरखवा नन्दकुमार रे;
भूतळ भक्ति पदारथ मोटुं, ब्रह्मलोकमा नाही रे।[१]

---

१ नित्य सेवा, नित्य कीर्तन-अुत्सव तथा नित्य नन्दकुमारके दर्शनका सौभाग्य ही हरिके भक्त मागते हैं। अिस पृथ्वीतल पर भक्ति नामका महान पदार्थ मनुष्यको प्राप्त होता है, जो ब्रह्मलोकमें प्राप्त नहीं होता।

विश्वावासमें माहात्म्यकी ही अनुभूति होती थी! महात्माजीका सहवास तो अेक अद्भुत अमृतरसका पान था! लेकिन जब वे यात्रा पर जाते तब भी :

ज्यां ज्यां नजर मारी ठरे यादी भरी त्यां आपनी![1]

मेरी भावना अैसी होनेके कारण शारीरिक वियोगमें भी महात्माजीके निकट सान्निध्यका मैं मनमें अनुभव करती थी। अुनके भव्य व्यक्तित्वके अनेक अंग-अुपांग देखनेको मिलते थे। अुससे बहुत सीखनेको मिलता। मेरा जीवन भी अुन्नत होनेका प्रयत्न कर रहा था।

आश्रममें कविवर श्री रवीन्द्रनाथ आ चुके थे। सर्वश्री राजाजी, पं० मोतीलालजी, जवाहरलालजी, डॉ० पट्टाभि, कोंडा वेंकटप्पय्या, सरदार वल्लभभाअी — सारे लोकनेता और लोक-सेवक आ चुके थे। देश-विदेशके लोकसेवक भी आश्रममें आ जाते थे। सारी दुनिया देखनेको मिलती थी। पुस्तकें पढ़कर ज्ञान प्राप्त करनेकी जरूरत महसूस ही नहीं होती थी, क्योंकि आश्रममें देशका अितिहास गढ़ा जा रहा था!

देशके जीवनका विशाल कदम्ब फूलने लगा था। सूर्योदयसे पहले आकाशमें चारों ओर जैसे अुषाके सुनहरी रंगकी शोभा फैलती है, वैसे ही न मालूम कहांसे जीवनमें नव-चेतन चमकने लगा था। मैंने बबअीकी अपनी सहेलियों और स्नेहियोंको लिखा : "यह आश्रम जगतका मध्यबिन्दु है। अुसका विस्तार अनन्त-सा लगता है। यहां सत्यका साक्षात्कार होता है। न कष्ट है, न दुःख है और न तपस्या है! मोहनकी मुरलीका मधुर रस पीकर मस्त ही होना है। विश्वका सार्वभौम और सार्वकालिक नियम जो सत्य या अहिंसा है वह प्रेम ही है। अुसीमें सबको विलीन होना है। दूर रहकर आश्रमकी सच्ची कल्पना हो ही नहीं सकती। यहां आकर ही अनुभव करना चाहिये।"

---

1. जहां जहां मेरी नजर ठहरती है, वहां वहां आपका ही स्मरण भरा होता है।

अच्छा हुआ, मै घरबार और अिष्टमित्रोको छोडकर समय पर आश्रममें आ गअी। अपने भाग्यकी परीक्षा करते हुअे सत जनाबाअीकी तरह मैं मी भावानको घन्यवाद देनें लगी

माझ्या मनीं जें जें होतें। तें तें दिघले अनतें।।

मेरे मनमें जो जा था वह सब भगवानने पूरा किया।

आश्रम, प्रेमा कटक

डा सासवड (जि० पूना)

३०–८–'५९

बापूके पत्र–५

कुमारी प्रेमाबहन कंटकके नाम

[ता० २८–२–'२९ से १६–१–'४८ तक]

१*

[बम्बआीमें अेम अे की टर्म्स भर रही थी, तब बारडोली आन्दोलनके समय सन् १९२८ में मैं साबरमती जाकर महात्माजीसे मिल आआी थी। पढ़ाआी पूरी होनेके बाद सत्याग्रह आश्रममें भर्ती होनेकी अपनी अिच्छा मैंने बताआी थी और अिसके लिअे अुनकी अिजाजत मागी थी। "जब आओगी तब आश्रमके द्वार तुम्हारे लिअे खुले ही होंगे।" अैसा आश्वासन पूज्य महात्माजीने दिया था। १९२९ की फरवरीमें मैंने अुन्हें पत्रमें याद दिलाते हुअे लिखा कि "अब परीक्षा पूरी होनेके बाद मैं मआीमें वहां आना चाहती हू।" अुसका यह अुत्तर है। महात्माजीके आग्रहसे वापस लौटते वक्त २५ मआी, १९२९ के दिन बम्बआीमें अुनके साथ होकर दूसरे दिन सुबह मैं आश्रम पहुची।]

२८–२–'२९

प्रिय बहन,

तुम्हारा स्पष्टतासे लिखा हुआ पत्र मिला। मुझे तुम्हारी अच्छी तरह याद है। तुम जब चाहो तभी आ सकती हो। यहा तुम्हारा खर्च निकालने जितनी रकम प्राप्त करनेमें तुम्हें कोआी दिक्कत नही होगी।

* मूल पत्र अंग्रेजीमें है, जो नीचे दिया गया है.

28–2–'29

Dear friend,

I have your clearly written letter. I remember you well. You are free to come whenever you like There is no difficulty about your earning your way here.

I leave tomorrow morning and return end of March only to leave again for Andhra Desha. I do not know

कल मैं बाहर जा रहा हूं और मार्चके आखिरमें वापस लौटूंगा। आनेके तुरन्त बाद आश्रम जाअूंगा। लम्बे अरसे तक आश्रममें कब रह सकूंगा, यह नहीं कह सकता।

श्रीमती प्रेमाबाअी कंटक
पी. अेल. लेडीज़ होस्टल
वाच्छा गांधी रोड, गामदेवी
बंबअी – ७

तुम्हारा
मो० क० गांधी

२

[आदर्श सत्याग्रही बननेकी तमन्ना मैंने पत्रमें बताअी थी। अुसीका यह जवाब है।]

मौनवार,
९-९-'२९

चि० प्रेमा,

तुम्हारा दुःख मैं समझता हूं। तुम्हारे प्रेमको अुससे भी ज्यादा समझता हूं। तुम्हारी कर्तव्य-परायणता मुझे बहुत अच्छी लगी है। जिस रास्ते पर तुम आज चल रही हो अुसी रास्तेमें आत्मशुद्धि है, शान्ति है और देशसेवा है, अिस बारेमें कभी शंका मत रखना।

अगर आश्रमसे कुछ मिला हो तो अुसे न छोड़नेका निश्चय करके स्वयं अपनी, आश्रमकी और मेरी शोभा बढ़ाना।

बापूके आशीर्वाद

---

when I shall be able to stay at the ashram for any length of time.

Yours
M. K. Gandhi

Shrimati Premabai Kantak
P. L. Ladies Hostel
Wachha Gandhi Road, Gamdevi
Bombay – 7.

३

आगरा,
१९-९-'२९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। विश्वासके वश होकर 'तुम' का मैंने 'तू' किया है। मुझे अुत्तर लम्बा लिखा यह अच्छा ही किया। काममें लगा हुआ पिता अेक ही लकीर लिखे, तो भी बच्चे सतोष कर लेते है, लेकिन वे तो अपना हृदय पूरा अुडेलेंगे ही।

यह बात बिलकुल सच है कि मेरे जालमें जो भी कोअी आ जाय अुसे फसा लेनेकी ही मेरी अिच्छा रहती है। किसीके जालमें फस कर हमारा सत्यानाश हो सकता है। लेकिन मेरे जालमें फसे अेक भी व्यक्तिका सत्यानाश हुआ हो अैसा मैं नही जानता। अिसलिअे मैं अपना धधा चालू रखता हू। बबअी जानेके किरायेकी माग तूने ठीक की है और मुझे वह पसन्द आअी है। मैंने छगनभाअी जोशी[1]को लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

४

शाहजानपुर,
११-११-'२९

चि० प्रेमा,

मैंने बबअी अेक पत्र लिखा था। वह पहुचा नही मालूम होता। तू अुससे पहले ही रवाना हो गअी अैसा मालूम होता है।

बबअीमें वजन बढे और आश्रममें घटे अैसा यदि होता ही रहे, तो आखिरमें आश्रमसे अरुचि होनेवाली ही है।

[1] अुस समय श्री छगनलालभाअी जोशी सत्याग्रह आश्रमके मत्री थे।

आश्रमकी सुगन्ध बंबओीमें फैलाना अुचित था या अनुचित, यह तो अनुभव ही बता सकेगा। अभी तो आश्रमके दोष ही नजरके सामने तैरते रहते हैं। और मुझे तो वही अच्छा लगता है। हम अपनेमें दोष न देखें और गुण ही देखा करें, तब हमारी अवनतिका आरंभ हुआ समझना चाहिये।

तैयारियोंके[1] बारेमें यहां आने पर बात करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

५

२०–१२–'२९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिल गया। लेकिन मैंने पत्रमें बाल-मंदिरके वर्णनकी और वहांकी स्थितिके चित्रकी आशा रखी थी। अब भी रखूं क्या?

बापूके आशीर्वाद

६

[१२ मार्च, १९३० के दिन सत्याग्रह आश्रमसे निकलकर पदयात्रा करते हुअे मैं कराडी पहुंचूंगा। और वहां सबसे पहले मैं नमक-सत्याग्रह करूंगा, अुसके बाद देशमें लोग अुसका अनुकरण करें — अैसा आदेश पूज्य महात्माजीने दिया था। सभी जगह वातावरण गरम होने लगा था। अंग्रेज सरकारके लिअे विदारक परिस्थिति खड़ी होगी, अैसे लक्षण दिखाओी देने लगे थे। सरकार ११ मार्चकी रातको ही पूज्य महात्माजीको गिरफ्तार कर लेगी, अैसी अफवाह भी अुस समय फैली थी। ११ ता० को आश्रमकी सायं-प्रार्थना हुअी तभीसे लोगोंकी अपार भीड़ जमा होने लगी थी। सारी रात लोगोंकी भीड़को शान्त करनेमें और अिस चिन्तामें ही

---

[1] १. देशमें सत्याग्रह आन्दोलन शुरू होनेवाला था। अुसकी तैयारियोंके बारेमें।

बीती कि पूज्य महात्माजी अगर गिरफ्तार हो गये, तो दूसरे दिन सुबहका रोमांचकारी और अैतिहासिक दृश्य देखना कैसे संभव होगा! अेक-दो घंटे ही सोनेको मिला होगा! तीन बजे प्रातःकर्मसे निबट कर मैं पूज्य महात्माजीके पास दौड़ी गअी। वे अपनी खाट पर बैठ कर दातुन कर रहे थे। वे गिरफ्तार नहीं हुअे और अब कूच होगी ही, अिसके आनन्दमें डूब कर मैं अुनके पास गअी और मैंने अपना सिर अुनकी पीठ पर रख कर कहा, "महात्माजी, आप पकड़े नहीं गये अिसलिअे अब कितना आनन्द आयेगा!"

वे हंसे। "पागल!" अितना ही कहा।

प्रार्थनाकी घंटी बजी तो सवा चार बजे सब प्रार्थना-भूमिकी ओर चले। अुस दिन प्रार्थनामें गानेके लिअे पंडितजीको अेक भजन सुझानेका मेरा विचार था। लेकिन अपने मुहल्लेका रास्ता पार करके प्रार्थना-भूमिकी तरफ आते हुअे पंडितजीको लोगाने रोक लिया। वे रास्तेमें ही धुन गवाने लगे। अिस तरफके हम सब लोग प्रार्थना भूमि पर अिकट्ठे हुअे। कअी नेता और बड़े समाज-सेवक भी हाजिर थे। चींटीको भी जगह न मिले अितनी भीड़ अिकट्ठी हुअी थी! अंधेरा तो था ही। मैं पूज्य महात्माजीसे थोड़ी ही दूर बैठी थी। प्रार्थना पंडितजीके बिना शुरू हुअी। लेकिन श्लोक पूरे होनेके बाद पंडितजी आ पहुंचे। अंधेरेमें चारों ओर गम्भीर शान्ति थी और सब लोग भजनकी राह देख रहे थे। पंडितजी पूज्य महात्माजीके दाहिनी ओर बैठे थे, तम्बूरेके तार मिला रहे थे, तब मैंने अधीर होकर धीरेसे पुकारा, "पंडितजी, पंडितजी!"

"क्या?" पंडितजीने पूछा।

"जानकीनाथ सहाय करे जब — यह गीत सुबह गाया जा सकता है?"

पंडितजीने जवाब दिया, "हां।"

मैंने आग्रहपूर्वक कहा, "तो फिर अभी यही गीत गाअिये।"

वे बोले, "लेकिन अभी तो 'वैष्णव-जन' गीत गाना है न?"

मन खिन्न हुआ, लेकिन जानकीनाथने सहायता की! हम मराठीमें बात कर रहे थे, फिर भी पूज्य महात्माजी सब समझ गये और बीचमें

पढ़कर अुन्होंने खुद ही पंडितजीसे कहा, "पंडितजी, 'वैष्णवजन' गीत तो कूचके समय गाया जायगा। अभी प्रेमा कह रही है यहाँ भजन गाअिये।"

मुझे खुशी हुअी। पंडितजीने भी किसी प्राणवान आन्तरिक भावनासे भरपूर होकर श्रवण-मधुर और हृदय-मधुर भजन गाकर वातावरणमें श्रद्धाका सिंचन किया। राग भी हमेशासे अलग ही था!

जब जानकीनाथ सहाय करें तब कौन बिगाड़ करे नर तेरो ॥ध्रु०॥

*

कूच पर जानेसे पहले पूज्य महात्माजी बीमारोंको देखने गये। दो महीनेसे मुहल्लेमें छोटे बच्चे शीतलासे पीड़ित थे। तीन बच्चे भगवानके घर चले गये थे। लेकिन पूज्य महात्माजीके मार्गदर्शनमें किये गये अुपचारसे रोगका अन्त हो गया था। अच्छे हो रहे बालकोंको देखने पूज्य महात्माजी गये। मुझे अेक कल्पना सूझी।

पं० जवाहरलालजी अुस साल पहली बार राष्ट्रपति हुअे थे। अुन्होंने राष्ट्रीय झंडेके बिल्ले बनाकर सब सैनिकोंको दिये थे। मेरे हाथमें भी अेक बिल्ला आ गया। पूज्य महात्माजी दर्जीने सिलाये हुअे कपड़े पहनते ही नहीं थे। अिसलिअे अुन्हें बिल्ला देनेकी बात किसे सूझती? लेकिन मुझे लगा कि सेनापतिकी छाती पर भी बिल्ला होना चाहिये। अिसलिअे वह बिल्ला लेकर मैं दौड़ती हुअी अुनसे मिलने गयी।

वे आश्रमके मुहल्लेसे छात्रावासकी तरफ आ रहे थे। आनन्दीके कंधे पर अुनका हाथ रखा हुआ था। दो-तीन आदमी पासमें थे, शायद नारणदासभाअी भी होंगे। मैं सीधी महात्माजीके पास गयी और मैंने कहा, "मैं आपको बिल्ला देने आअी हूँ।"

वे बोले, "बिल्ला लेकर मैं क्या करूंगा?"

मैंने कहा, "राष्ट्रपतिने सबको दिये हैं, सबने अपनी अपनी छाती पर लगा लिये हैं। मैं आपकी छाती पर लगाना चाहती हूँ। ओढ़नेकी धोती पर ही लगाया जाय तो भी क्या बुरा है?"

अुन्होंने मंजूर किया। मैंने बिल्ला लगा दिया। अुस समय पूज्य महात्माजीके मुखचन्द्र पर कोअी अपूर्व तेज झलक रहा था! चाहे अहिंसक ही क्यों न हो, लेकिन अेक महान संग्रामवीरकी तरह वे अेक

अैतिहासिक युद्ध करनेके लिअे निकले थे। भारत-माताकी आजादीके लिअ बलिदानकी यज्ञवेदी प्रदीप्त हुअी थी। सैनिक हुंकार कर रहे थे। मेरी भावनाअें भी अुद्दीप्त हो गअी। जरा भी विवेक रखे बिना प्रेमवश होकर मैंने अपने अुन प्रियदर्शी नेताको अपने दोनों हाथोंमें बांध लिया और अैसे अवतारी पुरुषके समयमें मुझे जन्म दिया अिसके लिअे मैंने मनमें भगवानको धन्यवाद दिया।

"पागल!" हंसते हंसते पूज्य महात्माजीने मुझे दूसरी बार वही अुपाधि दी।

नीचेके ६, ७, ८ और ९ नंबरके पत्र दांडी-कूचके समय अलग अलग जगहसे लिखे गये हैं।]

१३-३-'३०

चि० प्रेमा,

तू पागल तो है ही, लेकिन तेरा पागलपन मुझे प्यारा लगता है। तेरी आशासे अधिक अनन्यतासे तू काम कर रही है और अीश्वर तेरा शरीर पूर्ण स्वस्थ रख रहा है। अधीर मत होना। आवाजको हलकी करना। धीरे धीरे बोलनेसे गलेकी गिल्टियोंको नुकसान नहीं होगा।

कुसुम[1]से कहना कि अुसकी जीभके बारेमें अभी थोडा और अुपचार बाकी है; वह डॉक्टरकी अिच्छा हो तब करे।

मुझे पत्र लिखना। ज्यादा लिखनेका मुझे समय नहीं है।

बापू

---

१. श्री कुसुमबहन हरिलालभाअी देसाअी। अेक आश्रमवासी।

७

रविवार,
बुआ,
२३–३–'३०

चि० प्रेमा,

तूने तो अब मुझे पत्र न लिखनेका व्रत ले लिया है अैसा मालूम होता है। तू काममें डूबी हुअी है, यह मैं जानता हू। अिसीलिअे मुझे पत्र चाहिये। काम अिस हद तक न करना कि तू बीमार पड जाय। गलेकी आवाज कम करके गलेकी सभाल करना।

बापूके आशीर्वाद

८

२–४–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पूर्ण पत्र मिला है। अुसमें मेरे पत्रकी पहुच नहीं है। लेकिन मैं मान लेता हू कि वह तुझे मिल गया है।

मुझे पैंजीका फूल[1] मिला तो नहीं, लेकिन मिला जैसा ही मैं समझता हू। प्रेमसे फूल लगानेमें अुनका देना भी शामिल है। फूलको भौतिक रूपमें देना तो कृत्रिमता है।

---

[1] पूज्य महात्माजी सत्याग्रह आश्रममें हृदय-कुजके आगनमें जहां सोते थे, अुसके आसपास मैंने फूलोंके पौधे लगाये थे। वे दाडी-कूचमें गये अुसके बाद पैंजीके फूल खिले। अुनमें से अेक फूल मैंने अुन्हें यात्रामें भेजा था।

बच्चोंको तू मारती है क्या? मीराबहन[1]की मीठी शिकायत है। तू अपनी तबीयतका ध्यान रखती होगी।

बापूके आशीर्वाद

९

१०–४–'३०

चि० प्रेमा,

शराब-बन्दी और विदेशी कपडेके बहिष्कारके मेरे मतके बारेमें तेरे क्या विचार है?

तेरे पत्र तो मिले ही हैं। मुझे लिखती ही रहना। धुरन्धर[2] अच्छा आदमी मालूम होता है। कमलादेवी[3] भी मुझे बहुत पसन्द आओी है। अुनकी लडकीको हवा अनुकूल आयी तो रहेंगी अैसा कहती हैं। तू अुन्हें रखनेकी कोशिश करना।

बापूके आशीर्वाद

---

१ मिस स्लेड। अिनके पिता अिंग्लैण्डकी नौसेनाके बडे अधिकारी थे। बापूजीकी पुस्तकें पढनेसे अुनके प्रति आकर्षित होकर वे हिन्दुस्तानमें आओी और अुन्होंने अपने जीवनमें भारी परिवर्तन कर डाला। बापूजीने अुनका नाम मीराबहन रखा। बापूजीके अवसानके बाद अुन्होंने थोडे समय तक अु० प्रदेश और काश्मीरमें खेती तथा पशु-सुधारका काम किया। कुछ समय पहले वे स्वदेश लौट गओी हैं।

२ श्री धुरन्धर बबअीके 'नवा काल' दैनिकके सह सम्पादक थे। मेरे पुराने अध्यापक (हाओीस्कूलमें) और बादमें स्नेही मित्र। दाडी-कूचमें शामिल हुअे थे। पूज्य महात्माजीने अुन्हें दाडी पहुचनेसे पहले सत्याग्रहियोंकी टुकडीमें भर्ती कर लिया था।

३ श्री कमलाबहन साअिल्स (शादीके बाद राव)। अेक ओीसाओी बहन और मेरी मित्र थी। बबअीकी सेवासदन सस्थामें शिक्षिका थीं। दाडी-कूचके समय अपनी लडकीके साथ अेक मुकाम पर पूज्य महात्माजीने मिलने गओी थीं। वहांसे मुझे मिलनेके लिअे आश्रममें आओी थी।

१०

[जहां तक मुझे याद है ता० १०-४-'३० का पत्र लिखनेके बाद पूज्य महात्माजी गिरफ्तार हो गये। जेल जानेके बाद पत्र-व्यवहार बंद हो गया। शुरूमें तो आश्रमसे भेजी हुआी पहली डाक अुन्हें मिली ही नहीं। फिर भी अुनके पास श्री मीराबहनका अंग्रेजी पत्र पहुंचनेका समाचार मिलने पर मैंने भी अेक पत्र अंग्रेजीमें लिखा था। और सोचा था कि वह अुन्हें जल्दी मिलेगा। लेकिन बादमें मालूम हुआ कि वह भी पूज्य महात्माजीको नहीं दिया गया। बादमें तो हर हफ्ते पूज्य महात्माजीके पत्र आने लगे।]

यरवडा,
मौनवार,
१२-५-'३०

चि० प्रेमा,

तूने तो पत्र लिखना ही बन्द कर दिया था। लेकिन मैं समझा था कि मेरा समय बचानेके लिअे तू नहीं लिखती और तेरे पास भी समय नहीं होगा। लेकिन तेरे समाचार तो मैं प्राप्त कर ही लेता था। तेरा संयम मुझे बहुत पसन्द आया। मुझे तुझसे अैसी आशा नहीं थी। अब तो हर हफ्ते मुझे पत्र लिखना ही।

मेरे समाचार नारणदासके पत्रसे मिल जायंगे।

कुसुमने आश्रमसे जाते समय मेरी चीजें किसे सौंपी थी? मेरे जेल जाने पर मुझे भेजनेकी पुस्तकें तुझे सौंपी थीं? अुनमें रामायण, कुरान वगैरा पुस्तकें थीं। अिस बारेमें पता लगाना और पुस्तकें आसानीसे मिल जाय तो भेज देना। मुझे जल्दी नहीं है।

वहां कौन कौन है और क्या करते हैं, मुझे लिखना। तेरा खास काम क्या है? मेरे बारेमें किसीको चिन्ता करनी ही नहीं चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

पुस्तकालय कौन संभालता है?

११

[अिस पत्रमें तारीख नहीं है। लेकिन यह पत्र १२–५–'३० और २३–६–'३० के बीचका होना चाहिये। आगे १३–७–'३० के पत्रमें पूज्य महात्माजीने 'अंग्रेजी पत्र तो गया ही' लिखा है। अिसलिअे जाहिर है कि जेलवालोंने वह पत्र अुन्हें दिया नहीं था।]

य० म०
मौनवार

चि० प्रेमा,

सत्ताधारियोंने तेरा ही पत्र रोका है, अैसा मालूम होता है। वह सारा निर्दोष होगा, लेकिन क्या हो सकता है? अगर सारे पत्र मिल जाय तो जेलका अर्थ निरर्थक हो जाय न? दुबारा लिखना।

बापूके आशीर्वाद

१२

य० म०
२३–६–'३०

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिल गया। तेरे पत्रोंकी मुझे जरूरत न हो, तो केवल सभ्यताके लिअे तो मैं नहीं मांगूंगा।

धुरन्धर और कमला मुझे बहुत अच्छे लगे। दूसरी बहनसे तो मिलना हो सब सही।

तू कच्चा शाक खाना मत छोड़ना। कच्चे करेले जरूर खाये जा सकते हैं। मैंने तो खाये हैं। कोमल करेले लेकर अुनको घिस लेना, अुसमें नीबू निचोड़ना, लेकिन कभी शाक बिलकुल न मिले तो अुसके बिना भी चला लेना चाहिये। अुसके बदले विटामिन लेना चाहिये। बना हुआ शरीर

[जहां तक मुझे याद है ता० १०-४-'३० का पत्र लिखनेके बाद पूज्य महात्माजी गिरफ्तार हो गये। जेल जानेके बाद पत्र-व्यवहार बंद हो गया। शुरूमें तो आश्रमसे भेजी हुअी पहली डाक अुन्हें मिली ही नहीं। फिर भी अुनके पास श्री मीराबहनका अंग्रेजी पत्र पहुंचनेका समाचार मिलने पर मैंने भी अेक पत्र अंग्रेजीमें लिखा था। और सोचा था कि वह अुन्हें जल्दी मिलेगा। लेकिन बादमें मालूम हुआ कि वह भी पूज्य महात्माजीको नहीं दिया गया। बादमें तो हर हफ्ते पूज्य महात्माजीके पत्र आने लगे।]

यरवडा,
मौनवार,
१२-५-'३०

चि० प्रेमा,

तूने तो पत्र लिखना ही बन्द कर दिया था। लेकिन मैं समझा था कि मेरा समय बचानेके लिअे तू नहीं लिखती और तेरे पास भी समय नहीं होगा। लेकिन तेरे समाचार तो मैं प्राप्त कर ही लेता था। तेरा संयम मुझे बहुत पसन्द आया। मुझे तुझसे अैसी आशा नहीं थी। अब तो हर हफ्ते मुझे पत्र लिखना ही।

मेरे समाचार नारणदासके पत्रसे मिल जायगे।

कुसुमने आश्रमसे जाते समय मेरी चीजें किसे सौंपी थी? मेरे जेल जाने पर मुझे भेजनेकी पुस्तकें तुझे सौंपी थीं? अुनमें रामायण, कुरान वगैरा पुस्तकें थीं। अिस बारेमें पता लगाना और पुस्तकें आसानीसे मिल जाय तो भेज देना। मुझे जल्दी नहीं है।

वहां कौन कौन हैं और क्या करते हैं, मुझे लिखना। तेरा खास काम क्या है? मेरे बारेमें किसीको चिन्ता करनी ही नहीं चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

पुस्तकालय कौन संभालता है?

१४

यरवडा मंदिर,
१३-७-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। निर्मला[1]के पत्रमें असकी हिन्दीकी सुन्दर छाया है, तेरे पत्रमें मराठीकी। जैसे 'बेत रहित क्यों।'[2] भाषामें होनेवाली असी वृद्धि मुझे अच्छी लगती है। कुछ अरसे बाद तो मैं मराठी अच्छी तरह समझ लेनेकी आशा रखता हूं। प्रयत्न तो रोज चलता ही है।

अंग्रेजी पत्र तो गया ही।

कृष्ण नायर[3]के बारेमें समाचार आये हैं।

तेरे गुजराती अक्षर अुत्तरोत्तर सुधर रहे हैं।

भावना कअी बार कष्टप्रद सिद्ध होती है। लेकिन भावनाहीन मनुष्य पशुतुल्य है। भावनाको सही दिशामें ले जाना हमारा परम कर्तव्य है।

बच्चे करेले खाकर तो देखने ही चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

---

१. स्व० महादेवभाअीकी छोटी बहन, जो अुस समय आश्रमके विद्यालयमें पढ़ती थी।

२. अर्थ है 'अिरादा मुलतवी रखा।'

३ सत्याग्रह आश्रमके कार्यकर्ता। दाडी-कूचके बाद दिल्ली गये थे। वहां अुन्होंने आन्दोलनमें भाग लिया था। आजकल लोकसभाके सदस्य हैं।

बिगाड़ना नहीं चाहिये। भूख ज्यादा लगती हो तो दही-दूधकी मात्रा भले बढ़ा दी जाय। पैसेका खयाल मत करना। अन्तमें क्या निर्णय किया यह लिखना।

किसी बातका जवाब देना रह गया हो तो फिर पूछ लेना।

बापूके आशीर्वाद

१३

[अखबारके संवाददाताके रूपमें श्री धुरन्धर दांडी-कूचमें शामिल हुअे थे। बादमें पूज्य महात्माजीने अुन्हें सैनिकके रूपमें सत्याग्रही-दलमें दाखिल किया था। मैंने जिसका कारण पूछा था, जिसका अुत्तर यह है।]

यरवडा मंदिर,
६-७-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा १ जुलाअीका पत्र मुझे दिया गया है। खुराकमें फल मिलते हैं, यह अच्छा हुआ।

धुरन्धरको मैंने जिसलिअे लिया कि अनुभवसे मैंने नियम-पालनमें अुसे दृढ़ पाया। अुसका खरापन मुझे अच्छा लगा। यह बात अखबारमें नहीं छापी जा सकती।

फूलों और पेड़ोंके साथ मेरी ओरसे बात करना। अुनके भाओी-बहन यहां भी हैं। जिसलिअे सन्तोष मानें न?

कुल मिलाकर तेरे दो ही पत्र मुझे मिले हैं। अंग्रेजी पत्र तो नहीं ही मिला।

बापूके आशीर्वाद

१७

यरवडा मदिर,
२–८–'३०

चि० प्रेमा,

निर्दोष नीद लेनेके लिअे जाग्रत अवस्थामें हमारे आचार-विचार निर्दोष होने चाहिये। निद्रावस्था जाग्रत अवस्थाकी स्थितिको जाचनेका दर्पण है। भावनाको गलत मार्गसे रोकनेकी शक्ति हम सबमें होती ही है। यह अुत्कृष्ट प्रयत्न है। अिस प्रयत्नमें हारके लिअे स्थान ही नही है।

कृष्णकुमारी कमलाबहनसे किस बातमें अलग दिखाअी देती है?

यहा बादल तो पिछले डेढ महीनेसे रहते है, लेकिन बरसात बहुत कम होती है। पर अहमदाबादके सामान्य पैमानेसे बहुत कम नही होती।

अैसा सकेत है कि मुझे कैदियोको पत्र नही लिखना चाहिये। कृष्ण नायरको मेरे आशीर्वादके साथ यह लिख देना। अुससे मुझे बडी बडी आशाअें है।

बापूके आशीर्वाद

१८

[१९२९ की श्रावणी पूर्णिमाके दिन अपने हाथके सूतकी राखी बनाकर और अपनी मुट्ठीमें छिपा कर मैं पूज्य महात्माजीके पास गअी। शामकी प्रार्थनासे पहले वे हृदय-कुजके आगनमें लडकियोंसे पैर साफ करा रहे थे। मैंने धीरेसे पूछा, "महात्माजी, मैं राखी लाअी हू। आपकी कलाअी पर बाध दू?" अुन्होने पूछा, "कहा है राखी?" मैंने मुट्ठी खोल कर बताअी। "बहुत सुन्दर है। ले, बाध दे।" अैसा कह कर अुन्होंने अपना दाहिना हाथ आगे किया। मैंने सहर्ष राखी बाध कर प्रणाम किया। लडकियोने शोर मचाया, "राखी तो बहन बाधती है। प्रेमाबहनने कैसे बधा

१५

यरवडा मंदिर,
१९-७-'३०

चि॰ प्रेमा,

तेरा विनोदी और समाचारोंसे भरा हुआ पत्र मिला। अैसे लिखती ही रहना। यहा बीमार न पड़नेकी आशा तो रखता हू। मुझे बुढ्ढा हो गया होगा, यह मान कर अैन मौके पर मेरी मददमें रहनेवाली प्रेमा और वसुमतीको कहासे लाअूगा? मेरा वजन घटनेकी बात गलत समझना। मेरी तबीयत अच्छी ही मानी जायगी।

बापूके आशीर्वाद

१६

यरवडा मंदिर,
२८-७-'३०

चि॰ प्रेमा,

तुझे लिखनेमें मुझे कष्ट नहीं होता। तेरा निदान ठीक है। हिन्दुस्तानके प्रश्नोंको सुलझानेमें मुझे जितना रस आता है, अुससे भी ज्यादा आश्रमके और अुनमें भी बहनोंके प्रश्न सुलझानेमें आता है। क्योंकि अुनमें बड़े प्रश्नोंको सुलझानेकी चाबी छिपी रहती है। जैसा पिंडमें है वैसा ब्रह्माण्डमें है। ब्रह्माण्डको जानने जायें तो भूल करेंगे, परन्तु पिण्ड तो हमारे हाथमें है।

बालवर्ग ठीक चलता मालूम होता है।

शीला अब ठीक हो गअी होगी।

मैंने जान-बूझकर करेले खा देखनेकी सलाह दी है।

भावना सीधे मार्ग पर जा सकती है। अुसे सीधे मार्ग पर ले जाना परम अर्थ है। पुरुषार्थ शब्द अेकांगी है। और कोअी तटस्थ शब्द जबान पर आता है?

पुरन्दर 'अनासक्तियोग'का अनुवाद जरूर करे।

बापूके आशीर्वाद

१९

यरवडा मंदिर,
१८-८-'३०

चि० प्रेमा,

तू अधीर मत होना। मनको जीतना सरल नहीं है। लेकिन प्रयत्नसे वह जीता जा सकता है, अैसी अटल श्रद्धा रखनी चाहिये।

करेलाका शरीर पर कैसा असर हुआ? अुनका रस निकाल देनेकी कोअी जरूरत नहीं होती। अुन्हें काटकर या घिस कर ज्योंका त्यों नींबू और नमकके साथ लिया जा सकता है।

प्रार्थनाकी आवश्यकताके बारेमें सारे जगतका अनुभव है। अुस पर विश्वास रखें तो मन लगता है।

बहुत जल्दी है।

बापूके आशीर्वाद

२०

यरवडा मंदिर,
२२-८-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। श्रावणी पूर्णिमाके दिन तेरी राखी काका[1]ने बांधी थी और तेरी ओरसे प्रणाम भी किया था।

पंडितजी[2]का धैर्य और अुनका त्याग तूने लिखा वैसा ही है। अुन्होंने सहनशक्ति भी बहुत अूंचे दरजेकी दिखाअी है।

अबसे आगे न तो तू दस बजे तक जागना, न दूसरेको जगाना। नौ बजे हमें बिस्तर पर लेट ही जाना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री काकासाहब कालेलकर। अुस समय पूज्य महात्माजीके साथ ही जेलमें थे।

२ स्व० पं० नारायण मोरेश्वर खरे। संगीत-शास्त्री आश्रमवासी।

ली?" पूज्य महात्माजीने पूछा, "क्यों? पुत्री नहीं बांध सकती?" वह राखी पूज्य महात्माजीने दशहरे तक हाथमें बंधी रहने दी। लड़कियां बादमें मुझसे कहने लगीं, "बापूको राखियां भेंटमें मिलती हैं, लेकिन अुन्हें वे मेज पर ही रख देते है, हाथमें नहीं बांधते। फिर तुम्हारी ही राखी कैसे बांध ली?" मैं क्या जवाब देती? लेकिन अुसके बादसे मैं हर साल अुन्हें राखी देती थी। पास होती तो खुद अपने हाथसे बांध देती थी। दूर होती तो डाकसे भेजती थी। अुनके अवसान तक यह क्रम चला। गोलमेज परिषदके लिअे वे विलायत गये तब भी अुनके हाथमें मैंने राखी बांध दी थी। स्टीमर पर खींची गयी अुनकी फोटोमें वह दिखाअी देती है।

पूज्य महात्माजीको मैंने लिखा था, "अिस साल श्रावणी पूर्णिमाके दिन आप पास नहीं हैं। जेलमें हैं। राखी तो भेजूंगी, लेकिन आपके हाथमें कौन बांधेगा?"]

यरवडा मंदिर,
८-८-'३०

चि० प्रेमा,

पिछले वर्षका रक्षा-बंधन याद है। सबका आश्चर्य भी याद है। तू बंध गअी यह याद रखनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि वह बन्धन चालू है। अिस बार तेरे अधिकारका अुपयोग काकासाहब करेंगे। लेकिन अैसा करते हुअे यदि वे भी बंध गये तो?, लेकिन जो कभीके बंध चुके हों अुन्हें क्या डर? अिसलिअे कठिनाअी जैसी कोअी बात नहीं है; जो बांधे अुसका तो ठीक, लेकिन जो बंधवायें अुसका क्या हाल हो?

पुस्तकालयकी सावधानी तू रखती है, यह मुझे अच्छा लगता है। शीलाकी तबीयत अच्छी हो जानी चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

अरविन्दबाबूकी पुस्तक मैंने नहीं पढ़ी है। मेरा वाचन कितना कम है, यह तो मैं ही जानता हू। मेरा धंधा ही मुख्यत कुदरतकी पुस्तक पढनेका रहा है। और अुसका वाचन पूरा हो ही नही सकता।

नींद तो पूरी लेनी ही चाहिये। ९ से ४ का नियम पालना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

२२

यरवडा मदिर,
६-९-'३०

चि० प्रेमा

तूने अब स्वास्थ्यकी चिन्ता छोड दी होगी। जमनादास[2] ने क्यो सबको मिलनेसे अिनकार कर दिया? ज्यादा समाचार मिले हो तो लिखना।

आश्रमके पुस्तकालयमें हर भाषाकी कितनी पुस्तकें हैं, अिसका किसीने हिसाब लगाया है? पुस्तकालयके लिअे कितना समय देना पडता है? चोरोका अुपद्रव कैसा है? बरसात अब तो नहीं होती होगी। यहा बहुत थोडी हुआी है। आज ठीक पानी बरस रहा है। जरूरत भी बहुत थी।

बापूके आशीर्वाद

१ श्री अरविन्द घोष (१८७२-१९५०)। आधुनिक भारतके महान योगी। बगभग आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया। १९०८ में मुजफ्फरपुर बम केसमें पकडे गये। निर्दोष छूटनेके बाद वे अध्यात्म-मार्गकी ओर झुके। १९१० से पाडिचेरी जाकर रहे। १९५० में अुनका अवसान हुआ तब तक वहीं रहे।

२ पूज्य महात्माजीके भतीजे। स्व० मगनलालभाअी गाधीके छोटे भाअी। अुस समय राजकोट जेलमें थे।

२१

यरवडा मंदिर,
२९-८-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे कागजके पुरजे देखकर कोओी हँसे नहीं, न रोष करे। मुझे यही शोभा देता है। अैसे पुरजे काममें लाने पर भी जो समय मिलता है अुसमें जितनी शोभा मैं अुड़ेल सकता हूं अुतनी अुड़ेलना चाहता हूं।

तेरे शरीरमें रोग है, अैसी शंकासे तू भयभीत क्यों होती है? रोग हो तो भी क्या और वह रोग भारी हो तो भी क्या? 'देह जावो अथवा राहो पांडुरंगीं दृढ भावो।'[1] आश्रममें हमने कमसे कम अितना तो सीखा ही है। थोड़े अुपवास कर डाल तो तेरा शरीर स्वच्छ हो जायगा। 'क्यूने बाथ', कटिस्नान और विशेष रूपसे जिन्द्रिय-घर्षण-स्नान (सिट्ज बाथ) आवश्यक है। तुझे अिनकी जानकारी न हो तो कान्ता या राधासे पूछना। वे जानती मालूम होती हैं। क्यूनेकी पुस्तकसे अिनके विषयमें पढ़ भी लेना। स्त्रियोंको कुछ रोग होता है तब मासिक धर्मके बारेमें हमेशा जाननेकी जरूरत होती है। मासिक धर्म तुझे ठीक आता है? नियमसे होता है? तकलीफ होती है? डॉक्टरकी सलाह लेनेकी जरूरत हो तो लेना।

---

१. 'देह जावो अथवा राहो' यह अुक्ति महाराष्ट्रके संतकवि श्री नामदेवकी है। मेरे शरीरमें रोग प्रवेश करे, तो सेवा करनेके बदले मुझे सेवा लेनी पड़ेगी, मैं अपंग हो जाअूंगी, अिस कल्पनासे मैं बेचैन हो गअी थी। शरीरमें कष्ट बढ़ने लगा-अुसका कारण बादमें मालूम हुआ। शाकके रूपमें कच्चे करेले सतत खानेसे मुझे पीलिया हो गया।

अभी तो तेरी सारी जिन्दगी अीश्वरने मुझे सौंप दी है अैसा मालूम होता है।[1] अैसा ही अन्त तक चलेगा।

सुशीला[2] कहांकी है? वह मुझे अंग्रेजीमें शुभेच्छाअें भेजती है? नाम तो गुजराती या मराठी जैसा है। तामिल तो नहीं है। तामिल हो तो माफ किया जा सकता है, नहीं तो शुभेच्छाअें मातृभाषामें भेजे।

बापूके आशीर्वाद

२५

[दाडी-कूचसे पहलेकी बात है। पूज्य महात्माजी रातको खाट पर सोते तब मैं अुनकी तीन चादरें अुन्हें ओढाती थी। लेकिन तीनों लगभग अेकसी दिखाअी देती थी, अिसलिअे कभी कभी मैं अुनका क्रम भूल जाती थी।]

यरवडा मंदिर,
२८-९-'३०

चि॰ प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। ओढानेमें तू क्रम भूलती थी यह कैसे याद न रहे? रोज वहीकी वही भूल सहन करनेवाला पिता कितना अच्छा होना चाहिये?

'आश्रम भजनावलि' में ८४ वें[3] भजनकी तीसरी पंक्ति यों है 'कमल म्यानें मोट बांधी।' अिसका अर्थ तू समझती हो तो तू, अथवा वालजीभाअी[4]

---

१ पूज्य महात्माजीकी वर्षगांठके निमित्त अपनी सारी जिन्दगी मैंने अुन्हें अर्पित की थी।

२ श्री सुशीलाबहन पै। मेरी सहेली और अुस समय राजकोटकी वनिता विश्राम संस्थाकी संचालिका।

३ 'कोअी वन्दो कोअी निन्दो' वाला भजन। १९५६ के संस्करणमें अिसका नंबर ७९ है।

४ अध्यापक श्री वालजी गोविन्दजी देसाअी। अेक आश्रमवासी। अुन्होंने पूज्य बापूजीकी कुछ मूल गुजराती पुस्तकोंका अंग्रेजीमें अनुवाद किया है। आजकल पूनामें रहते हैं।

२३

११-९-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अब तबीयत अच्छी हो गओी होगी। रातके नियमका पालन करना ही चाहिये। दिनका कोओी काम कम कर देना चाहिये या अभी पढ़ना वगैरा छोड़ देना चाहिये। पूरी नींद लेने पर अुत्साह बढ़ेगा। अिससे वही काम थोड़े समयमें हो सकेगा। लेकिन वैसा हो या न हो, ९ से ४ तक शान्ति रखना चाहिये और सोना ही चाहिये। अिस पर तुरन्त अमल करना। तू बहस न करे तो अच्छा हो। बहस करने जैसी बातोंमें खूब करना, अिसमें नहीं।

कमलाबहन लंडी[1]ने मित्रता की या नहीं?

अध्यापक लिमये[2]ने 'अनासक्तियोग' का अनुवाद किया है और वह छपेगा, यह धुरन्धरको बताना।

'भीक' (डर) मराठी, 'बीक' गुजराती।

बापूके आशीर्वाद

२४

२०-९-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा लम्बा पत्र मिला।

तबीयत ठीक रहे तो मेरे लिअे सूचना देनेकी जरूरत नहीं है।

पश्चिमकी अुन दो बहनोंके सम्पर्कमें तू आती है या नहीं? न आती हो तो आना।

---

१ अेक अमेरिकन बहन आश्रममें आओी थीं। नाम कमलाबहन लंडी — Miss Betty Lundy। अेक भारतीय भाओीके साथ विवाह करनेवाली थीं।

२ अध्यापक लिमये। पूनाके तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठकी तरफसे जो महाविद्यालय पूनामें राष्ट्रीय शिक्षणका कार्य कर रहा था अुसके आचार्य।

और सोनेके चमरेमें मैंने अुनके चित्र रखे थे। मैं सोनेकी जंजीर पहनता था तब अुसमें लॉकेट भी रहता था। अुसमें पिताजी और बड़े भाओीका चित्र रहता था। अब ये सब छोड़ दिये हैं। अिसका यह अर्थ नहीं है कि मैं अुनको कम पूजता हूं। आज व मेरे हृदयमें अधिक अंकित हैं। अुनके गुणोंका स्मरण करके मैं अुनका अनुकरण करनेका प्रयत्न करता हूं, और अैसी भक्ति असंख्य देवोंकी कर सकता हूं। लेकिन अुनके चित्र संग्रह करने लगूं तो मेरे पास जगह भी न रहे। और अुनकी खड़ाअू वगैरा रखने लगूं तो नअी जमीन लेकर अुसका मालिक बनना पड़े। अिसलिअे अनुभवीकी तुझे यह सलाह है कि मेरे जितने कदम सही दिशामें पड़ते हों अुन कदमों पर तू चल। यह खड़ाअू रखनेसे हजार गुना अूंचा काम है और अुसे देखकर कोअी नकल करे तो अच्छा है। लेकिन तेरे पास खड़ाअू देखकर अुसका कोअी अंधा अनुकरण करने लगे, तो वह खड्डेमें ही गिरेगा न? अितना समझ ले और फिर 'यथेच्छसि तथा कुरु'।

जो कर्तव्य-कर्मको समझता है और अुस पर आचरण करता है, अुसकी तृष्णा तो मिटती ही है। जिसकी तृष्णा नहीं मिटी अुसे कर्तव्य-कर्मका भान ही नहीं है। तृष्णाका पर्वत तो अितना अूंचा है कि अुसे कोअी पार कर ही नहीं सकता। अुसे धराशायी किये सिवा अन्य कोअी अुपाय नहीं है। तृष्णा छोड़ना अर्थात् कर्तव्यका भान होना। मुझे मालूम हो कि मुझे काशी जाना है वहां जानेका मार्ग भी मुझे मालूम हो, तो फिर मुझे कौनसी तृष्णा अुस मार्गसे — कर्तव्यसे — हटा सकती है? मेरी तृष्णा ही काशीके मार्ग पर जानेकी हो और वह पूरी हो जाय, तो फिर बाकी क्या बचा? सहज प्राप्त सेवा तेरे पास है। अुसे अेकनिष्ठासे तू करती रहे, तो अुसमें तुझे पूर्ण संतोष मिलना चाहिये। अुसके सिलसिलेमें जो साथ मिले, जो पढ़नेको मिले वह ग्राह्य है, अुसके सिवा दूसरी चीजका विचार भी नहीं होना चाहिये। यही मेरी दृष्टिमें 'योग कर्मसु कौशलम्' है। यही समत्व और समाधि है।

लेकिन यह सब तुझे व्यर्थ लगे और तेरी आत्मा वाचन आदि चाहे, तो अुसे खुशीसे तृप्त करना। कामका बोझ हल्का करना और आराम

अथवा तोतारामजी[1] अथवा जो भी कोअी जानता हो अुससे समझ कर तू भेजना, अथवा जो जानता हो वह भेजे।

कमलाके साथ मित्रता की, यह अच्छा किया। अुसे परेशानी न हो। अुस जालिघर[2] नामकी बहनके साथ भी मित्रता कर ली? न की हो तो करना। आश्रमके नियमोंके बारेमें अुसके मनमें कुछ प्रश्न हैं। तेरे साथ चर्चा करे तो अुन पर चर्चा करना और अुसे सन्तोष दिलाना।

अब तबीयत कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

२६

[दाढी-कूचके समय पूज्य महात्माजी अपनी खड़ाअू आश्रममें रख गये थे। मैंने अुनकी माग की थी। अुसका अुत्तर शुरूमें है।

आश्रममें दिन-रात सेवाकार्यमें ही बीतते हैं, वाचन चिंतनके लिअे समय नहीं मिलता, अैसी शिकायत मैंने की थी। अिस बारेमें पत्रके पिछले भागमें कर्तव्य-कर्म पर प्रवचन किया है।]

यरवडा मंदिर,
२-१०-'३०

चि० प्रेमा,

खड़ाअूं चाहिये तो जरूर रखना। लेकिन अिन लकड़ीके टुकड़ोंका तू क्या करेगी? अुनसे तेरा मद दो अिंच बढ़े तो भले ही अुनका संग्रह कर। मैं तो अिसे मूर्तिपूजा कहकर अिसकी निन्दा करता हूं। अपने पिताजीका चित्र मैं रखता था। दक्षिण अफ्रीकामें अपने दफ्तरमें, बैठकमें

---

[1] वृद्ध तोतारामजी आश्रमकी खेतीबाड़ीका काम करते थे। वे कबीरपन्थी भक्त थे। अुन्होंने बहुत वर्ष फिजीमें खेती करनेमें बिताये थे। फिर अपनी पत्नी गंगादेवीके साथ सत्याग्रह आश्रममें आकर रहे।

[2] अेक स्विस बहन। कदकी छोटी लेकिन पुरुष-वेशमें रहती थीं। स्त्रियोंके अधिकारोंके बारेमें विशेष मत रखती थीं। थोड़े दिन आश्रममें रहकर वापस चली गयीं।

सरोजिनी देवी[1] के हृदयमें प्रवेश करना। अुसे सहानुभूति और प्रेमकी जरूरत है। अैसे कामोंके लिअे थोड़ी फुरसत निकालना। अभी तो बड़ी जिम्मेदारीके काम करने बाकी हैं।

अब तेरी तबीयतकी चिंता दूर हो गअी क्या? शरीर बिल्कुल चंगा लगता है? खुराक क्या लेती है?

बापूके आशीर्वाद

२८

[मैं बीचमें बम्बअी हो आअी थी।]

यरवडा मन्दिर,
१८-१०-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। बबअीका अनुभव लिखना। गला[1] डॉक्टरको नहीं दिखाती यह ठीक नहीं है। रोगको शुरू होते ही दवा देना चाहिये। समय पर लगाया हुआ अेक टांका आगेके नौ टांकोंको बचाता है, यह कहावत बिल्कुल सच्ची है।

लेकर वापस आये। पूज्य महात्माजीके प्रति अुन्हें आकर्षण हुआ। भारतमें आध्यात्मिक योग्यता रखनेवाले चरित्रवान गुरुओंमें अुनकी गणना है। वे महाराष्ट्री हैं, फिर भी अुनके भक्तोंमें गुजराती लोग ज्यादा हैं। थोड़े महीने पहिले शारीरिक व्याधिके कारण आअी हुअी अपमृत्युसे वे बच गये। आज अुनकी आयु ७८ वर्षकी है। बबअीमें रहते हैं।

१ अुत्तर प्रदेशके कांग्रेस कार्यकर्ता श्री सीतलासहायजीकी पत्नी। अपने पति और दो लड़कियों (जिनमें अेक छोटी शीला थी) के साथ वे सत्याग्रह आश्रममें रहती थीं (१९२९-३०), लेकिन अुन्हें वहां अच्छा नहीं लगता था। अुनके पति काकोरी केससे छूटकर आश्रय लेनेके लिअे आश्रममें आये थे।

२ मेरे गलेकी गिल्टियां बढ़ गअी थीं। अुसका असर मेरी आवाज पर होता था।

लेना। यह कैसे हो यह तो नारणदास¹से मिलकर ही तू विचार कर सकती है। नारणदास दीर्घदर्शी है, धैर्यवान है और साधु-चरित है। वह तेरी मदद जरूर करेगा। दूसरी सान्त्वना तो क्या दू? मेरे जैसे कुछ दिशा-सूचन ही कर सकते हैं। वैसे तेरी और हमारी सबकी शान्तिका सच्चा आधार तो अपने खुदके अूपर ही है।

सुशीलाके बारेमें समझा। अब तो वह मराठीमें सदेश भेजे। अुसे मेरा आशीर्वाद।

पंडितजीका सगीत सुननेके बाद तेरे जैसी लडकीको दूसरा अच्छा न लगे यह मैं समझता हू। लेकिन तू स्वय भजन क्यो न गवाये? हिम्मत हो तो माग करना। तू कहे तो मैं लिखू। तुझे गाना आता तो है। लगभग रोज रातको तू गाती थी, यह मैं भूला नही हू। तेरे गलेकी गिल्टिया कैसी हैं? डॉ० हरिभाअीको दिखायी थी न?

बापूके आशीर्वाद

२७

यरवडा मदिर,
१२-१०-'३०

चि० प्रेमा,

दोनो अर्थ अच्छे हैं। नाथजी²का अधिक अधिकृत हो सकता है। तू शान्त हो गअी है यह सद्भाग्य है।

---

१ श्री नारणदासभाअी गाधी। पू० महात्माजीके तीसरे भतीजे। दांडी-कूचके लिअे रवाना होनेसे पहले अुन्हें सत्याग्रह आश्रमका मत्री नियुक्त करके पूज्य महात्माजीने आश्रमसे सदाके लिअे विदा ली थी। सन् १९३४ से नारणदासभाअी राजकोटमें रहते हैं। वहा महान तपस्या करके रचनात्मक कामका अुन्होंने खूब विस्तार किया है।

२ श्री केदारनाथजी। स्व० श्री किशोरलाल मशरूवालाके गुरु। श्री नाथजीका पूरा नाम है श्री केदारनाथ कुलकर्णी। सन् १९०५ से १९१० के बीच वे क्रान्तिकारी दलमें काम करते थे। फिर आध्यात्मिक विकासके लिअे हिमालय चले गये और वहां घोर तपस्या की। वहांसे नअी दृष्टि

अुनके पिछले अेक पत्रमें आ ही चुकी है। (देखिये पत्र १२, १४, १६, १९) मैंने वैसा ही किया। रोज दोनों समय कच्चे करेले खानेसे धीरे धीरे मुझे पीलिया हो गया और सारा शरीर पीला पड़ गया। यह जाननेके बाद अिस पत्रमें ७ दिनका अुपवास करनेका आदेश मिला, जो मैंने कुछ दलीलोंके बाद कर डाला। अुसके बाद मैंने कभी भी कच्चे करेले नहीं खाये।]

यरवडा मन्दिर,
३-११-'३०

चि० प्रेमा,

तुझे पीलियेके चिह्न हों, खट्टी डकारें आती हों, तो मेरा विश्वास है कि तुझे कमसे कम सात दिनका अुपवास करना चाहिये। अिस बीच सोडा या नमक डालकर कमसे कम चार सेर पानी रोज पीना चाहिये। फिर हरे मेवेके रससे अुपवास तोड़ना चाहिये। और आखिरमें जरूर छाछ-चावल लेना। अुपवासके दिनोंमें अेनिमा लेना ही चाहिये और कटिस्नान करना चाहिये। सात दिनके अुपवासमें खाट तो नहीं पकड़नी पड़ेगी। थोड़ा-बहुत काम भी किया जा सकता है। अुपवाससे नुकसान तो होगा ही नहीं।

बापूके आशीर्वाद

३१

य० मंदिर,
१५-११-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। डॉक्टरसे मिली यह तो अच्छा ही किया। लेकिन मैं अपने अुपचार पर ही कायम हूं। डॉक्टरका अिलाज बादमें भले ही करना। लेकिन कमसे कम सात दिनका अुपवास तो कर ही डालना। अुपवासका तुझे भय तो होना ही नहीं चाहिये। सात दिनके अुपवासमें तेरे ज्यादातर काम तू कर सकेगी। जिन्दगीमें जब पहली बार मैंने लम्बा अुपवास किया था अुस समय अेक दिनका भी आराम नहीं लिया

मूर्तिपूजाके मैं दो अर्थ करता हूं, अेकमें मनुष्य मूर्तिका ध्यान करते हुअे गुणोंमें लीन होता है। यह अच्छी पूजा है। दूसरेमें गुणोंका विचार न करके वह मूर्तिको ही मूल वस्तु मानता है। यह बुतपरस्ती नुकसान करती है।

बापूके आशीर्वाद

२९

य० मं०
२६-१०-'३०

चि० प्रेमा,

नासिकसे लिखा हुआ पत्र मिला। धुरन्धरके अनुवादके बारेमें मैंने जो लिखा था यह याद है न? अनुवाद कर दिया तो भले कर दिया, लेकिन लिमयेके अनुवादके बाद अुसे छपवाना या नहीं, यह विचारनेकी बात है। आराम करनेसे तबीयत अच्छी है, यह बताता है कि तू कामका बोझ सिर पर अुठाये फिरती है। काम करने पर भी अुसका बोझ न लगे यह अनासक्तिका गुण है।

बापूके आशीर्वाद

३०

[सन् १९२९ के चौमासेमें पूज्य महात्माजीने आश्रममें सबसे कच्चे आहारका प्रयोग कराया था। अुसमें मैं भी थी। मैंने तो आठ ही दिन करनेकी अिजाजत ले ली थी। लेकिन तीन दिन बाद ही अुलटियां वगैरा हुअीं और बादके चार दिन मुझे लगभग अुपवास ही करना पड़ा। फिर मैंने पूज्य महात्माजीसे अिजाजत लेकर कच्चा आहार छोड़ दिया। लेकिन अुन्होंने मुझे हमेशाकी खुराकमें खाखरा, कच्चा शाक और दही या दूध — ये तीन चीजें खानेकी सलाह दी। वे मैंने श्रद्धापूर्वक खाअीं। चौमासेकी शुरुआतमें करेलोंके सिवा कोअी शाक ही नहीं मिलता था, अिसलिअे अुस बीच मैंने अुबाला हुआ शाक खानेकी अिजाजत मांगी। पूज्य महात्माजी समझाने लगे कि करेले कच्चे ही खाये जा सकते हैं। अुसकी तफसील

हा ठहरे हुअे थे। महात्माजीने आश्रमकी बहुतसी बहनोंको सत्याग्रही तिक बननेकी सम्मति दी। वहा गओी हुओी सब बहनोंको अिजाजत मली, लेकिन मुझे अुन्होंने मना कर दिया। आश्रममें रहकर वही सेवा-कार्य करनेका आदेश दिया। मुझे दुख तो हुआ, लेकिन अुनकी आज्ञाके अनुसार मैं वापस आकर काममें अेकाग्र हो गओी। अुस समय आश्रमके मंत्री श्री नारणदासभाओी गांधी थे। आश्रमका रसोओीघर, भंडार, पुस्तकालय, छात्रालय, विद्यालय, मेहमानोंकी व्यवस्था, सफाओी — लगभग सभी कामोंकी व्यवस्था मेरे सिर पर आ पडी। बहुतसी बहनें जेल गओीं, लेकिन बाहरके समाजसे जेल जानेवाले मा-बापोंके बच्चा, पतियोंकी पत्नियां वगैरा 'निर्वासितों' से आश्रम भर गया। नये आते, पुराने जाते। अैसा चलता था। आश्रममें लगभग १५०–२०० आदमी तो रहते ही थे। मेरी आयुकी मर्यादाके अनुसार काम कुछ अधिक हो जाता था। फिर भी महात्माजीके आदेशको वेदवाक्य मानकर मैं प्रयत्नपूर्वक काम करती थी। बादमें जेल जाकर आनेवाली बहनें और परिचित भाओी सब आकर मुझे अुत्तेजित करने लगे (विनोदमें ही) "क्यों? आप कैसे सत्याग्रहमें नहीं कूदतीं? आपको तो सबसे आगे रहना चाहिये था।" मुझे बुरा तो लगता ही था, लेकिन मैं नरम जवाब दिया करती थी। अेक दिन अहमदाबादसे श्री मोहनलालभाओी भट्ट आये और बातों ही बातोंमें मुझसे पूछने लगे, 'क्या तुम यहां आश्रमकी दीवारोंको संभालनेके लिअे बैठी हो?" अिससे मुझे बहुत ही बुरा लगा और मैंने महात्माजीको पत्रमें लिखा, कि, "आपकी आज्ञा मानकर मैं यहां सेवाकार्य करती रहती हूं। लेकिन लोगोंको अगर अैसा लगे कि मुझे जेल जाना अच्छा नहीं लगता, डर या आरामकी अिच्छासे मैं यहां बैठी हूं, तो मुझे वह अपमानजनक लगेगा।" मेरी भावनाको समझकर पूज्य महात्माजीने मुझे समझानेके लिअे दलीलें दीं।

पूज्य महात्माजीने सुबहका १४ दिनका गीतापाठ ७ दिनमें पूरा करनेकी मुझे सलाह दी, तब मैंने अुसका विरोध किया। आश्रममें सुबह चार बजे अुठकर १५–२० मिनटमें प्रार्थना भूमि पर हाजिरी देनी पडती थी। यह ज्यादातर लोगोंको पसन्द नहीं था। शामकी प्रार्थनामें लगभग

था और कोअी दिक्कत भी नहीं हुअी थी। यह अुपवास मान लिया था। शरीरमें अुस समय थोड़ी-बहुत चर्बी थी। जिसके पास चर्बीका संग्रह नहीं होता अुसे ही अुपवासमें बिस्तर पर पड़े रहना पड़ता है। दो दिन बाद तो तुझे पहलेसे ज्यादा शक्ति मालूम होगी। दो दिन झूठी भूख लगेगी जरूर, फिर तो भूख भी नहीं लगती। और अन्तमें खून शुद्ध होता है तब भूख लगती है। अुस बीच अेनिमा लेकर मल तो साफ करना ही चाहिये। अेनिमा लेनेके बाद सर्व-शीर्षासन करनेसे पानी अुपरकी अंतड़ियों तक पहुंचता है। लेकिन अिस आसनकी जानकारी न हो तो अैसा न करना। अुपवासके दिनोंमें पानीमें सोडा और नमक डालकर खूब पीना चाहिये। हर आठ औंस पानीमें पांच ग्रेन नमक, दस ग्रेन सोडा मिलाकर अैसे आठ प्याले तक आसानीसे पीये जा सकते हैं। घूमना बैठना। तू बिना संकोच जितना करे, अैसा मैं चाहता हूं। डॉक्टरसे कहना हो तो कहना। शायद वे भी यह अिलाज पसन्द करें। अब तो बहुतसे डॉक्टर अुपवासका चमत्कार जानने लगे हैं।

बापूके आशीर्वाद

३२

[सत्याग्रहकी लड़ाअीमें कूद पड़नेकी आकांक्षा रख कर ही मैं सत्याग्रह आश्रममें तालीमके लिअे गअी थी। जब नमकके सत्याग्रहकी तैयारियां शुरू हुअीं, आश्रममें नवचेतन आया और महात्माजीने कूचके लिअे साथियोंके नामकी मांग की, तब मैंने अुनसे पूछा, "क्या बहनोंको अिस लड़ाअीमें भाग लेनेकी अिजाजत नहीं मिल सकती?" तब महात्माजीने कहा, "क्यों नहीं? भाअियोंकी तरह बहनोंकी बारी भी आयेगी ही!" मैंने अुत्कटतासे कहा, "तो मेरा भी नाम लिखियेगा। मुझे आना है।" महात्माजीने हंसते हंसते कहा, "तुझे तो मैं सरदारनी बनाअूंगा।"

कराडीमें कानून भंग करनेके बाद विदेशी कपड़े और शराबकी दुकानों पर धरना देनेके लिअे पूज्य महात्माजीने बहनोंका आह्वान किया। आश्रमकी बहुतसी बहनें तैयार हुअीं। मैं भी जाना चाहती थी। हमारी अेक टोली पूज्य महात्माजीसे मिलने नवसारी पहुंची। अुस समय वे

हुअी है। वहां रहनेसे सिपाहीगिरी नहीं होती, अैसा यदि तू मानती हो तो यह भूल है। लड़ाओीमें सब आगे ही रहें अैसा नहीं होता। बहुतसे सिपाही अतिरिक्त रखे जाते हैं। फिर, केन्द्रस्थान पर बहुत जिम्मेदार आदमियोंकी जरूरत होती है। खतरेका डर छोड़ना जरूरी होता है। वह आ पड़े तब असे अुठा लेना जरूरी होता है। लेकिन बिना कारण जो अुसकी ओर दौड़ता है वह सिपाही नहीं किन्तु मूर्ख है। नारणदासको मैं सच्चा सिपाही मानता हूं। किसको मालूम तुम्हारे भाग्यमें किस प्रकारके खतरे होंगे। सच्ची सिपाहीगिरी अीश्वर जैसे रखे वैसे रहनेमें है। अिसमें अनासक्ति है। अिसे व्यावहारिक भाषामें कहें तो अिसका अर्थ यह हुआ कि जिस सत्ताधीशके अधीन हम विचारपूर्वक स्वेच्छासे गये हों, वह जैसा कहे वैसा हम करें। यह पाठ तूने पका लिया है।

धर्मकुमारके बारेमें पत्नीडेके पत्रमें शिकायत है — गदेपनकी। धीरू अिसे जानता मालूम होता है। जांच करना।

गीता-पारायणके बारेमें तेरी राय समझा। काकासाहबके साथ तू जी भर कर लड़ना। लेकिन अैसा लगता है कि तेरे विरोधके मूलमें तो प्रार्थनाके प्रति ही तेरी अरुचि या अश्रद्धा है। तेरा बस चले तो तू धुनसे ही प्रार्थना समाप्त कर दे। मेरी सलाह है कि तू प्रार्थनाकी सारी विधि पर श्रद्धा रख। हो सके तो अर्थ पर ध्यान रख। वैसा न कर सके तो वे शब्द सस्कारी हैं, अुन्हें सुननेमें भी लाभ है, अैसी श्रद्धा रखकर विनयपूर्वक सुन। अिसका अर्थ यह मत समझना कि मैं तुझे सात दिनके पारायणकी तरफ ले जाना चाहता हूं। जिस प्रार्थनाके पीछे कुछ लोगोंकी अनन्य श्रद्धासे की हुअी १५ वर्षकी तपश्चर्या है अुसमें कुछ तो (सार) है ही, यह बात तेरे गले अुतारनेके लिअे यह लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

सभी लोग अिकट्ठे होते थे। सुबह खास तौर पर बरसात या जाड़ेमें जल्दी अुठनेकी किसीकी तैयारी नहीं होती थी। मैं शुरू शुरूमें आश्रम पहुंची तभीसे यह सब देखा करती थी। पूज्य महात्माजी आश्रममें होते तब थोड़े-बहुत लोग (खास तौर पर पुरुष ही) सुबहकी प्रार्थनामें शामिल होते थे। वे बाहर जाते तब अुतने भी नहीं आते थे। बरसातकी अेक सुबह हृदय-कुंजके बरामदेमें प्रार्थना हुअी, तब श्री बालकोबाजी, श्री सूर्यभानजी और मैं तीन ही हाजिर थे। दांडी-कूचसे कुछ दिन पहले अनुशासन कुछ कड़ा हुआ तब सुबहकी प्रार्थनामें सभी लोग शामिल होने लगे। बादमें भी यह अनुशासन चला। गीतापाठके कारण सुबहकी प्रार्थनामें ज्यादा समय देना पड़ता था। अब गीतापाठ दुगना करनेसे अुससे भी ज्यादा समय देना पड़ता। छोटे बच्चोंको भी प्रार्थनामें हाजिर होना पड़ता था। अुनके लिअे अलग देरसे प्रार्थना करनेकी मेरी सूचनाको पूज्य महात्माजीने मजूर नहीं किया। लेकिन खास तौर पर अिन बालकोंको ही ध्यानमें रखकर मैंने ७ दिनके गीतापाठके विरुद्ध झगड़ा किया था।

पूज्य महात्माजीने अेक और सूचना भी दी थी कि गीतापाठमें ज्यादा समय देना पड़ता हो तो भजन गाना छोड़ दिया जाय। अुसका भी मैंने विरोध किया। मेरी दलील यह थी कि, "अगर रद करना ही पड़े तो श्लोक रद किये जायं। क्योंकि प्रतिदिन वे ही श्लोक बोलनेसे श्लोक 'बासी' हो जाते हैं। भजन रोज नया गाया जाता है, अिसलिअे अुसमें रस आता है।"

पहले मुझे आंदोलनमें झंडाधारी बनानेका आश्वासन पूज्य महात्माजीने दिया था, लेकिन बहनोंका आह्वान किया तब मुझे आंदोलनमें प्रवेश करनेसे मना कर दिया और आश्रममें ही रहनेका आदेश दिया। मैंने अिसका कारण पूछा था।]

यरवडा मन्दिर,
२४-११-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा श्यौरेवार पत्र मिला। खुश हुआ। जो निर्णय मैं करता हूं अुनके सभी कारण मुझे हमेशा याद नहीं रहते। तू सच्ची सैनिक सिद्ध

तेरे विरुद्ध मथुरी[1] की शिकायत है। तू बच्चोंको मारती है। लकडी भी काममें लेती है। अैसा हो तो यह आदत दूर करना। बच्चोंको हरगिज नहीं मारना चाहिये। क्रॉसबीने 'टॉल्स्टॉय शिक्षकके रूपमें' नामक पुस्तक लिखी है। बहुत करके हमारे संग्रहमें है। देख लेना। अब तो यह बात सिद्ध हो चुकी है कि मारनेसे बच्चे सुधरते नहीं। यह मैं जानता हू कि जिसे मारकर पढानेकी आदत पड गअी हो, अुसे अपनी आदत छोडना मुश्किल लगता है। लेकिन यह तो बदूकधारी सिपाहीके अनुभव जैसा हुआ। वह तो यही मानेगा कि गोलीके बिना दुनियामें काम चल ही नहीं सकता। चलता है यह सिद्ध करनेका काम हमारा है। अिसी तरह बच्चोंके बारेमें समझना चाहिये। अभी अिससे ज्यादा नहीं लिखूगा। तेरा अुत्तर आने पर जरूरत मालूम होगी तो ज्यादा ब्रहसमें पडूगा।

मैं आशा करता हू कि अुपवासके दिनोंमें तूने खूब नींद ली होगी। और अब तू नियमपूर्वक जल्दी सोती होगी। नींद पूरी लेनी ही चाहिये। खानेकी अपेक्षा नींदकी मनुष्यको ज्यादा जरूरत होती है। खानेका अुपवास फायदा करता है। लेकिन नींदका अुपवास शरीरको घिस डालता है। अुससे सिर घूमता है और मनुष्य अस्वस्थ हो जाता है। अिसलिअे नींदके बारेमें लापरवाह न रहना। रातको ९ बजेसे सुबह ४ बजे तक गहरी नींद ली जाय, तो मैं शिकायत नहीं करूंगा।

मेरे प्रयोगके बारेमें मीराके पत्रमें लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

---

[1] श्री मथुरीबहन खरे। विद्यालय और बाल-मंदिरके लडके-लडकियोंके नाम बहुत बार आते हैं। अुनका हर बार परिचय देना मुश्किल हो जाता है। कृष्णकुमार, चंदन, कट्टू (हरि), विमला, धर्मकुमार, धीरू, बाबला (बाबू), मानसिंह ये सब बाल-मंदिरके बच्चे थे। मथुरी, रामभाअू, आनंदी, दुर्गा, शान्ता, मंगला, पुष्पा, दयावती, ज्ञानदेवी, शारदा, मणि, निर्मला, सत्यदेवी, वनमाला, कनु, अिन्दु वगैरा विद्यालयके छात्र और बालिकायें थीं। मैत्री (दुर्गाकी बड़ी बहन) आन्दोलनमें शामिल थी।

३३

परवडा मन्दिर,
३०-११-'३०
रातको

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र पढ़कर बहुत खुश हुआ। आज तो तेरा अुपवास छूटनेको दो दिन हो गये हैं। यह पत्र तेरे हाथमें पहुँचेगा तब तक तो अुपवासको तू भूल गयी होगी और नये जीवनका आनन्द ले रही होगी। अैसा अनुभव न हो तो अुपवासको मैं अपूर्ण मानूंगा। परिणाम मुझे विस्तारपूर्वक तूने लिखा होगा। तेरा अनुभव दूसरोंके लिअे मददगार होना चाहिये। अुपवास छोड़नेके बाद किन बातोंकी सावधानी रखनी चाहिये यह तो तू जानती है। अुपवासके बाद बहुत भूख लगती है, परन्तु अुस प्रमाणमें पेट कभी नहीं भरना चाहिये। दूध-दही धीरे धीरे बढ़ाते जाना चाहिये। अट-पट चीजें नहीं खानी चाहिये। रसवाले फल तो खाने ही चाहिये। अुसमें कंजूसी मत करना। शरीर नीरोग हो जाना चाहिये। अुपवासके दिनोंमें काम ठीक तरहसे हो सका, अिसमें मुझे आश्चर्य नहीं होता। बहुतोंको अैसा करते हुअे मैंने देखा है। मेरा अपना अनुभव तो मेरे पास है ही। जिसके शरीरमें बहुत रोग होता है अुसे तो अुपवासके दिनोंमें ज्यादा शक्ति मालूम होती है। तेज तो ज्यादा बढ़ता ही है।

बच्चोंका हिसाब ठीक भेजा। कृष्णविजय सबको तेज मालूम होता है। दुर्गाबहन[1] की अनुपस्थितिमें अुनके वर्ग ले सके अैसा कोअी नहीं है? यह तो मैं समझता हूं कि अभी अिस बारेमें कुछ कहा नहीं जा सकता। बहुतसी बहनें बाहर हों तब क्या हो? फिर भी किसीको यह काम सौंपा जा सकता हो, तो अुसे कहनेमें संकोच न रखना।

धुरन्धर छूट गया होगा। अुससे कहना कि अुसके साथका संवाद मुझे याद है। अुसकी डायरी भी याद है। मुझे पत्र लिखे। अनुभव भी बताये। भविष्यका कार्यक्रम भी लिखे।

---

१. श्री वालजीभाअी देसाअीकी पत्नी।

धर्मकुमारकी बुरी आदतोंकी तरफ बराबर ध्यान देना। दुर्गाको समझाना। दुर्गा ध्यान दे तो बहुत काम कर सकती है।

बापूके आशीर्वाद

'भजनावलि' में १३९ वे भजनकी दूसरी पंक्तिमें 'निजनामग्राही' प्रयोग है। अिसका अर्थ नारणदाससे या कोअी गुजराती समझता हो अुससे समझकर भेजना। तू ही समझती हो तो तू लिखना।

३५

१४-१२-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। बच्चोंकी सजाके बारेमें भी समझा। तेरी दलील पुरानी है। यह 'दूषित चक्र' है। तुझे मार पड़ी अिससे तू सुधरी; अिसलिअे दूसरोंको सुधारनेके लिअे तू अुन्हें मारती है। बच्चे भी बड़े होने पर यही सीखेंगे। बिलकुल अैसी दलीलसे लोग हिंसाको मानते हैं। अिस झूठे अनुभवके अुस पार जाना हमारा काम है। अुसके लिअे धीरज चाहिये, यह मैं स्वीकार करता हूं। यह धीरज पैदा करने और अुसे बढानेके लिअे हम अिकट्ठे हुअे हैं। बच्चोंको पढाना या अनुशासन सिखाना ही हमारा ध्येय नहीं है। अुन्हें चरित्रवान बनाना हमारा ध्येय है और अुसीके लिअे पढाअी, अनुशासन वगैरा हैं। अुन्हें चरित्रवान बनानेमें अनुशासन टूटे, पढ़ाअी बिगडे तो भले ही टूटे और बिगड़े। लेकिन तेरी दलीलको मैं समझता हूं। यह भी समझता हूं कि तेरे मारनेमें द्वेष नहीं है। फिर भी तेरे मारनेमें रोष और अधीरता तो है ही। मैं अेक सुझाव तेरे सामने रखता हूं। तू बच्चोंकी सभा कर। जो बच्चे कहें कि 'हम शैतानी करे या आज्ञा भंग करे तो हमें मारिये और अिस तरहसे मारिये,' अुन्हें मारना और वे कहे अुसी तरह मारना। जो मना करे अुन्हें मत मारना। अैसा करते करते तू देखेगी कि अुन्हें मारनेकी जरूरत नहीं पडेगी। अिस विषयकी चर्चा मेरे साथ करती रहना। अधीर बनकर या निराश होकर अिसे छोड़ मत देना। तेरी बुद्धि मेरी

३४

यरवडा मन्दिर,
५–१२–'३०

चि० प्रेमा,

तेरे अुपवासके लिअे और अुस बीच तूने जो अुत्साह दिखाया अुसके लिअे बधाअी चाहिये? खुराकके बारेमें तो लिख ही चुका हूं। अभी कच्चा शाक न लेना। दाल तो बिलकुल न लेना। दूध, दही, खाखरा, अुबाला हुआ शाक या फल, पपीता, मोसंबी वगैरा मिले तो दवाकी जरूरत नहीं रहनी। दवाकी जरूरत मुझे तो नहीं लगती। फिर जिस दवाकी बनावटके बारेमें मालूम न हो, अुसे न लेनेकी हमेशा मेरी वृत्ति रही है। अुपवासमें दवाका सारा काम हो जाना चाहिये। सूर्यस्नान जारी रखनेकी जरूरत है तो सही। नींद पूरी लेना।

बच्चोंकी पढ़ाअीका कुछ न कुछ अिन्तजाम जरूर करना।

पुरुषोत्तमका पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा। अुसका सारा काम मुझे बहुत निश्चित और साफ मालूम हुआ है।

सुशीलाको वर्षगांठके अुपलक्ष्यमें मेरे आशीर्वाद पहुंचाना।

राजकोट जाने पर तू जमनादास[1] से मिली होगी। मनु[2] से मिली थी? पुरुषोत्तम[3]की तबीयत कैसी है?

जमनादासकी पाठशालामें कुछ होता है? राजकोटमें कुछ आन्दोलन देखनेमें आया? अिन सब खबरोंकी आशा तुझसे रखता हूं।

---

१. श्री जमनादासभाअी गांधी, पूज्य महात्माजीके भतीजे। राजकोटमें राष्ट्रीय पाठशाला चलाते थे। राजकोटमें मेरी सहेली सुशीला पै रहती थी। अुससे मिलनेके लिअे सालमें अेक बार ४ दिनकी छुट्टी लेकर मैं जाती थी।

२. पूज्य महात्माजीके बड़े लड़के श्री हरिलालभाअीकी लड़की।

३. श्री नारणदासभाअीका लड़का।

अीश्वर जरूर है। और अगर वह है तो फिर अुसका भजन करने, अुसकी प्रार्थना करनेकी बात तो सरलतासे समझमें आ जायगी। अगर हम समझदार हों तो सुबह अुठकर और रातको सोते समय माता-पिताको साष्टांग नमस्कार करते हैं, वैसे ही अीश्वरको भी करना चाहिये। और जैसे हम माता-पिताको अपनी अिच्छा बताते हैं, वैसे ही अीश्वरको भी बतानी चाहिये। आजके लिअे अितना काफी है न? अिसमें कुछ सार मालूम न हो तो लिखनेमें संकोच मत करना।

बापूके आशीर्वाद

३७

२८-१२-'३०

चि० प्रेमा,

मुझे वचन[१]में तुझे बांधना नहीं है। तू मुझे विश्वास दिलाती है अितना काफी है। चिल्ला चिल्ला कर गला मत बिगाड़ लेना। अुस पर अुपवासका कुछ असर हुआ क्या? बच्चे मुझे जो पत्र लिखते हैं अुन्हें कोअी देख सके तो अच्छा हो — अक्षर और भाषा दोनोंकी दृष्टिसे।

बापूके आशीर्वाद

३८

१-१-'३१

चि० प्रेमा,

अिस हफ्तेकी डाकमें अिस बार भी देर हो गअी है। अिस बीचमें मैंने तो पत्र लिखने शुरू कर ही दिये हैं।

फुरसत होती है तो मन लड़के-लड़कियोंका विचार करता है। तेअीस दिसम्बरका दिन सबसे छोटा क्यों होता है, यह बच्चे नहीं जानते होंगे। यह समझाते हुअे भूगोल तथा खगोलका कुछ ज्ञान सहज ही कराया जा सकता है। यह तू नहीं करेगी? छोटे दिनके बारेमें समझाते हुअे लम्बे और बराबरके दिनके बारेमें (भी) समझा देना। अुसीके साथ

१. बच्चोंको न मारनेका वचन।

बातको स्वीकार न करे तब तक तू अपने ही मार्गसे चलना। मैं जानता हूँ कि तू सत्यकी पुजारी है; असलिअे अन्तमें तुझे सत्य जरूर मिलेगा।

तेरी खुराक ठीक मालूम होती है।

राजकोटका वर्णन तूने नहीं भेजा।

बापूके आशीर्वाद

३६

[बच्चे समझ सकें अैसी भाषामें प्रार्थनाका महत्त्व समझानेकी पूज्य महात्माजीसे मैंने विनती की थी। अुसके अुत्तरमें यह पत्र है।]

यरवडा मन्दिर,
२२-१२-'३०

चि० प्रेमा,

तेरा हकीकतोंसे भरा पत्र मिला। 'निजनामग्राही' के दोनों अर्थ ठीक हैं। नारणदासका अर्थ गुजराती भाषाके लिअे शायद ज्यादा अनुकूल हो। लेकिन तेरा अर्थ बिलकुल न चले अैसा नहीं है।

तू ही बच्ची है यह कल्पना करके मैं प्रार्थना-सम्बन्धी प्रश्नका अुत्तर दे रहा हूँ। जैसे हमारे जन्मदाता माता-पिता हैं, वैसे ही अुनके भी हैं। अिस तरह अेक अेक सीढ़ी अूचे चढ़ते जाय तो जिस जन्मदाताकी कल्पना हम कर सकते हैं वह अीश्वर है। अुसका दूसरा नाम सरजनहार भी अिसीलिअे पड़ा है। और जैसे हमारे माता-पिता बहुत बार हमारे बताये बिना ही हमारी अिच्छाको समझ जाते हैं, वैसे ही अीश्वरके बारेमें भी समझें। और अगर माता-पिता में अितना जाननेकी शक्ति होती है, तो सब जीवोंके सरजनहारमें तो हमारा अन्तर जाननेकी बहुत अधिक शक्ति होनी चाहिये। अिससे अीश्वरको हम अन्तर्यामीके रूपमें भी पहचानते हैं। अुसे देख सकनेकी जरूरत नहीं है। अपने बहुतसे सबंधियोंको हमने देखा नहीं है, किसीके माता-पिता बचपनमें परदेश गये हों या मर गये हों, तो भी वे हैं या थे अैसा हम दूसरों पर श्रद्धा रखकर मानते हैं, वैसे ही हमारे सामने अीश्वरके बारेमें संतोंका प्रमाण है। अुस पर विश्वास रखकर हमें मानना चाहिये कि अन्तर्यामी

तुलसीदास वगैरा भक्तोंने शठ, कामी आदि शब्दोंसे अपना परिचय कराया है। यह औपचारिक भाषा नहीं थी, अन्तरके अुद्‌गार थे। सच बात यह है कि हमारे अंदर दोनों भावनायें भरी हैं। जाग्रत अवस्थामें हम ब्रह्मरूप लगते हैं। मूर्छित स्थितिमें अुस दयालुके सामने हम दीन जैसे हैं। जो अपनेको दीन न समझता हो, लेकिन पूर्ण ब्रह्म समझता हो, वह भले ही अीश्वरकी करुणाकी याचना करनेवाले भजन न गाये। अैसे मनुष्य करोडोंमें अेकके हिसाबसे भी नहीं मिलेंगे। अपनी अल्पताका दर्शन करना महान बननेका आरम्भ है। अलग पडा हुआ समुद्र बिन्दु अपनेको समुद्र कह कर सूख जायगा। परन्तु अपनी बिन्दुताको स्वीकार करे तो वह समुद्रकी ओर प्रयाण करेगा और अुसमें लीन होकर समुद्र बन जायगा।

कल्चरका अर्थ है संस्कारिता। अेज्युकेशनका अर्थ है साहित्य-ज्ञान। साहित्य ज्ञान साधन है। संस्कारिता साध्य वस्तु है। साहित्य-ज्ञानके बिना भी संस्कारिता आती है। जैसे कोअी बालक शुद्ध संस्कारी घरमें पलकर बडा हो, तो अुसमें संस्कार अपने-आप अुत्पन्न होंगे। आजकी शिक्षा और संस्कारिताके बीच अिस देशमें तो कोअी मेल नहीं है। अिस शिक्षाके बावजूद शिक्षितोंमें अभी तक संस्कारिता रही है। जिससे मालूम होता है कि हमारी संस्कारिताकी जडें बहुत गहरी पहुंची हुअी हैं।

प्रसन्नबहन[1] को आशिष और बधाअी। वह पतिको भी अिस ओर आकर्षित करे।

वजनमें तू नारणदासके साथ अुल्टी होड करती मालूम होती है। ठीक है। तू अभी बढ सकती है। नारणदास घट सकता है।

'गीताबोध' का भाषांतर धुरन्धर कर रहा है, यह मुझे अच्छा लगता है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ प्रसन्नबहन अुस समय आश्रममें संस्कार लेनेके लिअे आकर रही थीं।

ऋतुओंके परिवर्तनकी बात भी। क्रिसमस क्या है, यह भी समझा देना। अैसी प्रस्तुत बातोंमें दोनोंको रस आना चाहिये। अिसी तरह अंकोंकी देसी पद्धति और जबानी हिसाबकी बात है। यह भी बच्चोंको खेल खेलमें सिखाया जा सकता है। अैसा सोचते हुअे सहज ही वनस्पति-शास्त्र याद आता है। मैं तो अिसमें ठोट ही रहा। तुझे शायद कुछ आता भी होगा। न आता हो तो तू आसानीसे सामान्य ज्ञान प्राप्त करके बालकोंको दे सकती है और मुझे डाकसे भेज सकती है। सीखती जा और बालकोंको सिखाती जा। तेरे दिमाग पर अिसका बोझ नहीं लगना चाहिये। बच्चोंका और मेरा तो काम बन जाय, अगर अैसा कुछ हो सके तो।

बच्चोंको जो देना चाहिये वह हम नहीं देते, अैसा लगा करता है। सरल प्रयत्नसे जो दिया जा सके वह तो दें। नारणदासके साथ मिलकर अिस पर विचार करना।

बापूके आशीर्वाद

३९

['आश्रम-भजनावलि' में सूरदासका यह भजन है 'मो सम कौन कुटिल खल कामी।' अुसके विरुद्ध मैंने यह दलील की थी:

"स्वामी विवेकानन्दका मत है कि प्रत्येक व्यक्ति अव्यक्त रूपमें आत्मा ही होता है। अिसलिअे भीतरकी छिपी महानताको प्रत्येक पहचाने और अुसीका चिन्तन करे। मैं पापी हूं, मैं पतित हूं, अैसा विचार करनेसे साधक पतित ही होगा। . यह ठीक हो तो संत बहुत बार क्यों अपनेको धिक्कारते हैं?" मार्थी धुरन्धरका मत भी अैसा ही था। Culture और Education के बीचका भेद भी मैंने पूछा था।]

५-१-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे विचारसे विवेकानन्द[1] का और धुरन्धरका कहना अेकपक्षी है। जो जैसा बोले वैसा हृदयमें लगना चाहिये। सूरदास,

१. स्वामी विवेकानन्द (१८६२–१९०२)। श्री रामकृष्ण परमहंसके शिष्य।

रोलाके लिअे प्रार्थना करना ठीक था। मेरे साथके सबधका विचार न किया जाय तो भी अुनकी स्वच्छता बहुत आकर्षक लगती है।

तेरे गलेमें अभी भी कुछ खराबी है, अुसे दूर करनेकी कोशिश करना। सरोजिनीदेवीकी गाड़ी कैसी चलती है? शीला अब बीमार तो नहीं रहती न?

बापूके आशीर्वाद

४१

[श्री जमनालालजी बजाजके पुत्र कमलनयनने पूज्य महात्माजीसे मराठीमें ही पत्र लिखनेका आग्रह किया था। महात्माजीने तीन चार पंक्तियोंका पत्र लिखा, जो आश्रमकी डाकमें आया था। अुनकी मराठी मुझे बहुत ही मजेदार लगी, अिसलिअे मैंने भी अुनसे आग्रह किया कि "मुझे भी आप मराठीमें अेक पत्र लिखिये।"

"आपके *Hero* (जीवन-वीर) कौन थे?" अिस प्रश्नका अुत्तर।

काले वा कारणं राज्ञो राजा वा काल-कारणम्।
अिति ते संशयो माऽभूत् राजा कालस्य कारणम्॥

अिस श्लोकके अर्थके बारेमें मैंने अुनके विचार पूछे थे। नअी भाषामें शान्ति और जीवन-वीर[1] (पुरानी भाषामें काल और राजा)।]

य० मंदिर,
१७-१-'३१

चि० प्रेमा,

मेरी हिम्मत कैसी है! अथवा भारतकी भाषाओं पर मेरा प्रेम कितना है! चाहे जितनी अशुद्ध हो, फिर भी मराठी तो मानी ही जायगी न? लेकिन तुझे मराठीमें पत्र लिखनेमें अभी देर है।

तूने काफी जिम्मेदारी अुठाअी है। दुर्गा[1] के बारेमें निराश मत होना। अगर तू सिंचन करती ही रहेगी, तो वही दुर्गा पढ़नेमें रस लेगी।

वनस्पतिके बारेमें घरेलू ज्ञान तो तू तोतारामजीसे भी प्राप्त कर सकती है। आश्रममें होनेवाले पेड़-पौधोंकी पहचान और वे कैसे

१ अेक नेपाली लड़की जो विद्यालयमें पढ़ती थी।

["गीतामें कौनसा श्लोक आपको सबसे प्रिय है?" जिस प्रश्नका अुत्तर।

अुस समय फ्रांसके विश्व-विख्यात तत्त्वज्ञानी श्री रोमां रोलां बहुत बीमार थे। अुनकी बीमारीकी खबर मिलने पर आश्रममें अुनके लिअे प्रार्थना की गअी थी।]

यरवडा मन्दिर,
११-१-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे सबसे प्रिय श्लोकके बारेमें अेक बार तो मैं कह सका था। 'मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय' अित्यादि। आज निश्चित रूपसे नहीं कह सकता। जिस समय जैसी मनोवृत्ति होती है अुसीके अनुसार श्लोक प्रिय लगता है। जिस प्रश्नमें अब रस नहीं आता। सारी गीता मुझे तो प्रिय लगती है। वही माता है। किसी बच्चेसे कोअी यह प्रश्न पूछे कि माताका कौनसा अंग अुसे अच्छा लगता है, तो अुस प्रश्नमें कोअी तथ्य नहीं होता। अैसा ही मेरे बारेमें भी समझना।

यहां सरदी दो-तीन दिन पड़ी। अब वैसी नहीं लगती। शायद चारों तरफ दीवार है जिसलिअे। हम दोनों सोते तो आकाशके नीचे ही हैं।

काशीनाथ[1] ने आश्रम छोड़ दिया, जिसलिअे क्या वे हिन्दी नहीं सिखा सकते?

धर्मकुमारकी मासीका जिलाज तुरन्त होना चाहिये। जिसी तरह नयनका। कमलाबहनको मुझे याद है। अुसे मेरा आशीर्वाद भेजना। धीरूके बारेमें समझा।

१. श्री काशीनाथ त्रिवेदी। कअी साल तक सत्याग्रह आश्रममें थे और 'हिन्दी नवजीवन' का काम करते थे। पूज्य बापूजीकी कुछ पुस्तकोंका हिन्दीमें अनुवाद किया है। आजकल मध्यप्रदेशमें रचनात्मक काम करते हैं।

दुनियामें होनेवाली क्रान्तियोंका कारण महापुरुष दिखाओ देते हैं। वास्तवमें देखें तो अुनका कारण लोग खुद ही होते हैं। क्रान्ति अकस्मात नहीं होती। लेकिन जैसे ग्रह नियमित रूपसे घूमते हैं वैसे ही क्रांतिके बारेमें भी है। बात अितनी ही है कि हम अुन नियमों और कारणोंको जानते नहीं, अिसलिअे अुसे अकस्मात हुआी मानते हैं।

बापूके आशीर्वाद

४२

[यरवडासे छूटनेके बाद या छूटनेकी गडबडीमें यह पुर्जा लिखा हुआ मालूम होता है।]

२-२-'३१

चि० प्रेमा,

यह तुझे लिखनेके खातिर ही लिखा है। तेरे पत्रका अेक ही पन्ना मेरे सामने है। दूसरे कहीं अिधर अुधर हो गये मालूम होते हैं। मिल जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

४३

[पूज्य महात्माजी छूटकर साबरमती आये। स्वराज्य न मिले तब तक आश्रममें न आनेकी अुनकी प्रतिज्ञा थी। वे रास्तेमें घूमने निकले थे। वहां आश्रमवासियोंकी टोली अुनसे मिलने गआी। "आन्दोलनमें विजय मिली है, अब स्वराज्य हाथमें आया ही समझो" — अैसी भावना चारों ओर फैल गआी थी। सब जेलवासी छूटकर आनन्द और गर्वसे भरे लौटे थे। मैं दुःखी थी, क्योंकि आन्दोलनमें मैंने तो कुछ भी त्याग नहीं किया था और न कोआी कष्ट अुठाये थे। मुझे पूज्य महात्माजीको मुंह दिखानेमें संकोच होता था। लेकिन अुनके विचार अलग थे। मुझे दिलासा देनेके लिअे कराची कांग्रेसमें अपने साथ ले जानेका अुन्होंने अिरादा किया और मंत्री नारणदासभाअीने अुस योजनाको स्वीकार किया। कराचीमें मैं महात्माजीके साथ ही थी। बम्बअीसे दिल्ली होकर हम कराची गये थे। मेरी

अुगते हैं अुनकी अुमर कितनी है, वे कब फल देते हैं — यह ज्ञान तो बच्चोंको होना ही चाहिये न? मुझे तो नहीं है।

सक्रान्तिके दिन यहां आधी छुट्टी न होती तो मुझे कुछ भी पता न चलता। तेरा तिलगुड मिला। अुसने फिरसे स्मरणको ताजा किया। हमारी मकाति तो अिन दिनों राज ही होती है असा कहा जायगा।

नारणदासकी सम्मतिसे मेरे पत्रमें से जो हिस्से भेजने हों भेज सकती है।[1]

Hero यानी पूज्य, देवता। राजनीतिमें वह स्थान गोखलेका है। सामान्य रूपमें मेरे समग्र जीवन पर जो लोग असर डाल सके हैं वे हैं टॉल्स्टॉय[2], रस्किन[3], थोरो[4] और रायचंदभाओी[5]। थोरोको शायद छोड़ देना ही अधिक अुपयुक्त होगा।

---

१ महात्माजीके अलग अलग पत्रोंमें अनेक नये नये विचार आते थे। अुन्हें अुद्धृत करके स्नेहियोंको भेजनेका अुल्लेख है।

२ काअुंट लियो टॉल्स्टॉय (१८२८–१९१०)। प्रसिद्ध रूसी साहित्यकार और तत्त्वचिंतक। अुनकी 'अीश्वरका राज्य तुम्हारे हृदयमें है' नामक पुस्तकने पूज्य बापूजीको बहुत प्रभावित किया था।

३ जॉन रस्किन (१८१९–१९००)। प्रसिद्ध अंग्रेज साहित्यकार और तत्त्वचिंतक। अुनकी 'अन्टु दिस लास्ट' पुस्तकने पूज्य बापूजी पर जादूका-सा असर किया था। अिस पुस्तकका सार पूज्य बापूजीने स्वयं गुजरातीमें दिया है, जो 'सर्वोदय' नामसे प्रकाशित हुआ है।

४ हैनरी डेविड थोरो (१८१७–१८६२)। अमेरिकन लेखक और तत्त्वचिन्तक। अुनके लेखोंका पू॰ बापूजी पर असर हुआ था। थोरोके लेखोंमें सत्याग्रहके बीज दिखाओी देते हैं। पू॰ बापूजीने थोरोकी 'ड्यूटी ऑफ सिविल डिसओबीडियन्स' (कानूनका विरोध करनेका कर्तव्य) पुस्तकका 'अिन्डियन ओपीनियन' में अनुवाद दिया था।

५ श्रीमद् राजचन्द्र (१८६७–१९०१)। कवि और ज्ञानी। अुनके प्राणवान सत्संगसे पूज्य बापूजीके जीवन पर गहरी छाप पड़ी। आध्यात्मिक कठिनाओी पैदा होने पर पूज्य बापूजी अुनसे सलाह लेते थे।

शरीर बिगड़ेगा। अुसकी खास जिम्मेदारी किस पर रहती है? हर बच्चेको अैसा लगना चाहिये कि आश्रममें वह अनाथ बच्चा नहीं है। कृष्णकुमारीकी तबीयत कैसी है? औरोंके बारेमें भी मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

४५

बारडोली,
४-६-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मैं भी सोमवारको रवाना होनेवाला हूं। अिस लिअे मंगलवारको ही हम दोनों बबअी पहुचेंगे। लेकिन मैं कुछ जल्दी पहुचूगा। मगलवारको फुरसत हो तब कुछ देरके लिअे मिल जाना। अुस समय बात करनेका मौका मिला तो निश्चय कर दूंगा।

तेरा पत्र समाचारोंसे अच्छा भरा हुआ है। गंगाबहन[1]में अुमंग और अुत्साह तो बहुत है। तू अुनके साथ खूब चर्चा करना और अुन्हें मदद भी देना। अुनका प्रेम अपार है सबकी अिच्छा तीव्र है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री गंगाबहन वैद्य मुझसे ६ साल पहले सत्याग्रह आश्रममें आकर रही थीं। आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी होते हुअे भी बबअीकी आरामकी जिन्दगी छोड़कर आश्रमवासी बनी। अुनकी भाषा कच्छी थी। अुमर ५० वर्षसे अूपर होने पर भी पढ़ने और सेवा करनेका अुत्साह अुनमें बहुत अधिक था। १९३३ में हम जेलमें साथ थीं तब मुझसे संस्कृत ग्रंथ पढ़ने बैठती थीं। अिस पर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ था। यूनानी चिकित्सा और सिलाअी अच्छी जानती थीं।

अुन्होंने आश्रममें स्त्रियोंका अच्छा संगठन किया था। १९३४ के बाद खेड़ा जिलेके बोचासण गांवमें रहने लगीं। अब भी वहीं रहकर खूब सेवा करती हैं।

बारमदके लाठी चार्जके मौके पर गंगाबहनने हंसते हंसते लाठियां खाअी थीं।

अेक सहेली किसन भी, जिसने बबअीमें बहुत काम किया था, पूज्य महात्माजीकी मिजाजतसे मेरे साथ ही कांग्रेस-नगरमें रहती थी। वहांसे मैं वापस सत्याग्रह आश्रममें लौटी तब अुनकी आज्ञानुसार मैंने अुन्हें पत्र लिखा, जिसमें अुनके साथ की हुअी यात्रामें मैंने क्या क्या देखा और क्या क्या सीखा, जिसका विस्तारसे वर्णन किया था। अुसका यह अुत्तर है।]

नैनीताल
१८-५-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मुझे बहुत पसन्द आया। मैं देखता हूं कि तूने अिस यात्रामें सुन्दर निरीक्षण किया। किसन भी अपने अनुभव भेजें अैसी मेरी अिच्छा है। अंग्रेजी या मराठीमें लिखे।

लक्ष्मी[1] पर खूब ध्यान देना। अुसका विवाह किसी सवर्णके साथ करनेका विचार है। अुसे अुस घरमें शोभना चाहिये। अुसे रसोअी आनी चाहिये। घर चलाना आना चाहिये। हिसाब रखना जानना चाहिये। थोडी संस्कृत जाने तो बहुत अच्छा। संस्कृत न जाने तो भी प्रार्थनाके श्लोकोंका और गीताका अुच्चारण तो अुसे शुद्ध जानना ही चाहिये।

अितना ज्ञान सब लडकियोंको प्राप्त होना चाहिये। लडकियोंकी पढ़ाअीका हम न भूलें यह आवश्यक है। मुझे विस्तारसे लिखना। लक्ष्मीके बारेमें तेरा अनुभव बताना।

बापूके आशीर्वाद

४४

३१-५-'३१

चि० प्रेमा,

लक्ष्मी और पद्मा[2] बीमार क्यों रहती हैं? मालूम होता है वे दवा वगैराके बारेमें लापरवाह रहती हैं। पद्माको बुखार रहा करे तो अुसका

१ अेक हरिजन कन्या। पूज्य बापूजीने अुसे अपनी पुत्रीके रूपमें स्वीकार किया था।

२ अुत्तर प्रदेशके कांग्रेसी कार्यकर्ता श्री सीतलासहायकी पुत्री।

स्वयं बारीकीसे सब नियमोंका पालन कर सकती थी, अिसलिअे मुझे लगता था कि सभी वैसा कर सकते हैं और अुन्हें वैसा करना ही चाहिये, वैसा न करनेवाले या तो आलसी हैं अथवा स्वार्थी होने चाहिये। भले हर व्यक्ति अपनी शक्तिके मुताबिक काम करे, लेकिन अुस कम या ज्यादा काम तो करना ही चाहिये। वैसा न करनेवालेके प्रति मेरी असहिष्णुता प्रगट होती। कभी कभी मैं क्रोध भी कर बैठती थी। जो बुजुर्ग थे अुनके प्रति मुझे अमुक मर्यादाका पालन करना चाहिये था। लेकिन अुस मर्यादाका मुझसे अुल्लंघन हो जाता था अिसलिअे वे लोग चिढ़ जाते थे। कड़े अनुशासनसे व्यवस्थामें सुसम्बद्धता तो आअी थी, लेकिन कुछ स्त्री-पुरुषोंके मन दुःखी हुअे थे। अिसलिअे पूज्य महात्माजीके पास शिकायतें जाने लगीं।

महात्माजी मुझे अहिंसा, क्षमा और अुदारताके पाठ सिखाने लगे। अुनकी शिक्षा मेरी बुद्धिको तो ठीक लगती थी, लेकिन अुस पर अमल करनेमें मैं सफल न होती थी। मेरे स्वभावके दोषोंने गहरी जड़ें जमा ली थीं। वे जल्दी नहीं निकल सकते थे। मुझे विचार आया कि, "मैं सत्याग्रही सैनिककी तालीम लेने आअी थी अुसके बजाय पूज्य महात्माजीने मुझ पर आश्रमके सचालनकी जिम्मेदारी डाल दी (भले ही नारणदास काकाकी छत्रछायामें)। यह काम मेरी शक्तिसे बाहर है। यहां केवल सगठनकी बात नहीं है, अहिंसा द्वारा सगठन करनेकी जरूरत है। बड़ी अुमरके व्यक्ति, जिन्होंने वर्षों तक तपस्या की है, जिनमें वात्सल्य और प्रेम है और जो अपना नैतिक प्रभाव सब पर डाल सकते हैं, अैसे ही व्यक्ति अिस कामके अधिकारी हैं। अतः मेरे लिअे यह काम छोड़ देना ही ठीक होगा।"

बादमें बड़ी गंगाबहनने जब मत्रीजीसे यह मांग की कि, "आश्रमके सचालनकी सारी जिम्मेदारी पहलेकी तरह मुझे सौंपी जाय और प्रेमाबहन मेरे हाथके नीचे काम करे" तो मैंने खुशीसे अुसे स्वीकार कर लिया और गंगाबहनकी बात स्वीकार करनेकी नारणदास काकासे प्रार्थना की। लेकिन नारणदास काकाने मेरा प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। अुन्होंने कहा कि, "ये लोग प्रतिज्ञा-बद्ध हैं। आन्दोलन शुरू होगा तो सब चले

[सन् १९३१ में सरकारसे समझौता हुआ तब जेल गये हुअे सभी आश्रमवासी भाअी-बहन जेलसे मुक्त होकर वापस आये। जो आश्रमके पुराने रहनेवाले थे वे आश्रममें ही रहने लगे। लेकिन बादमें कठिनाअियां पैदा हुअीं। अुनके जेल जानेके बाद ज्यादातर कामोंकी जिम्मेदारी मेरे सिर पर आ गअी थी। वापस आनेवालोंको क्या काम दिया जाय? आन्दोलन फिरसे शुरू हो तो अुसमें शामिल होनेके लिअे वे सब प्रतिज्ञाबद्ध थे। अिसलिअे थोड़े दिनोंके लिअे कामकाज अुनके हाथमें सौंपना मुश्किल हो गया। फिर दांडी-कूचसे पहलेकी आश्रमकी परिस्थिति अनेक तरहसे बदल गअी थी। अनुशासनमें कचाश आ गअी थी। सब काम यंत्रवत् चलते थे।

सत्याग्रह आश्रममें दो तरहके लोग रहते थे। कअी आश्रममें रहे हुअे कार्यकर्ताओंके कुटुम्बी-जन, और निश्चित-समयके लिअे कभी कभी आकर थोड़े नियत समय तक रहनेवाले स्त्री-पुरुष तथा बच्चे। दूसरे प्रकारके लोगोंकी संख्या हमेशा बहुत ज्यादा रहती थी। अिन लोगोंको आश्रमके नियमों और अनुशासन दोनोंका पालन करना पड़ता था, जब कि परिवारवालोंको अनेक कारणोंसे सुविधाअें मिलती थीं। अनेक सुविधायें तो शारीरिक दुर्बलता या मर्यादाओंके कारण मिलती थीं। लेकिन अिस भेदभावसे कअी बार कठिनाअियां खड़ी होती थीं।

सत्याग्रह आन्दोलनके कारण सभी भाअी और ज्यादातर नअी-पुरानी बहनें आश्रम छोड़ कर चली गअीं। तब मेरे जैसी नअी और नौजवान लड़की पर लगभग सारे ही कामोंकी जिम्मेदारी आ पड़ी। अीश्वरकी कृपासे मेरा शरीर पूर्ण सशक्त और तन्दुरुस्ती भी अच्छी थी, अिसलिअे काम करनेमें मुझे कभी शारीरिक शक्तिकी कमी नहीं लगी, यद्यपि नींद बहुत कम मिलती थी। दांडी-कूचके बाद कअी हफ्तों तक रातको मैं केवल तीन घंटे सोअी। बादमें पांच घंटे तक नींद मिलने लगी। ध्येयनिष्ठा तथा पूज्य महात्माजीके प्रति अनन्य श्रद्धा तथा मंत्री श्री नारणदासभाअीके वात्सल्य (अुन्हें मैं 'काका' कहती थी)—अिन सबके कारण मुझे थकान नहीं लगती थी। लेकिन मुझमें दोष तो थे ही। मैं

छोडनेको तैयार हू। या तो आप मुझे वैसा करनेकी अिजाजत दीजिये या बुजुर्गोंको समझाअिये कि वे वातावरणको स्वच्छ रखने तथा अैसी परिस्थिति पैदा करनेका प्रयत्न करे, जिससे मेरे क्रोधका कारण न रहे।" पूज्य महात्माजीसे भी मैंने कहा, "आप दूरसे मुझे रोष्ना दिखाते रहते है। अेक ओर आश्रमकी सुव्यवस्थाके लिअे आग्रह रखते हैं, दूसरी ओर प्रेमसे सब कुछ करनेकी शिक्षा देते है। जरा विचार तो कीजिये, आप स्वय अितनी आध्यात्मिक और नैतिक शक्ति रखनेवाले महात्मा है। अितने वर्षोंमें आप अिन लोगोको नियमपूर्वक प्रार्थनामें शरीक होने जितने सस्कार भी नही दे सके, तो मै २५ वर्षकी अनगढ लडकी अिन सब पर अपना प्रभाव कैसे डाल सकती हू?" पूज्य महात्माजीने हसकर कुछ अिस तरह कहा, "मै तो बापू ठहरा न!" लेकिन मुझे सलाह दी कि, "तेरे मुहसे अपशब्द निकलें यह ठीक नही है। मैत्रीसे तुझे माफी मागनी चाहिये।" अुस समय तो मैंने जोरोंमें बिलकुल अिनकार कर दिया। पूज्य महात्माजीको अन्य बातोंके लिअे विरोधियोंको खास कुछ समझानेकी जरूरत नही थी, क्योंकि अधिकतर जवाब तो मैंने ही दे दिये थे। और गलतफहमी हुअी हो तो अुसे दूर करने जितना स्पष्टीकरण कर दिया था।

दूसरे दिन हम आश्रम लौट आये। लेकिन कुछ लोग वही रह गये। बादमें मालूम हुआ कि मेरे बाह्य आचारके अूपर सदेह करके कुछ अैसी अैसी बातें महात्माजीसे कही गअी कि अुन्हे साबरमती आकर अिस मामलेमें गहरा अुतरना पडा। बादमें तो सारी बातें निराधार सिद्ध हुअी। लेकिन अुसके बाद अेक दिन हृदय-कुजके बरामदेमें सब छोटे-बडे आश्रमवासियो, बच्चो और मेहमानोंके बीच पूज्य महात्माजीने अिस तूफानका स्पष्ट और विस्तारसे अुल्लेख करके लम्बा प्रवचन किया। अुससे मुझे बडा आघात पहुचा! शरम भी आअी!! पूज्य महात्माजी बाहर जानेके लिअे निकले तब हमेशाकी तरह मैं अुनके पैर छूने नही गअी और तबसे कअी दिनो तक मैं अुनसे बोली भी नही। न मिलने जाती, न पत्र लिखती! अपनी राजकोट और बबअीकी सहेलियोको मैंने अिस वस्तुस्थितिसे परिचित कराया। अिसलिअे १९३१ के अगस्तमें जब पूज्य महात्माजी बबअी गये, तब श्री धुरन्धर और किरान दोनो अुनसे मिलने

जायगे। फिर मैं क्या करूंगा? व्यवस्था-तंत्र क्या जिस तरह थोड़े थोड़े दिनामें बदला जा सकता है?" मेरे मन पर अैसी छाप है कि जेल जानेसे पहले पूज्य महात्माजीने जब बहनोंका आवाहन किया, तब गगावहन अुत्साहमे तुरन्त आन्दोलनमें कूद पडी — साथमें आश्रमकी लगभग सारी कार्यकर्त्री बहनोंको ले गअी। यह बात नारणदास काकाको पसन्द नहीं थी। आश्रमकी भीतरी व्यवस्थाकी देखरेखके लिअे किसी प्रौढ अनुभवी महिलाकी जरूरत थी। लेकिन अुस समय किसीको यह विचार ही नहीं आया। यह बात अुनको जरूर खटकी होगी।

अिस बीच मुझसे अेक बडी भूल हो गअी। जवान लडकियोंमें भी दो दल हो गये थे। अेक छात्रालयकी लडकियोंका और दूसरा कुटुम्बियोंवाले भागकी शिक्षक निवासकी लडकियोंका। छात्रालयकी अेक लडकीको (जो लगभग १६ वर्षकी होगी) फिट आते थे। अुस लडकीको शिक्षक निवासकी बडी अुमरकी अेक लडकी (मैत्री) ने कुछ व्यगमें कहा। साधारणत मैं छोटी छोटी बातोंमें नहीं अुतरती थी, समझानेकी कोशिश करती थी। लेकिन पुराने बुजुर्ग आश्रमवासी जेलमुक्त होकर वापस आये, अुसके बाद वातावरणमें जो क्षोभ अुत्पन्न हुआ था अुसका असर मुझ पर भी पडा था। लडकीके व्यगके शब्द भी कडवे थे। वह लडकी रोती हुअी मेरे पास आअी। मैं अुसे लेकर मैत्रीके पास गअी। पूछताछमें खेद प्रगट करनेके बजाय मैत्रीने अुद्धत जवाब दिये। अिसलिअे क्रोधमें मेरे मुहसे ये शब्द निकल गये "फिर अैसे व्यगके शब्द तेरे मुहसे निकलेंगे तो मुह पर चप्पल दे मारूंगी।" अिससे गरम तेलमें पानी पड गया! फिर तो महात्माजीका बीचमें पडना अनिवार्य हो गया। मैंने गुस्सेमें यह कहकर न्यायकी माग की कि काममें मदद देकर अुसे सरल बनानेके बजाय विरोधी लोग वातावरणको दूषित करते हैं और मुझे क्रोधवश होनेको मजबूर करते हैं।

पूज्य महात्माजी अुस समय बोरसदमें थे। वहा नारणदास काकाके साथ मैं और विरोधियोंके प्रतिनिधि महात्माजीसे मिलने गये। रातको लगभग २ घटे तक बातें हुअीं। अुन्होंने मुझ पर आरोप लगाये। मैंने अेक घटे तक बोल कर अुनका खडन किया। अपने दोष तो मैंने स्वीकार किये, लेकिन प्रतिनिधियोंसे यह दलील की कि, "मैं अपनी जिम्मेदारी

अब मुझे अुलटा आघात पहुचा! मेरे जैसी अेक क्षुद्र लडकीके सामने पूज्य महात्माजी जैसे महापुरुष अितने नेम्र हो जाय कि "भिक्षा मागने" की भाषा बोलें, यह मुझसे सहन नही हुआ। अन्दर ही अन्दर हृदयमें तीव्र सन्ताप हुआ और मैंने अपनेको सैकडो बार धिक्कारा।]

*

पूज्य महात्माजीने गोलमेज परिषदमें जानेका निश्चय किया था। अुसके लिअे काग्रेसकी शर्तें पूरी हों अिस हेतुसे अग्रेज सरकारका हृदय बदलनेके लिअे पूज्य महात्माजी महाप्रयास कर रहे थे, और अुसी सम्बन्धमें दिल्ली-शिमलाकी तरफ अुनकी दौड धूप भी चल रही थी। लेकिन शिमलामें सरकारका हृदय-परिवर्तन नहीं हुआ, अुसके हाथसे जबरन् कुछ छीननेमें काग्रेस अुस समय सफल हुअी, अितना ही कहा जा सकता है। सरकारकी अतिम सम्मतिका पत्र वािअसरॉयके गृहमत्री श्री अिमर्सनके हस्ताक्षरोंसे २७ अगस्त, १९३१ के दिन मिला। अुसके बाद पूज्य महात्माजी विलायत रवाना होनेके लिअे सीधे बबअी गये, अैसा मेरा खयाल है। मुझे अदर ही अदर सताप होता था कि अिस देशव्यापी चिन्तामें पूज्य महात्माजीको आश्रमकी भी चिन्ता करनी पडती है, जिसमें मैं भी अेक निमित्त बन गअी हू। लेकिन कोअी अुपाय नही था। मैं शान्त हो गअी, फिर भी मैंने अुन्हे पत्र नही लिखा। अिसके पीछे मेरी दृष्टि यह थी कि सरकार अुन्हे कसौटी पर कस ही रही है, अुनका चित्त व्यग्र होगा, अैसी स्थितिमें मेरे पत्रोंके लिअे अुन्हें अवकाश कहा होगा? लेकिन महात्माजीसे नहीं रहा गया। ता० २४-९-'३१ को मुझे पत्र लिखकर अुन्होने मेरे पत्रकी माग की ही! बादमें मैं पत्र लिखने लगी तब अुन्हे सतोष हुआ।

श्रावणी पूर्णिमाके दिन मेरी राखी बधवाकर मेरी और सारे देशकी प्रार्थनाके साथ पूज्य महात्माजी विलायत गये। हमारे बीच फिरसे पहलेकी ही तरह पत्रव्यवहार शुरू हुआ। ता० २१-१०-'३१ और ८-११-'३१ के पत्र विदेशसे आये हुअे हैं। महात्माजी वापस आये तब मैं बबअीमें अुनसे मिलने गअी। ४ जनवरी, १९३२ को पूज्य महात्माजी फिर गिरफ्तार हुअे।]

गये। अुन्होंने महात्माजीसे कहा "प्रेमा पर आपने अन्याय किया है। हम अुसे वापस बुलानेवाले हैं।" (देखिये पत्र ६–८–'३१ से ६–९–'३१)

मेरे मौनके कारण पूज्य महात्माजीको चिन्ता हुआी। अुन दिनों गोलमेज परिषदके लिअे विलायत जानेकी धूमधाम मची हुआी थी। मेरे पत्र न आनेसे वे बेचैन थे। मुझसे मिलना भी चाहते थे। आखिर विलायत जानेकी तारीख आगे बढ़ गयी, और जहां तक मुझे याद आता है ता० ६–९–'३१ और २४–९–'३१ के बीच अेक दिन शामको वे आश्रममें आये। प्रार्थनासे पहले मुझे सूचना मिली कि, "बापूजी तुमसे मिलना चाहते हैं।" अिसलिअे प्रार्थनाके बाद मैं प्रार्थना भूमि पर ही अुनकी राह देखती रही। वे आये। मुझे खूब मनाया, फुसलाया, समझाया, तब मैं बोलने लगी। आज भी अुनका प्रेम याद आता है और मैं सोचती हूं कि मैंने अुन्हें कितना सताया था! लेकिन मेरे मनमें तो वे माता-पितासे भी अधिक थे। अिसलिअे प्रेमके साथ अुन्हें कभी कभी मेरा रोष भी पीना पड़ता था! यह रोष पहली बारका था। अिसके बाद भी दो बार मैं अुनसे नाराज हुआी थी।

विलायत जानेसे पहले अेक दिन दोपहरका पूज्य महात्माजी दूसरी बार मुझसे मिलने आये। हम दोनों बाडजकी तरफ घूमने गये। अुनका अुपदेश थोडी देर सुननेके बाद मैंने अपनी प्रार्थना अुन्हें सुनाओ

"महात्माजी, मुझे सचमुच लगता है कि मैं अिस जिम्मेदारीके लिअे बिल्कुल अयोग्य हूं। मैं अुमरमें छोटी हूं। माताका वात्सल्य मुझमें नहीं है। असहिष्णुता है, जल्दबाजी है, क्रोध है। अिन दोषोंके रहते हुअे यदि मैं जिम्मेदारी अुठाअूंगी, तो अुससे मेरा विकास तो नहीं होगा, परन्तु दूसरोंको तकलीफ जरूर होगी। अिसके सिवा आश्रमका वातावरण शान्त और पवित्र रहनेके बदले बिगड जायगा। अिसलिअे यह जिम्मेदारी आप मुझसे ले लीजिये और दूसरे किसी योग्य व्यक्तिको सौंप दीजिये। मैं आश्रम छोडनेवाली नहीं हूं। मुझे यहीं रहना है। लेकिन मैं सामान्य छात्राके रूपमें रहकर ही काम करूंगी।"

पूज्य महात्माजीने कहा, "मैं तुमसे यह काम वापस नहीं लेना चाहता। तुमसे मैं भिक्षा मांगता हूं कि तू ही यह जिम्मेदारी संभालती रह।"

नहीं हुआ, अुसका कारण हमारी या वहाँ कि मेरी शिथिलता है। आज भी वह नियम समझनेके बाद पूरी तरह अुसका पालन हो सकेगा या नहीं, अिस बारेमें मुझे सन्देह है। अिस बारेमें ज्यादा लिखनेका मेरा विचार है। आज फुरसत मिलेगी तो आज, या जब मिलेगी तब लिखूंगा।

किसनको पत्र तो जल्दी ही लिखना चाहिये था, लेकिन आज ही पूरा लिख सका। अुसे जल्दी मिल गया तो शायद बबअीमें मुझसे मिलने आयेगी।

मेहमानोंके बारेमें तूने जो लिखा वह मुझे अच्छा लगा।

बापूके आशीर्वाद

४८

शिमला,
२०-७-'३१

चि० प्रेमा,

किसनसे मिला था। यह तो अुसने लिखा ही होगा। मुझे अैसा लगा कि अुसे ज्यादा सेवा करनी चाहिये।

तेरा पत्र मिला था।

तू अब भी बच्चोंको मारती है? रमाबहनकी शिकायत थी। पंडितजीको संतोष दिया? गंगाबहनके साथ तू घुलमिल गअी है? वे दुःखी मालूम होती हैं।

बापूके आशीर्वाद

४९

बारडोली,
२६-७-'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी कौनसी वर्षगांठ है, यह तूने नहीं लिखा। मैं स्वीकार करता हूं कि मुझे यह जानना चाहिये। लेकिन अैसी बातोंमें मैं मूर्ख हूं। तू दीर्घायु हो अैसा कहनेके बदले मैं यह कहूंगा: जल्दी निर्विकार,

बोरसद,
२२–६–'३१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। ब्यौरा अच्छा दिया है। मुझसे मिल गअी होती तो अच्छा होता। किसनका पत्र समझमें आता है। अच्छा है, अैसा अुसे लिखना।

गंगाबहनका लड़कियोंको जो भरकर सिखानेका लोभ सच्चा और अच्छा है। अुसका पोषण करनेमें जो मदद दी जा सके वह सब देनेकी मेरी अिच्छा है। तू भी देना।

पंडितजीकी तेरे विरुद्ध कअी शिकायतें हैं। अुनके पास जाकर सब शिकायतें सुनना और विनयपूर्वक अुनका अुत्तर देना। पंडितजी जैसे सच्चे और शुद्ध आश्रमवासियोंका मिलना कठिन है। अुन्हें तू जीत लेना। तेरे विरुद्ध शिकायत क्या होनी चाहिये? तेरा स्वभाव तेज है, अुद्धत है, मिलनसार नहीं है। यह ठीक है। अिन दोषोंको मैं बड़ा नहीं मानता। लेकिन अुनसे कठिनाअियां जरूर पैदा होती हैं। अिसलिअे ये दोष भी भीतरसे निकाल देना। पंडितजीके साथ तुरंत सारी बातोंकी सफाअी कर डालना।

बापूके आशीर्वाद

२४ ता० तक डाक यहां भेजना। २५–२६ को बबओी। २७ का बहुत संभव है बारडोली। लेकिन निश्चित नहीं है।

४७

बोरसद,
६–७–'३१

चि० प्रेमा,

तेरे दो पत्र मिले। कड़वे घूंट मैं न पिलाअूं तो और कौन पिलायेगा? अिन्हें पीनेमें ही स्वास्थ्यकी रक्षा है। शरीरके स्वास्थ्यकी अपेक्षा मनका स्वास्थ्य अधिक जरूरी है। स्त्रियोंके बारेमें नारणदासने जिस नियमकी सूचना दी है वह बहुत पुराना है। अुसका पालन आज तक

५१

१२-८-'३१

चि॰ प्रेमा,

तू पत्र नहीं ही लिखेगी ? मेरे प्रेमको तू समझी ही नहीं। पुत्रीसे भी ज्यादा मान कर मैंने तुझे आश्रममें रखा है। कहीं मुझे शनिवारको जाना ही पड़े,[1] तो मेरे पास तेरा कोओी पत्र ही न होगा ?

बापूके आशीर्वाद

५२

[यह पत्र १२-८-'३१ और ६-९-'३१ के बीचका है।]

चि॰ प्रेमा,

तू मुझे लिखना बन्द कर दे तो भी मुझे तो पत्र लिखना ही पड़ेगा। लेकिन तू लिखती नहीं, यह अच्छा नहीं करती। लिखनेका हुक्म दूं तो मानेगी ?

मौनवार

बापूके आशीर्वाद

५३

६-९-'३१

चि॰ प्रेमा,

तूने अभी तक पत्र नहीं लिखा। अब तो अगर हवाओी डाकसे पत्र भेजा हो तो ही हम विलायत पहुंचें तब वह मिल सकता है, या १९ तारीखको मिलेगा।

तू मुझे चिन्तामें डाल रही है।

बापूके आशीर्वाद

१ शनिवारको विलायतके लिअे रवाना होना पड़े।

साथ तुलना नहीं की जा सकती। भेद वहा है, यह तो मैं पहुचू और बता सकू तभी मालूम होगा। अिसलिअे अच्छा यह होगा कि यहा क्या हो रहा है, अिसका विचार करनेमें तू अपने मनको लगाये ही नहीं। मेरी बात समझमें आती है न?

और कुछ लिखनेका समय नहीं है। अितनेसे ही संतोष करना।

बापूके आशीर्वाद

५७

[पूज्य महात्माजी भारत वापस आये और पकड़े गये। अुसके बाद यरवडा मन्दिरसे आया हुआ यह पहला पत्र है।

मैंने 'चमत्कार' के बारेमें महात्माजीके विचार पूछे थे।

'Keep thine eye single' बाअिबल्के अिस वाक्यका अर्थ भी पूछा था।]

यरवडा मंदिर,
२२-१-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। जेलकी बहनोंसे मिली यह ठीक किया।

चमत्कार जैसी कोअी चीज अिस जगतमें नहीं है, अथवा सब चमत्कार ही है। पृथ्वी अधरमें लटक रही है और आत्मा शरीरमें है, यह जानते हुअे भी (हम) अुसे देख नहीं सकते, यह बड़ा चमत्कार है। अिनके सामने दूसरे कहे जानेवाले चमत्कार तो जादूगरके आमके पेड़की तरह तुच्छ लगते हैं।

'तेरी आख अेक रखना' का अर्थ है : टेढ़ा न देखना, अर्थात् दृष्टि निर्मल रखना, अुसके द्वारा कुदृष्टि न डालना। अिसके सिवा अिस वाक्यका दूसरा अर्थ है ही नहीं।

सरोजिनीदेवीका किस्सा दुःखद है। लेकिन हम अनासक्तिपूर्वक अुनके साथ व्यवहार करेंगे तो अुनकी गाडी सीधी चलने लगेगी। यहा या प्रयागमें, यह अलग बात है।

बापूके आशीर्वाद

५४

२४-९-'३१

चि० प्रेमा,

तू अब शान्त है, यह तो नारणदासने लिखा है। लेकिन मुझे पत्र लिखना तूने अभी तक शुरू नहीं किया यह दुःखकी बात है। तेरी चिन्ता मुझे बिल्कुल न रहे, अैसा तू कर सकती है। ज्यादा अभी नहीं लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

५५

[मैंने लिखा था कि गोलमेज परिषदकी चर्चामें समझौतेके खातिर भी हमें अपनी अेक भी चीज नहीं छोड़नी चाहिये।]

२१-१०-'३१

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र अब आने लगे हैं। लम्बे अुत्तर देनेकी अिच्छा बहुत है, लेकिन समय नहीं है। अिसलिअे पहुंचसे ही सन्तोष करना।

तू क्यों डरती है? क्या अब भी अैसी चीज, जो जरूर होनी चाहिये मैं छोड़ सकता हूं?

बापूके आशीर्वाद

५६

[यह पत्र विलायतसे लिखा गया है।]

रविवार,
८-११-'३१

चि० प्रेमा,

तू परिषदके बारेमें व्यर्थ चिन्ता करती है। अखबारों परसे कोअी अनुमान मत लगाना। मैं देशकी लाज नहीं खोअूंगा, यह विश्वास रखना। काम लेनेकी मेरी पद्धति भिन्न होनी ही चाहिये। अिसलिअे दूसरोंके

सो मिलेगा ही न? अैसा होते हुअे भी अगर अिसमें से तुझे कुछ मिले तो ले लेना। अैसी चीजसे तू आगे बढ़ गअी हो तो अिसे फेंक देना। अपनेसे कम जाननेवाले बालकोंके समक्ष माता-पिता जैसी अुम्र आती हो वैसी रामायण-महाभारतकी बातें पढ़ सकते हैं और अपने बच्चोंकी गरज पूरी कर सकते हैं। अैसा ही मेरे बारेमें भी समझना।

अिससे तू अितना तो देख ही सकेगी कि मैं कलामें रस लेनेवाला जरूर हूं। लेकिन अैसे तो अनेक रसोंका मैंने त्याग किया है, मुझे करना पड़ा है। सत्यकी खोजमें जो रस मिले अुन्हें पेट भर कर मैंने पिया है, और अब भी नये रस पीनेको तैयार हूं। सत्यके पुजारीको प्रवृत्तियां सहज ही प्राप्त होती हैं। अिसलिअे वह स्वभावतः गीताके तीसरे अध्यायका अनुसरण करनेवाला होता है। मैं मानता हूं कि तीसरा अध्याय पढ़नेसे पहले ही मैं कर्मयोग साधने लग गया था। लेकिन यह तो मैं विषयांतर करने लगा।

आश्रमके बारेमें अच्छा प्रश्न पूछा है। आश्रममें अुद्योग प्रधान है, क्योंकि मनुष्यका धर्म शरीर-श्रम करना है। जो अैसा नहीं करता वह चोरीका अन्न खाता है। फिर आश्रमका श्रम जितना अपने लिअे है अुतना ही परमार्थके लिअे है। चरखेको केन्द्रबिन्दु बनाया है, क्योंकि भारतके करोड़ों लोगोंके लिअे सामान्य सहायक धन्धेके रूपमें खेतीके बाद अिसीकी कल्पना की जा सकती है। अुसमें धर्म और अर्थ दोनोंकी भलीभांति रक्षा होती है।

आश्रमका अस्तित्व केवल देशसेवाके लिअे ही नहीं है, बल्कि देश-सेवाके द्वारा जगत-सेवा करनेके लिअे है और जगत-सेवाके द्वारा मोक्ष प्राप्त करनेके लिअे, अीश्वरका दर्शन करनेके लिअे है।

आश्रममें हर कोअी भरती नहीं हो सकता। आश्रम अपंगालय नहीं है, अनाथालय भी नहीं है। यह सेवकों और सेविकाओंके लिअे, साधकोंके लिअे है। अिसलिअे जो शरीरसे काम न कर सकें अुनके लिअे आश्रम नहीं है। फिर भी जो सेवाभावसे ओतप्रोत हों वे शरीरसे अपंग हों, तो भी अुन्हें जरूर आश्रममें लिया जा सकता है। अैसे थोड़े ही लोग लिये जा सकते हैं। लेकिन जो आश्रममें आश्रमवासीके रूपमें भरती हुअे हों, वे भरती

[विलायतकी यात्रामें रोम वगैरा स्थानो पर जिन जिन कलाओंका दर्शन किया, अुनके बारेमें वर्णन करनेके, लिअे मैंने लिखा था।

आश्रमका ध्येय क्या है? आश्रममें जीवनके बारेमें जो विषमता दिखाओ देती थी, अुसके अुदाहरण देकर राय पूछी थी।

आपके साथ जेलमें रहने पर भी सरदार चाय क्यों पीते हैं? यह प्रश्न पूछा था।]

यरवडा मंदिर,
२५–१–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू चाहती है वह सब दे सकूंगा या नहीं, यह मैं नहीं जानता।

धुरन्धरके दरबारमें पहुंच जानेका मुझे पता न्हीं था।

रोममें चित्रकला देखकर खूब आनन्द लिया, लेकिन दो घंटेमें देखकर क्या राय दूं? मेरी शक्ति ही कितनी है? अनुभव कितना है? मुझे अुसमें से कुछ बहुत पसन्द आया। वहां २–३ महीने रहनेको मिले तो चित्र और मूर्तियां रोज देखूं और धीरे धीरे अुनका अध्ययन करूं। वधस्तंभ पर चढ़े हुअे ओसाकी मूर्ति देखी। अुसने मुझे सबसे ज्यादा आकर्षित किया, यह तो मैं लिख ही चुका हूं।

लेकिन वहांकी कला भारतसे अधिक अूंची हो अैसा मुझे बिल्कुल नहीं लगा। दोनों भिन्न रीतिसे विकसित हुअी है। भारतकी कलामें कल्पनामात्र है। यूरोपकी कलामें कुदरतका अनुकरण है। अिससे पश्चिमकी कलाका समझना शायद सरल हो। लेकिन समझनेके बाद वह हमें पृथ्वी पर चिपकाये रखती है। और भारतकी कला जैसे जैसे समझमें आती है वैसे वैसे वह हमें अूंचाओ पर ले जाती है। यह सब तेरे लिअे ही लिखा है। अिन विचारोंकी मेरे लिअे कोओ कीमत नहीं है। हो सकता है कि भारतके बारेमें मेरा छिपा पक्षपात यह लिखवाता हो, या मेरा अज्ञान मुझे कल्पनाके घोड़े पर चढ़ाता हो। लेकिन अैसे घोड़े पर चढ़नेवाला अन्तमें

३०-१-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पुस्तकोंकी जो पेटी मैं लाया हूं, वह वहां पहुंच गयी? विद्यापीठमें कोअी रहता है? पुस्तकोंकी देखभाल होती है या सब बरबाद हुआी जा रही हैं? मासिक पत्र भी बहुतसे तो सभाल कर रखने जैसे होते हैं। बात यह है कि पुस्तकें सभालनेके लिअे पूरा समय देनेवाला अेक आदमी होना चाहिये और अुसके मातहत दो आदमी होने चाहिये। वरना हमें पुस्तकालयको अितना बड़ा होने ही नहीं देना चाहिये। यह काम विद्यापीठका ही माना जायगा। हमारा यह विषय नहीं है। नहीं है, अिसीलिअे तो विद्यापीठ खोला। वरना आश्रमको ही विद्यापीठ बना डालते। आश्रमका यह क्षेत्र ही नहीं है। आश्रमका काम मुख्यतः आंतरिक है। विद्यापीठका मुख्यतः बाह्य है, होना चाहिये। दोनोंके अुद्देश्य अेक ही हैं, लेकिन दोनोंकी प्रवृत्तियां अलग हैं। अिसलिअे आश्रममें तो जरूरी पुस्तकें ही रखें, बाकी जिनकी जरूरत पड़े व विद्यापीठसे पढ़नेके लिअे ले आवें। यह तो अब फिरसे स्थिर होकर बैठें तबकी बात है। अभी तो सब कुछ बाढ़में बहा जा रहा है, और यह अच्छा ही है। बाढ़के अन्तमें भरपूर और कांच जैसा साफ-स्वच्छ पानी ही रहता है न?

नागपचमीका अुत्सव मुझे याद है। जो अुत्तर मैंने अुस समय दिया था अुसमें आज कोअी परिवर्तन नहीं हुआ है। सिर फूटें अिस मैंने पटावें टूटनेकी अुपमा दी है न? और जो आत्माके गुण जानता है, वह तो अुसे अक्षरशः मान सकता है। अगर आत्मा मरती नहीं, तो फिर अुसके घर या कपड़े भले ही फना करें, सड़ा करें, जला करें, अुससे क्या बिगड़ता है? फिर, आत्मा तो सदा ही पूर्ण है, अिसलिअे अुसे नये घरबारकी कमी नहीं है। समझें तो अुसे अिनकी जरूरत ही नहीं है। लेकिन यह सब अपने लिअे है। अिसलिअे जहां अपने सिर फूटें वहां पटावें ही फूटते हैं यह समझना। लेकिन आत्माके लिअे अपना क्या और पराया क्या? अैसा सवाल नहीं पूछना चाहिये। शरीर है तब तक थोड़े बहुत

हुंनेके बाद अगर अपग हो जाय तो अुन्हें निकाला नहीं जा सकता। बाह्य दृष्टिसे देखने पर आश्रमके बहुतस कार्योंमें विरोधाभास दिखाओी दे सकता है, लेकिन अतर-दृष्टिसे जाचने पर विरोधका आभास अुड़ जायगा। जितनेसे जो समझमें न आये वह फिर पूछ लेना। और कोओी शकायें हो तो वे भी बिना किसी सकोचके पूछना।

विलायतमें फोटो खिचवानेके लिओे मैं कभी कभी ही खडा हुआ था। अुसमें व्रतभग नहीं हुआ अैसा मैं मानता हू।

मेरे सहवासमें रहे हुओे सब लोग मेरे जैसे ही होने चाहिये अैसा बिलकुल नहीं है यह अिष्ट भी नहीं है। यह तो नकल करने जैसा हुआ। मुझमें जो कुछ अच्छा हो अुसम में भी जितना पचे अुतना ही ग्रहण करनेमें लाभ है। बाकी सरदार चाय पीते हैं अुन्हें कौन रोक सकता है? और चाय अुनके लिओे औषधिका काम करती हो तो? मेरे साथ रहनेवाले यानी मेरे साथी मासाहारी भी है। अुनका क्या हो?

जिसे चाय अनुकूल न आती हो अथवा जिसने चाय न पीनेके बारेमें अुसकी अुत्पत्तिसे सम्बन्धित दानाका विचार किया है वही चाय नहीं पियेगा। बा मेरे साथ रहते हुओे भी चाय पीती है, कॉफी भी लेती है। अुसे मैं प्रेमपूर्वक चाय-कॉफी बनाकर पिला भी सकता हू। यह कैसे? तेरे प्रश्नमें केवल विनोद है यह मैं जानता हू। लेकिन अैसा होते हुओे भी हम लोगोंमें अैसी बातोंके बारेमें कुछ भ्रम है और थोड़ी असहिष्णुता है, जिन्हें हमें निकाल देना चाहिये। तुझमें यह दोप है, यह मैं नहीं जानता। लेकिन अिस बारेमें मेरे विचार तू जान ले यह अच्छा है। और तो बहुत कुछ अिस बारके दूसरे पत्रोंमें है। वे तुझे पढ़नेको मिले तो पढना और अुन पर विचार करना।

बापूके आशीर्वाद

दूसरे विरोध तो विरोध हैं ही। अुनका कारण आश्रमकी या मेरी कमजोरी है। ये विरोध दोष ही माने जायेंगे, और अुन्हें दूर करनेका प्रयत्न होना चाहिये। कौनसे विरोध वास्तवमें विरोध होनेके कारण दोष हैं और कौनसे आभासमात्र हैं, यह तो लिखने बैठें तभी पता चल सकता है। *तुझे जो विरोध मालूम हुअे हों अुनके बारेमें पूछना हो तो पूछना।*

द्वेषके कारणके बिना कोअी मनुष्य द्वेष नहीं करता। अिसलिअे हमारे सामने कोअी द्वेषका कारण अुपस्थित करे, तो भी द्वेष न करते हुअे अुससे प्रेम करना, अुस पर दया करना, अुसकी सेवा करना ही अहिंसा है। प्रेमीके प्रति किये जानेवाले प्रेममें अहिंसा नहीं है, वह तो व्यवहार है। अहिंसाको दान कहेंगे। प्रेमके बदले प्रेम करना यह फर्ज अदा करनेके बराबर है।

बापूके आशीर्वाद

६१

[पूज्य महात्माजी विलायतसे वापस लौटे कि तुरन्त ही पकड़ लिये गये, जिसलिअे अुनके साथका सामान सत्याग्रह आश्रममें भेजा गया। *अुस सामानके बारेमें अुनके साथ मुझे थोड़ा पत्रव्यवहार करना पड़ा।* अुसका अुल्लेख पूज्य महात्माजीके शुरूके कुछ पत्रोंमें है।

आश्रमके ग्रंथालयकी बहुतसी पुस्तकें (श्री काकासाहब पसन्द करें वे सब) विद्यापीठ भेजनेकी सूचना पूज्य महात्माजीने दी थी। मैंने यह कहकर अिसका विरोध किया था कि अिससे आश्रमको नुकसान होगा।

मैंने महात्माजीको लिखा था कि किसीके बारेमें आपके विचार बन जाते हैं तब अुसके विरुद्ध कुछ भी सुनना आपको अच्छा नहीं लगता। "आश्रममें आकर आपका परिचय होनेसे पहले 'यंग अिंडिया' साप्ताहिक सतत पढ़कर मेरे मनमें आपके बारेमें जो छाप पड़ी थी, व्यक्तिगत परिचय होनेके बाद अुससे कुछ अलग छाप पड़ी। 'यंग अिंडिया' का लेखक बहुत ही ऊंचा लगता था। प्रत्यक्ष व्यक्तिमें मानवकी मर्यादा दिखाअी देती है।" अैसा ही कुछ मैंने लिखा था।]

अिसमें अपना और पराया है, अैसा मान कर ही चलना पड़ेगा। स्वयं ज्ञेय जैसे मरते जाते हैं वैसे वैसे अपने और परायेका भेद टूटता जाता है। पराया मानकर दूसरोंको मारते जाते हैं वैसे वैसे यह भेद बढ़ता जाता है। यह बात जैसे जैसे समझमें आती जायगी वैसे वैसे नौजवानोंकी तरह बच्चे भी ठिकाने आते जायेंगे। जिसमें धीरजकी जरूरत है। जिस बारेमें बच्चोंका पत्र देखना।

बापूके आशीर्वाद

६०

मरवडा मंदिर,
५-७-'३२

चि० प्रभा

तेरा पत्र मिला। सरदारने सचमुच चाय छोड़ दी है। सुबहकी तो छोड़ ही दी थी, यह मैं जानता था। फिर दस बजे पीते थे। अब वह भी छोड़ दी है। यह मुझे छोड़नेके बाद मालूम हुआ। मैंने अेक शब्द भी नहीं कहा। अपनी अिच्छासे ही अुन्होंने छोड़ी है।

बच्चोंको किसमतके खिलौने भेजे हैं अैसा लिखनेका मेरा अिरादा नहीं था। अैसा पढ़ा जाता हो तो लिखनेमें मुझसे भूल हुआी। लिखनेका आशय तो यह था कि खिलौने मैं लाया हूं। अब तो दिये जाय तब सही। मीराबहनने सभाल कर रखे थे। तुझे शायद याद हो कि वे कहां हैं।

पुस्तकोंकी पेटीके बारेमें या तो मीराको या प्यारेलालको मालूम होगा। बिना खुली पेटीके वजनकी जांच करनेसे ही पता चल जायगा कि अुसमें पुस्तकें हैं या और कुछ? शायद महादेवको मालूम हो।

विरोधाभासकी बात अैसी है। मेरे या आश्रमके जीवनमें जहां विरोधका आभास है वहां मेल बताया जा सकता है। सरदीमें ओढ़नेवाले और गरमीमें खुला शरीर रखनेवाले मनुष्यके जीवनमें विरोधका आभासमात्र है। वह अेक ही नियमके वशीभूत होकर कपड़े पहनता या ओढ़ता है। अैसे विरोधके आभासोंमें से बहुतोंका मेल बैठाया जा सकता है।

परेशानीका सवाल ही नहीं है। अितने वर्षोंके आश्रमके अस्तित्वके बाद हम तुरन्त कह सकते हैं कि सामान्य रूपसे हमें किन पुस्तकोंकी जरूरत होती है। अुसके बाद अगर नअी जरूरत महसूस हो तो हम विद्यापीठके भण्डारका आश्रय ले सकते हैं। दोनों सस्थाअें अलग है, यह मानना ही नहीं चाहिये। दोनोंके क्षेत्र अलग हैं, लेकिन दोनोंमें समानता भी बहुत है और अधिक समानता होती जायगी।

अभी अिसमें कुछ और समझाना बाकी हो तो मुझसे फिर पूछना।

किसीके बारेमें मेरे विचार बन जाने पर भी अुसके विरुद्ध मैं कुछ नहीं सुनूं या देखूं, अैसा जान-बूझकर तो मैं नहीं ही करता। सुनता हमेशा हूं, लेकिन *अुससे विचार हमेशा नहीं बदलते। अवलोकनके बाद बने हुअे* विचार झट बदल जाय अिसे मैं दोष मानता हूं। कभी बदलें ही नहीं, यह हठ माना जायगा। अिसलिअे यह भी दोष है। विचारोंके बदलनेके लिअे सबल कारण चाहिये। बहुत बार तो मुझे प्रत्यक्ष प्रमाणकी जरूरत पड़ती है। अिस स्वभावकी मैं रक्षा करता हूं। और वैसा करनेसे मैं बहुतसे भयोंसे बच गया हूं और दूसरोंके साथ मेरा सहवास निर्मल रह सका है।

अिसलिअे तुझे जो पूछना हो बेधड़क होकर पूछना। अैसा समय फिर नहीं मिलनेवाला है।

तेरा पृथक्करण सही है। 'यग अिंडिया' का लेखक अेक व्यक्ति है; आश्रममें सबके परिचयमें आनेवाला व्यक्ति दूसरा है। 'य. अिं.' में तो मैं पांडव बन कर बैठ सकता हूं। लेकिन आश्रममें जैसा हूं वैसा दिखे बिना कैसे रह सकता हूं? अुस पर मैं सत्यका पुजारी हूं, अत: जान-बूझकर दोष छिपानेका तो प्रयत्न भी मुझसे नहीं हो सकेगा। अिसलिअे मुझमें रहे हुअे कौरव जहां तहांसे निकल ही पड़ते हैं। मेरे भीतर देवासुर-संग्राम चलता ही रहता है, यह तो तूने कहा ही है न? लेकिन अैसा दीखता है कि कौरवोंकी हार हुआ करती है। लेकिन अिस बारेमें अभी कुछ निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। यह तो सोलन[1] के कथनानुसार मृत्युके

---

१. *अेक प्राचीन ग्रीक तत्त्वज्ञानी। अुनकी सूक्तियां प्रसिद्ध हैं।* वे कहते थे, "किसी भी मनुष्यके बारेमें अुसकी मृत्युसे पहले कोअी निश्चित मत न बनाओ।"

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे पत्र देरसे मिलें तब अुनके अूपरकी छाप देखकर मुझे तारीख लिखनी चाहिये।

किसनको कितनी सजा हुआी? अुसे कहां रखा गया है?

पेटिया तू जरूर खोल सकती है। अुनमें पुस्तकें हों तब तो (ग्रन्थालयमें) अुनकी व्यवस्था होनी चाहिये, और दूसरा कोअी सामान हो तो अुसे लिखकर यथास्थान रखना चाहिये। अुस सामानका क्या करना यह समझमें न आवे तो अुसकी सूची बनाकर भेजना, जिससे मैं बता सकूं कि क्या करना है। पुस्तकोंमें दूसरोंकी हों तो भी कोअी हर्ज नहीं है। अुनके नाम पुस्तकमें हों तब तो वे सरलतासे अलग रखी जा सकती हैं। अगर नाम न हों तो अुन पर आश्रमकी मुहर लगा दी जाय। अिसके बावजूद कोअी अुनके मालिक होंगे तो वे अुन्हें ले जायंगे। हमें तो जो पुस्तकें हमारे कब्जेमें हों अुन्हें यथासंभव संभाल कर रखनेकी व्यवस्था कर देनी चाहिये।

आश्रमका पढाअीके साथ कोअी संबंध ही नहीं है यह मेरे किस वाक्य परसे तूने समझ लिया? मेरे मनमें जो विचार है वह यह है अक्षरज्ञान — बाहरी पढाअी — का आश्रममें गौण स्थान है। अिसलिअे वह विद्यापीठ नहीं हो सका। लेकिन बाहरी शिक्षाकी अुपयोगिता, आवश्यकता तो है ही, अिसीलिअे विद्यापीठ खडा हुआ। दोनों अेक-दूसरेके पूरक हैं। अिस तरह क्षेत्रोंकी मर्यादा होनेके कारण आश्रमके पुस्तक-संग्रहकी भी मर्यादा होनी चाहिये। विद्यापीठकी कोअी मर्यादा हो ही नहीं सकती। अुसकी मर्यादा आन्तरिक प्रयोगोंके बारेमें जरूर है। आश्रमका नाम बडा हो गया है अुसके बारेमें कअी अतिशयोक्तिकी हद तक पहुंचनेवाली मान्यताअें बन गअी हैं, अिसलिअे वहां अनेक प्रकारकी और अनेक भाषाओंकी पुस्तकें आती हैं। अुन सबको संभाल कर रखनेकी जगह विद्यापीठ ही हो सकती है। फिर भी आश्रममें जो पढाअी हम करते हैं अुससे संबंधित पुस्तकें जरूर होनी चाहिये। ये पुस्तकें कौनसी हों यह तो तू और अन्य लोग सरलतासे तय कर सकते हैं। कोअी परेशानी खडी हो तो मुझसे पूछा जा सकता है। लेकिन मेरी दृष्टिमें तो

है। अपूर्णता न हो तो वे आश्रममें आवें ही क्यों? वे ढागी नहीं हैं। मैं जो कुछ करता हूं अुसे दूसरोंको भी करना ही चाहिये या सब अुसे कर सकते हैं, यह माननेमें ही महादोष है। जो बाझा हरियोमल अुठाता है वह मैं अुठाने जाअू, तो अुसी क्षण मेरा राम बोल जाय। और हरियोमल अगर मेरी निर्बलतासे द्वेष करे, तो यह गलत ही कहा जायगा।

बहुतोंने यह आरोप लगाया है कि लोग मुझे धोखा देते हैं। कोअी भी धोखा नहीं देता अैसा नहीं है, लेकिन अधिकतर लोग मुझे धोखा नहीं देते। मैंने अनुभव किया है कि बहुतेरे लोग मेरे सामने जैसा व्यवहार रख सकते हैं वैसा मेरे पीछे नहीं रख सकते। अिस वजहसे कुछ लोग मेरा त्याग भी करते हैं। अैसा बहुत होता है, अिसीलिअे मुझ पर आकर्षण शक्तिका आरोपण किया जाता है।

लेकिन अितनेसे तुझे या दूसरोंको सन्तोष होनेकी संभावना कम है। यह मैंने बचावके लिअे लिखा भी नहीं है। मेरी मनोदशा बताअी है। लेकिन सच बात यह है और मैंने वर्षोंसे अुसे माना है। आश्रमकी त्रुटियां मेरी त्रुटियोंका प्रतिबिंब हैं। मैंने अनेक लोगोंसे कहा है कि मेरी पहचान मुझसे मिलनेसे नहीं होती। मिलने पर मैं अच्छा भी दिखाअी दूं। जो वस्तु मुझमें न हो अुसका भी लोग मुझ पर आरोपण कर दें, क्योंकि मैं सत्यका पुजारी हूं। अिसलिअे वह पूजा दूसरोंको क्षण-भर प्रभावित भी कर दे। मुझे पहचाननेके लिअे मेरी गैरहाजिरीमें आश्रमको देखना चाहिये। अुसमें दिखाअी देनेवाले सारे दोष मेरे दोषोंके प्रतिबिम्ब हैं, अैसा माननेमें जरा भी भूल नहीं होगी, मेरे प्रति अन्याय नहीं होगा। जो समुदाय आश्रममें अिकट्ठा हुआ है अुसे मैं खींच लाया हूं अैसा ही कहा जायगा। और आश्रममें रहकर भी वे दोषोंको दूर न कर सके हों, या अपने दोषोंको अुन्होंने बढ़ा लिया हो, तो अुसमें अुनका दोष नहीं, मेरा दोष है। अुसमें मेरी साधनाकी कमी है। अिन कमियोंको मैं जानता नहीं या देखता नहीं, अैसा भी नहीं है। सिर्फ अितना ही कह सकता हूं कि जो कमियां हैं वे प्रयत्न करनेके बावजूद हैं। और क्योंकि मैं प्रयत्नशील हूं, अिसलिअे कुल मिलाकर आश्रमका पतन नहीं हुआ अैसा मेरा विश्वास है। मुझे खुदको जिससे आश्वासन मिलता है

बाद ही कहा जा सकता है। मैंने करोड़ोंकी कीमत रखनेवालोंको क्षणभरमें कौड़ीकी कीमतवाले बनते देखा है। अिसलिअे मुझे किसी तरहका घमंड नहीं है। घमंड है भी किस कामका?

पत्र फिरसे नहीं पढ़ता हूं, यह ध्यानमें रखना।

बापूके आशीर्वाद

६२

[आश्रममें ही तरह तरहकी खास छूटें लेनेवालोंके अुदाहरण मैंने दिये थे।

हरियोमल आश्रममें आये हुअे भीम जैसे अेक सिंधी कार्यकर्ता थे। वे खेतीका काम करते थे।

आश्रममें विद्वान लोग नहीं आते। आश्रमकी प्रार्थना हिन्दू धर्मके अनुसार संस्कृतमें बोली जाती है, जब कि दूसरे धर्मवाले भी आश्रममें रहते हैं, अैसा मैंने लिखा था।]

य० म०
१९-२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अच्छा है। निःसंकोच होकर लिखा यह ठीक ही किया।

तूने जो आलोचना की है अुसका यह अुत्तर है। मुझे संबंधित व्यक्तियोंका अुत्तर सुनना चाहिये। बादमें ही मैं अुन व्यक्तियोंके बारेमें कह सकता हूं। लेकिन सामान्य रूपसे कह सकता हूं कि जिन जिनको छूट दी गअी है अुनके लिअे 'प्रिविलेज' का खयाल नहीं रहा है, बल्कि आवश्यकताका रहा है। मुझ पर अैसी छाप पड़ी है कि जो लोग सुविधाअें लेते हैं वे आलस्यकी वजहसे नहीं लेते, परन्तु अिसलिअे लेते हैं कि अुनके शरीरको सुविधाओंकी जरूरत है या यों कहो कि अुनके स्वभावके कारण वे जरूरी हैं। हम किसीके काजी नहीं बन सकते। अुनके प्रयत्नोंका हमें पता (भी) न हो। अिसका यह अर्थ नहीं है कि अुनमें अपूर्णता नहीं

६३

[१९ ता० का पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा। अिसलिअे अिस तरहके प्रेरणादायक विचारोंसे भरे हुअे पत्र लिखते रहिये, अैसी मैंने पूज्य महात्माजीसे प्रार्थना की थी।

दाडी-कूचसे कुछ महीने पहलेकी बात है। हृदय-कुंजके बाडेके अेक दरवाजेसे मीराबहनके निवास-स्थानके सामने होकर अेक रास्ता जाता था। लोगोंके आने-जानेसे तकलीफ होती है यह शिकायत पूज्य महात्माजीसे करके मीराबहनने वह दरवाजा बन्द करवा दिया। हृदय-कुंजमें रहनेवाली सारी बहना, बच्चों, पूज्य बा आदि सबको अिससे दिक्कत होने लगी। दूसरे रास्तेसे लम्बा चक्कर काटकर जाना पडता था। श्री मणिलाल गाधी (महात्माजीके दूसरे पुत्र) अुस समय वहा थे। अुन्हे भी यह बात पसद नही आओ। वे चिढे। लेकिन पूज्य महात्माजीसे कहनेकी किसीकी हिम्मत नहीं हुआी। सबकी कठिनाआी देखकर मैंने अुनके सामने यह बात की। तब महात्माजीने मीराबहनके कामका समर्थन किया और मेरे लिअे बहुत कडवी भाषा बरती। अुससे मुझे आश्चर्य और दु:ख भी हुआ। मैंने भी अिसके विरुद्ध दलील की। दूसरे दिन प्रातःकालकी प्रार्थनासे पहले पूज्य महात्माजीने अुलाहनावाला अेक पत्र लिखकर मुझे दिया। (अुस दिन मौनवार रहा होगा) वह पत्र फाअिलमें से खो गया है। लेकिन "मैंने तुझे अुदार समझा था। तू अैसी कृपण क्यों?" अैसी भाषामें कलकी मेरी दलीलके लिअे मुझे डाटा गया था। अिस बातका पता चलने पर थोडे दिन बाद मीराबहनने वह दरवाजा खुलवा दिया।

अिस बारके पत्रमें मैंने अुन्हे अिस घटनाकी याद दिलाआी थी और लिखा था कि, "महात्मा भी अैसे वचन कैसे बोल सकते हैं? जिसके लिअे आप अपने मनमें अनुकूल विचार रखते हैं अुसके खिलाफ शिकायत सुननेकी आपकी तैयारी नही होती, अिसका यह अुदाहरण है!"]

कि तीन जगह आश्रम बनाये और तीनों स्थानों पर अुनके तात्कालिक हेतु सफल हुअे दिखाओ दिये हैं। लेकिन अिस आश्वासनसे भी मैं अपनेको या दूसरोंको धोखा नहीं देता। मुझे तो बहुत दूर जाना है। मार्गमें घाटियां और पहाड़ खड़े हैं। फिर भी यात्रा तो करनी ही है। और सत्यकी शोधमें असफलताके लिअे अवकाश ही नहीं है, अिस ज्ञानसे मैं निश्चिन्त रहता हूं।

विद्वान समाजको आश्रम आकर्षित नहीं कर सका, यह बिल्कुल सच है। क्योंकि मैं अपनेको विद्वान नहीं मानता। अिसके सिवा जो मुट्ठीभर विद्वान आश्रमके प्रति खिंचे हैं, वे विद्वत्ताका पोषण करनेके लिअे नहीं, बल्कि दूसरा ही कुछ लेने और अुसका पोषण करनेके लिअे अिकट्ठे हुअे हैं। वे सत्य-शोधक हैं। और सत्यकी खोज तो अपढ़ कर सकता है, बच्चा कर सकता है, स्त्री कर सकती है, पुरुष कर सकता है। अक्षरज्ञान कभी कभी हिरण्मय पात्रका काम करता है और सत्यका मुंह ढक देता है। यह कहकर मैं अक्षरज्ञानकी निन्दा नहीं करता, लेकिन अुसे अुसके अुचित स्थान पर रखता हूं। अनेक साधनोंमें यह भी अेक साधन है।

आश्रममें मुख्यतः संस्कृत प्रार्थना पसन्द की गअी है, क्योंकि अुसमें मुख्य रूपसे हिन्दू समुदाय ही आया है। दूसरी प्रार्थनाओंसे द्रोह नहीं है। कभी कभी हम करते भी हैं न? अगर बहुतसे हिन्दुओंके बजाय बहुतसे मुसलमान आ जायं, तो कुरान शरीफ रोज पढ़ा जायगा और अुसमें मैं भी भाग लूंगा।

अितनेसे तुझे कुछ अुत्तर मिलता है? संतोष होता है? अुत्तर न मिले, संतोष न हो, तो बार बार पूछना। मैं नहीं थकूंगा। तुझे संतोष देना चाहता हूं। तू थकना मत।

बापूके आशीर्वाद

कारण मुझमें अधीरता आ जाती है, और अिस वजहसे मैं अुसे कुछ खीझ कर कहता हूं। परिणाम अश्रुधाराके रूपमें आता है। अिन अनुभवोंसे मैं अपने अंदर भरी हुअी हिंसाको पहचान सका और अिसलिअे अपने पिछले संस्मरणोंको याद करके खुदको सुधारनेका प्रयत्न कर रहा हूं। अिसलिअे तेरे पत्र मुझे अच्छे लगते हैं। अुत्तरमें तुझे कुछ दे सकूंगा या नहीं, यह मैं नहीं जानता। लेकिन मैं स्वयं तो ले ही रहा हूं। अिस बातका — अपनी कठोरताका — विशेष भान मुझे विलायतमें हुआ। मेरी सेवाके लिअे मुख्यतः तो मीरा ही थी। वहां भी अुसे रुलानेमें मैंने कोअी कसर नहीं छोड़ी। लेकिन अुससे मैं सीख गया। किसी भी *मामलेमें अीश्वरने मेरी मूर्खताको लम्बे समय तक टिकने ही नहीं दिया।* राजनीतिमें भी मैंने जब जब भूल की तब तब अीश्वरने मुझे तुरन्त सुधारा है। तेरे पत्र अिस जागृतिमें सहायक ही हैं।

लेकिन अब तू मेरे पिछले पत्रको ज्यादा समझ सकेगी। अपूर्णमें से पूर्णकी आशा कैसे रखी जा सकती है? अंधेने अंधोंका संघ अेकत्रित किया है। लेकिन अंधा अपने अंधेपनको जानता है। अुसका अिलाज भी जानता है। अिसलिअे अंधोंको साथ रखते हुअे भी यह विश्वास रखता है कि अुन्हें कुअेंमें नहीं गिरायेगा, न स्वयं गिरेगा। वह साथमें लकड़ी लेकर चलता है। लकड़ीके सहारेसे आगेका रास्ता वह मालूम करता जाता है और *कदम अुठाता है। अिससे कुल मिलाकर आज तक तो सब* कुशल ही रहा है। लकड़ीके अुपयोगके बावजूद कभी जरा भी रास्ता भूला हूं तो तुरन्त अुसे मालूम हो गया है और वह वापस लौट आया है। साथियोंको भी अुसने लौटाया है। मेरा अंधापन बना रहेगा तब तब तेरे जैसी प्रेमल स्वभाववालीकी आलोचना करनेके कारण मिलते ही रहेंगे। *अंधापन चला जायगा तब आलोचनाके कारण सर्वथा असंभव हो* जायेंगे। अिस बीच हम सब अंधे सत्यार्थी होनेके कारण हाथीको जैसा देखें वैसा अुसका वर्णन करें। हम सबके वर्णन भिन्न होंगे, फिर भी अुतने अंशमें बिलकुल सच्चे ही होंगे। और आखिरमें तो हम सबने हाथीका ही स्पर्श किया होगा। जब हमारी आंख खुलेगी तब सब साथ साथ नाचेंगे और पुकार अुठेंगे: 'हम कैसे अंधे हैं! यह तो वही

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

तू मुझसे हृदयको हिलानेवाले सूत्ररूप वचन मांगती है। अगर मेरे पास तिजोरी होती तो असे खोलकर असमें से हर हफ्ते तुझे भेजता जाता। लेकिन मेरे पास अैसा कुछ नहीं है। जो वचन निकलते हैं वे अपने आप निकलते हैं। और अिस तरह निकलें वे ही वचन सच्चे, क्योंकि वे जीवित वचन कहे जायंगे। दूसरे तो कृत्रिम होंगे। अच्छे लगने पर भी अुनका असर स्थायी नहीं होता, अैसा मुझे लगता है। मुझसे कृत्रिम कुछ हो ही नहीं सकता। विलायतमें पढ़ते समय मैंने दो बार अैसा प्रयत्न किया और दोनों बार असफल रहा। अुसके बाद अैसा प्रयत्न किया ही नहीं।

और जैसा मेरे वचनोंके बारेमें वैसा ही मेरे बारेमें जो अनुभव तू अुद्धृत करती है अुनके बारेमें भी समझना। मीराबहनके बारेमें हमारी बात हुअी थी, यह मुझे याद है। अुस समय मुझे जैसा सूझा वैसा अुत्तर मैंने दिया होगा। तेरे अूपर अिसकी अच्छी छाप नहीं पड़ी यह मैं समझ सकता हूं। अितनी मेरी अहिंसामें कमी है। मैंने अुस समय कहा तो होगा वही जो मुझे लगा होगा, लेकिन अुसमें डंक (कड़वाहट) तूने देखा होगा। 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्' यह व्यावहारिक वचन नहीं, परन्तु सिद्धान्त है। 'प्रियम्' का अर्थ है अहिंसक। मैंने तुझे जो बात आवेशमें कही होगी वही अगर मैं नम्रतासे कहता, तो जो कड़वा असर रह गया वह न रहता। अहिंसक सत्यके बारेमें अैसा हो सकता है कि बोलते समय वह कठोर लगे, परन्तु परिणाममें वह अमृतमय लगना ही चाहिये। यह अहिंसाकी अनिवार्य कसौटी है। यह जो मैं लिखता हूं वह मुझसे संबंध रखनेवाले कड़वे अनुभवोंके आधार पर है। मीराबहनके बारेमें मैंने अुसके पक्षमें तो तुझसे बहुत जोर देकर कहा होगा। लेकिन अुसे मैंने जितना रुलाया है अुतना किसी और भाअी या बहनको नहीं रुलाया। और अिसमें कारण मेरी कठोरता, अधीरता और मोह थे। मीराबहनका त्याग मैं अवर्णनीय मानता हूं और अिसलिअे अुसे मैं पूर्ण देखना चाहता हूं। अुसमें जरा भी कमी दिखाअी देती है तो मोहके

दिव (?) ने किया, वैसा रामने तेरे प्रति किया मालूम होता है। जिससे दो लाभ हुँ गर्व अुतर गया और अब भूल नही होगी।

तेरे पत्रमें जो शब्दचित्र हैं अुन पर आज लिखनेकी कोअी बात नही रह जाती। तू कठोर है अैसा मैंने बिलकुल नही माना है। तेरी आलोचनायें मेरे लिअे तो कामकी ही हैं। सबमें गुण-दोष भरे हैं। तू अगर गुण कम देखती हो तो अधिक देखनेकी आदत डालना।

मेरे पत्रसे नारणदासको सोचमें बिलकुल नहीं पडना चाहिये था। नारणदास यज्ञ तो करता ही है। दूसरे शारीरिक कामके लिअे मैंने अुसके पास समय ही नही रहने दिया। अिसमें वह क्या करे? अिसमें भी मेरी रचना शक्तिका अधूरापन है। आश्रम शुरू किया तभी सुव्यवस्था कर सका होता तो आज जो कुछ लोगोंका केवल देखरेख वगैरामें ही लगे रहना पडता है वह न होता। जो चल पडा सो चल पडा। मैं मानता हू कि अब भी परिवर्तन हो सकता है। लेकिन वह मुझे सूझता नही है और मेरे बजाय अैसी कोअी स्त्री या पुरुष अभी तक हमें मिला नही है, जो अैसे मामलामें आश्रमके नियमोंका अनुसरण करते हुअे अधिक विचार करके अुन पर अमल करा सके। न मिले तब तक जो कुछ चलता है अुसे सहन करे। — बहुत अपूर्ण है यह ध्यानमें रखें, क्योंकि मैं तो मानता ही हू कि आश्रममें सबके लिअे अपने हिस्से आया शारीरिक काम कर सकना और सुव्यवस्थाकी रक्षा होना शक्य है। यह विश्वास रखकर हम चलेंगे तो किसी दिन अिसकी कुंजी हाथ लग जायगी।

बापूके आशीर्वाद

६५

[मैंने लिखा था : मैं देखती हू कि आप बाहर हो या जेलमें, आप अूचे ही अुठते रहते हैं। पहलेकी अपेक्षा महान होते जाते हैं। अिससे मुझे आनन्द होता है। अैसा न होता या आप अूचे न अुठकर जैसे थे वैसे ही रहते, तो भी आपके प्रति मेरा Admiration (प्रेम) घट जाता। ता० २५-२-'३२ के पत्रको पढकर मेरे मनमें जो विचार आये वे अूपरके शब्दोंमें मैंने प्रकट किये।

हाथी है जिसके बारेमें हमने गीतामें पढ़ा था। हमारी वाख पहले खुली होती तो कितना अच्छा होता!' लेकिन देरसे खुले तो भी अुसकी चिन्ता क्या है? औश्वरके यहां समयका माप ही नहीं है, या भिन्न प्रकारका माप है। अिसलिअे ज्ञानमें अज्ञान लुप्त हो जायगा।

अब तो तू अिसमें से जो जो दोष तूने मुझमें देखे होंगे अुन सबका अुत्तर पा लेगी न? अिसका यह अर्थ नहीं है कि अब तू अपनी समस्यायें मेरे सामने रखे ही नहीं। तू रखती रहना और मैं अुत्तर देता रहूंगा।

सुशीला और विमलको मेरे आशीर्वाद भेजना। और धुरन्धरको लिख सकती हो तो अुसे भी। जमनादासकी तबीयत कैसी थी? अुसकी शालाका क्या हुआ?

बापूके आशीर्वाद

६४

[आश्रममें सब नियमोंका पालन मैं चुस्तीसे करती थी। अुसमें सूत्रयज्ञ विशेष था। अेक दिन ८-१० तार बाकी रहे होंगे कि काममें लग गअी और अुन्हें पूरा करना भूल गअी। जब अिसका भान हुआ तो मुझे बहुत दुःख हुआ और मैंने तीन दिनका अुपवास किया। यह महात्माजीको लिखकर मैंने बताया था।]

यरवडा मन्दिर,
७-३-'३२

चि० प्रेमा,

मैं मानता हूं कि तू यज्ञ पूरा करना भूल गअी अिसमें रामने तेरा घमंड ही अुतारा है। अिस भूलको जितनी बड़ी तू समझती है अुतनी बड़ी मैं नहीं समझता। तू बड़ी मानती है यह बिलकुल ठीक है। रामने घमंड अुतारा अैसा अिसलिअे कहता हूं कि भूलके पुतले हम अगर किसी काममें अेक भी भूल न करें, तो हमारे भीतर गर्वका (वह कितना ही सूक्ष्म हो) आ जाना संभव है। जैसा नारदजीके प्रति रामचंद्र या

अगर पुरुषको विवाह विच्छेदका अधिकार हो तो स्त्रीको भी होना चाहिये। लेकिन साधारणत मैं जिस प्रथाका विरोधी हू। प्रेमकी गाठ अविभाज्य होनी चाहिये।

स्त्री-पुरुषकी शिक्षा अलग भी हो सकती है और साथ भी हो सकती है। यह विषय पर आधारित है। वकालत दोनो साथ सीख सकते हैं। जिस बारेमें सारे देशके लिअे या सब परिस्थितियोंके लिअे मैं अेक नियम नही बता सकता। यह विषय सरल नही है। यहीं भी कोअी निश्चित परिणाम नही बता सके हैं। सारा प्रश्न हो आज प्रयोगका विषय है।

सौंदर्यकी स्तुति होनी ही चाहिये। लेकिन वह मूक ही अच्छी है। और 'तन त्यक्तेन भुञ्जीथा' का सिद्धात यहा भी सत्य है। आकाशका सौंदर्य जिसे हर्षित न बनाये अुसे कुछ भी अच्छा नही लगेगा, अैसा कहा जा सकता है। लेकिन जो हर्षसे पागल होकर नक्षत्र मडल तक पहुचनेकी सीढी तैयार करने लगें वे मोहमें पडे हुअे हैं।

शिक्षण क्रम अच्छा लगा। अुसमें कोअी परिवर्तन या सवर्धन मुझे अभी नहीं सूझ रहा है।

जापान-चीनके मामलेमें हमारी सहानुभूति चीनकी तरफ होगी ही। लेकिन सच्ची स्थिति तो किसी बालकके पत्रमें मैंने बताअी है वही लगती है।

जमनादासके बारेमें तूने लिखा वही ठीक है। वह मन ही मन घुटता रहता है। • अुसका दर्द ताड सके तब काम चले।

बापूके आशीर्वाद

६६

[श्री नारणदास काकाने दाडी-कूचमें शरीक हुअे सैनिकोंमें से तीनकी माग (आश्रमके काममें सहायता देनेके लिअे) पूज्य महात्माजीसे की थी। अुसे अुन्होंने मजूर कर लिया। अुन तीनमें से अेक श्री पडित खरे थे। बहुत समयसे पूज्य महात्माजी मुझ पर जोर डालकर कहते थे कि मुझे पडितजीसे स्वरज्ञान प्राप्त करना चाहिये। जिसलिअे रोज आधे घंटेका समय निकालकर मैं सगीत सीखने लगी। दो महीने बाद गलेकी गिल्टियोंका ऑपरेशन हुआ और सगीतका वर्ग हमेशाके लिअे बद हो गया।

संकर-विवाह तथा विवाह-विच्छेदके बारेमें मैंने अुनकी राय पूछी थी। फिर सह-शिक्षणके बारेमें। आश्रमके विद्यालयमें निश्चित किया हुआ शिक्षण-क्रम लिख भेजा था।

अुस समय जापानने चीन पर हमला किया था। असलिअे मेरे मनमें असहाय (अुस समयके) चीनके लिअे अितनी हमदर्दी और जापानियोंके प्रति अितना क्रोध था कि स्थान-दर्शन करनेके लिअे आश्रममें जब दो जापानी श्री नारणदास काकासे मिलने आये, तो मैंने प्रश्नोंकी झड़ी लगाकर अुन्हे डांटते हुअे जोरदार शब्दोंमें कहा: "जापानकी हार और चीनकी विजय" होनी ही चाहिये! यह बात पूज्य महात्माजीको मैंने पत्रमें लिखी थी।]

यरवडा मन्दिर,
१३-३-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अभी मुझे बायें हाथसे ही लिखना पड़ेगा। अिसलिअे बहुत लम्बे पत्र नहीं लिखे जा सकते। बाया हाथ दायेंकी गतिसे नहीं चल सकता। महादेव[1] की मदद अब जरूर मिल सकती है, लेकिन जेलके लिअे यह नया प्रयोग होगा। देखता हूं कि मैं कहां तक लिखा सकूंगा। केवल प्रेमके पत्र लिखवानेमें सफलता मिलती है या नहीं यह देखना है। कामकी ही बातें तो लिखाअूंगा।

तेरे पत्रोंसे मैं जरा भी तंग नहीं हुआ था।

हम सबको या तो नित्य बढ़ना होगा या घटना होगा। स्थिर तो कुछ है ही नहीं।

मैं अपने अूपर दोष ले लेता हूं, अिसमें झूठी नम्रता या अतिशयोक्ति बिलकुल ही नहीं है। अिसका अर्थ यह नहीं है कि बाकी लोग दोषमुक्त हो जाते हैं। लेकिन जो मुख्य व्यक्ति है वह जैसे अच्छेका यश ले लेता है वैसे ही अुसे बुरेके अपयशका स्वामी भी बनना ही चाहिये।

संकर-विवाहकी आवश्यकताको अेक हद तक मैं स्वीकार करता हूं।

---

१. स्व० श्री महादेव हरिभाअी देसाअी (१८९२-१९४२)। पूज्य बापूजीके मंत्री। अुस समय पूज्य महात्माजीके साथ ही यरवडा जेलमें थे।

तो चल बसे। मुझे लगा करता है कि यह कहीं मेरे अज्ञान और हठका तो परिणाम नहीं हो। अिससे हृदयमें गहरी वेदना होती है।"

"वाह वाह, ये शब्द महात्माके ही मुहसे निकलते हैं?" मैंने जरा कटाक्षमें कहा। "आप यथासंभव सारे योग्य अुपाय कर चुके हैं। डॉक्टरोंने भी अुनके बारेमें प्रमाणपत्र दिया है। परन्तु मृत्यु किसी तरह टलनी ही नहीं, तो अुसका कोअी क्या करे? अिसके सिवा आपके जैसे महात्माको यह 'माया' कहासे लग गअी? आपका मन अितना नीचे कैसे गिरा?"

"तेरा कहना ठीक है" महात्माजी बोले, "मेरी कमजोरी तो अिसमें है ही।" और नीचा सिर करके वे लिखने लगे। लेकिन अेकाध मिनटमें फिर सिर अूचा करके कहने लगे, "मनुष्य भले ही अनासक्त और जाग्रत हो, फिर भी अुसमें कोमलता नहीं होनी चाहिये अैसा थोडे ही है?"]

य० म०
२१-३-'३२

चि० प्रेमा,

बायें हाथसे लिखनेका आग्रह रखता हू, अिसलिअे लिखनेका काम अपने आप कम हो जाता है। क्योंकि अभी लिखनेकी आदत गअी नहीं है। विलायतसे जो पत्र वगैरा लाया हू अुनका हम अुपयोग करना है। अुनसे बुद्धिभ्रम होना सभव हो तो सभाल कर रख देना। बादमें काम आयेंगे। लॉकेटवाली चीजका किस्सा मैं भूल गया हू। जिनकी अैतिहासिक कीमत नहीं थी, अैसी चीजें साथ नहीं आअी। अिसलिअे अभी तो सब चीजें बहुत यत्नसे सभाल कर रख देना। जिसका अुपयोग करने जैसा लगे अुसका करना।

यज्ञके बारेमें अभिमान = आग्रह आवश्यक है; मैं कैसी हू, मेरा यज्ञ टूट ही नहीं सकता, यह अभिमान = गर्व त्याज्य है।

अगर मैं अैसा दावा करू कि माया मुझे बाध ही नहीं सकती, तब तो मेघजीके बारेमें जवाब देनेकी जरूरत होगी न? मायाके पाशमें से छूटनेका प्रयत्न करते हुअे भी हम कोमलता और सेवाभाव न छोडें। कोअी मर जायगा तो क्या होगा, यह विचार मूर्खताका है, मायाका

आश्रममें आनेसे पहले बंबअीमें ही मेरी गलेकी गिल्टियां बढ़ गयी थीं। अुसका असर मेरी आवाज पर हुआ। अुन्हें कटवा डालनेके लिअे पूज्य महात्माजी आग्रहपूर्वक कहते थे। लेकिन मुझे कुछ स्नेहियोंकी सलाह मिली थी कि गिल्टिया कटवानेसे ज्यादा नुकसान होता है, दवा और परहेजसे गिल्टिया बैठ जायगी। अिसलिअे वही अुपाय मैं आजमा रही थी।'

मेरी सहेली सुशीला पूज्य महात्माजीके संपर्कमें आवे अैसा मेरा प्रयत्न था। पूज्य महात्माजीसे मिलने मैं जब जब यरवडा गअी तब तब सुशीलाको भी साथ ले गअी थी। अुसे भी मुलाकातकी अिजाजत जेल-अधिकारियोंकी ओरसे मिले *(वह आश्रमवासी नहीं थी अिसलिअे)*, अैसी सूचना करनेकी पूज्य महात्माजीसे मैंने विनती की थी।

दाढी-कूचसे पहले आश्रममें चेचकसे बच्चे बीमार पड़ते थे। पूज्य महात्माजीको टीके लगवाना पसन्द नहीं था, अिसलिअे आश्रममें किसी भी माता-पिताने अपने बच्चोंको टीके नहीं लगवाये थे। बीमारी शुरू हुआी तब पूज्य महात्माजीने अुपचारके बारेमें मार्गदर्शन किया। अिससे बहुतसे बच्चे बच गये, लेकिन तीन बच्चे अेकके बाद अेक फट फट गुजर गये। रातको हृदय-कुंजके आगनमें मैं और पूज्य महात्माजी खाट डालकर सोते थे। अिसलिअे हर रोज पूज्य महात्माजी रातको बारह बजे अुठकर लालटेन जलाते और लिखने बैठते, यह मैं देखती थी। पहली बार मैं जागी और पूछा तब अुन्होंने मुझसे कहा, "मुझे लिखना है अिसलिअे मैं जगा हूं। तू सो जा।" दूसरी बार भी अैसा ही हुआ। लेकिन शंका होने पर भी *मैं सो गअी। लेकिन तीसरी बार जब* मेघजीका अवसान दोपहरको हुआ और पूज्य महात्माजी अुस रातको भी अुठकर लिखने बैठे, तो मुझसे रहा नहीं गया। मैं अुठकर अुनके पास गअी और बोली, "यह क्या है महात्माजी? जिस दिन किसी बालककी मृत्यु होती है, अुस रात आप सोते नहीं और लिखने क्यों बैठते हैं?"

"मैं क्या करूं?" वे बोले, "मुझे नींद नहीं आती। मुग्ध सुकुमार कलियोंकी तरह ये बालक कुम्हला जाते हैं। अिनकी मृत्युके लिअे मैं जिम्मेदार हूं, अैसा मुझे लगता है। बालकोंके चेचकका टीका न लगवानेकी सलाह मैंने अुनके माता-पिताको दी, जिसे अुन्होंने माना। परन्तु बालक

[पूज्य महात्माजीके बायें हाथसे लिखे हुअे पत्र आने लगे। अिसलिअे मुझे लगा कि मुझे लम्बे लम्बे पत्र लिखनेसे अुनका दाहिना हाथ थक गया होगा।]

य० मं०
२८-३-'३२

चि० प्रेमा,

तू चाहे जो सवाल पूछना। अैसा मौका शायद फिर कभी न आये। तू नहीं जानती कि मैं अेक लकीरमें ही जवाब दे सकता हू और पन्ने भी भर सकता हूं। ज्यादा नहीं लिख सकूंगा तो थोडेमें ही पूरा कर दूंगा। फिर भी अुत्तर अधूरे नहीं होंगे।

मेरे दाहिने हाथ पर तेरी जीभका असर हुआ यह तो अैसा माननेके बराबर हुआ कि कौआ डाली पर बैठा और डाली टूटी अिसलिअे कौअेके भारसे डाली टूटी।

मुझे स्वप्न आते जरूर हैं, लेकिन शायद ही कभी अुन पर मेरा ध्यान जाता है। जो स्वप्न आते हैं अुन्हें मैं कोअी महत्त्व नहीं देता।

हमारे पुस्तकालयमें कारलाअिल[1] और रस्किनकी पुस्तकोंका पूरा सेट होना चाहिये। अगर हो तो अुसकी सूची भेजना।

हमारे पास सब पुस्तकोंकी सूचियां कितनी हैं? अगर अेकसे ज्यादा हों तो अेक मुझे भेज देना।

बडी बहनोंके बारेमें मैंने तुझे कभी लिखा नहीं। अिस बार जीमें आया कि लिखूं। बहनें किसी भी सामाजिक हेतुसे आपसमें मिलती मालूम नहीं होतीं। अिसका अर्थ यह है कि संघ टूट गया है। अिस बारेमें लक्ष्मीबहन और दुर्गाको मैंने लिखा तो है। लेकिन मेरा कुछ असर होता दीखता नहीं है। साथ मिलकर काम करनेकी जिम्मेदारी लेनेकी शक्ति बहनोंमें आनी चाहिये। तुझमें हिम्मत और आत्म-विश्वास हो, तो अिस

१. टॉमस कारलाअिल (१७९५-१८८१)। अंग्रेजी भाषाके प्रसिद्ध लेखक।

नहीं। मरना सबको है, यह अेक बार जान लेनेके बाद अुसका विचार क्या करना? और फिर हम तो नटवरके हाथमें स्वेच्छासे कठपुतली बने हैं; फिर यह झंझट किसलिअे? अुसे नचाना होगा वैसे नचायेगा। मूल बात तो नाचनेकी ही है न? जिसे सदा ही नाचनेको मिले, अुसे दूसरा क्या चाहिये?

तेरा संगीत आगे बढ़ रहा है यह बहुत अच्छा है। गिल्टियां कटवाना जरूरी हो तो कटवा डालना।

आश्रमसे बाहरवालोंके बारेमें अभी फैसला नहीं हुआ है।[1] सुशीलाका नाम शामिल किया है।

अपने दोषोंकी चर्चा करवाकर तू प्रशंसा करवाना चाहती है क्या? मुझे तेरे दोष बताने ही नहीं हैं। कभी बार मैं बता नहीं चुका हूं? अुनमें कितना सुधार किया यह बता। फिर अिस प्रश्नका अधिक विचार करेंगे।

औश्वरके भक्तों वगैरामें अेक हद तक ही समता होती है। पूर्ण समता जिसमें प्रकट हो वह परमेश्वर है। लेकिन परमेश्वर तो अेक ही है। अिसलिअे पूर्णतम मनुष्यमें भी अधूरी समता ही होती है। अिसीलिअे मतोंकी भिन्नता और विरोध होते हैं। अिसमें दुःख माननेकी जरूरत नहीं है। जगत = विषमताओंका परिणाम। हमारा धर्म समताकी मात्राको प्रतिदिन बढ़ाते रहना है। अैसा करते करते विषमता बुरी लगनेके बजाय सह्य और कुछ अंशमें सुन्दर भी लगेगी।

हिन्दुस्तानमें सब कुछ अन्य देशोंकी अपेक्षा अच्छा ही है, अैसा मान लेनेका कोअी कारण नहीं है। फिर अुत्थान-पतन तो विश्वका नियम है। कुल मिलाकर हिन्दुस्तानमें बहुत कुछ अच्छा है। अिसीलिअे हिन्दुस्तान विजित देश हुआ, विजेता नहीं। अिसके गर्भमें यह मान्यता है कि गुलामकी अपेक्षा अत्याचारीकी स्थिति ज्यादा बुरी है।

हमारे यहां खगोलकी और अप्टन सिंक्लेर[2] की कौनसी पुस्तकें हैं?

बापूके आशीर्वाद

---

१. मुलाकातके बारेमें।

२. अमरीकी अुपन्यासकार।

तू आश्रमको जो प्रमाणपत्र देती है वह मैं नहीं दूंगा। सच्चा हो तो यह प्रमाणपत्र मुझे अच्छा जरूर लगेगा। जिस बातको वह हाथमें लेता है अुसके पीछे पागल हो जाता है, अैसी छाप तुझ पर पड़ी होगी। वह ठीक नहीं है। आश्रमके व्रतों तक भी हम कहां पहुंच सके हैं? आश्रममें हम हिन्दी, अुर्दू, तामिल, तेलगू और संस्कृत सीखनेवाले थे। जिस दिशामें बड़ा ही शिथिल प्रयत्न हुआ है। चमड़ेकी कलामें हम कहां कुशल बने हैं? बारीकसे बारीक सूत हम कहां कातते हैं? अैसी तो दूसरी बहुतसी बातें बता सकता हूं। मेरी दलीलके समर्थनके लिअे अितना काफी है। लाठी वगैराके पीछे सब पड़ सकते हैं — यह तो मिठाअीके पीछे सब पड़ते हैं, अैसा कहनेके बराबर हुआ। संसारमें अैसी चीजें जरूर हैं, जिनके पीछे पड़नेमें कोअी परिश्रम नहीं होता। हम पशु-परिवारके भी हैं, जिसलिअे यह गुण हममें स्वाभाविक है। अुसे पैदा नहीं करना पड़ता। अुसे बढ़ाना अुचित है या नहीं यह प्रश्न है। पशुजातिके सभी गुण त्याज्य हों, अैसी बात तो नहीं है।

अभी रसोड़ेमें कितने लोग खाते हैं? डबल रोटी अभी भी बनती है क्या? बनती हो तो कौन बनाता है? अच्छी बनती हो तो कोअी आये अुसके साथ अेक या दो भेजना।

लक्ष्मीसे कोअी मिले तो अुससे कहे कि अुसके अेक भी पत्रका अुत्तर न दिया हो अैसा मैं नहीं जानता। जिसलिअे वह मुझे पत्र लिखे।

दीक्षितके[1] ज्योतिषशास्त्रका गुजराती अनुवाद हुआ है। वह मेरे पास है। बौलकी पुस्तक यहां मिल जायगी, जिसलिअे नहीं मंगा रहा हूं। अप्टन सिंकलेरकी भेजी हुअी पुस्तकें आश्रमकी ही हैं। अुन्हें दर्ज कर लेना और अुनमें से 'बोस्टन' और 'ब्रास टैक्स' भेजना। बाकी पुस्तकोंकी सूची भेजना।

अुपनिषद् मुझे अच्छे लगते हैं। अुनका अर्थ लिखने जितनी योग्यता मैं अपनेमें नहीं मानता हूं।

मेरी विनोदी प्रकृतिको तुझे पहचानना चाहिये। प्रशंसा करानेके लिअे तू दोषोंके विषयमें पूछती है, अैसा विनोदमें ही पूछा जा सकता है।

---

१. खगोल-विद्या पर मराठी पुस्तकोंके लेखक।

कामको तू हाथमें लेना। अगर हाथमें ले तो हार कभी माननी ही नहीं है, अिस निश्चयके साथ ही हाथमें लेना। हमारे पास सारी अनुकूलतायें हों तो ही हम काम करें, यह करना नहीं कहलायेगा। बढ़ई चाहे जैसे लकड़ीके टुकड़ेमें से आकार गढ़ लेता है, शिल्पी चाहे जिस पत्थरमें से मूर्ति गढ़ लेता है; वैसे ही चाहे जैसे मनुष्योंके साथ रहना और अुनसे काम लेना हमें आ जाय, तभी हमारी मनुष्यताकी कीमत मानी जायगी। मुझे तो लगता है कि हमें यही अिस दुनियामें सीखना है; और अिसके लिये हमारे भीतर सागरकी अुदारता होनी चाहिये। किसीमें दिखते हुओ अुसके दोष देखकर हम डरने लगें, तब तो काम बिगड़ेगा ही। दोष तो हैं ही — हमारे भीतर भी हैं और सामनेवालेमें भी हैं। अिसके बावजूद भी मिलना है ऐसा निश्चय हो तो ही काम बनता है। मैं जानता हूं कि यह काम बहुत कठिन है। मेरा तो बरसोंसे यह धन्धा ही रहा है। लेकिन मैं सफल हुआ हूं ऐसा नहीं कह सकता। थोड़ीसी सफलता मिली मालूम होती है, अिसलिये दूसरोंको रास्ता दिखानेकी हिम्मत या धृष्टता मैं करता हूं।

अब तुझे जो ठीक लगे वही करना। यह पत्र बहनोंके सामने रखना हो तो तू रख सकती है।

बापूके आशीर्वाद

६८

य० मं०
३-४-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

अिन्दु सुन्दर प्रश्न पूछ रहा है। तलवार, कटार वगैराके प्रयोग हम आश्रममें कैसे करें? अिस बारेमें नारणदासके पत्रमें लिखा है। अिसलिये यहां अिस सम्बंधमें नहीं लिख रहा हूं। तू स्वयं यह सीख रही है, अिसलिये तेरे सामने यह सवाल खड़ा हुआ या नहीं, यह जाननेके लिओ ही यहां लिखा है।

य० मं०
८-४-'३२

चि० प्रेमा,

धुरन्धर यहां है तो बहुत करके कभी मिलेंगे ही। तू [अेक] पत्थरसे बहुतसे पक्षी मारनेका लोभ रखे, अिसके बजाय अेक चोटसे बहुतसे बेर गिरानेका लोभ क्यों न रखे? पक्षी मारनेका लोभ तेरे लिअे तो त्याज्य होना चाहिये।

खपरैलकी चोटसे अच्छी बची। अिसका यही अर्थ लगायें कि तेरे हाथसे अभी बहुत बड़ी सेवा होनी बाकी है।

बहनोंके बारेमें मुसीबतमें पड़नेका कोअी कारण नहीं है। बहनें *तुझसे यह सेवा लेना चाहें और तुझे आत्म-विश्वास हो तो करना,* वरना यह बात अुठी ही नहीं अैसा समझकर भूल जाना। तुझे आत्म-विश्वास सिखानेके लिअे नहीं, लेकिन तेरी नम्रताके लिअे, गलतफहमी न होने देनेके लिअे, कठिन प्रसंग सामने आने पर अुनसे निबट सकनेके लिअे (मैंने लिखा है)। बहुत बार हम मानभंग, गलतफहमी वगैराके डरसे जिम्मेदारी लेनेमें हिचकिचाते हैं। अिस संकोचको तू पार कर सके तो जिम्मेदारी लेना। यह तो तू मानती ही है कि सब बहनें बहुत भली हैं। अुनके विचार लिख सके, दफ्तर संभाल सके अैसे व्यक्तिकी मददकी अुन्हें जरूरत है। *अपढ़ मामें पढ़ी-लिखी लड़कीसे ज्यादा समझ और* व्यवहार-बुद्धि हो सकती है। लेकिन अिस बुद्धिका अुपयोग वह निरक्षरताके कारण नहीं कर सकती। अिस कमीकी पूर्ति लड़कीके द्वारा वह कर सकती है। यह कमी तू पूरी करे अैसी मेरी अिच्छा है। गंगाबहन थी तब मंडल बहुत काम करता था, अैसा मैं नहीं मानता। लेकिन किसी *न किसी बहानेसे गंगाबहन सब बहनोंको अिकट्ठी कर लेती थी।* अुन्हें अैसा लोभ था और अुन्होंने अिसका बीज बोया था। यहां भी वे वैसा ही कर रही हैं। अुस बीजका वृक्ष देखनेकी मैं आशा रखता हूं। सामाजिक काम तो बहनें करती ही हैं, लेकिन वह व्यक्तिगत रूपमें करती हैं। मेरी अिच्छा है कि किसी सामाजिक सेवाके लिअे बहनें सामूहिक रूपमें जिम्मेदारी लें। *अैसा करनेसे संघशक्ति पैदा होती है।* अैसी शक्ति

अिसमें अितना तो सत्य है ही कि अगर प्रेमीजनसे हम अपने दोष निकलवायें, तो अुसका परिणाम प्रशंसा सुननेमें आता है। क्योंकि प्रेम दोष पर परदा डालता है; या दोषको गुणके रूपमें देखता है। प्रसंगानुसार दोष बताना प्रेमका स्वभाव है और वह भी संपूर्णता देखनेके लिअे ही। तुझे धुरन्धरके सामने 'हिस्टेरिकल' कहा था, अुसमें भी तेरी प्रशंसा थी यह क्या किसनने कहा? क्योंकि वह प्रसंग अैसा था कि अगर तुझे 'हिस्टेरिकल' न मानता तो तू ज्यादा दोषी ठहरती। तू 'हिस्टेरिकल' तो है ही। तू पागल जैसी हो जाती है, जिसका क्या अर्थ है? जो भावनाओंसे अभिभूत हो जाता है वह 'हिस्टेरिकल' है। यह समझमें आता है न?

मुझ पर हमेशा ही यह छाप पड़ी है कि जापानकी नीति शोचनीय है। रूसके विरुद्ध अुसकी जीत जरूर होनी चाहिये थी, लेकिन अुससे यह साबित नहीं होता कि जापानकी नीति अनुकरणीय है। लेकिन अभी तो हम अपनी नीतिको संभाले तो भी काफी होगा। जापानको संभालने-वाला तो करोड़ों आंखोंवाला सदा जागता सत्पुरुष बैठा है।

बापूके आशीर्वाद

६९

[छात्रालयके चौकमें मैं हमेशा आकाशके नीचे खाट बिछाकर सोती थी। अेक रात जबरदस्त आंधी आओ। चारों ओर वातावरणमें धूल भर गओ। अूपरसे खपरैल गिरने लगे। लड़कियां चिल्लाओं, "प्रेमाबहन! हट जाओ। खपरैल गिरेगा।" लेकिन मैं नहीं अुठी। तीसरी मंजिलसे अेक बड़ा खपरैल मेरी तरफ नीचेको तेजीसे गिरता मैंने देखा। छाती पर आ पड़ता तो मेरा राम बोल जाता, यह जानते हुअे भी मैं नहीं अुठी। खपरैल मेरे पास ही बिस्तर पर आ पड़ा और अुसके टुकड़े टुकड़े हो गये। फिर तो मैं अुठकर अंदर भागी। यह घटना मैंने पत्रमें लिख भेजी थी।]

यरवडा मन्दिर,
१८-४-'३२

चि० प्रेमा,

तू सचमुच लिखनेकी मनःस्थितिमें नहीं थी। पत्र तो लगभग हमेशा जितना ही लंबा है, लेकिन बेसिर-पैरका है। जब खानेकी जरूरत न हो तब खाना नहीं चाहिये; घूमनेकी जरूरत न हो तब घूमना नहीं चाहिये; वैसे ही लिखनेकी जरूरत न हो तब लिखना नहीं चाहिये। अथवा थक गअी हूं अिसलिअे नहीं लिखती, अितना लिखकर खतम कर देना चाहिये।

दिनका अंत होने पर आनन्दके बदले मनमें चिढ़ होती है, यह अच्छा लक्षण नहीं है। यह अनासक्ति तो नहीं ही है। मेरी सलाह है, मेरा आग्रह है कि तू अपनी जंजाल कम कर। अिससे तुझे या आश्रमको कोअी नुकसान नहीं होनेवाला है। प्रफुल्ल चित्तसे किया हुआ काम बढ़ता है और फलदायी सिद्ध होता है।

हर हफ्ते यहाके साथियोंसे मिलता हूं। अुनमें धुरन्धरको बुलाया था। अुसकी तबीयत अच्छी है। वजन घटा है, क्योंकि क वर्गकी ही खुराक लेता है। अगर बीचमें अुससे कोअी मिला न हो तो तू मिल सकेगी।

लेजिमके संबंधमें अुठनेवाले प्रश्नों पर तूने जो लिखा है वह बिना विचारे लिखा है, अैसा मानता हूं। 'आर्ट फॉर आर्ट्स सेक' का विचार मनुष्यको कहां ले जाता है, यह तू नहीं जानती। अिसके नाम पर पश्चिमके जवान लड़के-लड़की बिलकुल नरकमें अुतर रहे हैं। पत्र लिखते समय शायद कलाकी परिभाषा ही तेरे ध्यानमें नहीं थी। लेकिन तेरे पत्रमें सब कुछ बिना ठिकानेका लिखा जायगा अैसा तूने ही मुझे चेताया है। अिसलिअे मैं ज्यादा लम्बा नहीं लिखूंगा।

तू अपने आपको हिस्टेरिकल न समझे यह संभव है। यह हो सकता है कि किसन भी यह न देख सके। फिर यह भी संभव है कि

पैदा हो तब व्यक्ति भले आते और जाते रहे, परन्तु संघ चलता ही रहता है। यह शक्ति अीश्वरने केवल मनुष्यको ही दी है। अिस देशमें स्त्रियोंने यह शक्ति विकसित नहीं की। अिसमें दोष पुरुषोंका है। अभी हमें अिस विवादमें नहीं पड़ना है। अगर हम यह मानें कि यह शक्ति स्त्रियोंमें बढ़नी ही चाहिये तो अुसे बढ़ानेके लिअे हमें प्रयत्न करना चाहिये। फिर चाहे आरंभ अिस सघको मेरा पत्र मिलने जितना और अुसका अुत्तर देने जितना ही हो। धीरे धीरे (भले बहुत धीरे हो) अुसमें वृद्धि की जाय। मेरी बात तू अच्छी तरह समझ गअी हो, वह तेरे गले अुतरी हो, दूसरी बहनोंको भी यह ठीक लगती हो, अिसमें रस लेनेके लिअे वे तैयार हों, तो ही यह चीज हाथमें ली जाय। लेकिन अिसमें कठिनाअियां दिखाअी दें या कोअी महत्त्व न दिखाअी दे, तो अिसे छोड़ दिया जाय।

मुझे पुस्तकोंकी सूची मत भेजना। अप्टन सिंकलेरकी पुस्तकें मैंने मंगाअी हैं। अुनके सिवा दूसरी कोअी पुस्तकें नहीं मंगानी हैं।

अेक धर्मसे दूसरे धर्ममें लोगोंको लेनेकी प्रथा मुझे तो बिलकुल पसन्द नहीं है। दो अलग धर्मोंके स्त्री-पुरुषोंमें विवाह होना असम्भव या अयोग्य ही [है, अैसा] मैं नहीं मानता।

हिन्दू धर्मके मूल होते हुअे भी भिन्न तत्त्व मुझे गोरक्षा और वर्णाश्रम लगते हैं। किसी भी राष्ट्रको अुन्नतिके रास्ते पर जाना हो तो अुसे सत्य और अहिंसाका आश्रय लेना चाहिये।

मुझे लगता है कि तेरे सब प्रश्नोंके अुत्तर अिसमें पूरे आ जाते हैं।

बापूके आशीर्वाद

विद्यापीठकी तरफसे प्रकाशित गुजराती शब्दकोशके *द्वितीय* संस्करणकी मेरी प्रति वहां होनी चाहिये। वह भेज देना।

महादेवने और मैंने अेक सप्ताहमें दुगना काम किया, अैसा कहा जायगा। सरदार[1]को अिस बार अभी कातनेकी धुन नहीं लगी है। अुपवास[2] तो हम तीनोंने किये।

बापूके आशीर्वाद

७१

य० मं०
२२-४-'३२

चि० प्रेमा,

धुरन्धरके बारेमें मैं लिख चुका हूं। अुमने अन्नत्याग नहीं किया है।

मुझे लगता है कि आनन्दी[3]को जबरदस्ती घूमने नहीं ले जाना चाहिये। अुसमें अुत्साह न हो तो वह घूम नहीं सकती। अुसे प्राणायाम सिखा दे और थोड़ी 'पैसिव अेक्सरसाअिज' कराये तो अभी काफी होगा। पैं० अे० तू जानती है?

धर्म-परिवर्तनके बारेमें मैं यह नहीं कहना चाहता कि कभी परिवर्तन हो ही नहीं सकता। हमें दूसरेको अपना धर्म बदलनेके लिअे निमंत्रण नहीं देना चाहिये। मेरा धर्म सच्चा है और दूसरे सब धर्म झूठे हैं, अिस तरहकी जो मान्यता अिन निमंत्रणोंके पीछे रहती है अुसे मैं दोषपूर्ण मानता हूं। लेकिन जहां बलात्कारसे या गलतफहमीसे किसीने अपना धर्म छोड़ा हो, वहां अुस मनुष्यको अपनी गलती सुधारनेमें यानी अपने असली धर्ममें जानेमें दिक्कत नहीं होनी चाहिये। अितना ही नहीं, अुसे प्रोत्साहन भी मिलना चाहिये। अिसे धर्म-परिवर्तन नहीं कहा जा सकता। मुझे अपना धर्म झूठा लगे तो मुझे अुसका त्याग करना चाहिये। दूसरे धर्ममें जो कुछ अच्छा लगे अुसे मैं अपने धर्ममें ले सकता हूं — लेना चाहिये। मेरा धर्म अपूर्ण लगे तो अुसे पूर्ण बनाना मेरा फर्ज है। अुसमें दोष दिखाओ दें तो अुन्हें दूर करना भी फर्ज है।

---

१. सरदार वल्लभभाओ पटेल।

२. राष्ट्रीय सप्ताहमें ६ और १३ अप्रैलके दिन।

३. श्री लक्ष्मीदास आसरकी पुत्री।

हिस्टेरिकलका पूरा अर्थ भी तुम दोनो न समझी हो। अिसका अर्थ समझनेके लिअे तूने शब्दकोश कभी नही खोला होगा। अैसा नही है कि हमारे अेम. अे, बी. अे पास लोग अंग्रेजी जानते ही हो। फिर अैसे खास शब्दोंके अर्थ तो बहुत कम लोग ही जानते हैं। हिस्टेरिकलका तू सुन्दर नमूना है। यह दोष ही है, अैसा माननेकी जरूरत नही है। लेकिन आखिर तो हिस्टीरियाको मिटा डालनेकी आवश्यकता रहती ही है। लेकिन मैं तुझे अिसके विवेचनमें नही अुतारूंगा। तू हिस्टेरिकल नहीं है अैसा खुशीसे मानती रह। तू अिसे सच्चा ही सिद्ध करना चाहती है, अिसलिअे मैं निश्चिन्त हूं। 'नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।'

तेरा वाक्य यह था कि आश्रममें जिस चीजके पीछे हम पड़ते हैं अुसे छोड़ते नही, *यह आश्रमकी खूबी है।* अिसे मैं प्रमाणपत्र मानता हूं। भले आज आश्रम अिसके योग्य नहीं है। लेकिन अन्तमें हम अिसके योग्य होंगे, अैसा आग्रह तो रखेंगे ही। हम जो कर नहीं सके अुसका मुझे दुःख नही है। मुझे अुसका भान है, अिसलिअे मैं जाग्रत हूं। जो कुछ सोचा था अुसे सीखनेका समय नही है, यह तो स्पष्ट रूपसे मेरी कमी है। मेरी व्यवस्था-शक्ति कम है, शिक्षक-शक्ति कम है और समयके प्रमाणका भी ज्ञान मुझे कम है। अैसा होते हुअे भी अगर परिस्थितिवश मैं ज्यादा समय तक बाहर नहीं रहा होता, तो अधिकतर क्रमको किसी तरह मैंने पूरा कर लिया होता। मेरा अैसा अनुभव है। लेकिन बीती हुअी बातोंको अिसीलिअे याद करते हैं कि अब भी कुछ सुधारा जा सकता हो तो सुधार लें। जो मैं नही कर सका अुसका तुम सब विचार करके और योजना बनाकर जितना कर सको करो। क्या क्या करना था, क्या क्या करना बाकी है, अुसमें से क्या क्या करना संभव है, अिसकी समय निकाल कर जांच करो। हो सके वह करो। अैसा लगे कि कुछ भी नहीं हो सकता तो फिर अपरिहार्यको भूल जाओ। अुसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

शून्यवत् होनेका अर्थ है 'मैं करता हूं' की वृत्तिको छोड़ना। अिसमें निराशावादके लिअे स्थान ही नही है।

जो गरीब भूखों मरते हैं अुनकी जरूरतें बढ़नी ही चाहियें। लेकिन यह कोअी नअी बात नहीं है। आज भी यह कोशिश चल रही है।

वापूके आशीर्वाद

७२

[मेरे जिस पत्रका यह अुत्तर है अुसमें अुन दिनों मुझे अेक प्रकारकी जो मानसिक थकावट लगती थी अुसका वर्णन मैंने किया था। देशकी परिस्थितिके बारेमें मुझे अन्दर ही अन्दर असन्तोष हो रहा था। जो तेज और अुत्साह सन् १९३० के आन्दोलनमें दिखाअी दिया था, वह अिस समय लुप्त हो गया था। सरकार अुग्रतासे अपनी दमन-नीति चला रही थी। मैं स्वयं हाथ-पैर बांधकर आश्रममें बैठी थी! यहां भी मुझे असन्तोष था। पूज्य महात्माजीका वियोग भी खटकता था।]

य० मं०
१-५-'३२

चि० प्रेमा,

अगर तुझ पर कामका बोझा ज्यादा पड़ता हो तो वह कम नहीं हो सकता, यह बात मेरे गले नहीं अुतर सकती। अिस विचारमें मोह और दुर्बलता है। तेरी चिढ़का कारण तू ही है, कामका बोझ नहीं है, अिसे मैं मान सकता हूं। यही हो तो तू धीरे धीरे अनुभवसे समझ जायगी, क्योंकि तू ज्यादा दिन तक अपने आपको धोखा नहीं दे सकती। अिस बारेमें मैं तुझे सताना नहीं चाहता। अपनी नाजुक प्रकृतिको सख्त बनाना।

हमारी पुस्तकोंमें कुछ अुर्दूकी पुस्तकें हैं। अुनमें से कुछ संभवतः अिमाम साहब[1]के यहां होंगी। वहां भी देखना। तू न पहचान सके तो परसराम जरूर पहचानेगा। अुनमें 'सीरत अुन्नबी' हो तो भेज देना। वह

१. अिमाम अब्दुल कादिर बावजीर। दक्षिण अफ्रीकासे पूज्य बापूजीके साथी बने थे। बापूजीने अुन्हें अपना सहोदर कहा है। सत्याग्रह आश्रमके अुपाध्यक्ष थे।

मीराबहनको मैं अीसाअी मानता हूं। अब तो वह भी अपनेको अीसाअी मानती है। अीसाअी होने पर भी गीताको वह आदरसे पढ़े अिसमें मुझे विरोध नहीं दीखता। हमारी प्रार्थना दूसरे धर्मके लोग भी आदरसे गाते हैं।

स्वराज्य मिलने पर क्या करूंगा, यह मैं सचमुच ही नहीं जानता। अुस समय भी अीश्वर मुझे रास्ता दिखायेगा, जैसे आज दिखाता है। श्रद्धालु पहलेसे ही व्यवस्था नहीं करते। पहलेसे व्यवस्था करे वह श्रद्धा नहीं है, अथवा है तो कमजोर श्रद्धा है।

ज्ञान, अुपासना और कर्म अीश्वर-प्राप्तिके तीन अलग मार्ग नहीं हैं, बल्कि ये तीनों मिलकर अेक मार्ग हैं। अुसके तीन भाग सुविधाके लिअे कर दिये गये हैं। पानी हाअिड्रोजन और ऑक्सीजनका बना है; लेकिन पानी न तो हाअिड्रोजन है और न ऑक्सीजन। वैसे ही न तो ज्ञान अकेला प्राप्तिमार्ग है और न अकेली भक्ति। लगभग अैसा कहा जा सकता है कि प्राप्तिमार्ग तीनोंका मिला हुआ रासायनिक प्रयोग है। अिस अुपमामें दोष है, फिर भी मैं जो कहना चाहता हूं अुसे समझानेके लिअे यह काफी है।

द्रौपदीकी लाज रखी यह पानीकी शराब बनाने जैसा चमत्कार नहीं है।[1] संकटके समय अीश्वर अपने भक्तोंकी मदद करता है, यह विश्वास अुपयोगी है; अैसे अुदाहरण संग्रह करने योग्य हैं। लेकिन अगर कोअी अैसी सहायताकी शर्त लगाकर अीश्वरकी भक्ति करे तो वह निरर्थक है।

जबरदस्ती लोगोंके शरीर मजबूत बनानेकी पद्धति मुझे पसन्द नहीं है। अिसमें जबरदस्तीकी जरूरत ही नहीं होती। शरीरको दुर्बल रखना किसीको कभी अच्छा नहीं लगता। यह शिक्षाका विषय है।

जरूरतें कम करनेका आदर्श लोगोंके सामने रखा जा सकता है। फिर अुसके परिणामस्वरूप जो होना होगा वह होगा। अिसमें समझौता कहां आता है? समझौता करने न करनेकी जरूरत रहती ही नहीं है।

---

१. बाअिबलमें अेक प्रसंग अैसा दिया गया है कि किसी भोजके समय लोगोंको पिलानेके लिअे शराब नहीं थी; अुस समय प्रभु अीसा मसीहने पानीकी शराब बना दी थी।

य० मं०
७-५-'३२

चि० प्रेमा,

आध्यात्मिक लेखा-जोखा निकालनेकी आदत पड़ जाय तो झूठा संकोच दूर हो जाता है और हम जैसे होते हैं अुसी रूपमें दुनियाके सामने दिखाअी देने लगते हैं। स्पष्ट है कि यह बात सच्चे मनुष्यों पर ही लागू होती है। झूठे मनुष्य अपना लेखा-जोखा बहुत अर्से तक निकाल ही नहीं सकते। अुनके लिअे यह असंभव है।

नारणदासके बारेमें तूने जो लिखा है वह सब मैं मानता हूं। अुसे शक्तिसे ज्यादा काम हाथमें लेना ही नहीं चाहिये। किसीको भी नहीं लेना चाहिये। लेकिन सामान्यतः मनुष्य अपनेको धोखा देता है। वह अपने प्रति बहुत अुदार रहता है और अपने किये हुअे थोड़ेसे कामको भी शक्तिसे बाहरका मान बैठता है। अिसलिअे सामान्यतः कोअी ज्यादा काम करता है तो अुसे रोकनेकी अिच्छा नहीं होती। लेकिन नारणदासका पन्थ न्यारा ही है। वह हमेशा बहुत काम ले लेता है। लेकिन समय पर काम करनेकी आदत होनेके कारण शायद अनजान आदमी अुसका काम न देख सके। अैसा है अिसीलिअे नारणदास नया बोझ न अुठाये यही ठीक है। मैंने अुसे लिखा है। तू ध्यान रखना।

आध्यात्मिक लेखा-जोखा निकालनेके बारेमें मैंने जो लिखा है, अुससे कोअी जड़वत् नहीं बनेंगे। अगर आश्रममें रहकर अेक भी आदमी जड़वत् बने, तो मैं हमारी कार्य-पद्धतिमें दोष मानूंगा। यह मैं जानता हूं कि हमारी कार्य-पद्धति पूर्ण नहीं है। लेकिन आश्रममें रहनेवाला कोअी जड़ नहीं बना है और कितने ही जड़ जैसे आदमी चेतन बने हैं। अिससे मैं अनुमान लगाता हूं कि हमारी कार्य-पद्धति ज्यादा नहीं तो कमसे कम ५१ प्रतिशत तो कुशल होनी ही चाहिये। आश्रममें विविध प्रवृत्तियोंके संचालक विशारद नहीं हैं। अिसमें किसीका दोष नहीं है। लेकिन या तो आश्रमने नअी प्रवृत्ति हाथमें ली है या पुरानीको नअी दृष्टिसे चलानेका अुसने संकल्प किया है। अिसलिअे विशारदोंको आश्रममें तैयार करनेकी जिम्मे-

मौलाना शिबलीकी लिखी हुआी है। अेक और पुस्तक डॉ॰ मुहम्मदअलीका लिखा हुआ नबीका जीवन है। वह भी भेजना। 'सीरत' के दो भाग हैं।

वहां चारों तरफ मजदूर हैं, यही सच्चा जीवन है। आश्रमकी यही कल्पना है। हां, मजदूर सत्यार्थी होने चाहिये। तू सत्यार्थी नहीं है? दूसरे भाओी-बहन सत्यार्थी नहीं हैं? मैं मानता हूं कि सभी यथाशक्ति सत्यार्थी हैं।

तू पूछती है कि 'मैं कब आअूंगा।' अगर अपनी आंखोंको काममें ले, तो तू मुझे देखे बिना न रहे। मेरी आत्मा तो वहीं बसती है। शरीर भले ही यहां रहे या रास्तेमें मिल जाय। यह भी बिलकुल संभव है कि शरीर वहां हो तब भी मैं वहां न होअूं। अिस सत्यको तू देख और अुस मायाको भूल जा।

असन्तोष तो होना ही चाहिये। लेकिन वह असन्तोष अपने बारेमें होना चाहिये। अब तो मैं पूर्ण हो गया, जिस दिन मैं अैसा मान बैठूं अुसी दिनसे मेरा पतन हुआ समझना चाहिये। अिसलिअे मुझे अपने बारेमें असन्तोष जरूर होना चाहिये। अिस असन्तोषका यह अर्थ कभी नहीं कि मुझे अपने कर्तव्योंमें परिवर्तनकी अिच्छा करते रहना चाहिये।

लेकिन यह सब दलीलोंसे नहीं समझाया जा सकता। समय अपना काम करेगा ही। आज जहां घोर अन्धकार लगता है वहां कल अुजाला भी दिखाओी देगा। मुझे तो अैसी स्थितिको पहुचानेवाला भजन 'प्रेमल ज्योति'[1] ही दीखता है। गुजरातीमें भी अुसका ठीक अर्थ अुतरा है। अंग्रेजी[2] भजन तो अलौकिक है ही।

अैसा सुना है कि धुरन्धर ठीक है। तेरा वजन कितना है? दूध-दही कुल मिलाकर कितना लेती है?

हमारे पुस्तकालयमें कुल मिलाकर कितनी पुस्तकें होंगी?

बापू

---

१. 'आश्रम-भजनावलि' (१९५६) का गुजराती भजन १३७। श्री नरसिंहरावभाओी द्वारा किया हुआ भावानुवाद।

२. 'Lead, Kindly Light'—आश्रम-भजनावलि (१९५६), भजन १८०।

हों वे अुनमें अुडेल। अुनमें हों वे गुण तू ले। अगर तू यह मानती हो कि अेक दोके सिवा और किसीके पास तेरे लिअे लेने जैसा कुछ है ही नहीं, तो तू मोहकूपमें पड़ी हुअी है। मुझे लगता है कि जगतमें अैसा कोअी भी नहीं है, जिससे हम कुछ भी न ले सकें।

रामकृष्ण[1]के बारेमें तूने जो लिखा है, अुसके सत्य होनेकी पूरी संभावना है। मैं अपनेको किसी भी तरह सिद्ध नहीं मानता। अिसलिअे भूलें भी मुझसे हुआ ही करती होंगी। लेकिन मेरी भूलें निर्दोष होनेके कारण आज तक हानिकर सिद्ध नहीं हुअी है। अिसलिअे मैं निश्चिन्त होकर रास्ता तय कर रहा हूं और साथियोंको भी साथमें शामिल कर रहा हूं।

पैसिव व्यायाम दुर्बल आदमीसे अुसका सहायक करवाता है: जैसे मालिश या अर्ध-शीर्षासन, अर्ध-सर्वासन, सिर्फ पैर या हाथ धीरे धीरे अूंचे करना। अिसमें बीमार पड़ा रहता है और मानसिक सहयोग देता है। तू समझी?

प्रार्थना पर बहुत बार हमले हुअे हैं। लेकिन वह १६ वर्षसे टिकी हुअी है। अिसमें कितना समय जाता है? कितना बचाया जा सकता है? जो प्रार्थनाकी आवश्यकताको मानता है, वह अुससे द्वेष नहीं करेगा। दोष सभीमें देखे जा सकते हैं। लेकिन यह प्रार्थना कुल मिलाकर ठीक मालूम हुअी है। मुझे बता कि तू क्या परिवर्तन करना चाहती है?

बापूके आशीर्वाद

७४

१७-५-'३२

चि० प्रेमा,

११-५-'३२:

तेरे वजन और खुराकके बारेमें अिसलिअे पूछा कि मुझे तेरे स्वास्थ्यके बारेमें शंका हुअी। ज्यादासे ज्यादा वजन कितना था? सागमें टमाटर

१. श्री रामकृष्ण परमहंस (१८३६-१८८६)। बंगालके सुप्रसिद्ध भक्त और ज्ञानी। स्वामी विवेकानन्दके गुरु।

दारी हम पर आओी है, जिससे समयका, द्रव्यका कुछ अनुचित लगनेवाला व्यय हुआ है। और अैसा करनेके बावजूद आश्रम बहुत बार शोभित नही हो सका। लेकिन आश्रम शोभाके लिअे नही, सेवाके लिअे है। सेवा करते हुअे असकी शोभा बढ़े तो अच्छा लगे। लेकिन निन्दा हो तो भी असे सेवा तो करनी ही चाहिये। अिसका सार यह निकला कि जैसे जैसे हम कुशल होते जायगे वैसे वैसे हमारे कार्यका मापदण्ड बढ़ता जायगा और फिर भी असका भार हमें कम लगेगा। अिसका ताजा अदाहरण यह है। बायें हाथसे चक्र घुमानेके पहले दिन मेरे सिर्फ १३ तार निकले। समय ज्यादा लगा। थकान ज्यादा मालूम हुओी। धीरे धीरे कुशलता बढ़ी। अिसलिअे थोड़े समयमें दो सौसे भी ज्यादा तार निकलने लगे और थकान पहलेसे कम लगी। अब मगन-चरखा अपनाया है। कल २४ तार ही निकाले और समय बहुत लगा। आज थोड़े समयमें ५६ तार निकाले। थकान थोडी लगी। जो बात अेक व्यक्ति और असके छोटेसे कामके बारेमें सच है, वही संस्था और असके महान कार्योंके बारेमें भी सच है। 'योगः कर्मसु कौशलम्।' कर्म अर्थात् सेवाकार्य, यज्ञ। हमारी सारी मुसीबतोंकी जड हमारी अकुशलतामें है। कुशलता आ जाय तो जो काम हमें अभी कष्टदायी लगता है वही आनन्ददायी लगने लगे। मेरा दृढ़ मत है कि सुव्यवस्थित सात्त्विक तंत्रमें कभी कामका बोझ मालूम ही नहीं होना चाहिये।

तू जिसी वस्तुको सिद्ध करनेके लिअे आश्रममें आओी है। यह तुझे कोओी सिखानेवाला नही है। सबको स्वयं ही वायुमें से यह वस्तु ग्रहण कर लेनी है। तेरे जैसी जो ग्रहण नहीं कर सके वह आश्रममें आखिर तक नही टिक सकती। जिसे कोओी महत्त्वाकांक्षा न हो वह भिग जाय, यह अलग बात है। आश्रम वास्तवमें स्वतंत्र संस्था है। असमें जो भी निश्चय करे असके लिअे जितना अूंचा चढ़ना हो अुतना अूंचा चढ़नेका अवकाश है। असे कोओी यह चीज दे नही सकता। तुझे अपने अनुकूल वातावरण खुद पैदा करना है। अपनी सहेलीको तू खींच सकती है। लेकिन सच बात तो यह है कि यह स्वार्थीपन कहा जायगा। तेरे लिअे तो यहा जो लोग हैं वे ही तेरे सखा और सखी हैं। तुझमें जो गुण

१२-५-'३२

अिसके साथ साप्ताहिक 'हिन्दू' से निकाला हुआ मॉन्टेसरी[1] का लेख भी है। वह महादेवको अच्छा लगा अिसलिअे अुसकी कतरन कटवा ली। देख लेना। कुछ ग्रहण करने जैसा हो तो करना, नहीं तो फेंक देना।

सुशीलाको आनेकी अिजाजत मिल गयी है। अिसलिअे तू आनेवाली हो तब अुसे आना हो तो ला सकती है।

तेरे किसी भी प्रश्नका अुत्तर मैंने जान-बूझकर नहीं खाया है। क्या प्रश्न था यह मुझे अब भी याद नहीं आ रहा है। फिरसे पूछेगी तो अुत्तर दूंगा।

आश्रममें दी जानेवाली शिक्षाका प्रश्न पुराना है। मैं यह मानता हूं कि छात्रावासोंके साथ अुसकी तुलना नहीं हो सकती। नारणदास पर सारा भार है। वह अपनी अिच्छाके अनुसार व्यवहार कर सकता है। निर्णय करनेमें तू मदद कर सकती है। मैं खुद अेक नियम लागू करना चाहूंगा। बच्चोंके गले तुम्हारी बातें अुतरनी चाहियें। वे जितना मजबूर होकर करेंगे वह निरर्थक ही जायगा और बलात्कारकी परंपरा कायम हो जायगी। छुट्टी न रखनेकी बात बच्चोंको पसन्द होनी चाहिये।

आश्रमकी पाठशालामें तूने जो जो किया अुसका काजी मैं नहीं बनूंगा। वहां बैठा होता तो जरूर छानबीन करता, लेकिन यहां बैठे बैठे कुछ नहीं कहूंगा। तू आत्म-निरीक्षण करनेवाली है। अिसलिअे जहां दोष होगा वहां आखिर तू अुसे सुधार ही लेगी।

मैंने तुझे ब्रह्मज्ञान सिखाना चाहा या क्या चाहा, यह तो देव ही जाने। लेकिन अुसे तू जानती है अैसा कहकर ही तूने अपना अज्ञान प्रगट किया है और फिर जो दलीलें दी हैं वे तेरा अज्ञान सिद्ध करती हैं। बुद्धिसे जो ब्रह्मको जानता है वह ब्रह्मको जानता ही नहीं। ब्रह्मज्ञान हृदयमें होता है। ब्रह्मज्ञानमें प्रवृत्तिमात्रका त्याग होता ही नहीं। बाहरसे तो ज्ञानी-अज्ञानी दोनों अेकसे होते हैं, लेकिन दोनोंकी प्रवृत्तिके हेतु अुत्तर दक्षिण जैसे होते हैं। रामनाम ब्रह्मज्ञानका विरोधी नहीं है। वे दोनों अेक हो सकते हैं। जो ब्रह्मज्ञानी रामनामसे

१. मेरिया मॉन्टेसरी (१८७१-१९५२)। यूरोपकी सुप्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री। बालशिक्षामें अिन्होंने नअी दृष्टि दी।

या भाजी बिल्कुल नहीं पैदा होते? सलादकी भाजी बोनी थी अुसका क्या हुआ? सलाद या मेथी तू खुद ही अेक छोटी क्यारीमें बो सकती है। यह थोड़े ही दिनमें अुग आती है। कोअी न कोअी हरे पत्ते तो होने ही चाहिये। कच्चे बहुत थोड़े खाये जाते हैं, जिसलिअे बोनेमें सुविधा रहती है। टमाटर बारहों महीने क्यों नहीं होते, यह मैं नहीं जानता। पूछकर मालूम करता।

धुरन्धरसे मैं तुरन्त मिला। और अब भी अुसके हाल मालूम करता रहता हूं। क्योंकि कूचमें अुसका अच्छा परिचय हुआ था। फिर तेरे खातिर भी अुसके जीवनमें रस लेता हू, क्योंकि तेरे जीवनमें लेता हूं। यह व्यक्तिगत प्रेम-विशेषका अुदाहरण नहीं है, बल्कि अहिंसाका है। अगर किसी खास व्यक्तिके लिअे ही प्रेम हो और दूसरेके प्रति द्वेष, या दूसरेके प्रति प्रेम हो ही न सके, तो वह प्रेम-विशेष है। मुझमें अैसा प्रेम-विशेष नहीं है, अैसा मैं मानता हू। तेरे लिअे मैं जो करता हू वह तेरी जरूरतको समझकर, तू मुझसे आशा रखती है अिसलिअे और मेरी अपनी गरजसे भी करता हूं। क्योंकि मैं तुझसे बहुत आशा रखता हूं। अिसमें तू व्यवहार-बुद्धि देखे तो मैं अुसका अिनकार नहीं करूंगा। मैं अिसे अहिंसक स्वभाव मानता हूं।

अुर्दू पुस्तकोंकी बात तू भूली नहीं होगी।

आश्रमसे सब अेक ही समय पर जानेको तैयार हुअे हों, तो मैं अुसे ठीक नहीं मानता। लेकिन अब आश्रमको चलते अितने वर्ष हो गये हैं कि मैं अुसकी चर्चा नहीं करूंगा। दुखड़ा भी नहीं रोअूंगा। कहीं कुछ गलत हो रहा है यह समझकर जब मौका आता है तब अुसे सुधारनेका प्रयत्न करता हू, जिसे आसानीसे रोका जा सके अुसे रोकता हूं। आश्रम बिलकुल खाली हो जाता हो और तू आनन्दसे रुक सकती हो, तो रुक जाना और काम करनेवाले वापस आ जाय तब जाना। लेकिन ठीक तो वही होगा जो तू और नारणदास सोचें। मुझे यहां बैठे बैठे क्या मालूम पड़े?

आश्रममें पली हुअी लड़कियां अितनी दुर्बल देखनेमें आती हैं यह अेक पहेली ही है। मैं अुसे सुलझा नहीं सका हूं। मेरे पास अुसके लिअे अनुमान हैं। लेकिन जब तक मैं अुसके लिअे अच्छा आधार न बता सकूं, तब तक अुसकी चर्चाको मैं निरर्थक मानता हूं। हमसे हो सके अुतनी खोज हम करें। लेकिन यह याद रखना चाहिये कि ये लड़कियां बाहर जाकर अच्छी ही हो जाती हैं, अैसा नियम नहीं है।

नारणदासका ध्यान रखनेका अर्थ है जब शक्तिसे ज्यादा बोझा वह अुठाये तब अुसे सावधान करना और मुझे भी सावधान कर देना। मेरे वचनोंमें मैंने कहीं भी व्यामिश्रता नहीं देखी। अगर हो तो वह अनजाने और भाषा पर मेरे बहुत कम अधिकारके कारण हुअी होगी। मेरे वचन छोटे होनेके कारण अुनमें अध्याहार तो होते ही हैं; लेकिन जैसे भूमितिमें होते हैं वैसे ही।

जो लड़कियां अंग्रेजी सीखना चाहती हैं, अुन्होंने अगर हिन्दी और संस्कृत पर ध्यान दिया हो और गुजराती अच्छी कर ली हो तो वे जरूर सीखें। सिखानेकी सुविधा पर तो अिसका आधार है ही। लेकिन वह सुविधा हमारे पास होनी चाहिये।

पैसिव व्यायामका मेरा अर्थ तू शायद नहीं समझी। मनुष्य स्वयं करे वह पैसिव नहीं कहलाता। यह व्यायाम बीमारके लिअे है। मैं बीमार होअूं, मेरी आंतोंको व्यायाम देना हो और कोअी अुनकी मालिश करे; अथवा मेरे पैरोंको कमरसे समकोण बनने जितना अूंचा करे, फिर सीधा करे और अैसा करता रहे और मुझे अुन्हें अूंचा-नीचा करनेकी जरूरत न रहे, तो वह पैसिव व्यायाम कहलायेगा। तू किसी तरह समझी है अैसा नहीं लगता।

मौन प्रार्थनामें दोनों हेतु थे। मनको आराम देनेका तो था ही। लेकिन अुसके बिना मनको अन्तर्मुख करना भी कठिन था। हर कामको समय पर बदलनेके लिअे अवकाश है, अैसा हमें लगना चाहिये। हममें अधीरता, अशान्ति नहीं होनी चाहिये। अिसीमें से तटस्थता आती है।

मेरे अन्दर अेकाग्रता होनी ही चाहिये। लेकिन मुझे संतोष दे सके अुतनी नहीं है। अुसके लिअे मैं प्रयत्नशील हूं, लेकिन अधीर नहीं हूं।

दूर भागता है, वह अज्ञान-कूपमें पड़ा हुआ है और धोखा खा रहा है। जो मनुष्य होठसे रामनाम बोलता है, वह होठोंको सुखाता है और समयका खून करता है। ब्रह्मज्ञान और मेरी शारीरिक अुपस्थितिका अच्छा लगना — ये दो विरोधी वस्तुअें ही हों अैसा जरूरी नहीं है। लेकिन मेरी अनुपस्थिति यदि कर्तव्य-परायणताको कम करे, तो वह ब्रह्मज्ञान नहीं परन्तु मोह है। मुझे ब्रह्मज्ञान है, यह कहनेवालेको बहुत सम्भव है ब्रह्मज्ञान न हो। यह मूक ज्ञान है — स्वयप्रकाश है। सूर्यको अपने प्रकाशका प्रमाण अपने मुहसे बोलकर नहीं देना पड़ता। प्रकाश है अैसा हम देख सकते हैं। यही बात ब्रह्मज्ञानके बारेमें है।

मैं जिस राज्यको मानता था तब मुझे अैसा लगता था कि जिस राज्यसे जिस देशको आखिरमें लाभ ही होगा। अुसके हेतु शुभ हैं। लेकिन जिस प्रश्नमें ज्यादा गहरा नहीं अुतरा जा सकता।

अमेरिकाके स्त्री-पुरुष-व्यवहारके बारेमें जो साहित्य छपता है वह मुझे पसन्द नहीं है। जिस बारेमें मैं लिखना जरूर चाहता हूं। बच्चे प्रश्न पूछें तब अुन्हें सीधा जवाब देना चाहिये। सिनेमाके बारेमें मैं नहीं जानता। नाटकके लिअे स्थान है। अीश्वर-प्राप्तिके लिअे मुझे तो अनासक्ति ही पसन्द आती है। अुसमें सब कुछ आ जाता है।

बापू

७५

१९-५-'३२

चि० प्रेमा,

यद्यपि अगले सप्ताह तेरे मिलने आनेकी सम्भावना है, फिर भी पत्रका अुत्तर दे देना ही ठीक है। अिसके सिवा, कलकी घटना बताती है कि मेरा मिलना हमेशा अनिश्चित ही माना जाना चाहिये।

वाली बहुत अच्छी निकली। अैसा लगता है कि जिसका यश आश्रम नहीं ले सकता। मालूम होता है वह अैसी बनकर ही आअी है।

७६

यरवडा मन्दिर,
२९-५-'३२

चि० प्रेमा,

जिस बार तेरा पत्र नहीं आया, फिर भी मैं लिख रहा हूं। क्योंकि यह पत्र आश्रममें पहुंचेगा तब तक तू भी पहुंच चुकी होगी। और संभवतः मेरे पत्रकी आशा रखेगी।

तुम सब आ गयी यह ठीक हुआ। बातें तो करनेके लिअे हो ही क्या सकती थी? और थोड़े समयमें हो भी क्या सकती थी? सुशीलाको मैंने जान-बूझकर खास समय नहीं दिया। क्योंकि हो सके अितना समय तुझे, अम्तुलको और शारदाको देना था। सुशीलाको कोयी खास बात तो शायद पूछनी ही नहीं थी?

लड़के और लड़कियां मुझे जो पत्र लिखते हैं, अुनमें अूटपटांग सवाल पूछते हैं; और मुझे डर है कि वे भी सिर्फ पूछनेके लिअे ही पूछते हैं। अुन्हें अेक बार अच्छी तरह समझाना। पत्र लिखनेकी कला भी कुछ अंश तक सीखनी जरूरी है।

तेरी यात्राके अनुभव लिखेगी, अैसी आशा रखता हूं।

धुरन्धरसे तू मिली थी? और किसीसे मिली?

वजन तो बढ़ाया ही होगा?

बापू

७७

यरवडा मन्दिर,
३-६-'३२

चि० प्रेमा,

आज तो तुझे लिखनेके लिअे ही यह छोटासा पत्र लिख रहा हूं। अुर्दू पुस्तकें भेजना मत भूलना। अब मुलाकात होनी बन्द हो जाय तो बुकपोस्ट रजिस्ट्रीसे भेजना।

बापू

बच्चोंको सारी प्रार्थनामें रस न आता हो, तो अुनके लिअे कोअी अलग प्रार्थना रखी जा सकती है, जैसा प्रभुदासने किया था। बच्चे श्रद्धा और शान्तिसे बैठ सकें तो अुसे मैं अच्छा मानूंगा।

१६ वर्षोंसे यही प्रार्थना होती रही है, यह स्तुति नहीं है। यह वस्तुस्थिति है। अितने वर्षोंमें सब लोग प्रार्थनामें आये हैं यह कहनेका हेतु नहीं है। बहुतसी असुविधाओं और आलोचनाओंके बीच आश्रम अिसी प्रार्थनासे चिपका रहा है और अुसमें से बहुतोंने शांतिका अनुभव किया है। बहुत सबल कारणोंके बिना अुसका त्याग या अुसमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता, अितना ही कहनेका हेतु था। बहनोंकी प्रार्थना शामको ठीक नहीं रहेगी। शामका समय वाचन वगैरामें भी दिया जाता है।

तूने अपने विषयमें जो लिखा वह ठीक है। तेरी बुद्धि और तेरे हृदयको सच्चा लगे वैसा ही तुझे करना है। मुझे अधीरता नहीं है। मैं तो जो मुझे अुचित लगता है वह कह देता हूं। अुस चीजको मैं जबरदस्ती तेरे गले नहीं अुतार सकता। मैं मित्रकी ही गरज पूरी कर सकता हूं। बड़ेसे बड़ा दावा मेरे लम्बे अनुभवोंका हो सकता है। लेकिन अुनमें से अेकका भी प्रतिबिम्ब तेरे हृदय पर न पड़े, तो मेरे हजारों अनुभव तेरे लिअे निरर्थक हैं। आश्रमके बारेमें मेरा अेक दावा है। वह आनेवालेको पंख देता है; फिर वह चाहे जहां अुड़ सकता है। वह स्वेच्छासे रहे तो रह सकता है; न रहे तो भी आश्रमने अपने अेक धर्मका पालन किया। अैसा ही हुआ है, यह बहुतोंके बारेमें सिद्ध किया जा सकता है। स्त्रियोंके बारेमें अधिक किया जा सकता है। अैसी लड़कियां आश्रममें आ चुकी हैं, जिनमें जरा भी अुमंग, अुत्साह नहीं था। आज वे अपनेको स्वतंत्र मानती हैं, और हैं। अैसी लड़कियां गुलबदन, अुमिया, विद्यावती, रूखी अित्यादि हैं। व्यक्तिप्रेम मात्रका मैं अिनकार नहीं करता। वह विश्वप्रेमका, प्रभुप्रेमका विरोधी नहीं होना चाहिये। बाके प्रति मुझे आज जो प्रेम है वह प्रभुप्रेममें समाया हुआ है। मैं विषयी था तब वह प्रभुके प्रेमका विरोधी था, अिसलिअे त्याज्य था।

तेरा वजन घटा अिसकी मुझे चिन्ता नहीं है, अगर दूसरी तरह तेरा शरीर ठीक होगा। अुसीला आ सकती है।

बापू

'सुखी' के बारेमें तूने लिखा वह ठीक है। मैं सब देख-समझ सका था। लेकिन यह बात सहन करने योग्य है। मनुष्यके नाते वे बुरे नहीं हैं। लेकिन अधिकार बुरी चीज है। फिर यह अधिकार भी कहां? अिसलिअे हमें हिसाब यों लगाना चाहिये: कितना अच्छा है कि कुपरिस्थितियोंमें भी थोड़ी-बहुत मनुष्यता अुनमें कायम रही है? और किसे मालूम कि हम अैसी जगह होते तो हम कितने नीचे गिरे होते? तुझे *हुजे अैसे अनुभव तो होते ही रहेंगे। अैसे ही अनुभवोंसे सहन-शक्ति, अुदारता,* धैर्य तथा विवेककी शिक्षा मिलती है। सब कुछ अनुकूल हो तब तो सभी लोग अच्छा कहलाने जैसा बरताव कर सकते हैं।

'अब संतोष हुआ न?'— मेरे अैसा कहनेके पीछे कोअी अर्थ नहीं था। सहज अुद्‌गार निकला था। सुशीलाको कुछ न लगा होगा, लेकिन मुझे तो लगा। अुसे आने दिया तो थोड़ी-बहुत बात तो करनी ही चाहिये थी, लेकिन समय नहीं था। अिसलिअे जमनादासके बारेमें पूछ कर ही संतोष कर लिया। अुसे मेरे आशीर्वाद।

स्त्री-पुरुषके बारेमें कुछ लिखनेकी अिच्छा तो थी, लेकिन तू अिस *विषयमें खास प्रश्न भेजे तो ज्यादा अच्छा हो।* अंग्रेजीकी पढ़ाअी बन्द नहीं करनी है। नये बच्चोंको अमुक विषय सीखनेसे पहले अंग्रेजी न *सिखायें अितनी ही बात है। नारणदासके पत्रमें ज्यादा लिखा है।*

तेरा शरीर तांबे जैसा होना चाहिये। अगर मछलीका प्रतिबंध न मानती हो और अैसा लगता हो कि अुसीसे तेरा शरीर अच्छा रह सकता है, तो बाहर जाकर खा सकती है। अिमामसाहब अैसा ही करते थे। अिस विषय पर ज्यादा चर्चा करनी हो तो करना।

बापू

[पू० महात्माजीसे मिलने यरवडा गओ अुसके बाद सिंहगढ़ वगैरा कओ स्थान मैं देख आओ थी। यात्राका सारा वर्णन मैंने पत्रमें महात्माजीको लिखा था। श्री हरि नारायण आपटे मराठी भाषाके सबसे पुराने और बड़े अुपन्यासकार हो गये हैं। अुनका बगला सिंहगढ पर था।

'भुखी' यानी यरवडा जेलके अुस समयके सुपरिन्टेन्डेन्ट मेजर भंडारी। अुनके बरतावके बारेमें दो शब्द मैंने लिखे थे।

हमारी गौड़ सारस्वत ब्राह्मण जातिमें अमुक मर्यादामें मत्स्याहारके लिअे स्थान है। मैं सत्याग्रह आश्रममें गओ अुससे डेढ़ वर्ष पहले ही मैंने मत्स्याहार छोड़ दिया था। लेकिन मेरा वजन आश्रममें घटने लगा, अिसका कारण अहमदाबादके हमारी जातिके अेक डॉक्टरने यह बताया था कि, "पीढ़ियोंका आहार तुमने छोड दिया अिससे वजन घट रहा है।" यह मुझे सही नहीं लगा। महात्माजीने अिस आहारकी सिफारिश की, फिर भी मैंने आहार आश्रमका ही रखा। वजन घटनेका सही कारण कामका बोझा और नींदकी कमी थी। जेल जानेके बाद वजन बढ़ा।]

यo मंo
१२-६-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मुझे जरा भी लंबा नहीं लगा। क्योंकि मेरी अिच्छाके मुताबिक तूने वर्णन किया है। सिंहगढ़ पर मैं तीन बार गया हूं। अेक बार तो लोकमान्य[1] थे तब। अिसलिअे हम मिले भी खूब प्रेमसे थे। अुनका घर मैंने देखा था। कुछ चीजें तूने जरूर नंअी लिखी है। हरि नारायण आपटेसे मैं मिला था। अुनके अुपन्यास पढ़नेकी अिच्छा तो बहुत है, लेकिन अब अिस अुमरमें नयी चीज हाथमें लेनेकी हिम्मत नहीं होती। अुर्दू, अर्थशास्त्र, आकाश-दर्शन, चरखा और पत्रव्यवहार अितनी चीजें मुश्किलसे निबटा पाता हूं। बीचमें कुछ न कुछ फुटकर तो पढ़नेका होता ही है।

---

१. स्व० लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक।

प्रवचनोंमें अिन श्लोकोंका अर्थ अपने ढगसे करके बताया। मुझे अुससे सन्तोष नही हुआ। अुनके जेल जानेके बाद पत्रव्यवहारमें भी यह चर्चा चालू रही। लेकिन मुझे स्वीकार करना चाहिये कि पूज्य महात्माजीका अध्यात्म-विषयक अधिष्ठान — आधार — क्या था, अुसका ठीक ज्ञान मुझे वर्षों तक नहीं हुआ। अितना मैंने समझ लिया कि अुन पर भारतकी पूर्व-परम्पराके सस्कार गहरे होने पर भी वे किसी अेक पथ या विचारके शुद्ध अनुयायी नही थे। अुन्होंने अपना मार्ग खुद ही ढूढ़ लिया था। अुस मार्गकी स्थूल रूपरेखा आज मुझे थोडी-बहुत समझमें आती है।

वेदान्तियोंने ब्रह्मका सत् चित्-आनन्दके रूपमें वर्णन किया है। पूज्य महात्माजीने केवल सत्को सत्य स्वरूपमें स्वीकार किया। चित् अर्थात् ज्ञान! वह तो "ददामि बुद्धियोगम्" अिस आश्वासनके अनुसार अीश्वरकी कृपासे मिलेगा अैसा वे मानते थे। और 'आनन्द' के लिअे अुन्होंने अनासक्तिकी योजना की। जिससे मन क्लेशरहित हुआ। यह था अुनका ज्ञानमार्ग।

भक्तिमार्गमें अुन्होंने 'अहिंसा' पर जोर दिया। सत्य ही अीश्वर है और अुसकी प्राप्ति 'अहिंसा' के जरियेसे ही होती है। यह था अुनका सूत्र।

अुनका पूरा रस कर्मयोगमें था और हाथमें लिये हुअे विविध कार्य-क्रमोंमें अेकाग्र होना ही अुनका ध्यानयोग था। 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।' मोक्ष पानेकी कुंजी अुनकी दृष्टिमें यही थी।

मैं नही मानती कि पूज्य महात्माजीने साम्प्रदायिक अर्थमें सगुण-अुपासना अपने जीवनमें कभी की होगी। अिसलिअे सगुण-अुपासनाकी शास्त्रीय मीमांसा वे नही कर सकते थे। चर्चामें अपनी मर्यादाको स्वीकार करके अनुभवी भक्तोंका प्रमाण देते थे। सासवड आनेके बाद महाराष्ट्रके सन्तोंका साहित्य प्राप्त करके अुसका पठन, चिन्तन और मनन करनेके बाद मुझे सगुण-अुपासनाका मर्म समझमें आने लगा। प्रत्यक्ष साधना करने लगनेके बाद तो मेरा सदेह भी दूर हो गया है। वेदान्तकी परि-भाषा 'सगुण' और 'निर्गुण' है, 'साकार' और 'निराकार' नही। यह वस्तु ध्यानमें रखने जैसी है।

[पत्रमें मैंने लिखा था कि श्री शंकराचार्य और रामानुजाचार्य दोनों स्वतन्त्र भारतमें पैदा हुअे थे, अिसलिअे वे अध्यात्ममें भी अूंचे चढ़ सके होंगे। बादके संत अिस्लामने भारतको जीता और गुलाम बना लिया अुसके बाद पैदा हुअे, अिसलिअे वे सगुण मूर्तिके पुजारी हुअे। पहलेके आचार्योंकी तरह ब्रह्मवादी नहीं हुअे।

मैं पूज्य महात्माजीसे सत्याग्रहकी दीक्षा लेने सत्याग्रह आश्रममें गअी, तब अुनसे आध्यात्मिक क्षेत्रमें भी मार्गदर्शन लेनेका मेरा अिरादा था। वंश-परम्परासे मुझे सगुण-अुपासनाके संस्कार मिले थे। मेरे ननसालमें और पिताजीके यहां सगुण-अुपासना ही होती थी, यद्यपि पिताजी वेदान्तके अभ्यासी थे। वे रोज अुपनिषद् पढ़ते थे। और कभी कभी मेरे साथ चर्चा भी करते थे। मेरा झुकाव भक्तिमार्गकी तरफ था, यद्यपि योग (ध्यानयोग) में भी मुझे रस था। मैं कॉलेजमें गअी तबसे अन्त तक संस्कृतका अध्ययन चालू रखा था। जिससे वेदान्तका अध्ययन खूब हुआ। बादरायण सूत्रोंका और अुन पर दक्षिणके तीन महान आचार्योंके भाष्योंका अध्ययन करना पड़ा था। श्री पाठक शास्त्री जैसे प्रबुद्ध अध्यापक हमें पढ़ाते थे। मुझ पर निर्गुणका रंग चढ़ने लगा। फिर अद्वैत सिद्धान्तके मंडन पर स्वामी विवेकानन्दके व्याख्यान पढ़नेके बाद मैं अुनके प्रभावमें आ गअी। अुसके बाद मैं आश्रममें पहुंची। यहां तो निराकारकी प्रार्थना होती थी। हिन्दुओंके साथ गैर-हिन्दू भी प्रार्थनामें शामिल होते थे। सर्वधर्म-समभावका वातावरण था। अिसका यह नतीजा हुआ कि अुपासनाकी मेरी सारी मानसिक रचना ही डावाडोल हो गअी!

प्रार्थनाके बारेमें पूज्य महात्माजीसे मैं स्वतः प्रश्न भी पूछती थी। "प्रार्थनाके समय आंख बंद करके बैठें तब मनमें भगवानका ध्यान धरें या नहीं?" पूज्य महात्माजी कहते थे, "नहीं, मूर्तिका ध्यान नहीं करना चाहिये। हम जो श्लोक या भजन गाते हैं अुसके अर्थ पर अेकाग्र होना चाहिये।" मैंने पूछा, "तब सुबहकी प्रार्थनामें सगुण देवी-देवताओंके वर्णनवाले श्लोक क्यों रखे हैं?" तब पूज्य महात्माजीने अेक बार सुबहके

आधार पर बनी हुअी राय बहुत बार गलत साबित होती है, अैसा हम देखते हैं। प्रसिद्ध अुदाहरण आत्मा और देहका है। अभी आत्माका देहके साथ निकट सबध है, अिसलिअे देहसे भिन्न आत्मा झटसे नहीं दीखती। अिस परिस्थितिको भेदकर जिसने पहला वचन 'यह नही' कहा, अुसकी शक्तिको अभी तक कोअी पहुचा ही नही है। अैसे अनेक अुदाहरण तुझे सहज ही मिल जायेंगे। तुकाराम वगैरा सन्तोके वचनोका *शब्दार्थ करना अुचित है ही नहीं।* अुनका अेक वचन अभी अभी मेरे पढनेमें आया है। वह तेरे लिअे यहा दे रहा हू.

> केला मातीचा पशुपति। परि मातीसि काय म्हणती।।
> शिवपूजा शिवासी पावे। माती मातीमाजी समावे।
> केला पाषाणाचा विष्णु। परी पाषाण नव्हे विष्णु।।
> विष्णुपूजा विष्णुसि अर्पे। पाषाण राहे पाषाणरूपें।।

अिसमें से मैं यह सार निकालता हू कि अैसे साधु-सन्तोकी भाषाके पीछे जो कल्पना रही है अुसे समझना चाहिये। वे साकार भगवानका चित्र *खीचते हुअे भी निराकारको भजते हैं। हम प्राकृत मनुष्य अैसा नहीं कर* सकते, अिसलिअे अुनका रहस्य समझकर न चलें तो हम मर जायगे।

जो अुर्दू पढ सकता है वह अिमामसाहबके यहा जाय तो पुस्तक तुरन्त मिल जायगी। वहा मीराबहनका अुर्दू-अंग्रेजी शब्दकोश है, और अंग्रेजी-अुर्दूका भी साथमें भेजना। अिमामसाहबका घर कभी कभी साफ होता है? सभी खाली घरोकी हफ्ते पन्द्रह दिनमें सफाअी होनी चाहिये।

आदत न पड़े तभी तक समयका हिसाब रखना मुश्किल होता है। *आदत पडनेके बाद तो अुसमें जरा भी समय नही जाना चाहिये। यह सब* समझकर किया जाय तभी शोभित होता है और फलता है।

दक्षिण अफ्रीकाके बच्चोका अुदाहरण मैं यहाके बच्चोकी निन्दा करनेके लिअे नही, बल्कि अुन्हे प्रोत्साहन देनेके लिअे देता हू। यहाके बच्चे भी जरूर काम कर सकते हैं, अगर अुनसे काम लेनेवाला कोअी हो। तू है न?

कमरके दर्दके लिअे तुझे गरम पानीमें बैठना चाहिये। अुसमें पन्द्रहसे बीस मिनट बैठना। अुस बीच कमरको हाथसे मलना चाहिये। जिससे

अिस बारेमें मुझे जरा भी शंका नहीं है कि पूज्य महात्माजीने अपने अुपासना-मार्गमें सफलता प्राप्त की थी। अखंड कर्मयोगमें ध्यान-योग साधना बहुत कठिन है। लेकिन पूज्य महात्माजीने अुसमें सिद्धि प्राप्त की थी, यह तो अुनके अन्तकालके समय सिद्ध ही हो गया। सामने हत्यारा देहकी हत्या कर रहा है, गोलियां लगती हैं, वेदना होती है, फिर भी अीश्वरसे संबंध बना हुआ है, मुंहसे रामनाम निकल रहा है, मन शान्त है। यह घटना अलौकिक कही जायगी! पूज्य महात्माजीने अीश्वर-दर्शनके लिअे कभी भी अेकान्तिक साधना नहीं की थी। भगवान बुद्ध, शंकराचार्य, समर्थ रामदास स्वामी वगैरा अवतारी पुरुषोंने पहले साधना की, फिर वे सेवाकार्यमें लगे। पूज्य महात्माजीने अिससे अुलटा किया! अुन्होंने सेवाको ही साधना बनाया। 'अन्ते मतिः सा गतिः' यह सिद्धान्त यदि सत्य हो, तो पूज्य महात्माजीको अन्त समयमें अीश्वर-दर्शन अवश्य हुअे होंगे! मुझे तो विश्वास है।]

बा० मं०
१७-६-'३२

चि० प्रेमा,

मैं तुझे मूर्ख ही कहूंगा। प्रश्न पूछनेमें बच्चोंको रस न हो फिर भी वे लिखें, यह समयका दुर्व्यय है। लिखनेके लिअे भी रसके साथ लिखें तो अुसमें कोअी अर्थ है। बच्चे माता-पिताके पत्रकी आशा न रखें, फिर भी यदि पत्र आ ही जाय, तो वे खुश जरूर होते हैं। अिसमें स्वार्थकी जरा भी गंध नहीं होती। अिससे हिस्टीरिया तो हरगिज सिद्ध नहीं होता। हिस्टीरियाके बारेमें मैंने अेक पत्रमें लिखा है।

प्रार्थनामें साकार मूर्तिका मैंने निषेध नहीं किया। निराकारको अूंचा स्थान दिया है। शायद अैसा भेद करना ठीक न हो। किसीको कुछ और किसीको कुछ अनुकूल आता है। अिसमें तुलनाके लिअे स्थान नहीं होता। मेरी दृष्टिसे निराकार अधिक अच्छा है। शंकर और रामानुजका पृथक्करण मुझे ठीक नहीं लगा। परिस्थितिकी अपेक्षा अनुभवका असर ज्यादा होता है। सत्यके पुजारी पर परिस्थितिका असर नहीं होना चाहिये। अुसे तो परिस्थितिको भेद कर बाहर निकल जाना चाहिये। परिस्थितिके

य० मन्दिर,
२३-६-'३२

चि० प्रेमा,

अुर्दू पुस्तकोंमें नदवीके नामके दो भाग हैं? शिवलीके बदले नदवीने अुनके बाद कुछ लिखा है। शायद किताब पर मौलाना सुलेमान नदवी लिखा हो।

मछलीके बारेमें मैंने तेरे लिअे कोअी अपवाद नहीं किया। कॉड लिवर ऑअिल निषिद्ध है, फिर भी मैंने अुसे आश्रममें चलने दिया है। मांस-मच्छीकी मास-मच्छीके रूपमें आश्रमके लिअे मर्यादा रखी गअी है, लेकिन व्यक्तिके लिअे नहीं रखी जा सकती। मैंने कभी भी नहीं रखी। अिसीलिअे अिमामसाहब बाहर खा सकते थे। मान ले कि तेरी जगह पर नारणदास ही हो। अुसने जीवनभर मांसादि नहीं खाया। लेकिन अुसे भयंकर बीमारी हो जाय और अुसे मांस खाकर जीनेकी अिच्छा हो, तो मैं अुसे मांस खानेसे कभी नहीं रोकूंगा। मेरे विचार वह आज जानता है। धर्म भी यह जानता है। फिर भी मृत्युकी घड़ी अलग चीज है। अुस समय अुसकी अिच्छा हो जाय तो अुसमें बाधा न डालना मेरा धर्म है। अिसके विपरीत कोअी बच्चा हो और अुसके लिअे मुझे निश्चय करना हो, तो मैं अुसे मरने दूंगा, लेकिन मांस नहीं खिलाअूंगा। बा पर अैसी बीती थी यह तू जानती है? बहुत करके यह किस्सा 'आत्मकथा' में है। तू न जानती हो या वहां कोअी न जानता हो तो पूछना। मैं लिख भेजूंगा। वह हम दोनोंके लिअे — बाके और मेरे लिअे — पुण्य-प्रसंग था। अब तू समझी? तुझसे मछली खानेका आग्रह मुझे नहीं करना है। अुसके बिना मृत्यु होती हो और तू मरनेको तैयार हो, तो मैं तुझे मरने देनेके लिअे तैयार हूं। मछली खाकर शायद जिन्दा रहा जा सकता है, परन्तु मरनेके लिअे ही न? लेकिन यह तो जो माने और पाले अुसका धर्म है। अैसा धर्म दूधके बारेमें मैं अपने ही अूपर कहां लागू करता हूं? — यद्यपि मुझे प्राणिमात्रका दूध त्याग करनेका धर्म स्पष्ट

असका दर्द भी बन्द हो जायगा और मानसिक धर्म पर भी असर होगा। डॉक्टर क्या कहता है लिखना। अैसे दर्दके शुरू होते ही दवा देना चाहिये।

तेरा कार्यक्रम मैंने अच्छी तरह देखा। यह शक्तिसे अधिक है। असमें काटछांट आसानीसे हो सकती है। १२-३० से ५-४० तक अुद्योग-वर्ग चलता है; यानी पांच घंटे दस मिनट हुअे। जिसमें से अेक घंटा काट देनेसे जरूरी फुरसत निकाली जा सकती है। जिस समयमें अेकान्त प्राप्त करके सोना हो तो सोना चाहिये, लेटे रहना चाहिये या जिससे आराम मिले वैसा कुछ करना चाहिये। लेकिन यह समय वार्तामें या दूसरे काममें नहीं बिताना चाहिये। अिस घंटेका अुनी समय अुपयोग न करना हो, तो आगे खिसकाने जा सके अैसे दूसरे कामोंको खिसका कर रातका समय अिसके लिअे रख लेना चाहिये। जो अपने काममें तन्मय हो जाता है, अुसे कामका बोझ या थकावट नहीं लगती। जिसे काममें रस न हो अुसे कम काम भी ज्यादा मालूम होता है। जैसे कैदीको अेक दिन अेक वर्ष जैसा लगता है। योगीको अेक वर्ष अेक दिन जैसा लगता है।

यूरोपका संगीत पहले सुनता था तो मैं खूब अुठता था। अब असमें कुछ समझमें आता है और रस भी आता है।

'यहां पढ़नेका लोभ रखा ही नहीं जा सकता' तेरा यह लिखना ठीक नहीं है। बहुत पढ़नेको न मिले यह बिलकुल सही है; पढ़ना गौण वस्तु है, यह भी बिलकुल सच है। अैसा होने पर भी आश्रममें रहनेवाले बहुतेरे लोगोंने पढ़ा है। तेरे निराशाके वचन मुझे अच्छे नहीं लगते। जिसमें अपूर्णता लगे अुसे पूर्ण करनेका प्रयत्न कर। लेकिन अन्तमें यदि अपूर्णता ही लगे, यानी आखिरमें जोड़-बाकी करने पर दोष बढ़ते मालूम हों, तो अुसका त्याग कर देना चाहिये। अुसीमें अपने और समाजके प्रति न्याय है।

तुझे लम्बे पत्र लिखनेके लिअे माफी मांगनेकी जरूरत नहीं है। मैं अुनसे अूबता नहीं, मुझे वे अच्छे लगते हैं। अुनसे मैं सीखता हूं, क्योंकि वे तेरे अुन समयके हृदयका दर्पण होते हैं।

बापू

कर ही न सके अैसा निर्बल ब्रह्मचर्य यदि हो, तो हमें अुससे कोअी सरोकार नहीं है। यह ज्ञान पाने पर ब्रह्मचर्य अधिक सबल होना चाहिये। मेरे अपने विषयमें तो अैसा ही हुआ है।

ज्ञान देने और प्राप्त करनेके अनेक भेद हैं। अेक मनुष्य अपने विकारोंके पोषणके लिअे यह ज्ञान प्राप्त करता है, दूसरेको यह अनायास मिलता है; तीसरा विकारोंको शांत करनेके लिअे और दूसरोंकी मदद करनेके लिअे वह ज्ञान प्राप्त करता है।

यह ज्ञान देनेकी योग्यता जिसमें हो वही दे। तेरे भीतर यह कुशलता होनी चाहिये। तुझे आत्म-विश्वास होना चाहिये कि तेरे ज्ञान देनेसे बालिकाओंमें विकार कभी पैदा न होंगे। तुझे अिसका भान होना चाहिये कि विकारोंके शमनके लिअे तू यह ज्ञान देती है। अगर तेरे बारेमें विकारोंकी संभावना हो, तो तुझे यह देखना चाहिये कि वह ज्ञान देते समय तुझमें तो विकार पैदा नहीं होते।

पति-पत्नीके रूपमें स्त्री-पुरुषके सांसारिक जीवनके मूलमें भोग है। हिन्दू धर्मने अुसमें से त्याग पैदा करनेका प्रयत्न किया है, या यों कहे कि सभी धर्मोंने किया है।

पति यदि ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर है तो पत्नी भी वही है। पत्नी दासी नहीं, समान अधिकार रखनेवाली मित्र है, सहचारिणी है। दोनों अेक-दूसरेके गुरु हैं।

लड़कीका हिस्सा लड़केके बराबर ही होना चाहिये।

जो दौलत दोनोंमें से कोअी कमाये, अुसमें पति-पत्नी दोनोंका बराबरीका हिस्सा है। पति पत्नीकी मददसे ही कमाता है, फिर चाहे पत्नी खाना ही पकाती हो। वह दासी नहीं, सहभागिनी है।

जिस पत्नीके प्रति पति अन्यायका व्यवहार करता हो, अुसे अुससे अलग रहनेका अधिकार है।

बच्चों पर दोनोंका समान अधिकार है। बड़े हो जाने पर किसीका नहीं। पत्नी नालायक हो तो अुसका अधिकार खतम हो जाता है, अैसा ही पतिके बारेमें है।

सार यह है कि स्त्री-पुरुषके बीच जो भेद कुदरतने रख दिये हैं और जो निरी आंखोंसे देखे जा सकते हैं, अुनके सिवा कोअी भेद मुझे

दीखता है। लेकिन अैसे धर्म दूसरोंसे पालन करानेके नहीं होते। स्वयं ही पालन करनेके होते हैं — अिति।

तेरा आजका भोजन मात्रा-सहित फिर लिखना। परिवर्तन करनेकी सूचना देनी होगी तो दूंगा।

स्त्री-पुरुषके बारेमें मुझे ठीक पूछा है।

जिस जिस विषयमें बच्चोंको कुतूहल अुत्पन्न हो, अुसके बारेमें हमें मालूम हो तो अुन्हें बताना चाहिये; न मालूम हो तो अपना अज्ञान स्वीकार करना चाहिये। बताने जैसा न हो तो पूछनेवालेको रोकें और दूसरोंको भी पूछनेके लिअे मना करें। कभी भी अुनकी बातको अुड़ा न दें। हम सोचते हैं अुससे भी ज्यादा अैसी बातें बच्चे जानते हैं। जिस वस्तुके बारेमें वे न जानते हों अुस वस्तुका ज्ञान हम अुन्हें न करायें, तो वे गलत तरीकेसे अुसका ज्ञान प्राप्त करना सीखते हैं। अैसा होने पर भी जो बात बताने जैसी न हो, वह अूपरका खतरा अुठाकर भी हम अुन्हें न बतायें। न बताने जैसा बहुत कम होता है। बीभत्स क्रियाका ज्ञान वे हमसे चाहें तो वह हम कभी न दें, फिर भले ही हमारे प्रतिबन्धके बावजूद आड़े-टेढ़े ढगसे वे वह ज्ञान प्राप्त करें।

पक्षियोंमें होनेवाली क्रियाको बच्चे देखें और अुसे जाननेकी अिच्छा बतायें, तो मैं जरूर अुस अिच्छाको तृप्त करूंगा और अुसमें से अुन्हें ब्रह्मचर्यका पाठ सिखाअूंगा। पक्षी, पशु और मनुष्यके बीचका भेद मैं अुन्हें सिखाअूंगा। जो स्त्री-पुरुष अैसा ही आचरण करते हैं, वे मनुष्य-देह पाकर भी पशु-पक्षी जैसे हैं। यह निन्दाकी बात नहीं है, वस्तुस्थितिकी है। पशुतामें से निकलनेके लिअे हमें मनुष्यकी देह और बुद्धि मिली है।

मासिक धर्मका संपूर्ण ज्ञान अुस अुमर तक पहुंची हुअी बालिकाको कराना चाहिये। अुससे छोटी लड़की अुसे जाने और पूछे, तो अुसे भी जितना वह समझ सके अुतना हम समझा सकते हैं।

हम चाहे जैसा प्रयत्न करें तो भी बालक या बालिकायें कभी अन्त तक निर्दोष रह ही नहीं सकते। यह समझकर अुन सबको अमुक समय पर यह ज्ञान देना ही अच्छा है। यह ज्ञान पानेवाला ब्रह्मचर्यका पालन

तारीख निश्चित हो जाय तो भी गनीमत है। और किसी महीनेकी या दूसरी किसी तारीखकी तो राह नहीं देखनी पड़ेगी? चौथी जुलाअी बीत जाय तो १९३३ की जुलाअी तक शान्त रहना।

बापू

विद्या पर ध्यान देनेकी जरूरत महसूस होती है। वह मूर्ख मालूम होती है। प्रश्न पूछना भी अुसे नहीं आता। तू देखना।

८१

[हिन्दू तिथिके अनुसार मैं अपनी वर्षगांठ मनाती आअी थी। अिस वर्ष वह १३ जुलाअीके दिन पड़ती थी। मैंने पूज्य महात्माजीको लिखा था कि, "मुझे आश्रममें आये तीन वर्ष हो गये, अिसलिअे मेरी अुमर अितनी ही माननी चाहिये। क्योंकि यहां आकर मेरा पुनर्जन्म हुआ। फिर आपको मेरे आश्रममें टिकनेके बारेमें शंका थी (जब मैं पहली बार आपसे मिलने और यहां प्रवेश पानेकी अिजाजत लेनेके लिअे आअी थी), वह भी याद आता है।"

मैंने सुना था कि अेक बार किसीने पूज्य महात्माजीसे पूछा कि, "आपके हृदयमें अैसी कौनसी अुत्कट अिच्छा है जिसकी पूर्तिके लिअे आप अीश्वरसे प्रतिदिन भक्तिभावसे प्रार्थना करते हैं?" तब पूज्य महात्माजीने अुत्तर दिया था कि, "कलकत्तेमें कालीघाट पर रोज सैंकड़ों बकरोंकी धर्मके नाम पर बलि चढ़ाअी जाती है। अुसे बन्द करानेके लिअे भगवानसे मैं सतत प्रार्थना करता हूं।" पत्रमें मैंने यह किस्सा लिखकर पूछा था कि यह सच है या नहीं।]

३०-६-'३२

चि० प्रेमा,

मैं मानता हूं कि तू तीन वर्षकी हुअी। तू जो कहती है वह सच है। जब तुझे बम्बअीसे साथ लिया तब तेरे आश्रममें टिक सकनेके बारेमें मुझे शंका थी। लेकिन तू सोचती है अुतनी नहीं। क्योंकि अपने

मान्य नहीं है। अब अिस विषय पर तेरा अेक भी प्रश्न बाकी रह गया हो अैसा मुझे नहीं लगता।

नारणदासके बारेमें मुझे पूरा विश्वास है। वह कहे कि 'मुझे शांति है', तो मैं अशान्ति माननेको तैयार नहीं हूं। मैंने अुसे खूब सावधान कर दिया है। दूर बैठकर अब मैं तंग नहीं करूंगा। नारणदासमें अनासक्त होकर काम करनेकी बहुत बड़ी शक्ति है। अनासक्त मनुष्य हमेशा आसक्तकी अपेक्षा बहुत ज्यादा काम करते हैं और खाली बैठे-से दिखते हैं। वे सबसे बादमें थकते हैं। सच पूछें तो अुन्हें थकान लगनी ही नहीं चाहिये। लेकिन यह तो आदर्श हुआ। तू वहां हाजिर है अिसलिअे तू अगर अशान्ति देख ले, नारणदास अपनेको धोखा देता है यह ताड़ ले, तो तेरा धर्म मुझसे अलग हो जायगा। तू तो नारणदासको सावधान कर ही सकती है। मैं भी वहां होअू और वह प्रत्यक्ष जो कहे अुससे अलग ही देखूं तो अुसे सावधान करूं। तेरी चेतावनीके बावजूद भी वह तेरा विरोध करे, तो जहां तक तू अुसे सत्यवादी समझती है वहां तक तुझे अुसका कहना मानना चाहिये। बहुत बार हमारी आंखें भी हमें धोखा देती हैं। मैं तेरे चेहरे पर खिन्नता देखूं, लेकिन तू अिनकार करे, तो मुझे तेरी बात माननी ही चाहिये। मुझसे तू छिपाती है अैसा भय या शक मुझे हो तो दूसरी बात है। तब मुझे तुझसे पूछनेकी जरूरत नहीं रहती। सच्ची स्थिति जाननेके दूसरे साधन मुझे पैदा करने होंगे। लेकिन आश्रम-जीवन तो अिस तरह चल ही नहीं सकता। सत्य तो अुसके मूलमें ही निहित है। वहां शुभ हेतुसे भी धोखा नहीं दिया जा सकता।

शास्त्रीके बारेमें या तो नारणदासके पत्रमें या बच्चोंके पत्रमें तुझे पढ़नेको मिलेगा।

नारणदास तेल क्यों नहीं मलवाता, यह मालूम कर लेना।

चौथी जुलाअी[1] की राह जरूर देखना। कौनसे सालकी चौथी जुलाअी, अिसका विचार करना होगा। साल चाहे जो हो। महीनेकी

---

१. अुस समय अैसी भविष्यवाणी प्रकाशित हुअी थी कि चौथी जुलाअीके दिन पूज्य महात्माजी जेलसे छूटनेवाले हैं।

और अुर्दू-अंग्रेजी शब्दकोश जल्दी भेजना। अगर ये पुस्तकें डाह्याभाअीके पास बम्बअी भेजी जा सकें, तो वे शनिवारको यहां ले आयेंगे।

सारे मकान नियमित रूपसे किसी नियत दिन साफ होने ही चाहियें। सामानको खोलकर झाड़-झटक कर यथास्थान रख देना चाहिये। अिसके लिअे समय निकालना अनिवार्य है।

जिसके अंगमें — फिर वह व्यक्ति हो, समाज हो या संस्था हो — अपूर्णता लगे, अुसमें पूर्णता लानेका प्रयत्न करना हमारा धर्म है। अगर अुसमें गुणोंकी अपेक्षा दोष बढ़ गये हों, तो अुसका त्याग — असहयोग हमारा धर्म है। यह शाश्वत सिद्धान्त है। यही मैंने तुझे लिखा था। अिस वाक्यसे मैंने तुझे आश्रम छोड़ने या और कुछ छोड़नेकी सलाह नहीं दी। मैंने तो अमुक स्थितिमें मनुष्यमात्रका जो धर्म माना है वही बताया है।

बंगालमें रोज दिन-दहाड़े सैंकड़ों भेड़-बकरे काटकर कलकत्तेमें काली माताको चढ़ाये जाते हैं। अुसे रोकनेकी योग्यता प्रदान करनेकी याचना मैं ओीश्वरसे कर रहा हूं। क्या तू यह नहीं जानती थी?

मनुष्य अपनेको गोपीकी अुपमा देता है, यह मैं जानता हूं। वह केवल भक्तिभावसे होता हो तो अुसमें मुझे कोअी बुराअी नहीं दिखाअी देती। ओीश्वरके आगे सब अबला ही हैं।

स्वराज्यमें लोग हिमालयकी चोटीकी और अुत्तरी ध्रुवकी खोज करनेके लिअे जरूर निकलेंगे। सामान्य भौतिकशास्त्रके ज्ञानको मैं लाभदायी मानता हूं।

मेरे आहारके प्रयोगोंसे मुझे नुकसान नहीं हुआ। वे आठ वर्ष तक भी चले हैं और सात दिन भी चले हैं।

धुरन्धर नासिक गये।

'मोनोडायट' में लाभ जरूर है।

बापू

वचन पर तू डटी रही। और जो अपने वचनका पक्का होता है, अुसके बारेमें मुझे शंका नहीं रहती। मेरे वचनोंमें ताना (सरकाज़म) रहा हो अैसा मुझे याद नहीं है; लेकिन तू जितनी टिकी अुतनी टिकेगी ही, अैसा मुझे विश्वास नहीं था। तू आओ अुस समयकी अपनी स्थिति मुझे याद है। मैं तो जरूर चाहूंगा कि जैसे तूने तीन वर्ष बिता दिये वैसे ही तू सारा जीवन आश्रममें बिताये और वह निश्चित ढंगसे रह कर — अनायास ही नहीं, बल्कि निश्चय करके, तू आश्रमकी है और आश्रम तेरा है, अैसा दृढ़तापूर्वक मान कर और जान कर। लेकिन जिसका आग्रह नहीं हो सकता। मैं तो केवल अैसी अिच्छा ही कर सकता हूं। तुझे जब तक आश्रम सहज ही अपना न लगे तब तक तू निश्चय नहीं कर सकती। यह तो मैंने तुझे अपनी अिच्छा बताओ।

यह हुआी तेरे आश्रम-जन्मकी बात। अगला जन्मदिन १३ जुलाओको है और यह पत्र तुझे ८ ता० के आसपास मिलना ही चाहिये। मेरा आशीर्वाद तो है ही। तेरी अूचीसे अूची अभिलाषाओं पूरी हों! अुस दिशामें तेरे प्रयत्न चल ही रहे हैं, जिस बारेमें मुझे शंका नहीं है। जितनी आयु और जितना ही स्वास्थ्य भी साथमें होना चाहिये। वे भी रहेंगे, अैसा मैं मानता हूं। लेकिन जिन तीनोंका आधार आखिरमें तेरे या मेरे अूपर नहीं है। सब कुछ अुसे सौंप दिया है। वह चाहे वैसा करे। और वह जो करेगा सब अच्छा ही होगा।

१३ वीं तारीखका तेरा हिसाब भेजना। अुस दिन तू क्या निश्चय करती है यह लिखना। जन्मतिथिके दिन कोओ न कोओ नया निश्चय करनेकी सूचना मैं सबको करता हूं, यह तो तू जानती है न?

ज्योतिषीके कथनों पर बिलकुल विश्वास न रखना। अुनका विचार भी तू छोड़ दे। अुनके कथन सच्चे हों तो भी अुन्हें जाननेसे कोओ लाभ नहीं है। हानि स्पष्ट है।

तुम्हें वहां गरमी लगती है। पर यहां अच्छी ठंडक रहती है। बरसातकी कमी है।

अुर्दू पुस्तकोंमें पैगम्बरके जितने जीवन-चरित्र दिखाओ दें वे सब, 'अस्वओ सहाबा' के दो भाग और 'खुलफाओ राशदीन' तथा अंग्रेजी-अुर्दू

तू मरना स्वीकार करे, लेकिन मछली न खाये — यह मुझे तो अच्छा लगेगा। अिसका अर्थ क्या यह भी है कि तू कॉड-लिवर ऑअिल भी नहीं लेगी? मैं क्या चाहता हूं, अिसका विचार नहीं करना है। मैंने तो तेरी मानसिक स्थिति जाननेके लिअे यह प्रश्न पूछा है। तेरे भोजनमें दूध-दही अथवा/और घी बढ़ाना चाहिये। कच्चे शाकके बदले कभी कभी तो पके फल होने ही चाहिये। पपीते पकते ही नहीं? टमाटर नहीं होते? पत्ताभाजी किसी भी तरहकी नहीं होती? तू स्वयं ही थोड़े टमाटर क्यों न बोये? वैसे ही लेट्यूस खूब तेजीसे बढ़ते हैं। कच्चा पपीता अधिक नहीं खाया जा सकता, हमेशा भी नहीं खाया जा सकता। खर्चेका विचार किये बिना अितना परिवर्तन तू भोजनमें करना। गरम पानीमें कटिस्नान जारी रखना। जहां दर्द होता है वहां मालिश करानेकी जरूरत तो है ही। कोअी भी लड़की खुश होकर मालिश कर देगी।

विद्याकी मूढ़ता प्रेमसे जायगी। रामभाअूका मामला जरा कठिन है। लेकिन अुसका अेक ही अुपाय है। अुस पर तीन शक्तियां काम करती हैं। अिसलिअे अगर तीनों अेक ही दिशामें न चलें तो मुसीबत है। वे तीन शक्तियां हैं पंडितजी, लक्ष्मीबहन और तू या जिसकी अुस पर देखरेख हो वह। अिस कठिनाअीको भी पार कर जाना और मार्ग निकालना यह प्रेमका काम है। तेरे भीतर प्रेम जितना विशाल होगा अुतनी ही तेरी शक्ति अैसे बालकोंको सुधारनेमें मददगार साबित होगी।

आश्रमकी बड़ी लड़कियोंके बारेमें अपने भीतर तू अुदारता पैदा करना। क्योंकि वे दोषी होकर घर नहीं बैठतीं, लेकिन लाचार हो जाती हैं अिसलिअे। अुनकी लाचारीको तू या मैं नहीं नाप सकते। यह नाप तो लड़कियां ही निकाल सकती हैं। वह गलत भी हो सकता है। अुनकी दृष्टिमें गलत न हो तो अितना काफी है। बड़ी लड़कियोंमें म कुछको ले। आनन्दी[1], कुसुम[2], . . । ये सब क्या करें? आनन्दी कामचोर नहीं

---

१. स्व० श्री नारायण मोरेश्वर खरेके पुत्र।

२ श्री लक्ष्मीदासभाअी आसरकी लड़की।

३ श्री कुसुम गांधी। श्री नारणदास काकाकी मानी हुअी लड़की। श्री रतुभाअी अदाणीकी पत्नी।

८२

६-७-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तूने लिफाफेको सजानेकी कोशिश की और अुसे बिगाड़ दिया। बिना अुपयोगकी सजावटके बारेमें भी अैसा ही समझना। सरदार लिफाफे पर जो सजावट करते हैं वह सजावटके खातिर नहीं होती; लेकिन अुपयोगमें से सजावट पैदा होती है, अिसलिअे वह सुन्दर लगती है। लिखे हुअे लिफाफेका फिरसे अुपयोग करना हो, तो लिखा हुआ काट देना चाहिये। अिसके लिअे अुस स्थान पर नापकर कागजकी बिना कंगूरेवाली परचियां चिपकाओी वे अच्छी लगीं। लेकिन अिससे अुन्हें सन्तोष नहीं हुआ। अिसलिअे अब यहांसे आनेवाले लिफाफोंको वे अुलट देते हैं, जिससे छोटी परचियां न चिपकानी पड़ें और लिफाफा नया जैसा लगे। यह ध्यानसे देखेगी तो तुझे पता चलेगा। तेरी कंगूरेवाली परचियां आधी अुखड़ गभी थीं, अिसलिअे बहुत बुरी लगती थीं। अुपयोग तो अुनका कुछ था ही नहीं। अुसमें की हुअी मेहनत बेकार गअी तथा समय और अुतना कागज भी बिगड़ा। अुतना जनताका नुकसान हुआ। अिसमें से दो सबक लेना. समझे बिना किसीका अनुकरण नहीं करना चाहिये। सजावटके लिअे की गअी सजावट सच्ची सजावट नहीं है। यूरोपमें जो बड़े बड़े गिरजे हैं अुनके बारेमें कहा जाता है कि अुनकी सारी सजावटके पीछे अुपयोगकी दृष्टि तो होती ही है। यह सच हो या न हो, परन्तु मैंने जो नियम बनाया है अुसके बारेमें शंकाको स्थान नहीं है।

अिस बारके तेरे पत्रमें अध्यक्षकी आलोचनाके सिवा दूसरी बहुत कम बातें हैं। मुझे तो लगता है कि यह आलोचना निरर्थक है। अिसलिअे अुसके औचित्यका विचार करनेकी जरूरत ही नहीं रहती। Judge not lest ye be judged वाक्य हृदयमें अुतारने जैसा है। अिससे मिलता हुआ गुजराती वाक्य याद नहीं आ रहा है। मराठीमें हो तो भेजना।

अुर्दू पुस्तकोंकी सूची मुझे चाहिये। शिवजीकी पुस्तक तो मुझे भेज ही देना और खलीफाका जीवन-वृत्तान्त भी भेजना।

य० म०
१७-७-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा भाग्य ही फूटा समझूं क्या? मैंने तो वर्षगांठका आशीर्वाद लौटती डाकसे भेजा था। लेकिन मेरा पत्र अधरमें ही लटक गया। कहीं फल न खाता हुआ हो? लेकिन कागज पर लिखे हुअे आशीर्वादसे क्या बनेगा? हृदयका आशीर्वाद हो तो काफी समझना चाहिये। और वह तो था ही। हृदय किस ढंगसे काम करता है, अिसका हमें पता भी नहीं चलता। लेकिन सत्य यही है, बाकी सब मिथ्या है।

कमरके दर्दका अिलाज तुरन्त करनेकी जरूरत है। अुसका सबंध मासिक धर्मके साथ हो सकता है। तुझे ठीक समय पर होता है? आनन्दी, मणि और मंगलाके बारेमें भी मुझे यह शंका होती है। तू अुन लड़कियोंसे बात करके मालूम कर लेना। संभव है मणिको मासिक धर्म शुरू हो गया हो। मणि आश्रममें आअी तब तीन वर्षकी थी, अैसा मुझे याद है। अिस समय अुसे सोलहवां वर्ष चलता होगा। मंगला भी शायद अितने ही वर्षकी हो। सब ठीकसे जान लेना।

जो नअी बहनें आअी हैं अुनमें से कोअी लिखना जानती हो, तो अुनसे मुझे लिखनेके लिअे कहना। नर्मदा¹को अच्छी तरह पहचान लेना। अुसकी कहानी दुःखद है।

---

१ सौराष्ट्रकी अेक होशियार लड़की। वह विवाहित थी, लेकिन अुसे अुस समय विवाहित जीवन पसन्द नहीं था। सत्याग्रह करके जेल गअी। अुसका पति अुसे लेने आया तो अुसके साथ जानेसे अुसने अिनकार कर दिया। अेक सज्जन, परोपकारी कार्यकर्ताके प्रयत्नसे अुसका विवाह विच्छेद हो गया। फिर वह संस्कार-ग्रहण करनेके लिअे सत्याग्रह आश्रममें आकर रही।

मेरी स्मृतिके अनुसार नर्मदाका सबंध विच्छेद करानेमें पूज्य महात्माजी भी मध्यस्थ हुअे थे।

है; कुसुम तो हरगिज नहीं है। . . . पर दो बच्चोंका भार है। बच्चोंको तालीम कैसे दी जाय अिसे वह शायद ही जानती है; अितनेमें मां बन बैठी। अब अुससे कितने कामकी आशा रखी जाय? दूसरी तो जो तेरे ध्यानमें हो वे सही। अिनका न्याय हम सोना या मोती तोलनेके कांटेसे नहीं कर सकते। और तू अनुभव होने पर देखेगी कि जैसे जैसे तुझमें अुदारता बढ़ेगी वैसे वैसे लोगोंसे काम लेनेकी तेरी शक्ति बढ़ेगी। यह सही है या गलत यह तो दैव ही जाने, लेकिन अैसा कहा जाता है कि मैं लोगोंसे बहुत ज्यादा काम ले सकता हूं। यह सच हो तो अुसका कारण यह है कि लोगोंके बारेमें मुझे चोरीका शक ही नहीं होता। वे सब सकें अुतने कामसे मैं सन्तोष कर लेता हूं। लेकिन ज्यादा कामकी मांग करूं तो वे ज्यादा करेंगे। कुछ लोग अैसा भी कहते हैं कि लोग मुझे जितना ठगते हैं अुतना और किसीको शायद ही ठगते होंगे। यह परीक्षा सच निकले तो भी मुझे पश्चात्ताप नहीं होगा। मैं दुनियामें किसीको धोखा नहीं देता, अितना प्रमाणपत्र मुझे मिले तो वह मेरे लिअे काफी है। अैसा प्रमाणपत्र कोअी मुझे न दे तो न सही, लेकिन मैं तो अपने आपको देता ही हूं।

मुझे असत्य सबसे बुरा लगता है।

'ज्यादासे ज्यादा लोगोंका ज्यादासे ज्यादा भला'[१] और 'जिसकी लाठी अुसकी भैंस'[२] के नियमको मैं नहीं मानता। सबका भला, सर्वोदय और 'कमजोर पहले' — यह नियम मनुष्यके लिअे है। हम दो पैरवाले मनुष्य कहलाते हैं, लेकिन चौपायोंके स्वभावको अभी तक छोड़ नहीं सके हैं। अुसे छोड़ना हमारा धर्म है।

बापू

१. Greatest good of the greatest number.
२. Survival of the fittest.

नहीं है। अनिश्चिततामें निश्चितता पैदा करना और निश्चितता देखना हमारा काम है।

बापू

८४

२४-७-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अब मैं कितने पत्र लिख सकूंगा, यह कहा नहीं जा सकता। पत्रोंके अूपर तलवार झूल रही है। यहांसे पत्रोंके निकलनेमें जो देर होती है वह अगर होती रहे, तो पत्र लिखनेमें मुझे कोअी सार नहीं दिखाअी देता। आनेवाले पत्र मुझे तो अब नियमपूर्वक दिये जाने लगे हैं। जानेवाले पत्रोंके बारेमें अभी पत्रव्यवहार चल रहा है। अगर मेरे पत्र बिलकुल न आवें तो समझना कि मेरी गाड़ी अटक गअी है। लेकिन अिसमें घबराने या अुदास होनेका कोअी कारण नहीं है। लिखने देना या न लिखने देना सरकारके हाथमें है। कैदी अधिकारके रूपमें पत्र लिखनेकी मांग नहीं कर सकता। अितने दिन तक लिखते रहे अिससे/ कोअी अधिकार नहीं पैदा हो जाता। और जिस चीजके बारेमें हमें कोअी अधिकार नहीं है वह हाथसे चली जाय, तो दुःख मानना ही नहीं चाहिये।

तेरी वर्षगांठके अुपलक्ष्यमें लिखा आशीर्वादका मेरा पत्र अब तो तुझे मिल ही गया। देरसे मिला अुसकी क्या चिन्ता? शायद अिससे अुसकी कीमत बढ़ गअी। नहीं मिला अिसमें अपशकुन माननेकी तो कोअी बात ही नहीं थी। मुझे तेरा पत्र मिले और मैं आशीर्वाद न भेजूं, यह तो हो ही नहीं सकता। अनसोचा विघ्न खड़ा हो जानेके कारण न मिले या देरसे मिले, तो अिसमें अपशकुन कैसा? और सच पूछा जाय तो अनासक्तके लिअे अपशकुन जैसा कुछ होता ही नहीं। अिसलिअे यह कभी न मानना कि तेरा नया वर्ष अच्छा नहीं बीतेगा। बुरा तो तब बीते जब हम कुछ बुरा सोचें, बोलें या करें। और वह तो हमारे बसकी बात है।

प्रेसिडेन्ट विल्सनके जीवनका मुझे परिचय नहीं है। जो सुना है अुसके अनुसार तो वह भला आदमी था और अुसके हेतु भी अच्छे थे।

पिछले युद्धसे लाभ हुआ अैसा नहीं मालूम होता। नीतिका बल कमजोर पड़ा है। द्वेष बढ़ा है। लूटनेकी वृत्ति कम नहीं हुआी है। लालच बढ़ गया लगता है।

किसी मनुष्य या वस्तुको ध्यानमें रखकर प्रार्थना हो सकती है। अुसका परिणाम भी आ सकता है। लेकिन अैसे अुद्देश्यके बिना की गआी प्रार्थना आत्मा और जगतके लिअे अधिक कल्याणकारी हो सकती है। प्रार्थनाका असर खुद पर होता है। अर्थात् अुससे अंतरात्मा अधिक जाग्रत होती है। और जैसे जैसे जागृति बढ़ती है वैसे वैसे अुसके प्रभावका विस्तार बढ़ता जाता है। अूपर हृदयके बारेमें मैंने जो बात लिखी वह यहां भी लागू होती है। प्रार्थना हृदयका विषय है। मुंहसे बोलना वगैरा क्रियाअें हृदयको जाग्रत करनेके लिअे हैं। जो व्यापक शक्ति बाहर है वही भीतर भी है और अुतनी ही व्यापक है। शरीर अुसके रास्तेमें बाधक नहीं होता। बाधा हम पैदा करते हैं। प्रार्थनाके द्वारा वह बाधा दूर होती है। प्रार्थनासे अिच्छित फल प्राप्त हुआ या नहीं, अिसका हमें पता नहीं चलता। मैं नर्मदाकी मुक्तिके लिअे प्रार्थना करूं और वह दुःसमुद्रमें ही जाय, तो मुझे यह नहीं मान लेना चाहिये कि वह मेरी प्रार्थनाका फल है। यह प्रार्थना निष्फल कभी नहीं जाती, लेकिन क्या फल देती है यह हमें मालूम नहीं होता। अिसके सिवा, हमारा सोचा हुआ फल मिले तो वह अच्छा ही है अैसा भी नहीं मानना चाहिये। यहां भी 'गीताबोध' का अमल करना है। प्रार्थना अनासक्त होनी चाहिये। किसीके बारेमें प्रार्थना की हो तो भी अनासक्त रहा जा सकता है। किसीकी मुक्ति हमें अिष्ट लगे अिसलिअे अुसकी प्रार्थना करें। लेकिन वह मिलती है या नहीं, अिस बारेमें हम निश्चिन्त रहें। विरुद्ध परिणाम आने पर यह माननेका कोअी कारण नहीं कि प्रार्थना निष्फल ही गअी। अिससे अधिक स्पष्टीकरण करूं क्या?

अुर्दू पुस्तकोंकी सूची मैंने मांगी है, यह याद रखना। अब तो यह पत्र तुझे कब मिलेगा और तेरा अुत्तर मुझे कब मिलेगा, यह निश्चित

[पूज्य महात्माजीने आश्रममें यह नियम बनाया था कि हर कार्यकर्ता अपना बारीक सूत आश्रमको यज्ञार्थ दे दे और अपने कपडे बुनवानेके लिअे थोडा मोटा सूत आश्रमसे मिले तो ले ले। पूज्य बाको अपनी साडियोंके लिअे पूज्य महात्माजीके सूतकी जरूरत थी। बाको वह सूत मिलना ही चाहिये, यह दलील मैंने पूज्य महात्माजीसे की थी। क्योंकि अन्य चीजोंके साथ साथ महात्माजीका सूत भी अुस समय मैं सभालती थी।

'किसीका न्याय मत करो, नहीं तो दूसरे तुम्हारा न्याय करेंगे', अिस कहावतका मैंने अुस समय कुछ अैसा अर्थ किया था "दूसरे मेरी आलोचना करेंगे अिस डरसे मैं दूसरेकी आलोचना न करू, तो मैं डरपोक सिद्ध होअूंगी। मुझे डरपोक नहीं बनना है। चाहे सारी दुनिया मेरी आलोचना करे, लेकिन जो मुझे ठीक लगता है वह मैं क्यों न कहू? मुझे दुनियासे डरनेका क्या कारण है? मैं दुनियाकी परवाह नहीं करती।"]

३०-७-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी मूर्खताका पार ही नहीं दीखता। क्रोधमें आती है तब तुझे भान ही नहीं रहता। जिस पत्रमें क्रोधको जीतनेके व्रतके बारेमें लिखती है, अुसीमें तू क्रोध करती है, और वह भी बिना कारण। मेरे मीठे अुलाहनेका कारण ही तू नहीं समझी। जो कगूरेवाली परची लिफाफे पर तूने चिपकाअी थी अुसमें सजावट या कला नहीं थी, अैसी मेरी शिकायत थी। जो कला पर समय खर्च करता है अुसे मैं अुलाहना नहीं देता। अिसमें तो कोअी कला ही नहीं थी। लिफाफे पर अिस तरह परची चिपकानेमें क्या कला हो सकती है? फिर अुसे चिपकाया भी अिस तरह कि आधी तो अुखड ही गअी। अिसलिअे तूने बिना विचारे क्रोध किया। मुझे तो अिस पर हंसी ही आअी। पास होता तो अेक चपत लगाता। लेकिन तू गिरी अुसका क्या? अितने अितना समय गंवाया। न करने जैसी दलील की और अपना शरीर

गलेकी तिल्लियां बढ़जानेकी डॉक्टरकी राय है तो कटवा डालना। पहले भी अैसी ही राय दी थी न? अिसमें देर नहीं लगती। कोअी खतरा हो अैसा भी नहीं जाना। मेरा शरीर बिल्कुल रोगरहित हो जाना चाहिये। मैं मानता हूं कि आखिर तो अपने शरीरका पता खुद हमें ही ज्यादा होता है।

डॉक्टरोंको शरीरके बारेमें बहुत कुछ आधार रखना पड़ता है। यही बताता है कि अगर बीमार अपने शरीरको न पहचाने, तो डॉक्टरको ठीक जवाब नहीं दे सकता। 'सिर दुखता है' अितना कहनेसे डॉक्टर क्या कर सकता है? सिर किस कारणसे दुखता है अिसकी जानकारी बीमारको होनी चाहिये। अैसा और बातोंके बारेमें भी होता है, जिसे हम समझ सकते हैं। यही बात खुराकको भी लागू होती है। अमुक खुराकका क्या असर हुआ, यह डॉक्टर अपने आप नहीं जान सकता। अुसे बीमार पर आधार रखना पड़ता है। लेकिन सभी बीमार खुराकके असरको नहीं पहचान सकते। भोजन शरीरके लिअे प्रतिदिनका खुराक है। अुसका असर तो खानेवाला ही जान सकता है। अिसलिअे जिसने हवा, पानी और आहारके असरको पहचाना है, वह अपने शरीर पर जितना काबू रख सकता है अुतना डॉक्टर कभी नहीं रख सकता। अिसलिअे मुझे लगता है कि हम सबको शरीरके बारेमें सामान्य ज्ञान प्राप्त कर ही लेना चाहिये। अिसी प्रकार हवा, पानी और आहारके बारेमें भी ज्ञान लेना चाहिये। यह ज्ञान प्राप्त करने जितना साहित्य तो आश्रममें है ही। सारा साहित्य पढ़नेकी जरूरत नहीं है। अुसमें से थोड़ा पढ़ लिया हो तो काम चल जायगा। तिवारीजीने अपने प्रयत्नसे अपना शरीर अुत्तम बनाया था। अपने बारेमें तो मैं यह मानता ही हूं कि अगर मैंने अपना काम चलाने लायक ज्ञान अिस विषयमें प्राप्त न कर लिया होता, तो मैं अिस दुनियासे कभीका कूच कर गया होता। मेरा दुर्बल शरीर भी मेरी सावधानीसे ही टिका हुआ है। अुसमें डॉक्टरोंका बहुत ही थोड़ा हाथ है, अैसा मेरा विश्वास है।

अब तेरी कठिनाअियोंके बारेमें।

(१) व्यक्तिपूजाके बदले गुणपूजा करनी चाहिये। व्यक्ति बुरा भी निकल सकता है और अुसका नाश तो होता ही है। गुणका नहीं होता।

(२) आश्रमके संचालक-वर्गमें ज्यादातर लोग अच्छे नहीं लगते, तो अुन्हें सहन करना सीखनेका यह सुनहरा मौका है। दोषरहित तो कोअी नहीं है। और हमारे जैसे ही सबको माननेकी अिच्छा रखें तो अच्छा लगने न लगनेका सवाल ही अुड़ जाता है।

(३) आश्रमके तत्त्व यदि मान्य हैं, तो अुनके बाह्य स्वरूपके बारेमें पैदा होनेवाले मतभेदकी चिन्ता नहीं हानी चाहिये। हमें काम तत्त्वके साथ होना चाहिये, बाह्य स्वरूपके साथ नहीं।

(४) तेरे स्वभाव-दोष निकालनेके लिअे आश्रममें रहना तेरा धर्म है।

(५) तेरे ध्येय तक तू आश्रममें न पहुंच सके तो दोष तेरा है। आश्रममें पूर्ण स्वतंत्रता है।

(६) तेरे प्रियजनोंका आकर्षण तुझे आश्रमसे बाहर किसलिअे ले जाय? अुनका प्रेम अुन्हें जरूरत पडने पर आश्रममें ले आयेगा। प्रेमको भौतिक सान्निध्यकी जरूरत नहीं होनी। और अगर हो तो वह प्रेम क्षणिक ही माना जायगा। अेकके शुद्ध प्रेमकी कसौटी दूसरेके वियोगमें — दूसरेकी मृत्युके बाद — होती है। लेकिन यह सब तो बुद्धिवाद हुआ। तेरा हृदय जहां रहेगा वहीं तू रहेगी। तेरा हृदय यदि आश्रमको अपने भीतर न समा सके, तो मैं क्या कर सकूंगा और तू भी क्या कर सकेगी?

मेरे सूतकी साड़िया तो बुन ही जानी चाहिये। मैंने सूतके बारेमें अपने विचार प्रगट किये, अुससे पहलेका यह सूत है। मत्र पूछा जाय तो वह बाके लिअे रखा गया है। अिसलिअे अुसका त्याग तो बाको करना है। मुझे नहीं करना है। बा बहुत मोटी साड़िया पहन ही नहीं सकती। अिसलिअे आश्रमकी ओरसे भी अुसे सामान्य रूपसे बारीक साड़िया ही मिलेंगी। अिस दृष्टिसे भी मेरे सूतकी साडी बा खुशीसे पहने। अब आगेके सूतके बारेमें तो कड़ाअीसे नियमका पालन होना चाहिये। लेकिन

बिगाड़। क्योंकि शोषका शरीर पर बहुत बुरा असर होता है, यह भौतिक-शास्त्रियोंने प्रयोग करके खोज निकाला है। हमारे यहां तो अैसा माना ही जाता है। तेरा व्रत टूटा सो अलग। दुबारा अैसा शोष मत करना। और, मेरी आलोचना तो मीठी आलोचना थी। अुसे समझने जितनी बुद्धि भी तू खो बैठी।

मेरे पत्रोंका तू भरोसा मत रखना। पता नहीं कब तक लिख पाअूंगा। अिसलिअे न मिले तो दुःखी मत होना। बहुतसे तो लिखती ही रहना। मुझे मिलना बंद हो जायगे तो मैं लिखूंगा। अितनी-सी खबर भी न दी जा सके तो भी लिखा हुआ बेकार नहीं जायगा।

सब फकीरोंको मेरी ओरसे प्रणाम करना। किसी दिन अुनके बीच सोनेकी आशा रखता हूं, अैसा कहकर अुन्हें आश्वासन देना।

तू बड़ी मानिनी है। फूलोंके आसपास थोड़े टमाटर और हरी भाजी बो दे, तो तुझे बारहों महीने खानेको मिलें और तेरे शरीरको लाभ हो। शरीर तेरा नहीं है, तुझे सौंपी हुअी अीश्वरकी वस्तु है, यह तू समझ ले, सो तू अुसकी रक्षाके लिअे समय जरूर दे। अैसे पौधोंको बहुत समय नहीं देना पड़ता। ये जमीन भी बहुत थोड़ी रोकते हैं। मेरे अेक अंग्रेज मित्र, जो दक्षिण अफ्रीकामें मेरे साथ रहते थे, बिना मेहनत किये थोड़े ही दिनोंमें कच्ची खाजी जानेवाली अैसी नामकी हरी भाजी अुगाया करते थे।

लड़कियोंकी बीमारीके बारेमें तो मैंने तुझे लिखा है। गहराअीमें जाकर (कारण) मालूम करना। रामभाअूके बारेमें मुझे डर तो था ही। लेकिन तुझे अुसने सब कुछ कह दिया है, अिसलिअे तू अुसे (प्रेमसे) जीतना।

तेरा वजन घट गया है, तो तुझे फल लेने ही चाहिये। थोड़ा ज्यादा खर्च हो तो होने देना। खर्च बचानेका लोभ करके शरीरको बिगड़ने देनेमें क्या लाभ है? जो खानेके बारेमें सच है वही आरामके बारेमें भी है। तुझे दोपहरको थोड़ा आराम आग्रह रखकर लेना ही चाहिये। अितना समय कैसे बच सकता है यह मेरे बतानेकी जरूरत नहीं है। अितना समय बचाना ही है, यह निश्चय कर ले तो तू बचा सकती है।

न्याय करेंगे' का अर्थ तो यह है कि हमें अैसे दोषमें नहीं पड़ना चाहिये जिसका दूसरे न्याय करें। जगतके सामने हम अुद्धत न बनें। 'भले दुनियाको जो कहना या करना हो सो कहे या करे' अैसा विचार या अैसा वचन हम कैसे प्रकट कर सकते हैं ? दुनियाके सामने हम रंक हैं, यानी हम सत्यमार्ग पर चलते हैं तब भी जगतको दंड नहीं देते, अुसका न्याय नहीं करते, परन्तु जगतके दंडको, न्यायको हम सहन करते हैं। अिसीका नाम नम्रता या अहिंसा है। तूने जो लिखा वह व्यंगमें या क्रोधमें लिखा गया हो, तो भी मैं चाहूंगा कि तू अैसा न लिखे। मुझ पर तूने जो क्रोध निकाला है अुसकी चिन्ता नहीं है। अुसे तो मैं हंसकर टाल सकता हूं। लेकिन तेरा यह वचन मुझे डंककी तरह चुभता है। तेरी कलमसे अैसे वाक्य नहीं निकलने चाहिये, अर्थात् अैसे विचार भी तेरे मनमें नहीं आने चाहियें। जो विचार आया अुसे मेरे सामने रख दिया, यह ठीक हुआ। मेरे सामने रखा अिसलिअे तो मैं अुसे सुधार सकता हूं। यह अंश अिसलिअे नहीं लिखा कि तू मुझसे अपने विचार छिपाये। मैं तो पागल, अुद्धत या नम्र जैसी भी तू है वैसी ही तुझे देखना चाहता हूं। लेकिन मेरी तो मांग यह है कि अुपरोक्त विचार भी तू अपने हृदयमें न आने दे।

लड़कियां जोरसे मालिश न कर सकती हों तो अुन्हें सिखाना चाहिये। मालिशमें शरीर-बलकी नहीं, युक्तिकी जरूरत है।

अब तू जो साहित्य पढ़ रही है अुसके बारेमें। तूने लिखी वैसी मान्यता अेक समय थी, आज नहीं है। मेल्थसकी[1] लिखी कुछ बातें लोग समझे नहीं और कुछ बातें गलत हैं। जो नियम मनुष्येतर प्राणियों पर लागू होता है, वह मनुष्य पर नहीं होता। मनुष्येतर प्राणी दूसरे जीवोंको मारते हैं और अुन्हें खाकर जीते हैं। मनुष्य अिस स्थितिमें से निकलनेका प्रयत्न करता है। अिसीमें अुसकी अहिंसा है। शरीर है तब तक वह पूर्ण अहिंसा सिद्ध नहीं कर सकता, लेकिन भावनाके रूपमें अहिंसाका पोषण

१ टॉमस रॉबर्ट मेल्थस (१७६६–१८३४)। अेक अंग्रेज अर्थशास्त्री, दुनियामें खुराककी अपेक्षा आबादीकी वृद्धि ज्यादा तेजीसे हो रही है, अिस बारेमें अुसका निबन्ध प्रसिद्ध है।

अुसमें भी मैं बा पर जबरदस्ती नहीं करूंगा। मैं चाहता हूं कि बा खुशीसे अुसका त्याग करे और अुसके हिस्सेमें जो आ जाय अुसीसे सन्तुष्ट रहे। लेकिन यह तो हुआी भविष्यकी बात। अभी तो मेरा नया सूत सारा यहीं है। चाहे जो हो, मेरा सूत पड़ा नहीं रहना चाहिये। किसीका भी नहीं पड़ा रहना चाहिये। बुनने जितना हो जाय कि तुरन्त अुसका ताना चढ़ जाना चाहिये।

धुरन्धरके बारेमें तो तुझे मालूम है। लीलावती[1] कातती है, अैसा मैं मानता हूं। लेकिन तूने लिखा वह तो ठीक है ही। बहुत-सी बहनें कताअी छोड़कर कसीदेका काम पसन्द करेंगी। यह तो जैसा खानेमें है वैसा ही काममें है। रोटी छोड़कर पकौड़ीकी तरफ खानेवालेका मन दौड़ेगा। रोटी पर कायम रहनेमें संयम है, त्याग है, पकौड़ी पर जानेमें स्वच्छंदता है। अिसी तरह कताअी पर कायम रहनेमें संयम है, दूसरी वस्तुओं पर जानेमें (अनुपातमें) स्वच्छंदता है।

'किसीका न्याय मत करो, नहीं तो दूसरे तुम्हारा न्याय करेंगे' — पर तेरी आलोचना तुझे शोभा नहीं देती। तू अुसका अर्थ ही नहीं समझी। तेरी आलोचनामें बहुत अहंकार भरा है। 'नहीं तो दूसरे तुम्हारा

---

१ दोनों जेलमें थे। आश्रमकी जो बहनें जेल गअी थीं वे जेलमें कताअीकी अपेक्षा कसीदेका काम ज्यादा पसन्द करती थीं, अैसी खबर मिली थी।

लीलावतीबहन बाल-विधवा थी। दाडी-कूचसे कुछ महीने पहले आश्रममें संस्कार ग्रहण करनेके लिअे आअी थीं। श्री गंगाबहनके साथ वे आन्दोलनमें शामिल हो गअीं। अनेक बार जेल गअीं। अुन्हें पढ़नेका बहुत शौक था। डॉक्टर बननेकी आकांक्षा थी। सन् १९३० में शुरू हुआ आन्दोलन स्थगित हो गया अुसके बाद वे काफी समय तक राजकोटमें रहीं और पूज्य महात्माजी सेवाग्राममें रहने लगे अुसके बाद वे महात्माजीकी अिजाजत लेकर वहां गअीं। पढ़नेका शौक बहुत होनेसे पूज्य महात्माजीने बंबअीमें अुन्हें सारी सुविधायें दिला दीं। लगनसे पढ़कर अुन्होंने अपनी अिच्छा पूरी की। डॉक्टर बननेके बाद वे वर्षोंसे अलग अलग अस्पतालोंमें काम कर रही हैं।

होगी। और अगर हम अनासक्तिका पाठ अच्छी तरह सीख सके हो, तो भी कोअी दिक्कत नही आयगी। दूसरे लोग तो तेरे शरीरके लिअे मुख्यत. बाहरी अुपाय ही बता सकते है। अन्तरकी बात तो तू ही ज्यादा जान सकती है। मनोवैज्ञानिको पर मुझे बहुत विश्वास नही है। चाहे जैसे अनुभवी शास्त्री भी क्यो न हो, मनुष्यके मनको वे भी आखिर कहा तक जान सकते हैं? अिसलिअे तेरी तबीयतका मनके साथ जो सबध हो, अुसे तो तुझे ही पहचान लेना चाहिये, और जरूरी अुपचार करना चाहिये। लेकिन अिसी पत्रमें तूने यह भी लिखा है कि हलके या भारी कामका और नीदका या अुसके अभावका शरीर पर असर हुअे बिना नही रहता। अिसलिअे सच तो यह है कि भीतरी और बाहरी दोनो वस्तुओंका शरीरके स्वास्थ्यके साथ सबध है। बाह्य साधनोंकी अपेक्षा करके केवल मनसे कोअी भी अपने शरीरको नीरोग नही रख सका है। अिसलिअे नीद, आराम और कामके बारेमें नारणदास जो कहे अुसे तू सुन और मनके बारेमें तू स्वय मालूम कर ले। किसी भी अुपायसे शरीरको तू फौलाद जैसा बना ले। मासिक धर्म चालू हो तब गरम पानीमें नहीं बैठना चाहिये, यह मुझे पहले ही लिखना चाहिये था।

अन्तरकी आवाज अवर्णनीय वस्तु है। लेकिन कुछ अवसरों पर हमें अैसा लग ही जाता है कि अन्तरमें से अमुक प्रेरणा हुअी है। जब मैंने अन्तरकी आवाजको पहचानना सीखा वह काल मेरा प्रार्थना-काल कहा जा सकता है। यानी १९०६ के आसपास। तूने पूछा है अिसलिअे याद करके यह लिखा है। वैसे मेरे जीवनमें अैसा कोअी अवसर नही आया जब मुझे लगा हो कि 'अरे, आज तो कुछ नया ही अनुभव हुआ!' जैसे बिना जाने हमारे बाल बढते हैं, वैसे ही मेरा आध्यात्मिक जीवन बढा है अैसा मै मानता हू।

नामजपसे पापोंका हरण किस तरह होता है। शुद्ध भावसे नाम जपनेवालेमें श्रद्धा तो होती ही है। नाम जपनेसे पाप-हरण होता ही है, अैसे निश्चयसे वह आरम्भ करता है। पाप-हरणका अर्थ है आत्मशुद्धि। श्रद्धापूर्वक नाम जपनेवाला कभी थकता ही नही। अिसलिअे जो जिह्वासे बोला जाता है वह आखिर हृदयमें अुतरता है और अुससे शुद्धि होती

करे तो सबसे कम हिंसासे वह अपना निर्वाह कर सकता है। खुद मर कर दूसरोंको जीने देनेकी तैयारीमें मनुष्यकी विशेषता है। जैसे जैसे मनुष्य बढ़ते हैं वैसे वैसे खुराक भी बढ़ती है। अभी अुसमें और भी बढ़नेकी शक्ति है। डार्विन¹की खोजके बाद तो बहुतसी नअी खोजें हुअी हैं। जो पुस्तक तू पढ़ रही है वह पुरानी मालूम होती है। नअी हो या पुरानी, 'बड़ीसे बड़ी संख्याका भला' और 'जिसकी लाठी अुसकी भैंस' के सिद्धान्त गलत हैं।

अहिंसा सबके भलेका विचार करती है। ओीश्वरके यहां सबके भलेका ही न्याय होता है। यह न्याय कैसे किया जाय और अैसे न्यायमें मनुष्यका कर्तव्य क्या है, यह खोजना हमारा काम है। भिन्न नीतिसे विरुद्ध नीति प्रस्तुत करना हमारा काम नहीं। लेकिन यह विषय बड़ा है। मैंने तो संक्षेपमें थोड़ासा बताया है। तुझे अिस पर ज्यादा चर्चा करनी हो तो प्रश्न करना।

बापू

८६

[पूज्य महात्माजी बहुत बार 'अन्तरकी आवाज' की बात करते थे। मैंने अुसका स्पष्टीकरण मांगा था।

आश्रमके पुस्तकालयमें मैं पुस्तकोंकी सूची बना रही थी। अुर्दू पुस्तकोंका बाहरी रूप आकर्षक तो था ही नहीं, मजबूत भी नहीं था। अिसलिअे मैंने आलोचना की थी।]

यरवडा मंदिर,
३-८-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पहली तारीखका पत्र मिला। छात्रालयमें होनेवाली भीड़से तू घबराती नहीं होगी। अच्छी लड़कियां हों तो कोअी तकलीफ नहीं

१. चार्ल्स रॉबर्ट डार्विन (१८०९-१८८२)। प्रसिद्ध अंग्रेज प्राणिशास्त्री।

[पूज्य महात्माजी मुझे आश्रमको 'अपना' समझनेकी और अपनेको आश्रमकी समझनेकी सतत शिक्षा देते रहते थे। मैं लिखती थी, *"आप मुझे प्रिय हैं अिसलिअे 'आपका' आश्रम मुझे प्रिय है। आश्रमका स्वतंत्र रूपसे मेरे हृदयमें स्थान नहीं है।"* प्रेमको आलम्बन चाहिये, प्रेमको स्पर्शकी आवश्यकता होती है, क्योंकि वह मानव स्वभावके लिअे सहज होता है। अैसी अैसी दलीलें मैं किया करती थी। पूज्य महात्माजी मेरी अिस भावनाका अूर्ध्वीकरण (Sublimation) करनेका प्रयत्न करते थे।

प्रेम और भक्ति दोनोंमें थोड़ा भेद है। प्रेममें विकार दोषरूपमें पैदा हो सकते हैं। भक्ति तो शुद्ध प्रेम है। जिसमें विकार हों वह भक्ति *ही नहीं है। भक्तिको योगोंकी भी रानी कहते हैं।* नारद मुनिसे लेकर स्वामी रामकृष्ण परमहंस तक सभी भक्त और सन्त पुरुष भक्तिप्रेममें ओतप्रोत थे। आत्म-साक्षात्कार होनेके बाद, जीवन्मुक्तिकी अवस्था तक पहुंचनेके बाद भी अुन्होंने सगुणोपासना चालू रखी थी। अैसा न करते *तो वे सब कर्मोंके देह छोड़कर विश्वरूप हो जाते*! देहधारियोंके मनकी यह मर्यादा है कि प्रेमभक्तिके लिअे अुन्हें कोअी आलम्बन जरूर चाहिये। और भगवान ही अुनका आलम्बन हैं। केवल मनके लिअे ही आलम्बनकी आवश्यकता नहीं रहती, लेकिन शरीर तथा अिन्द्रियोंके लिअे भी आलम्बनकी आवश्यकता रहती है। सन्तोंका साहित्य पढ़नेके बाद, अुसका चिन्तन-मनन करनेके बाद मेरा यह मत कायम रहा है।

'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' कहकर मायावादका — विवर्तवाद — का मंडन करनेवाले तत्त्वज्ञानियोंके चक्रवर्ती शंकराचार्यने भी गाया है: 'दामोदर गुणमंदिर सुन्दरवदनारविन्द गोविन्द।' सन्तोंने ब्रह्मको सगुण *रूपमें प्रस्तुत किया, यह अुनका लोगों पर* महान अुपकार है! भक्तजन आंख, कान, जीभ, स्पर्श सभी अिन्द्रियों द्वारा अीश्वरकी प्रतीतिका मधुर अनुभव लेनेकी लालसा रखते हैं। अिसीलिअे स्पर्शमें दोष नहीं है; अुसके पीछे रही भावनामें दोष हो सकता है। अैसा मेरा मत था और है।

है। अैसा अनुभव निरपवाद है। मनोवैज्ञानिक भी यह मानते हैं कि मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही बन जाता है। रामनाम जिसका अनुसरण करता है। नामजप पर मेरी अटूट श्रद्धा है। नामजपकी शोध करनेवाला अनुभवी मनुष्य था और यह खोज अत्यन्त महत्त्वकी है अैसा मेरा दृढ़ मत है। निरक्षर मनुष्यके लिअे भी शुद्धिका द्वार खुला होना चाहियें। वह नामजपसे होता है। (देखना गीता: ९–२२; १०–१०)। माला अित्यादि गिनती करके अेकाग्र होनेके साधन है।

विद्याभ्यास सेवाके लिअे ही होना चाहिये। लेकिन सेवामें अपूर्व आनन्द रहता है, अिसलिअे विद्या आनन्दके लिअे है, अैसा कहा जा सकता है। लेकिन कोअी भी आज तक सेवाके बिना केवल साहित्य-विलाससे अखंड आनन्द अनुभव कर सका हो, अैसा जाननेमें नही आया।

कला किसी देश या व्यक्तिका अेकाधिकार नही होती। जिसमें छिपानेकी जरूरत है वह कला नही है।

प्रत्येक देशको अपने अुद्योगोंकी रक्षा करनेका अधिकार है और वह अुसका धर्म है।

निराश्रितको आश्रय देना अहिंसक मनुष्यका धर्म है। निराश्रित कौन है, यह तो प्रत्येक परिस्थिति परसे ही बताया जा सकता है।

जो बाहरसे बुरा दिखता है वह अन्दरसे भी बुरा ही हो, अैसा कोअी नियम नही है। अुर्दू पुस्तकें बाहरसे बुरी दिखती हैं, यह प्रकाशित करनेवालेकी गरीबीको प्रगट करता है। लेकिन अुनके अन्दरके लेख अुत्तम क्यों नहीं हो सकते? कुछ पुस्तकोंमें होते ही है। लेकिन यह सूची बनानेमें रसकी बात ही क्यों अुठनी चाहिये? सूची बनानी है अिसलिअे अुसमें रस आना ही चाहिये, क्योंकि कर्तव्यमें रस है। तू कभी थोड़ी अुर्दू सीख लेनेकी मेहनत करे, तो स्वतंत्र रूपसे भी तुझे अुनमें रस आ सकता है।

बापू

पुरुषोंका मानस हमारे जैसा ही होता है या भिन्न होता है, यह जाननेके लिअे मैं प्रयत्नशील रहती थी।

मैंने बहुत बार देखा था कि पूज्य महात्माजी छोटे बच्चोंको खेलाते हैं, अुन्हें पुचकारते है, लेकिन कभी अुन्हे चूमते नही। श्री विनोबाजीका मत था कि चूमना गदी चीज है। माको अपने बच्चेको भी नही चूमना चाहिये। पूज्य महात्माजीके भी अैसे विचार हैं या नही? अथवा यह संयमकी परिणति है? — यह जाननेकी अिच्छासे मैंने अेक दिन अुनसे पूछा, "महात्माजी, आपने जीवनमें कभी बच्चोंको चूमा है?" वे हसे और कहने लगे, "अरे, चूम चूम कर थक गया हू!"

दाडी-कूचसे पहले आश्रमके पास बने हुअे लाल बगलेमें अुमिया गाधीका विवाह-सस्कार हुआ। पूज्य महात्माजीके साथ मैं भी वहा अुपस्थित थी। सस्कार पूरा होनेके बाद हम बाहर निकले। रास्तेमें चलते चलते मैंने अुनसे पूछा, "महात्माजी, यह विवाह-सस्कार देखते ही आपको अपना विवाह-प्रसग याद आया या नही?"

अुन्होंने हंसते हसते कहा, "अपना विवाह-प्रसग कोअी भूल सकता है! मुझे वह अच्छी तरह याद है। मजेकी बात तो यह थी कि विवाह-सस्कार हो रहा था अुस समय बाका हाथ पकडनेका मौका मुझे मिलता तब मैं अुसे दबाता ही रहता था। और बाको मेरा हाथ पकडनेका मौका मिलता तब वह भी मेरा हाथ दबाती रहती थी। . . "

मेरे प्रश्नोंमें थोडा भी दोष निकाले बिना वे जिस अकृत्रिम स्वाभाविकतासे अुनका जवाब देते, अुससे मुझे बडा सन्तोष होता था। लोकोत्तर होते हुअे भी महात्माजी पूरे मानव हैं, मेरी यह भावना जैसे जैसे दृढ होती गअी वैसे वैसे मेरा आकर्षण भी अुनके प्रति बढ़ता गया।

पूज्य महात्माजी जब 'व्यक्तिपूजा' शब्दका अुपयोग करते तब मैं 'विभूति-पूजा' कहती थी।

'यस्य देवे परा भक्ति. यथा देवे तथा गुरौ।'

पत्रमें मैंने पूछा था कि कुछ लोग आपसे द्वेष करते हैं और लाखों लोग आपकी पूजा करते हैं। अिन दोनो तरहके लोगोंके बारेमें आपकी प्रतिक्रिया (reaction) कैसी रहती है?]

यही चीज मैं पूज्य महात्माजीके सामने रखनेका प्रयत्न अपनी अुस समयकी शक्तिके अनुसार करती थी। लेकिन मेरी छोटी अुमर और कच्चे अनुभव अिन दोनोंके कारण मेरी दलीलोंका कोअी मूल्य नहीं आंका जाता था, अिसमें पूज्य महात्माजीका दोष नहीं था। अुस समय यही परिणाम स्वाभाविक था।

पूज्य महात्माजी भक्तिकी बातें तो करते थे। अपने सर्जनहारके सामने हम सब बालक हैं, यह भी कहते थे। फिर भी भक्तिमार्गके सन्त भगवानके सामने जिस तरह लाड़ले बालक बन जाते थे, अुसी तरह पूज्य महात्माजीने अपने मनमें भी किसी दिन अपने आपको अुस भूमिका पर रखा हो, अैसा मुझे नहीं लगता। भगवानके सामने भी वे प्रौढ़ और समझदार बालक बनकर ही बैठे होंगे, अैसी मेरी मान्यता है।

अेक समय अैसा था जब श्री विनोबाजीको बहुतसे लोग 'वेदान्तास-जड़' और रूखा मानते थे। अब भूदान-यात्राकी यात्रामें सबने देख लिया है कि वे गद्‌गद हो जाते हैं और भक्तिप्रेमकी अुमंगमें अुनकी आंखोंसे अश्रुधारा बहने लगती है। पूज्य महात्माजीमें हृदयकी कोमलता तो थी ही। लेकिन दुःख, करुणा या भक्तिप्रेमकी अुमंग — अिनमें से अेक भी भावनाके कारण अुनकी आंखोंसे आंसू बहनेका दृश्य मैंने कभी नहीं देखा। और किसीने अैसा दृश्य देखा हो तो मुझे निश्चित मालूम नहीं है।

अिससे मुझे लगता है कि भगवानने पूज्य महात्माजीके लिअे जिस अवतार-कार्यकी योजना कर रखी थी, अुसके अनुकूल ही अुनकी मानसिक रचना भी की होगी। 'भारतका स्वातंत्र्य' ही अुनका अवतार-कार्य था। अुसके लिअे देशव्यापी राजनीतिक संगठन तथा अन्य प्रकारसे भी प्रजाका संगठन करनेका काम अुनके कंधों पर आ पड़ा था। अिसलिअे भगवानको विराट रूपमें देखनेका और अुसीकी भक्ति सेवाके रूपमें करनेका अुन्होंने अपना धर्म मान लिया था। अुनकी सारी मानसिक रचना ही भिन्न थी।

कितनी ही बार अुनके मानसको समझ लेनेकी मेरी जिज्ञासाने 'विचित्र' लगनेवाले प्रश्न अुनसे पूछनेके लिअे मुझे प्रेरित किया है। पूज्य महात्माजी अवतारी पुरुष हैं अैसा मैं तो मानती थी। और अवतारी

नीरस लगा तो — असी द्वारा रसवर दूसरा, फिर तीसरा लिखता ही रहूं? और तुझे जैसे रसपूर्ण पत्र लिखने चाहिये वैसे ही औरोंको भी। और आखिरमें दिवाला!!! अिसके बजाय मैंने सीधा नियम बनाया है। सरस-नीरसका खयाल किये बिना जो मनमें सूझे अुसे जैसी भी भाषामें लिखते बने लिख देना। लेकिन तू ठहरी मूर्ख और अुस पर अभिमानी। अैसी सीधी बात तू थोड़े ही समझनेवाली है। और अब देखता हूं कि तू सर्वज्ञ होनेका भी दावा करती मालूम होती है। अैसा लगता है कि जो भी सयानी बात मैं लिखता हूं वह तू जानती ही है। लेकिन जरा ठहर। जो मानते हैं कि वे जानते हैं, लेकिन अुस पर अमल नहीं कर सकते, वे जानते ही नहीं या जानने पर भी नहीं जानते। अिसलिअे जब तक तू नादानीकी बातें लिखेगी, क्रोध करेगी, अभिमान रखेगी, तब तक मेरी दृष्टिमें तो तू मूर्ख ही रहनेवाली है। अिसका अर्थ यह नहीं है कि तू अपने अभिमान, क्रोध या पागलपनको छिपाकर लिखे। जब तक यह सब तुझमें है, तब तक तो लिखना ही चाहिये। तेरे पत्रकी कीमत तू जैसी है वैसी दिखाअी देनेमें ही है। पागल तू भले ही रहे। परन्तु क्रोध तो निकालना ही चाहिये। और अभिमान थोड़ा कम करना चाहिये। अभिमानको पूरी तरह निकाल देना लगभग असंभव है।

तू नारद मुनिका अुदाहरण देती है। लेकिन अुनके वचन[1]का रहस्य तू कहां जानती है? अुनके जैसी व्यक्तिपूजा तू जरूर कर। यह करने योग्य है। जैसे वैकुंठके भगवान अैतिहासिक हैं, वैसे ही अुनके कृष्ण हैं। नारद मुनिके भगवान अुनके कल्पना-मन्दिरमें विराजते थे। वे नारद मुनि तो आज भी हैं और अुनके कृष्ण भी हैं। क्योंकि वे दोनों हमारी कल्पनामें रहते ही हैं। मेरी दृष्टिमें अितिहासकी अपेक्षा कल्पना अधिक अूंची है। रामकी अपेक्षा अुनका नाम बड़ा है, अैसा जो तुलसीदासजीने कहा है, अुसका यही अर्थ सम्भव है।

तू व्यक्तिपूजाके भंवरमें पड़ी हुअी है, अिसीलिअे मुझे चिन्तामें डालती है न? आश्रमके बारेमें तू मुझे निर्भय नहीं कर सकती। तारण-

---

१. श्री नारद मुनिका भक्ति विषयक यह सूत्र प्रसिद्ध है: 'सा तु अस्मिन् परमप्रेमस्वरूपा।'

यरवडा मंदिर,
१२-८-'३२

चि० प्रेमा,

नीचेकी पुस्तकें परचुरे शास्त्रीके लिये चाहिये। जिनमें से जो वहां हो वे भेजना। जो नहीं होंगी वे दूसरी जगहसे मंगा लूंगा। जरा जल्दी भेज सके तो अच्छा हो। मणिबहन[1]को देना या नन्दूबहन[2]को। वे डाह्याभाओी[3]को भेज देंगी। परचुरे शास्त्री आश्रममें थे। बहुत विद्वान हैं। यहांके जेलमें हैं। अुन्हें कोढ़का रोग हो गया है। अिसलिअे अुन्हें पुस्तकें देनेकी जल्दी है। वे रोज कातते हैं। मैं अुन्हें देख तो नहीं सकता, लेकिन पत्र लिख सकता हूं। अुनकी पत्नी भी रोगशय्या पर पड़ी है। वे बाहर हैं। पुस्तकें ये हैं: (१) Imitation of Christ, (२) Works of Swami Vivekanand (जो हों वे), (३) Works of Sister Nivedita, (जो हो वे), (४) Essays of Tolstoy, (५) व्याकरण-महाभाष्य, (६) यजुर्वेद-भाष्य, (७) Dispensations of Keshavchandra Sen.

वे आश्रममें रह चुके हैं, अिसलिअे अुन्होंने लिखा है कि आखिरी तीन पुस्तकें तो आश्रममें हैं ही। लगता है कि ये पुस्तकें अुन्होंने वहां पढ़ी हैं।

तेरा पत्र मिला। तू अैसा मानती मालूम होती है कि मैं चाहूं तब रसपूर्ण पत्र लिख ही सकता हूं। लेकिन अब तू समझ गअी कि अैसा कुछ है नहीं। कौनसा पत्र रसपूर्ण है और कौनसा नीरस, अिसका भी मुझे पता नहीं चलता। बिलकुल सच कहता हूं। और जिसे तू रसपूर्ण मानती है वह वस्तुतः रसपूर्ण ही है, यह भी कौन कह सकता है? अैसा लगता है कि रसिकता नापनेका स्वतंत्र गज परमेश्वरने अपनी पेटीमें ही ताला बन्द करके रखा है। अिसलिअे अभी तो रसिकताका नाप सबका अपना अपना होता है। तेरे नाप तक पहुंचनेका प्रयत्न करने बैठूं तब तो मेरी शामत ही आ जाय। अुसीमें मेरा समय चला जाय। अगर यह पत्र

---

१. सरदार वल्लभभाओी पटेलकी पुत्री।
२. अहमदाबादके सुप्रसिद्ध स्व० डॉक्टर बलवन्तराय कानूगाकी पत्नी।
३. सरदार वल्लभभाओी पटेलके पुत्र।

देख लिया। अिसलिअे केले नरम न लगे, पक्के न लगें तब तक नही खाने चाहिये। दो तीन दिन पडे रहें तो पक जाते हैं। खानेकी जल्दी हो तो अुन्हे भूनना या अुबाल लेना चाहिये।

तेरी पढी हुअी पुस्तक भले ही १९२४ में छपी हो, लेकिन अुसमें दी हुअी बात बहुत पुरानी हो गअी है।

मेरे विरोधी पहले भी थे और आज भी हैं, लेकिन मुझे अुनके प्रति रोष नही हुआ। स्वप्नमें भी मैंने अुनका बुरा नही चेता। परिणाम-स्वरूप बहुतसे विरोधी मेरे मित्र बन गये हैं। किसीका भी विरोध, मेरे सामने आज तक काम नही कर सका। तीन बार तो मुझ पर व्यक्तिगत हमले हुअे, फिर भी आज तक मैं जिन्दा हू। अिसका यह अर्थ नही है कि विरोधी कभी भी अपनी सोची हुअी सफलता प्राप्त नही करेंगे। प्राप्त करें या न करें, अिसके साथ मेरा सबध नही है। मेरा धर्म अुनका भी हित चाहता है और मौका आने पर अुनकी भी सेवा करना है। अिस सिद्धान्त पर मैंने यथाशक्ति अमल किया है। मैं यह मानता हू कि यह चीज मेरे स्वभावमें रही है।

लाखो लोग मेरी पूजा करते हैं, तब मुझे थकान लगती है। किसी भी दिन अिस पूजामें मुझे रस नही आया या अैसा नही लगा कि मैं अिस पूजाके योग्य हू। हमेशा मुझे मेरी अयोग्यताका ही भान रहा है। मान-सम्मानकी भूख मुझे कभी रही हो, अैसा याद नही आता। लेकिन कामकी भूख रही है। मान देनेवालेसे मैंने काम लेनेका प्रयत्न किया है और जब अुसने काम नही किया तो मैं अुसके मानसे दूर भागा हू। मैं कृतार्थ तो तब होअूगा जब कि जहा मुझे पहुचना है वहा पहुच जाअू। लेकिन अैसा दिन कहासे?

दुनियाके विरुद्ध खडे रहनेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिअे अभिमान या अुद्धतता पैदा करनेकी जरूरत नही है। अीसा दुनियाके विरोधमें खडे रहे, बुद्धने भी अपने युगका विरोध किया, प्रह्लादने भी वैसा ही किया। वे सब नम्रताकी मूर्ति थे। अिसके लिअे आत्म-विश्वास और प्रभु पर श्रद्धाकी जरूरत है। अभिमानी बनकर दुनियाके विरुद्ध खडे होनेवालोका अन्तमें पतन हुआ है। तेरा अभिमान और तेरा क्रोध कअी बार केवल

दास कर सका है। अैसे और भी अुदाहरण मैं दे सकता हूं। वे भी व्यक्तिपूजक तो है ही। कौन नहीं है? लेकिन आखिरमें वे व्यक्तिको पार करके अुसके गुणोंके यानी अुसके कार्योंके पुजारी बन जाते हैं। यह अमूल्य वस्तु भूलकर हमने अपनी मूढ़ताके कारण स्त्रियोंको सती होना सिखाया। यह व्यक्तिपूजाकी पराकाष्ठा है।! जब कि पत्नीका धर्म तो यह है कि वह पतिके कार्यको अपनेमें अमर बनायें। पति-पत्नीमें से विकारको और "नर-नारी-भेद" को निकाल फेंके, तो यह आदर्श सारे संसारके लिअे प्रत्येक स्थितिमें लागू होता है? अर्थात् (पति-पत्नीका) यह प्रेम भगवानमें जाकर मिलता है। लेकिन अब अिस विषयको छोड़ दूं।

तू धीरूके आनेकी खबरसे परेशान क्यों होती है? अुसे भी बसमें करनेकी हिम्मत रख, जितना विश्वास रख। प्रेम सबको जीत लेता है, यह अमर वाक्य तू हृदयमें अुतार ले। चाहे जो आवे, हमारा धर्म तो गुण ग्रहण करनेका ही है। हमें तो हो सके जितनी सेवा ही करनी है न? तू अैसा क्यों नहीं मानती कि दूसरे बच्चे अगर सचमुच सुधरे होंगे, तो वे धीरूको सुधारेंगे? संभव तो यह भी है कि धीरू अब सयाना हो गया होगा। मैंने तो अैसी आशा रखी ही है।

लड़कियोंके लिअे परेशानी अुठाना तेरा कर्तव्य है। अगर वे किसीसे पूरी बात ही न कहें, तो सब बीमार ही पड़ेंगी। आनन्दीको लिखा हुआ पत्र पढ़ना। अगर आनन्दी वह पत्र दे तो अैसी सब लड़कियोंको, जो समझदार हो गअी हैं, वह पत्र पढ़कर सुनाना चाहिये।

केलेमें वायु पैदा करनेका गुण है अैसा मैंने तो कभी अनुभव नहीं किया। मेरे जितने केले शायद ही किसीने खाये होंगे। बहुत वर्षों तक केला मेरी मुख्य खुराक रहा। दूध नहीं, रोटी नहीं। केले और जैतूनका तेल तथा मूंगफली और नीबू — जितना ही मैं लेता था। लेकिन वायुकी शिकायत मुझमें नामको भी नहीं हुअी। वर्षों बाद अब फिर लेता हूं। लेकिन कोअी खराब असर अपने शरीर पर नहीं देखता।

केले खानेका अेक नियम जरूर है। या तो केले आग पर पकाये हुअे हों या बिलकुल पक्के हों। कच्चे केलेमें केवल स्टार्च होता है। स्टार्च पकाये बिना नहीं खाया जा सकता, यह अुस गोपालरावके प्रयोगमें

ततः कथाया कस्याचिद्राघवः समभाषत।
का कथा नगरे भद्र वर्तन्ते विषयेषु च॥
मामाश्रितानि कान्याहुः पौरजानपदा जनाः।
किं च सीता समाश्रित्य भरतं किं च लक्ष्मणम्॥

अपने विषयमें तथा अपने सगे-सबंधियोंके विषयमें प्रजा क्या कहती है, यह जाननेके लिअे रामने अपने अेक मित्रसे अूपरका प्रश्न किया। पहले तो मित्रने मीठी मीठी बातें करके 'प्रजा राजा पर प्रसन्न है, अुनकी प्रशंसा करती है' अैसा ही कहा। परन्तु जब रामने प्रतिकूल मत भी सुननेका आग्रह किया तब अुसने कहा

शृणु राजन् यथा पौराः कथयन्ति शुभाशुभम्।
चत्वरापणरथ्यासु वनेषूपवनेषु च॥१३॥
दुष्करं कृतवान् रामः समुद्रे सेतुबन्धनम्।
अश्रुतं पूर्वकैः कैश्चिद्देवैरपि सदानवैः॥१४॥
रावणश्च दुराधर्षो हतः सबलवाहनः।
वानराश्च वशं नीता ऋक्षाश्च सह राक्षसैः॥१५॥
हत्वा च रावणं सङ्ख्ये सीतामाहृत्य राघवः।
अमर्षं पृष्ठतः कृत्वा स्ववेश्म पुनरानयत्॥१६॥
कीदृशं हृदये तस्य सीतासंभोगजं सुखम्।
अङ्कमारोप्य तु पुरा रावणेन बलाद्धृताम्॥१७॥
लङ्कामपि पुरा नीतामशोकवनिकां गताम्।
रक्षसां वशमापन्नां कथं रामो न कुत्सते॥१८॥
अस्माकमपि दारेषु सहनीयं भविष्यति।
यथा हि कुरुते राजा प्रजा तमनुवर्तते॥१९॥

अिन श्लोकोंमें यह स्पष्ट कहा गया है कि राज्यमें सर्वत्र सीताकी निन्दा की जाती थी। रास्ते, चौराहे, बाग-बगीचे, दुकानें, अरण्य — जहां भी लोग अेक-दूसरेसे मिलते थे वहां बातें होती थीं और राजा रामकी निन्दा की जाती थी। अिसलिअे रामायणमें तो 'लोकमत' का स्पष्ट प्रकट होना बताया गया है। अुसमें धोबीका किस्सा नहीं मिलता।

ढोंग होता है। लेकिन यह ढोंग भी बुरा है। ढोंग आखिरमें आदतका रूप ले बैठता है, जिससे कभी बार व्यर्थमें गलतफहमीके कारण अुत्पन्न हो जाते हैं। अैसा न हो अिसके लिअे मनुष्यको बहुत सावधानीसे चलनेकी जरूरत है। मैं मानता हूं कि अत्यधिक नम्रताके बिना अन्त तक अकेले टिके रहनेकी शक्ति प्राप्त होना असंभव है। और यह शक्ति आ गभी हो तो ही वह सच्ची चीज मानी जायगी। अुसकी परीक्षा किसीमें होती है। बहुतसे मनुष्य जो बहादुर माने गये हैं, वे सचमुच बहादुर थे या नहीं, यह परखनेका अवसर ही समाजको नहीं मिलता। अब तो अम्तुलबहनका पत्र भी पढ़ना।

बापू

८८

['लोकमत' के विषयमें मैंने अपने पत्रमें चर्चा की थी। लोकमतका किस हद तक आदर करना चाहिये? रामायणमें धोबीका किस्सा आता है। राग-द्वेषमें भरे हुअे अेक मामूली धोबीकी निन्दा सुनकर राजा रामने अपनी निष्पाप पत्नी सीताका त्याग कर दिया! अिसके सिवा, अेक बार तो सीताजीकी अग्नि-परीक्षा हो चुकी थी, फिर भी अुन्हें देशनिकाला भोगना पड़ा। अैसे 'लोकमत' की कीमत आखिर कितनी है? यह मेरा प्रश्न था। पूज्य महात्माजीने अिस पत्रमें मेरे प्रश्नका जो अुत्तर दिया अुससे मुझे संतोष नहीं हुआ। मैंने छोटी अुमरमें वाल्मीकिकी रामायण पढ़ी थी। अिससे अुसकी सारी विगत तो याद नहीं थी। अिसलिअे अनुकूल समय मिलने पर वह ग्रंथ मंगाकर मूल वृत्तांत पढ़ जानेका मैंने संकल्प किया। अुस संकल्पको पूरा होनेमें अनेक वर्ष लग गये। लेकिन ग्रंथ मिलने पर अुसमें (अिस किस्सेसे सम्बन्ध रखनेवाला) जो वृत्तांत मैंने पढ़ा वह बिलकुल अलग ही था।

रामायणके अुत्तरकाण्डके तैंतालीसवें सर्गमें यह प्रसंग आता है। राजा राम अपने समवयस्क मित्रोंके बीच बैठकर बातचीत कर रहे थे।

१८-८-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

राखी मिली, दो दिन देरसे। लेकिन मैंने तो मान लिया था कि सोमवारको मिल गयी।

केले अनुकूल न आवे तो जबरदस्ती खानेसे लाभ नहीं होगा। हरअेकके पेटकी विशेषता तो होती ही है।

तेरे क्रोधके पृथक्करणको मैं अच्छी तरह समझ गया हूं। तू अुसे जीतना। तू अुसे जरूर जीतेगी, अैसा मेरा विश्वास है। अपने पत्रमें से जो भाग तूने वापिस नहीं लिया अुसे मैं समझा। वापिस नहीं लिया यह ठीक ही था। अपनी कोअी जरूरत हो तो अुसे न कहनेमें भारी अभिमान और अन्याय है और अिससे प्रियजनों पर बहुत बोझ भी पड़ता है। विनय और निरभिमानता तो हमारी जरूरतें जाननेके कष्टसे प्रियजनोंको बचा लेते हैं। यह विनयका पहला पाठ है। अब अिसे सीख।

कृष्ण नायरको लिखना कि अुसे मैं बहुत याद करता हूं।

तू राजकोट गयी, यह तो ठीक ही हुआ। अिनना (आराम) तेरी तन्दुरस्तीके लिअे जरूरी है अैसा मालूम होता है।

लोकमत यानी जिस समाजके मतकी हमें जरूरत है अुसका मत। यह मत नीतिके विरुद्ध न हो तब तक अुसका आदर करना हमारा धर्म है।

धोबीके किस्से परसे शुद्ध निर्णय करना कठिन है। हमें तो आज वह बिलकुल नहीं रुचेगा। अैसी आलोचना सुनकर अपनी पत्नीका त्याग करनेवाला पुरुष निर्दय और अन्यायी ही कहा जायगा। लेकिन रामायणमें कविने अिस घटनाको किस दृष्टिसे स्थान दिया है, यह मैं नहीं कह सकता। हमारा काम अुस विवादमें पड़ना नहीं है। मैं तो अिस झगड़ेमें नहीं पड़ूंगा। रामायण जैसी पुस्तकको भी मैं अिस दृष्टिसे नहीं पढ़ता।

लड़कियोंके साथ मेरी छूटसे आश्रमवासियोंको यदि आघात पहुंचे, तो मुझे अुस छूटका अुपयोग करना बन्द कर देना चाहिये, अैसा मैं

वाल्मीकिकी रामायणके बाद दूसरी रामायणें रची गअीं, भवभूति जैसे प्रतिभाशाली लेखकने रामकी कथा पर नाटक लिखे, अुनमें धोबीका किस्सा दाखिल कर दिया गया।

अहल्याको अुसके पति गौतम ऋषिने शाप देकर हजारों वर्ष तक पत्थरकी शिला बनाये रखा, शबरीने रामको जूठे बेर खिलाये, रामके पुत्र लव और कुशने रामके अश्वमेध यज्ञका घोड़ा पकड़ लिया और अपने पिताके साथ युद्ध किया — आदि कथाओंके लिअे वाल्मीकिकी रामायणमें कहीं भी कोअी आधार नहीं है। ये सब कथायें बादके काव्योंमें रची गअी मालूम होती हैं। अिसलिअे वाल्मीकिकी रामायण अितिहास-ग्रन्थ है जब कि बादकी रामायणें भक्तिकाव्य हैं।

यह अनुसन्धान करनेके बाद बात मेरे हाथमें आअी। और किसी दिन यह सब महात्माजीको सुनानेका मैंने संकल्प किया।

पू० महात्माजी सेवाग्राममें रहने लगे अुसके बाद अेक बार मैं कुछ दिनके लिअे अुनके साथ रहने वहां गअी थी। अेक दिन हम कुछ बहनें पूज्य महात्माजीके साथ घूमने गअीं। बात-बातमें अेक बहनने धोबीका किस्सा सुनाकर राजा रामकी निन्दा शुरू कर दी। तब महात्माजी अुसके सामने वही दलीलें पेश करने लगे जो अुन्होंने अिस पत्रमें की हैं। अिसलिअे मुझे जोश आ गया। बीचमें पड़कर मैंने वाल्मीकि रामायणमें पढ़ा हुआ पूरा वृत्तान्त पू० महात्माजीको सुनाया और कहा "वाल्मीकिने तो रामके साथ अन्याय हो अैसा कुछ नहीं लिखा है। लेकिन लोग गहराअीमें अुतरते नहीं, शोध करते नहीं और अकारण ही रामकी निन्दा करते हैं।" मेरे मुंहसे रामायणका मूल वृत्तान्त सुनकर महात्माजीको अच्छा तो जरूर लगा, लेकिन अुन्हें ताना मारनेका मौका मैंने हाथसे जाने नहीं दिया। मैंने जरा आवेशमें अुनसे कहा "महात्माजी, मुझे बहुत बार अैसा लगता है कि आप अैतिहासिक दृष्टिसे विचार नहीं करते।"

अुनका विशिष्ट स्वभाव प्रकट करनेवाला अुत्तर महात्माजीके मुंहसे निकला. "जहां नीतिके साथ सम्बन्ध नहीं होता वहां मैं अैतिहासिक दृष्टिको नहीं मानता।"]

[पत्रके पूर्वार्धमें रचनात्मक सेवाके क्षेत्रमें काम करनेवाले अेक भाजीके बारेमें महात्माजीकी राय है। अुनकी पत्नी गुजर गअी थी। वर्षों बाद अेक युवतीके साथ अुनका प्रेम हुआ। अुनके बारेमें अपनी अपेक्षा पूज्य महात्माजीने बताअी है। आगे ता० ११–९–'३२ के पत्रमें अिसी विषय पर ज्यादा लिखा है।]

यरवडा मन्दिर,
२६–८–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे विशेषण प्राप्त करनेके लिअे ही तो तू अुन अलग अलग विशेषणोंके लायक गुण प्रगट नही करती न? अैसा करेगी तो विशेषणोंकी कोअी कीमत ही नही रह जायगी।

काठियावाडमें जितना द्वेषादि दिखाअी देता है, अुतना और जगह नहीं दिखाअी देता। अिसलिअे तूने अिसका प्रदर्शन भी देखा, अिसमें मुझे कोअी आश्चर्य नही लगता। द्वेषादिका प्रदर्शन वहां बिना तैयारीके देखनेमें आता है। और अिसमें . . . जैसा तो स्तब्ध ही हो जाय। लेकिन . . . के . . . में होते हुअे भी वह . . . की ग्लानि दूर न कर सके, यह विचित्र बात है। श्रावणी पूर्णिमाके दिन अुसने राखी तो बांधी ही होगी। लेकिन यह काम क्या अुस सूतके डोरेसे ही पूरा हो गया? . . . के शोकका कारण जान लेना और अुसे दूर करना . . . की शक्तिके बाहर नहीं होना चाहिये। . . . अपनी पत्नी . . . की पूजा करता था। मैं यह मानता हूं कि दोनों विवाहित होने पर भी ब्रह्मचर्यका पालन करते थे। . . . के चल बसनेसे . . . को भारी आघात पहुंचा है। . . . की अन्दर ही अन्दर विवाह करनेकी शायद अिच्छा हो, लेकिन अपनी स्थितिको वह स्वयं भी नही जान सकता। लेकिन अुसे स्वयं अपने जैसी ही भावना-वाली स्त्री चाहिये। अैसी स्त्री तो मिले या न मिले, लेकिन अिसके बदलेमें भावना-प्रधान बहन मिल जाय तो शायद . . . का विकास हो

समझता हूं। अैसी छूट लेनेका न तो काअी स्वतन्त्र धर्म है, और न छूट लेनेमें नीतिका भंग है। लेकिन अैसी छूट न लेनेसे लड़कियों पर बहुत बुरा असर पड़े, तो मैं आश्रमवासियोंको समझाअूंगा और छूट लूंगा। लड़कियां ही मुझे न छोड़ें, तब देखना मेरा काम होगा। मैं जो छूट जिस तरह लूं, अुसकी नकल दूसरे किसीसे नहीं हो सकती। यह चीज स्वाभाविक हो जानी चाहिये। 'आजसे मुझे छूट लेनी है' अैसा विचार करके कृत्रिम रूपसे कोअी छूट नहीं ले सकता, और यदि कोअी ले तो वह गलत ही माना जायगा। नारणदासको जैसा अुचित लगे वैसा करनेके लिअे वह स्वतन्त्र है। मुझे अुसकी आलोचना करनेकी अिच्छा भी नहीं होगी। मूल बात यह है कि जो मनुष्य विकारवश होकर निर्दोषसे निर्दोष लगनेवाली छूट भी लेता है, वह खाअीमें गिरता है और दूसरेको भी गिराता है। हमारे समाजमें जब तक स्त्री-पुरुषका संबंध स्वाभाविक नहीं हो जाय, तब तक जरूर सावधानीसे चलनेकी जरूरत है। अिस बारेमें सब पर लागू हो सके अैसा कोअी राजमार्ग नहीं है। तेरे अपने व्यवहारमें शालीनताका अभाव मालूम होता है। तेरी स्वाभाविक निर्दोषता तुझे बचाती है। लेकिन तू अुस पर अभिमान करती है और अुसे हठपूर्वक पकड़े रहती है, यह बिलकुल ठीक नहीं है। अिसमें अविचारीपन है। आज अिसका नुकसान तुझे दिखाअी नहीं देता। लेकिन किसी दिन जरूर पछताना पड़ेगा। अभिमान किसीका भी नहीं टिका है। सारी लौकिक मर्यादायें बुरी हैं, यह कहकर समाजको आघात नहीं पहुंचाया जा सकता। अब लोकमतके बारेमें कुछ समझी?

धुरन्धरसे कहना कि मेजरकी कही हुअी बातको याद रखे। अुसे स्वयं आसनोंका घूमता फिरता विज्ञापन बन जाना चाहिये[१]।

बापू

१ भाअी धुरन्धर योगासनोंके अभ्यासी थे और जहां जाते वहीं लोगोंमें अुनका प्रचार करते थे।

जन्माष्टमीके लिये तू आश्रममें पहुंच गजी, यह ठीक ही हुआ। दंश, क्रोधको जीतना। धीरू तेरे साथ आनेको तैयार ही नहीं हुआ, यह तू जानती है? धीरू पर क्रोध मत करना। वह बालक है, तू बालक नहीं है। धीरूको जीतनेमें तेरी जीत है। अुसे न जीतनेमें तेरी हार है।

अच्छे संस्कारोंवाले माता-पिताकी परीक्षा कौन कर सकता है? जब गर्भ रहे तब माता-पिताकी स्थिति कैसी थी, यह कौन कह सकता है? जिससे मुझे लगता है कि अच्छेका फल अच्छा ही होता है, जिस निरपवाद नियमसे चिपके रहनेमें ही लाभ है। हर बार हम अमुक व्यक्तिके बारेमें यह नियम सिद्ध न कर सकें, तो जिसमें हमारा अज्ञान ही सकता है, नियमकी अपूर्णता नहीं।

दैवको मैं मानूं तो भी अुसे मिथ्या नहीं किया जा सकता।[1] दैव अर्थात् पूर्वकर्मोंका प्रभाव।

वेश्याका अुद्धार करनेके लिअे पुरुषोंको अपनी पशुता छोड़नी होगी। जब तक पुरुष-पशु जिस जगतमें रहेंगे तब तक वेश्यायें भी रहेंगी ही। वेश्या अपना धंधा छोड़े और सुधरे, तो अुसके साथ 'कुलीन' कहे जाने-वाले पुरुष जरूर विवाह करें। अेक बार वेश्या बन जानेवाली हमेशा वेश्या ही रहेगी, अैसा नियम नहीं है।

सेनाके लिअे लड़कियोंको भगाया ही जाता है, अैसी मान्यतामें मुझे अतिशयता लगती है। सुव्यवस्थित राज्यमें अैसा कभी नहीं हो सकता।

मलाबार तटके रहनेवाले लोग अैसी आबहवा छोड़नेके बाद भी नारियल हजम कर सकते हैं, अैसा मानना गलत है। तादलजाकी भाजीमें नारियल डालकर तूने तादलजाका असर कमजोर कर दिया। मैंने खुद तो नारियलका प्रयोग बहुत किया है। मुझे अुससे लाभ नहीं हुआ। लेकिन जहां वह पैदा होता है वहां दूसरी चीजोंके साथ अुसे मिलाना आवश्यक हो सकता है।

बापू

---

१. 'आप दैवको मानते हैं?'—मेरे जिस प्रश्नका यह अुत्तर है। 'दैवको मैं न मानूं तो भी' अैसा वाक्य होना चाहिये था, अैसा मुझे लगता है।

और वह सुले।   को मैंने पूर्ण ब्रह्मचारिणी माना है। अुसका
.   के प्रति मित्रताका भाव है। अुसमें भी भावना है। तूने   की
खिन्नताके बारेमें लिखा है। अिसलिअे अितना लिखनेकी मुझे प्रेरणा
हुअी।   को मैंने अच्छी तरह पहचाना है। तुझे अैसा लगे और
यह भी लगे कि अूपर बताया काम अुसकी शक्तिसे बाहर नहीं है, तो
यह पत्र तू खुशीसे अुसे भेजना। यह काम अुसकी शक्तिसे बाहर या
अुसके क्षेत्रसे बाहर लगे तो पत्रका अितना हिस्सा तू भूल जाना।   .
शुद्ध प्रेमका भूखा है। लेकिन   में राग और विराग भरे हैं। बहुत
थोड़े लोगोंको ही वह चाह सकता है। अिसलिअे मन ही मन घुटता रहता
है। अैसे आदमीको पत्नीकी जरूरत कम रहती है। पत्नीमें वह फंस सकता
है। अुसके लिअे विकारशून्य बहनकी जरूरत है। वह मिले तो
का जीवन सुधर जाय।

हमारे समाजमें स्त्रियां विकारशून्य होनेका यह गुण अपनेमें पैदा नहीं करतीं। अुन्हें पत्नी बनना आता है, बहन बनना नहीं आता। बहन बननेमें बहुत बड़ी त्यागवृत्तिकी जरूरत होती है। जो पत्नी बनती है वह पूरी तरह बहन बन ही नहीं सकती, यह मुझे तो स्वयंसिद्ध लगता है। सच्ची बहन सारे जगतके लिअे हो सकती है। पत्नी तो अपनेको अेक पुरुषके हाथमें सौंप देती है। पत्नीके गुणकी जरूरत है, लेकिन वह पैदा नहीं करना पड़ता, क्योंकि वहां विकार शांतिके लिअे अवकाश है। जगतकी बहन होनेका गुण कष्टसाध्य है। अैसी बहन तो वही हो सकती है जिसमें ब्रह्मचर्य स्वभावसिद्ध हो और जिसने सेवाभाव अुत्कृष्ट स्थितिको पहुंचा हो।   जितनी दूर तक पहुंची है अैसी छाप मेरे अूपर नहीं पड़ी। लेकिन यहां तक पहुंचनेकी शक्ति अुसमें है अैसा मुझे जरूर लगता है। अैसी छाप पड़नेमें तू स्वयं कारणभूत है। तो मेरे मनमें जो कुछ आया वह सब मैंने यहां लिख दिया है। तू खुद अैसी आदर्श बहन बने, यह तो मेरी कोशिश है ही। काम कठिन है। लेकिन प्रभुको करना होगा सो करेगा।

तूने प्रदर्शनका वर्णन ठीक किया है। तेरे वर्णन तो हमेशा पढ़ने विचारने योग्य होते ही हैं।

अनुकरण तुझे क्यों करना चाहिये? अपने अनुभवोंमें से मैं तुझे जो कुछ दूं, अुसका तू अुपयोग कर। साथीके दोषोंको अपनाना नहीं चाहिये, बल्कि अुन दोषोंसे बचना चाहिये और अुसमें जो गुण हों अुन्हें ग्रहण करना चाहिये। फिर मैं तेरी तरह हारकर नहीं बैठता, लेकिन कठोरतम हृदयको भी अीश्वरकी कृपासे पिघलानेकी आशा रखता हूं और अुसके लिअे प्रयत्नशील रहता हूं।

तू रसोअीघरमें अखबार पढ़कर सुनाती हो और आनन्द लेनेके लिअे मजाक भी करती हो, तो मैं अुसे खराब ही मानूंगा। रसोअी-घरमें तो मौन ही रखना चाहिये। वहां क्या सुनाना? अिसके सिवा नारणदासका ध्यान तो चारों तरफ लगा हुआ होना चाहिये। वहां तू पढ़े और सुनाये अिसे मैं ठीक नहीं मानता। तेरा पढ़ना भी रसोअीघरमें तो गम्भीरतासे ही होना चाहिये। अिसलिअे अितना सुधार तो तू कर ही लेना। अगर तू रसोअीघरमें विनोद और नखरे करे, तो छोटे बच्चोंका क्या होगा? और वे सब भी वैसा ही करने लगें, तो रसोअीघर 'रीछोंका बाग'* बन जाय और वहांका अनुशासन भंग हो जाय। यह सब 'स्मार्ट लिटल गर्ल' के 'स्मार्ट' दिमागमें अुतरा या अुसकी सारी 'स्मार्टनेस' आश्रममें चोरी हो गअी?

अिस बार अिससे ज्यादा नहीं।

बापू

९१

११-९-'३२

चि० प्रेमा,

तू धीरज और विश्वास रखेगी तो मेरी 'स्वभाव-पुस्तक' के सारे पृष्ठ तेरे सामने खुल जायेंगे। 'जो मुझे (सत्यको) प्रेमपूर्वक सतत भजता है अुसे मैं बुद्धियोग देता हूं।' यह सत्य भगवानका वचन है। अिसके मननसे मेरे स्वभावके सब पृष्ठ खुल जाते हैं। पुस्तक सामने पड़ी हो तो भी अुसे पढ़ना न आये या पढ़नेकी कोअी तकलीफ न अुठाये, तो

* Bear-garden शोरगुलका स्थान।

९०

य० मंदिर,
३१-८-'३२

चि० प्रेमा,

अिस बार तुझे कौनसा नया विशेषण दूं, यह सूझ नहीं रहा है। तू जो मांगेगी वही दे दूंगा।

परचुरे शास्त्रीके लिअे मंगाअी हुअी पुस्तकें अभी मिली नहीं हैं, लेकिन अब मिल जायगी।

मैं यह नहीं मानता कि अुन दो बहनोंके आनेसे अैसा कहा जा सकता है कि पढ़ी-लिखी बहनें (आश्रममें) आने लगीं। अैसे तो कोअी भूली-भटकी आ ही पहुंचती हैं। अुनमें से किसीका अभी तक हम संग्रह नहीं कर सके। तुझे पढ़ी लिखी मानें और आश्रममें संगृहीत मानें, तो मान सकते हैं। लेकिन यह तो अपवाद हुआ। अेक चिड़ियाके आनेसे गरमी आ गअी, अैसा थोड़े ही कोअी मानेगा?

... के बारेमें मुझे अफसोस है। अुसे कताने भले ही छुट्टी दे दी। लेकिन अुसे भूल मत जाना। अुसके अूपर नजर रखकर सीधे रास्ते ला सके तो लाना। ... के बारेमें तेरी परेशानी मैं समझा। तेरे भीतर अुदारता और हिम्मत हो तो अुसके बारेमें ... और ... बहनसे तुझे बात करनी चाहिये और अुसके हितका कोअी मार्ग निकालना चाहिये। अपने मार्गमें हम खुद ही कांटे बोते हैं और फिर अुनके चुभनेकी शिकायत करते हैं। अपनी खुदकी शक्तिको लेकर जाय तो हम शायद कहीं भी सफल न हों, लेकिन अीश्वरकी शक्तिको लेकर जाय तो घोर अंधकारमें भी हमें प्रकाशके दर्शन हो सकते हैं। "मेरे अंदर प्रेम हो तभी न?"—यह कहकर तू नाराज हो जाय, तो मेरा कहना निरर्थक है। अिसके सिवा, मैं मानता हूं कि मेरे अंदर प्रेम है। फिर भी मैं बहुतोंको क्या नहीं जीत सका? तब फिर तुझसे कहनेका मुझे क्या अधिकार है, अैसा मुझे सुनाकर तू अपना हृदय-द्वार बन्द कर ले तो भी मैं लाचार हो जाअूंगा। अपनी अपूर्णताको मैं स्वीकार करता हूं। अुसका

सब नओी बहनोंकी तू अच्छी तरह देखभाल रखती होगी। दूस काम कम करके भी यह काम अच्छी तरह करना।

किसनके बारेमें अखबारमें पढा था। धुरन्धरका काम सुन्दर है लेकिन अुसे शरीरको मजबूत बनाना चाहिये। अुसका वजन कितना है?

तेरे बारेमें आनन्दीके पत्रमें मैंने क्या लिखा है, लीलावतीसे क्य कहा है, मुझे याद नही है। मुझे तेरे आजके ब्रह्मचर्यके बारेमें जरा भ दावा नहीं है। कल्की बात मैं नही जानता। तू जानती हो तो नारदजी और रामजीसे भी तू विशेष कही जायगी। अिसके बावजूद भी तेरे सकल्पक तो मैंने हमेशा स्वागत ही किया है। तुझे झट कोअी फुसला ले, अैसा मैं नहीं मानता। लेकिन तेरे जैसी ही दृढ स्त्रियोको भी मैंने विवाह करते देखा है। अिसमें अुनका भी क्या दोष? अिसलिअे अभी तो मैं तेरे बारेमें अैसी अिच्छा ही रख सकता हू। तुने आशीर्वाद दूगा। मुझसे हो सकेगी अुतनी तेरी मदद करूगा, मुझसे हो सके अुतने प्रहार भी तुझ पर करूगा। अतमें तो तेरे और भगवानके हाथमें (सब) है।

तेरे पत्र जैसे आते है, वैसे ही मुझे चाहिये। तू कृत्रिम बन जाय तो मेरे लिअे बेकार हो जायगी। तेरे भीतर गाठें पडी हुअी हैं। मैं जैसे जैसे अुन्हे देखता जाअू वैसे वैसे ही अुन्हे खोलनेका प्रयत्न कर सकता हूं। लेकिन मैं खोलनेवाला कौन? यह काम मनुष्यके वशका नही है। मुझे भगवान जिस हद तक निमित्त बनने दे अुसी हद तक मैं बन सकता हू। अिसमें मेरा स्वार्थ है, क्योंकि तुझसे तो मुझे बहुत ज्यादा काम लेना है। तेरे भीतर जो बातें मैं अुडेल रहा हू वे व्यर्थ जानेवाली हैं, यह मान लू तो अितने लबे पत्र लिखनेकी तकलीफ अुठाअूगा?

किसी व्यक्ति या समाजकी अवनतिका कारण ठीकसे खोजा गया हो, अैसा जाननेमें नही आया। अनुमान तो बहुत लगाये जाते हैं। तात्कालिक कारण मिल भी जाते हैं और वे हमेशा अेकसे नहीं होते। लेकिन सामान्य रूपसे यह जरूर कहा जा सकता है कि अवनतिके मूलमें धार्मिक न्यूनता जरूर होती है। परतत्रता कभी मूल कारण नही हो सकती, क्योंकि वह स्वय दूसरे कारणोका, दुर्बलताओंका परिणाम होती है।

पडोसीका कर्तव्य हमेशा पडोसीको धार्मिक रीतिसे मदद करना है।

दोष किसका? लेकिन यह तो बहुत कह दिया। फिर भी मैंने तुझे यह पुस्तक पढ़नेका तरीका बता दिया। तू कहेगी कि यह तो तू जानती ै थी। अैसा कहे तो मैंने तुझे जो सर्वज्ञ कहा है, वह सच ही निकला माना जायगा न?

तू . को मेरे सब पत्र भेजती है, अुसमें मुझे कोअी आपत्ति हो ही नहीं सकती। आखिरी पत्र तो अुन्हींसे संबंधित था, अिसलिअे मैंने (अुनके पास भेजनेकी) विशेष अिच्छा प्रकट की। अब जो लिखने जैसा लगे सो लिखना। की औषधि मैं नहीं खोज सका, अैसा .. लिखती है वह सच है। लेकिन यह अधूरा वचन है। औषधि तो मैंने खोज ली। लेकिन वह मेरे पास न हो तो मैं क्या करूं। अुसकी औषधि स्त्री थी — अैसी स्त्री जो अुसे पसन्द आये और जिसके साथ वह विवाह कर ले या जो अुसके लिअे सगी बहनसे भी बढ़कर हो जाय। . के अूपर मेरी नजर तभीसे थी जबसे मैंने था अुसके प्रति और अुसका के प्रति राग देखा। जिस नागकी निर्मलता मैंने मान ही ली थी। फिर भी किसी मौकेके बिना में अूपर मैं जिम्मेदारी कैसे डालूं? तेरे पत्रने मुझे वह मौका दे दिया। मेरा निदान ठीक है या नहीं, यह औषधि है या नहीं, यह मैं नहीं जानता। शायद भी नहीं जानती। यह तो प्रयोग करने पर ही मालूम हो सकता है। मैं तो की स्वस्थता चाहता हूं। जिसके बिना अुसकी शक्ति कुंठित रहती है और वह क्षीण होता जाता है। काम तो वह करता जाता है, लेकिन अुसमें अुसे रस आता है या नहीं, जिसका भी अुसे पता नहीं चलता।

मेरे बचपनकी बातें शायद तू काफी पूरा लाअी है।[1]

रमाबहन बीमार हैं। यह तू जानती है? अरे, अुसके साथ बात तो कर। हमारी कल्पना हमें जितना डरपोक बनाती है, अुतने डरका कारण वस्तुस्थितिमें कभी होता ही नहीं है। 'कल्पना भूत और शंका डाकिन' यह कहावत बिलकुल सच्ची है। शत प्रतिशत सच्ची है।

---

१ श्री नारणदास काकाकी मासे मैं मिली तब अुनसे पूज्य महात्माजीके बचपनकी कअी बातें सुननेको मिली थीं। अुनमें से कुछ मजेदार हालें मैंने महात्माजीको पत्रमें लिख भेजी थीं।

नाम तेरा कॉलेजका स्मरण बनाये रखनेके लिअे प्रेमा रखा है। तू कितनी 'स्मार्ट' रहती है, अिसकी परीक्षा अब हो जायगी।

पास होगी या नहीं?

बापू

दूसरा पत्र समय मिला तो बादमें लिखूगा।

९३

[पू० महात्माजीके हरिजनोंसे सम्बन्धित ११ दिनके पहले अुपवासके कारण पत्रव्यवहार बीचमें बन्द रहा। अुपवास समाप्त होते समय मैंने अीसाअी स्तोत्र 'Abide with me' में से दो कडियां लिख भेजी थी। अुपवास २० सितम्बर, १९३२ के दिन शुरू हुआ था।]

य० म०
२-१०-'३२

चि० प्रेमा,

आज लम्बा पत्र नहीं लिखा जायगा। तेरे काटनेसे कौन डरता है? हमारी बिल्ली बहन अपने बच्चोंको जैसे जैसे काटती है, वैसे वैसे वे अुसकी गोदमें घुसते हैं। बिल्ली अपने दांतोंके बीचमें जब सोमाको लेती है तब सोमा रोता नहीं, लेकिन अपनेको सुरक्षित मानता है। वैसे ही तेरा काटना होगा।

तूने सुन्दर कडियां लिख भेजी हैं। तेरे संयमको भी सुंदर मानता हूं। लेकिन तेरे लिअे या आश्रमवासियोंके लिअे खुश होनेका कोअी कारण नहीं है। बूढ़े अब्बासजी,[1] रेहाना वगैरा अुपवासके बारेमें जानकर नाचे। मेरे पास आनेकी अिच्छा भी प्रगट नहीं की। अीश्वरका हाथ मेरे सिर पर है ही, अैसा अुन्होंने माना और अपने अपने काममें लगे रहे। अैसा दूसरोंने भी किया। लेकिन बोल, अुपवासके दिनोंमें तूने कितना वजन बढ़ाया?

बापू

१. श्री अब्बास तैयबजी। बड़ौदाके अेक समयके न्यायाधीश, दांडी-कूचमें पूज्य महात्माजीके साथी। अुनकी पुत्री श्री रेहानाबहन।

अहंकारके बीज [अपनी] शून्यता अनुभव करनेसे ही [नष्ट] होते हैं। अेक क्षणके लिअे भी कोअी गहराअीमें जाकर विचार करे, तो अुसे अपनी अति अल्पताका भान हुअे बिना न रहे। पृथ्वीके प्राणियोंकी तुलनामें हम जंतुको तुच्छ मानते हैं; किन्तु अिस जगतकी तुलनामें मनुष्य प्राणी हजार गुना अधिक तुच्छ है। मनुष्यमें बुद्धि है, अुससे अिस स्थितिमें कोअी फर्क नहीं पड़ता। अुसकी महिमा ही अपनी तुच्छता अनुभव करनेमें है। क्योंकि अिस अनुभवके साथ ही दूसरा ज्ञान पैदा होता है, वह यह कि जैसे यह मनुष्यके रूपमें तुच्छ है वैसे ही भगवानका तुच्छतम अंश होते हुअे भी जब भगवानमें अुसका लय होता है, तब वह भगवानरूप बन जाता है; और अुस सूक्ष्म अणुमें भगवानकी शक्ति भरी हुअी है।

मायावादको मैं अपने ढंगसे मानता हूं। कालचक्रमें यह जगत माया है। लेकिन जिस क्षण तक अुसका अस्तित्व है अुस क्षण तक वह जरूर है। मैं अनेकान्तवादको मानता हूं।

अगर कोअी भी वस्तु मनुष्यके सामने प्रत्यक्ष हो तो वह मृत्यु तो है ही। अैसा होते हुअे भी अिस अनिवार्य प्रत्यक्ष वस्तुका भारी डर लगता है यही आश्चर्य है, यही ममता है, यही नास्तिकता है। अुससे तर जानेका धर्म अकेले मनुष्यको ही सुलभ है।

पाप-पुण्य मृत्युके बाद भी जीवके साथ जाते ही हैं। जीव जीवके रूपमें अुन्हें भोगता है। फिर भले वह दूसरे दृश्य शरीरमें हो या सूक्ष्म शरीरमें।

अब तो बहुत हो गया न?

बापू

९२

१९-९-'३२

चि० प्रेमा,

आज तो पत्र लिखते लिखते थक गया हूं। डाक निकलनेका समय भी हो गया है। अिसलिअे छोटा ही पत्र लिखता हूं। दूसरा बादमें। हमारे पास नअी बिल्ली है। वह 'स्मार्ट लिटल गर्ल' है। अिसलिअे अुसका

अपनी प्रेमीसे तो हम अलग हो गये हैं, क्योंकि हमें दूसरी जगह पर रखा गया है। अुसका वियोग खटकता तो है, लेकिन क्या करें? जिन्दगी वियोगका समुदाय ही है न?

बापू

९५

य० मंदिर,
१५-१०-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सबके समाचार दिये यह ठीक किया। लीलावतीका काम कठिन है। तुझ पर अुसे श्रद्धा है, अिसलिअे तू कुछ कर सके तो करना। वह है भली, अुसका हेतु शुभ है, लेकिन बहुत विह्वल और अव्यवस्थित चित्तवाली है। प्रेमसे जो किया जा सके करना।

तेरा वजन घट रहा है, अिसका कारण खोजकर तुझे दूर करना चाहिये। दूध वगैरा कम लेती हो तो ज्यादा लेना चाहिये। हठ करके सारे शरीरको कमजोर मत कर डालना। तुझे कोअी टूटी कमरवाली कहे तो मुझे सहन नहीं होगा।

. . ने माफी मांगी यह ठीक किया। अुसे आश्रय दे सके तो देना। वह बहुत होशियार है, यह मैंने देख लिया है। अपनी होशियारीका वह ठीक अुपयोग करे तो कितना अच्छा हो!

आश्रमके पैसेका अुपयोग जिनके लिअे होना चाहिये अुसीके लिअे होता है। फिर वह चाहे जो हो। लेकिन आलोचना तो चाहे जिस बातकी हो सकती है। भूलें होती होंगी, लेकिन आश्रमका हेतु हमेशा तटस्थतासे व्यवस्था करना रहा है।

आश्रमकी पाअी पाअीका हिसाब देखनेका लोगोंको अधिकार है। आश्रम व्यक्तिगत संस्था नहीं है। खर्चकी मर्यादा अुसकी आयसे संबंध रखती है। आश्रमके पास कौडी न हो तो भी अुसका काम चलेगा; करोड़ों हों तो वे भी आश्रम खर्च करेगा। देनेवालोंको विश्वास है तब

९४

[पू० महात्माजीके पत्र 'व्रत विचार' नामक पुस्तकके रूपमें छापकर श्री नारणदास काकाने अुसकी प्रस्तावना लिखी थी। अुस पर मैंने विनोद किया था।]

८-१०-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। प्रस्तावना लिखकर प्रसिद्ध होना हो तो अुसके लिअे योग्यता प्राप्त करनी चाहिये। यह योग्यता कैसे प्राप्त की जा सकती है, यह नारणदाससे पूछ लेना।

मुझे आराम मिल ही रहा है। ६ अुपवास मेरे जीवनमें कोआी बड़ी बात नहीं है। गयी हुआी शक्ति लगभग वापस आ गआी है। पत्रव्यवहारमें तो अब कोआी कठिनाआी नहीं होनी।

आश्रममें बीमारी आवे यह मुझे जरा भी पसन्द नहीं है। कहीं भी बीमारी लापरवाहीसे ही आती है। बीमारीके अिस महीनेमें खुराककी ठीक तरह सभाल रखनी चाहिये। बहुतसी बीमारियोंका कारण बिगड़ा हुआ पेट होता है।

वाली[1] तो मजबूत लड़कियोंमें गिनी जाती थी, वह भी कमजोर हो गआी! मैं देखता हू कि तेरे पास कुछ लड़किया कठिनाआी पैदा करनेवाली हैं। शान्ताके बारेमें ज्यादा जाने बिना यहासे मार्गदर्शन नहीं कर सकता। नारणदासके साथ सलाह करके जो अुचित लगे करना।

. का किस्सा भी विचारने जैसा तो है ही। दस वर्षकी लड़कीको मासिक धर्म हो यह भयकर बात है। [अुसकी बुआ] के साथ बात करके अुसके बारेमें ज्यादा जान लेना। सभव है कि वह शालामें जाती थी तब बुरी आदत सीखी हो।

---

१ विद्यालयकी अेक लड़की जिसका विवाह कुछ वर्ष बाद श्री लक्ष्मीदासभाआी आसरके पुत्र पृथ्वीराजके साथ हुआ।

से चापड़ निकालनेकी जरूरत नहीं होती। कैदियोंका साथ देनेके लिये और प्रयोगके रूपमें कुछ दिन तक यह प्रयोग करने लायक जरूर है। आजकल सुबह क्या दिया जाता है? अगर पहलेकी तरह गेहूंके आटेकी राब दी जाती हो, तो ज्वारकी देकर देखना बिलकुल सरल है। बहनोंको, विट्ठल, शान्ति वगैराको तो व्यक्तिगत अनुभव है। वे जो कहें वह सच्चा। मैं तो दूसरोंका कहा हुआ कहता हूं।

शान्ताने जो लिखा है असे मैं कुछ समझा नहीं। मुझे तो असने कुछ लिखा नहीं। तुझे अपना रहस्य बताये तो ठीक हो। शान्ता जो गुप्त रखना चाहे असे मैं जरूर गुप्त रखूंगा।

तूने जो प्रश्न पूछे हैं अुनका जवाब नहीं दे सकूंगा। अिसलिअे अभी धीरज रखना।

तेरी शक्ति और योग्यताका पार ही नहीं है। लेकिन अुनका मैं अुपयोग करूं तभी न? अभी तो ग्रेके अुन फूलों[1]की तरह वे जंगलमें बिखर जाती हैं।

हमारी बिल्ली बहनसे हम मिले तब वह सचमुच ही पागल बन गअी। हमें छोड़ती ही नहीं थी। अुसे हमारा वियोग जरूर बहुत खटका होगा। अब शान्त है।

बापू

९७

[साबरमती आश्रम सड़कके दोनों ओर बसा था। रोज सुबह सारे क्षेत्रकी सफाअी होती थी। लड़के और लड़कियां सफाअी करते थे और मैं कचरा-गाड़ी खींच-खींचकर सब ढेर अिकट्ठे करती थी। गाड़ीमें खराबी थी अिसलिअे ज्यादा शक्ति लगानी पड़ती थी। बरसातके मौसममें बरसात हो रही हो और मुझे मासिक धर्म चल रहा हो, तब भी यह काम मैं चालू रखती थी। अिसका कमर पर असर हुआ और

१ अंग्रेज कवि ग्रे की फूल-सम्बन्धी कविताका सन्दर्भ है.
'Full many a flower is born to blush unseen'

तक वे देंगे। संस्थाको ीश्वर चलाता है। देनेवालोंको वही प्रेरणा देता है।

मेरी दृष्टिमें तो जो भी बाहर जाय अुसे मन्त्रीसे अिजाजत लेनी चाहिये।

बापू

९६

२३-१०-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला है।

जमनादासकी बात दुःखद है। क्या किया जाय? आखिर तो भाग्य दो कदम आगे रहता ही है।

किसनका मेरे नाम लम्बा पत्र आया था। अुसने अपने रहन-सहनका अच्छा वर्णन किया है। वह अैसी कर्तव्य-निष्ठ है कि सुबह तीन बजे अुठकर पत्र लिखने बैठी। मैं अपनेको ही अैसा कर्तव्य-निष्ठ मानता था। किसन जैसी लड़कियां भी मेरा गर्व अच्छी तरह अुतारती मालूम होती हैं। तू नहीं अुतार सकती, क्योंकि आश्रममें तो जल्दी अुठनेकी आदत होती है। अिसलिअे अुसमें नयापन नहीं लगता। लेकिन बम्बअीमें जो सुबह ६ बजे अुठे वह मेहरबानी करेगा। अिसमें बेचारे गरीब मजदूर नहीं आते। लेकिन किसन कोअी मजदूरिन नहीं है।

कुछ समय यदि तू बचा सके तो बचाकर आश्रमसे बीमारीको निकालनेकी कला तुझे हस्तगत कर लेनी चाहिये। लेकिन तेरा पहला काम अपना शरीर कसनेकी कला हस्तगत करना है।

मक्का अपने खेतमें न होती हो तो मगाअी नहीं जा सकती? अुससे वजन बढ़ता हो तो यह तो सरल बात हो गअी। जेलमें अैसा कहा जरूर जाता है कि मक्काके आटेकी राब (कांजी) से दस्त साफ होता है और वजन भी बढ़ता है। कैदियोंको हमेशा सवेरे मक्काकी राब ही दी जाती है। अुसमें नमक डाला जाता है। मक्काके आटेमें

९८

यरवडा मंदिर,
६-११-'३२

चि० प्रेमा,

मुझ पर अब बोझा अितना आ गया है[1] कि आश्रमको लम्बे पत्र शायद ही भेज सकूं। अुसमें तेरा नबर पहला आया है। परन्तु मैं जानता हू कि अब मेरे लम्बे पत्र अखबारोंमें पढकर तुझे सतोष होगा।

दीवालीके दिनोंके अनोखे वर्णन पढकर वहा अुड आनेका जी हुआ। परन्तु देखा तो पिंजडा अूपर, नीचे और चारों ओर बन्द ही है! अिसलिअे पख फडफडाकर बैठा रहा।

तू मक्खनकी मात्रा बढाकर अच्छी हो जाय तो अिसे मैं सस्ती दवा मानूगा।

तेरी जिम्मेदारी बढती जा रही है, यह मैं समझता हू। अीश्वर तुझे निभा लेगा, तू आत्म विश्वास न खोना। मेरी अितनी ही सलाह है कि तू धीरज न छोडना।

अेक शिकायत जो रमाबहनने की सही मालूम होती है। तूने चिढकर कह दिया — 'तो चला जा पालनपुर।'[2] अैसा किसीसे नहीं कहा जाता। बालकोंके साथ सभ्यतासे ही काम लेना चाहिये। आश्रममें रहनेवाला कोअी भूल करे तब तुरन्त 'तो रास्ता नापो' कह देना बहुत अपमानकारक है। अैसा किसीसे न कहना। और रमाबहनको सतोष दिलाना।

कृष्ण नायरका सवाद मधुर है। तेरे अुत्तर तो तूने मुझे पूरा अधिकार दिया हो तो मैं भी दे दू।

किसनका वर्णन अच्छा है।

हमारा गीत हमें शोभा देनेवाला है।[3] सपनोंका पृथक्करण मुझे नहीं आता।

---

१ 'हरिजन' साप्ताहिक निकालनेका।

२ यह वचन मैंने बालक धीरूसे कहा था।

३ 'हमारा गीत'=राष्ट्रगीत 'वन्देमातरम्'। वह प्रार्थना-गीत है, राष्ट्रगीत जैसा नहीं लगता, अैसी आलोचना मैंने की थी।

दर्द शुरू हो गया। बादमें मैं बम्बअी गअी और डॉक्टरकी दवा ली तब मिटा। परन्तु अैसा याद आता है कि सात आठ महीने तक अुसने मुझे खूब तकलीफ दी।]

३०–१०–'३२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। कृष्ण नायरके बारेमें तूने लिखा है सो ठीक है। के साथ अुसके जानेसे पहले कोअी बात हुअी? वह अुसकी होशियारीका दुरुपयोग करता है। अिससे अुसे बचा लिया जाय तो अच्छा।

तेरे पास लड़कियोंका अच्छा जमघट हो गया दीखता है। अुन सबकी सभाल लेने अर्थात् अुन्हें प्रेमसे शुद्ध करने और शुद्ध रखनेकी शक्ति अीश्वर तुझे दे।

लीलावतीकी सभाल रखना। वह दुखी लड़की है।

गोदका पाक तुझे खाना हो तो खाकर देख लेना। मुझे तो डर है कि अुसे तू पचा भी नहीं सकती। तुझे जरूरत तेल मलवानेकी और कटिस्नानकी है। साथ ही पीठ भी मलवानी चाहिये।

पुराने वर्षके साथ ही तूने अपना क्रोध भी दफना दिया हो तो कितना अच्छा हो!

आश्रमके रुपयेके बारेमें सतोष न हो तो अुसकी चिन्तामें न पड़। कभी अपने आप सतोष हो जायगा। अन्तमें किसी दिन आश्रमका प्रबंध हाथमें लेगी तब तो होगा ही।

फूलोंके पौदोंके साथ मेरी तरफसे बात करना, आश्वासन देना। अुनसे कहना कि अपने जैसा सौंदर्य, अपने जैसी सुगन्ध, अपने जैसी अेकनिष्ठा, अपने जैसी दृढता, अपने जैसी नम्रता, अपने जैसी समता और सरलता हमें प्रदान करो और अपनी मित्रता सिद्ध करो।

बापू

चाहिये। पूरी तरह तो कोअी तत्त्व व्यवहारमें नही अुतारा जा सकता। परन्तु जो व्यवहार तत्त्वके निकट नही जाता वह अशुद्ध और त्याज्य है।

बापू

१००

२०-११-'३२

चि० प्रेमा,

अभी भी मेरे पत्र छोटे ही रहेंगे। तेरे लम्बे हो तो अुसकी मुझे चिन्ता नही। मुझे तेरे वर्णन जरूर चाहिये। मैं खबर तो दे ही नही सकता। मैं विनोद करूंगा या प्रेम करूंगा। अुलाहना दूंगा और देना आयेगा तो कभी कभी ज्ञान भी दे दूंगा। परन्तु तुझे तो अपना हिसाब देना होगा, सुख-दुखकी बातें कहनी होंगी।

रमाबहन[1]के बारेमें मैं तुझे तग नही करना चाहता। तेरा वर्णन ही अैसा है कि अुसमें से प्रेम निकाल सकना मुश्किल है। गनीमत यही है कि तेरे वचनामें जितना कटाक्ष होता है अुतना तेरे कार्योंमें नही आता। मेरे पास समय होता तो अिस पर बडा व्याख्यान दे देता। परतु तुझे हरिजनोंने बचा लिया है, क्योंकि अुन्होंने मेरा सारा समय ले रखा है।

अमीना[2] खूब परेशान जान पडती है। अुसका दर्द पहचाना जा सके तो पहचानना। अुसे शाति दे सके तो देना।

मगलाका हाल वैसा ही है जैसा तूने लिखा है।

बापू

---

१ श्री रमाबहन श्री छगनलाल जोशीकी पत्नी। धीरू अुनका लडका।

२ श्री अमीनाबहन श्री अिमामसाहबकी लडकी। अिमामसाहब आश्रमके अुपाध्यक्ष थे।

नारणदासकी दी हुअी भेंटका अर्थ समझी न?

भावना कब प्रगट की जाय, जिसका कोअी नियम नहीं है। यह कहूंगा कि जब सत्यनारायण प्रेरित करे तब प्रगट की जाय।

बापू

९९

१३-११-'३२

चि० प्रेमा,

आज भी छोटासा ही पत्र लिखूंगा। अब हरिजन भाअी-बहन मेरा बहुत समय लेते हैं।

कमला बाअी[1], जो नअी आअी है, शिकायत करती है कि अुसे अपनी लड़कीके लिअे समय नहीं मिलता और न पढ़नेके लिअे मिलता है। देख लेना।

तू गाद हजम कर गअी।[3] यह खुशीकी बात है। कितना खाया? साथमें क्या मिलाया था?

तेरे कामकी कठिनाअियोंको मैं अच्छी तरह समझता हूं। भगवान तुझे निभा लेंगे और आवश्यक शक्ति भी देंगे।

बीमारीका कारण ढूंढ लिया है तो अब अिलाज भी कर ले।

मेरी भावनाके बारेमें तू पूछती है, अिससे कुछ लाभ नहीं होगा। क्योंकि कोअी अपनी भावनाका पृथक्करण पूरी तरह कर नहीं सकता। जब तत्त्व व्यवहारमें आता न दिखे तब जान लो कि हमने तत्त्वको अच्छी तरह नहीं पहचाना है। शुद्ध तत्त्व हमारे व्यवहारमें अुतरना ही

---

१ दीवाली पर प्रतिपदाके दिन श्री नारणदास काकाने मुझे 'व्रत-विचार' और 'आश्रमवासियोंके प्रति' पुस्तकें भेंट की थीं।

२ महाराष्ट्रके अेक खादी-कार्यकर्ताकी पत्नी अपनी बच्चीके साथ आश्रमके संस्कार लेने आअी थीं।

३ कमरके दर्दके अिलाजके लिअे खाया था। श्री रामदासभाअी गांधीकी पत्नी श्री निर्मलाबहनने मुझे अिसकी सिफारिश की थी।

१०२

यरवडा मंदिर,
५-१२-'३२

चि० प्रेमा,

यह पत्र प्रार्थनाके बाद लिखता हू। लम्बे पत्रकी तुझे आशा नही रखनी चाहिये। परन्तु तुझे तो लम्बे पत्र लिखने ही चाहिये। अनुमें से मुझे बहुत कुछ मिल जाता है। वह सब मुझे चाहिये।

तारादेवीका[1] क्या हाल है? क्या पजाब जानेका विचार कर रही है?

अमीना जो कहे सो सुनना, सच तो यह है कि जो भी कोअी अपनी बात कहे अुसे सुनना चाहिये। जिम्मेदार आदमीको अैसा करना ही पडता है। अिस प्रकार शान्तिपूर्वक सुननेसे ही बहुत कुछ बातें निबट जाती है।

किसनके समाचार आते थे, पर अब अुसका तबादला हो जानेसे नही आ सकते। परन्तु वह मजेमें होगी। सुशीलाका पत्र साथमें है, अुसे भेज देना।

छारा[2] लोगोमें तू, लक्ष्मीबहन[3] वगैरा क्यो नही जाती? यह सच है कि तुम्हे किसीको समय नही रहता। परन्तु थोडे समयके लिअे कोअी काम छोडकर भी जा सकती हो। वे लोग कितने है? दिनभर क्या करते है?

अुपवासके बारेमें नारणदासके पत्रमें लिखा है।

धुरधरका पत्र अब मुझे मिलना चाहिये। कृष्ण नायरका मेरे पास कोअी पत्र नही आया। व्रजकिशन[4]को लिखकर पुछवाना।

बापू

---

१ श्री प्यारेलालजीकी मा।

२ छारा लोग जरायमपेशा (Criminal) कहलाते थे। अुस समय सरकारने छारोकी अिच्छाके विरुद्ध अुनकी बस्ती आश्रमके पास बसाअी थी, अिसलिअे आश्रममें चोरिया बढ गअी थी। रातको आश्रममें चारो ओर बारी बारीसे पहरा लगाना पडता था।

३. श्री पडित खरेकी पत्नी।

४. श्री व्रजकिशन चादीवाला थोडे दिन आश्रममें रह गये थे। दिल्लीके कार्यकर्ता। आज भी वही है। कृष्ण नायरके मित्र।

१०१

२७-१२-'३२

चि॰ प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। जो संयमका मूल्य समझता है अुसे तो आहारके परिवर्तनमें मज़ा ही आता है। अखबारोंमें किसने लिखाया कि आश्रममें जेलका भोजन शुरू किया गया है? यह बात सच होती तो कोओी हर्ज नहीं था। परन्तु हम तो दूध, घी वगैरा बहुतसी चीजें लेते हैं। फिर भी जेलका भोजन शुरू किया है, यह कैसे कहा जा सकता है? अिस गपकी जड़ ढूंढ ली हो तो लिखना।

तेरी शिकायत सही है कि कठोर नियम भी मैं बनाता हूं और विलासी मनुष्य आश्रममें आ पहुंचते हैं अुसका कारण भी मैं हूं। मैंने तो कहा है कि अुनका विरोध तुम सब कर सकते हो और शक्तिसे अधिक किसीको लेनेके लिअे कहे नहीं हो। मैं तो केवल सलाह ही दे सकता हूं। अमल करना न करना केवल तुम लोगोंके हाथमें है। जितना मुझे आवश्यक लगता है कि स्वयं कड़े नियमोंका पालन करते हुअे भी कोओी अनियमित रहनेवाला व्यक्ति आ ही जाय, तो अुसे निभानेकी, अुसके प्रति अुदारता रखनेकी शक्ति हममें होनी चाहिये।

तेरी नसीहतको ध्यानमें रखूंगा।

का सारा किस्सा दुःखद है। 'निग्रह किं करिष्यति?'

नारणदासके साथ बैठकर अिन्दूका विचार कर लेना।

बाबूकी मुझे चिन्ता नहीं है। वह तो ठिकाने आ ही जायगा।

आज तो वह सकता हूं कि जब आना हो तब तुम दोनों[1] आ जाना। कलकी राम जाने।

छोटी बड़ी जो भी प्रतिज्ञा लें अुसका पालन हम कर सकें, तो समझना चाहिये कि वह ीश्वरकी ही कृपा है।

लक्ष्मीके साथ बात करके देखना। अुसे विवाह तो नहीं करना है?

बापूके आशीर्वाद

---

१. पू॰ महात्माजीसे मुलाकात करनेके लिअे मैंने सुशीलाके साथ आनेकी मांग की थी।

१७-१२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिल गया। अस्पतालसे जबरन् आओ होगी तो अिसे मैं दोष मानूगा। अस्पतालमें पड़े पड़े भी सेवा हो सकती है, यह ज्ञान तो है न? कम बोलना। अभी दूध और फलो पर ही रहना। बीमार आदमी चावल नही खा सकता, यह नियम कहासे निकाला? जल्दबाजी करके बीमार न पडना।

बापू

१०५

[पूज्य महात्माजीका यह मत था कि पत्र खुले होने चाहिये; आश्रममें किसीका पत्र कोअी पढे तो भी कोअी हर्ज नहीं होना चाहिये। मुझे वह पसन्द नही था। मैं पढती थी तभीसे अैसा मानने लगी थी कि पत्रकी विशेष पवित्रता होती है। अिसलिअे अेक व्यक्तिके पत्र दूसरे लोग अुसकी अिजाजतके बिना नही पढ़ सकते। अिस नियमका मैंने आज तक पालन किया है। महात्माजीका दफ्तर अनेक लोगोंके हाथमें रहता था। अिसलिअे कुतूहलके लिअे भी पत्र पढ लिये जाते थे, यह वस्तुस्थिति थी। अंग्रेजी शब्दका प्रयोग करे तो secrecy (गुप्तता) नहीं परन्तु privacy (खानगीपन) तो जरूरी है और अुसका आग्रह रखनेमें दोष नही है, अैसी मेरी मान्यता थी। आज भी है।

अुन दिनो श्री छगनलालभाअी जोशीको जेलमें पूज्य महात्माजीके पास ही रखा गया था। आश्रमके अेक परिवारकी अेक युवा लडकीको प्लूरिसी हो गअी थी। वह मेरे पास अंग्रेजी पढ़ने आती थी। वह बीमार पडी तब कभी कभी समय निकालकर मैं अुसके पास बैठने जाती थी। बात बातमें अुसने मुझे बताया कि बीमारीमें अकेलापन अुसे अखरता है। अुसके हालचाल पूछनेके लिअे अुसके पास कोअी भी नहीं जाता था। अुसका बडा भाअी भी, जो आश्रमका अेक होनहार कार्यकर्ता गिना जाता था, अुसकी अुपेक्षा करता था, अैसी मेरे मन पर छाप पडी थी। अिसलिअे पत्रमें पूज्य महात्माजीको यह किस्सा मैंने लिख भेजा था।]

यरवडा मंदिर,
११-१२-'३२

चि० प्रेमा,

तेरे गलेकी गिल्टियां कट गअी होंगी, पूरे वर्णनकी प्रतीक्षा कर रहा हूं।

पतली राब अधिक अनुकूल पडे तो वही लेना। मेरा कहना अितना ही है कि सवेरे राब ही लेनेसे दस्तकी दृष्टिसे लाभ हो सकता है। परन्तु अेक भी बातके लिअे मेरा आग्रह नहीं है। अुबाला हुआ साग लेनेकी आवश्यकता जान पडे तो वह लिया जाय। पानी भी धीरे धीरे पीनेमें लाभ जरूर है।

धुरधरको पूनिया भेजी होंगी।

अिस मासके अन्तमें तेरी और सुशीलाकी राह देखूंगा।

किसनको पत्र लिखे तब मेरे आशीर्वाद लिख भेजना।

लक्ष्मीका मन अच्छी तरह जान लेना। पद्माको समझनेका प्रयत्न करना।

क्या शान्ता आअी है? अुससे सब जान लेना। मुझे यह तौर-तरीका पसन्द नहीं आया। मैं अुसे लिख रहा हूं।

मेरे पत्र कितने ही छोटे क्यों न हों, तो भी तुझे तो पुराण भेजते ही रहना है।

बापू

१०४

[गलेकी गिल्टियां कटवानेकी सिफारिश पू० महात्माजी कर रहे थे। ऑपरेशन करनेसे गला ज्यादा बिगडेगा, अैसी मान्यता होनेसे बहुत दिन तक मैंने अिस ओर ध्यान नहीं दिया। बादमें पू० महात्माजीका तार मिला तो मैंने अस्पताल जाकर गिल्टियां कटवा लीं। दो दिन वहां रहकर वापस आ गअी और फिर काममें लग गअी। ऑपरेशनके समयका और अस्पतालके अनुभवोंका वर्णन पू० महात्माजीको मैंने लिख भेजा था।]

मालूम होता है कि तू अस्पतालमें जल्दबाजी करके आओी है। डॉक्टरकी हिदायतोंका तू पूरी तरह पालन करती हो तो कोओी दिक्कत नहीं होनी चाहिये। ऑपरेशनका सोचा हुआ फल निकले तब तो बहुत ही अच्छा हो।

का किस्सा दुखद है। का पक्ष जाने बिना अुसका दोष निकालनेके लिअे मैं तैयार नहीं हूं। स्वच्छ है, निर्दय नहीं है। वह अपना धर्म समझता है। मेरे पास ज्यादा समय होता तो ज्यादा समझाता। तुझसे जितनी हो सके अुतनी तू की सेवा करना। अगर अकेली पड गओी है तो अिसमें अुसका दोष कम नहीं है। परन्तु अिस दोषके कारण अुसकी सेवामें कमी नहीं होनी चाहिये। में गुण भी बहुत हैं।

अिंदु तो बेसबर है ही। वह भोला और खिलाडी है। मैंने अुसके पिताको लिखा है कि अुसे अपने पास ही रखें।

दूध और फलको औषधि समझकर अभी लेते रहना। राब वगैरा अभी मत लेना। चावलकी अिच्छा हो तो खा सकती है। डॉक्टरको दिखाती रहना।

सुशीलाका पत्र अिसके साथ है।

बापू

१०६

[श्री छगनलालभाओी पर अुस समय मैंने जो दोष लगाये थे, वे आज तो पूरे याद नहीं आते। अेक बात याद आती है। मैंने पूज्य महात्माजीको लिखा था, "आपको मैं जो पत्र लिखती हूं अुनमें अपना हृदय अुडेलती हूं। साथ ही, आश्रम और बाहरके व्यक्तियोंके बारेमें निजी राय भी लिखती हूं। अुसमें बहुतसे किस्से भी आ जाते हैं। ये सब व्यक्तिगत माने जाने चाहिये। विचार दुनियाके सामने रखे जा सकते हैं, व्यक्तिगत मत नहीं। जब रखे जाय तब जिसके लिअे वे रखे गये हैं अुसीको अुन्हें पढनेका अधिकार होता है। श्री छगनलालभाओीको अनेक बातें करनेकी आदत है। अुनके मित्रोंका क्षेत्र भी विस्तृत है। मेरे पत्रोंमें दी गओी बातोंकी वे बाहर चर्चा करें, तो गलतफहमी पैदा हुओे बिना नहीं

यरवडा मंदिर,
१८-१२-'३२

चि० प्रेमा,

बीचमें तुझे पत्र लिखे तो हैं। यह साप्ताहिक पत्रका अुत्तर है।

छगनलालको तेरा पत्र न पढ़ने देनेकी तेरी निषेध-आज्ञाको मैंने स्वीकार किया है। निषेध-आज्ञा मुझे पढ़ानी ही पड़ी। मैं अैसा मानता हूं कि अुनके बारेमें तूने जो लिखा अुसे वे न जानें, यह तो तू भी नहीं चाहती होगी। अितना पढ़ाकर बाकी भाग न पढ़नेके लिअे अुनसे कहा। लेकिन तेरी आज्ञा मुझे अच्छी नहीं लगी। आश्रमका अेक व्यक्ति आश्रमके ही दूसरे व्यक्तिसे कैसे कुछ छिपा सकता है? छोटी बालिका अैसी अिच्छा रखे, बड़ी अुमरके नासमझ लोग अैसा चाहें, यह भी समझमें आ सकता है। लेकिन तेरे पास छिपानेको क्या हो सकता है? दूसरे लोग तेरा पत्र पढ़ें, अिससे अुसकी पवित्रता कम नहीं होती परन्तु बढ़ती है। तेरे विचार दुनिया जाने अिसमें तुझे संकोच होना ही नहीं चाहिये। हमें छिपे विचार करनेका अधिकार नहीं है। अैसी आदत डालनेसे हमारे विचारों पर स्वभावतः अंकुश लग जाता है। मनुष्यमात्र अीश्वरके प्रतिनिधि हैं। अीश्वर तो हमारे सब विचार जानता ही है। लेकिन अुसे हम प्रत्यक्ष नहीं देखते अिसलिअे हम निश्चित रूपसे नहीं कह सकते कि वह हमारे विचार जानता है। लेकिन अगर मनुष्यको अुसके प्रतिनिधिके रूपमें हम पहचानें, तो हमारे विचार वह जाने अिसमें हमें संकोच नहीं होना चाहिये। और प्रतिनिधि प्रत्यक्ष है अिसलिअे हम अपने विचारों पर सहज ही नियंत्रण रख सकते हैं। मैं चाहता हूं कि तू ज्ञानपूर्वक अपनी निषेध-आज्ञा वापस ले ले। (मुझे आशा थी कि दायें हाथसे लिख सकूंगा। लेकिन देखता हूं कि मुझे अिस हाथका अुपयोग नहीं करना चाहिये। अिसलिअे जितना सोचा है अुतना शायद नहीं लिख सकूंगा।) रमाबहनके लिअे तेरी मरजी हो वह तू लिख सकती है। तू जो भी लिखेगी वह द्वेषभावसे नहीं लिखेगी, अितना तो वह जानती ही है। अब तू जो चाहे सो लिखना। जो लिखेगी अुस पर मैं अमल करूंगा।

नहीं छिपा सकता। लेकिन अुसमें कितना जहर है! छगनलालको अिन दोषोंका ज्ञान ही नहीं है। तेरे लगाये हुअे दोष अगर अुसमें होते, तो वह कभी आश्रममें रह ही नहीं सकता था। और सुरेन्द्र?[1] अुसके जैसे स्वच्छ मनुष्य आश्रममें शायद ही कोअी होंगे। साधुभावसे कही हुअी बातको तू आज तक संग्रह करके रख सकी! अैसे जहरकी तेरे भीतर मैंने कभी कल्पना नहीं की थी। तेरे हृदयके अुद्‌गार तू लिखे यह मुझे प्रिय है। लेकिन अैसे विचार तू किसीके बारेमें भी अपने मनमें संग्रह करके रख सकती है, यह मेरे लिअे अत्यन्त दुःखदायी है। तेरा धर्म अिस महादोषके लिअे भगवानसे क्षमा मागकर शुद्ध होना है। तू शुद्ध होना और मेरा दुःख दूर करना।

बापू

१०७

यरवडा मन्दिर,
१-१-'३३

चि० प्रेमा,

तू और सुशीला आ गअी यह अच्छा हुआ। आज तुझे लम्बा पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। तेरे अनुभवोंकी राह देखूंगा।

धुरन्धरकी तबीयतके समाचार लिखना। अुसे पत्र लिखनेके लिअे कहना।

तेरी कमर (के दर्द) का कारण ढूंढ निकालना। हरिभाअीको तो मिलना ही। गिल्टिया कट गअी अिसका व्यर्थ शोक मत कर। बहुत बोलकर गला मत बिगाडना। अूची आवाजसे बोलनेकी आदत ही छोड देना।

बापू

---

१. आश्रममें नैष्ठिक ब्रह्मचारीके रूपमें तीन व्यक्तियोंका विशेष आदर था। अुनमें से अेक सुरेन्द्रजी थे। दूसरे दो थी बालकोबाजी और श्री छोटेलालभाअी। सुरेन्द्रजी प्रार्थना-भूमि पर पेडके नीचे रहते, अुपनिषद्‌के श्लोक गाते और धर्मालय चलाते थे। धनीके रूपमें अुन्होंने मान्यता प्राप्त की थी। सन् १९३४ के बाद वे खेडा जिलेमें बोरियावीमें रहकर सेवा-कार्य करते थे। आजकल बोधगयामें समन्वयाश्रमके संचालक हैं।

रह सकती।" मेरी दलीलके समर्थनमें मैंने गीताजीके अठारहवें अध्यायका 'अिद ते नातपस्काय' श्लोक अद्धृत किया था।

अुस समयकी मेरी अुमरमें मेरे रागद्वेष तीव्र होनेके कारण जब मैं विकारोंके वशीभूत हो जाती थी, तब मेरी भाषामें कभी कभी मयदाकी मर्यादा भग हो जाती थी। अिस पत्रमें भी अैसा हुआ था, अिसलिअे पूज्य महात्माजी नाराज हुअे।

यह पत्र मुझे मिलनेसे पहले मैं पूना जाकर पूज्य महात्माजीसे मिल आअी थी। आश्रम लौटने पर मुझे यह पत्र मिला। और मेरा मिजाज हाथसे चला गया। मुझे लगा, "दूसरे लोग पूज्य महात्माजीसे मेरे विरुद्ध शिकायत करते हैं तब वे मुझे डाटते हैं। लेकिन मैं किसीके विरुद्ध अकारण शिकायत नहीं करती हूं तब भी मुझे डाट पड़ती है। किसीके बारेमें शिकायत करनेका मुझे कोअी अुत्साह तो है नहीं। यहा काम करते हुअे रास्तेमें जो अडचनें आती हैं, तरह तरहके लोगोंके विशेष स्वभावोंका जो अनुभव होता है, अुसे महात्माजी कैसे जान सकते हैं? अुनके पास तो सब कोअी पाडव — साधु बनकर ही जाते हैं!" मेरी यह दलील मूर्खता-पूर्ण थी, अुसमें अविवेक था, यह मैं अब समझ रही हू। अुस समय तो मैं फिरसे क्रोधके कारण रूठ गअी थी। मैंने अुन्हें लिखा, "मेरे भीतर जहर है अैसा आप कहते हैं, तो आजके बाद मैं पत्र ही नहीं लिखूगी! मेरा जहर आपको किसलिअे पिलाअू?"]

य० मदिर,
२५-१२-'३२

चि० प्रेमा,

तू मिलने ही वाली है, अिसलिअे अिस बार पत्र लिखनेकी जरूरत नहीं है। तूने शुक्रवारसे पहले मिलनेका जवाब मागा, लेकिन तेरे लगाये हुअे प्रतिबंधके कारण तेरा पत्र मैं तुरत पढ़ ही नहीं सका। छगनलाल अुसे पढ़ नहीं सकता था, अिसलिअे घूमते समय अुसे सुनना सभव नहीं था। बादमें मैं काममें लग जाता था। तूने खुद होकर असुविधा मोल ली है और मुझे असुविधामें डाला है। छगनलालके बारेमें लिखा तेरा पुराण अुसे पढ़ाया है। अुसे तो तू छिपाना नहीं चाहती न? मैं तो हरगिज

७-१-'३३

चि० प्रेमा,

तू जैसी क्रोधी है वैसी ही रूठनेवाली भी है। पर पिताके साथ पुत्री कितने दिन रूठ सकती है? पिताका प्रेम अुसका गर्व अुतार देता है। तू कब तक रूठनेवाली है? शायद तू पत्र लिखकर ही पछताओी होगी। तू जानती है कि तेरी चिट्ठीसे तूने जले पर नमक छिडका है? लेकिन तू अपने आपको जितना पहचानती है, अुसके बनिस्बत मैं तुझे शायद ज्यादा पहचानता हू। मुझे पहले तो बहुत दु:ख हुआ। फिर तुरत हसा। तेरे पत्रमें तू जितनी बुरी दिखती है अुतनी बुरी तू है नही। मैंने तुरत निश्चय किया कि जैसे पहले तू रूठकर दु:खी हुआी थी वैसे ही अब भी पछताकर माफी मागेगी। लेकिन मेरा अनुमान गलत हो तो अब माफी माग और तेरे जीमें आवे वैसे पत्र लिख। मेरा अुलाहना तो मनमें जहर रखनेके बारेमें है। जब तक तेरे मनमें जहर हो तब तक अुसे मेरे सामने नही अुडेलेगी तो कहा अुडेलेगी? मैं तेरे कान न पकडू तो और कौन पकडेगा? जहर है तब तक तो मुझे पीने ही देना। तेरी दृष्टिमें शायद वह जहर न हो। अपने स्वभावको कोअी शायद ही पहचानता है। तू पहचान और जाग।

बापू

११०

य० म०

८-१-'३३

चि० प्रेमा,

बिलकुल पागल मत बन।

तेरा दोहरा धर्म है यह मत भूलना। अेक तेरा हृदय अुडेलनेका। अिसका तो यत्रवत् पालन नही हो सकता। स्रोत सूख गया हो तो तू क्या करेगी? दूसरा, तेरे कार्यके बारेमें हिसाब देनेका। यह हिसाब तो यत्रवत् दिया ही जा सकता है। अितना तो करना।

बापू

१०८

यरवडा मन्दिर,
५-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे दोनों पत्र मिले। आज मुझसे लम्बे अुत्तरकी आशा मत रखना। दाया हाथ थक गया है। बायेंकी गति चार गुनी कम तो है ही। अिसके सिवा, अब मुझे 'हरिजन' के लिअे हाथ (दोनों) और समय बचाना पड़ेगा। फिर भी तुमसे तो मैं पूर्ण पत्रकी आशा रखूंगा ही। सब बहनोंके समाचार तो तू ही देती है।

तेरे गलेके बारेमें मैंने जो लिखा अुस पर तूने अमल किया होगा।

तू कामकी चिंता छोड़कर शान्तिसे काम करना सीख जाय, तो तेरा शरीर दुर्बल न हो। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि यह कहना जितना सरल है, करना अुतना ही कठिन है। फिर भी कभी कभी अैसे वचन गले अुतर जाते हैं और अुनका अमल होता है, अैसा मैंने अनुभव किया है।

लक्ष्मीके बारेमें जांच करती रहना।

नर्मदाके क्या हाल हैं?

धुरन्धरका शरीर कैसा रहता है?

किसनके क्या समाचार हैं?

बापू

१०९

[पहले अेक बार मैं पूज्य महात्माजीसे रूठ गअी थी तब मुझे अुसके लिअे सताप हुआ था, पूज्य महात्माजीको मैंने क्लेश पहुंचाया अुसका दुःख हुआ था और मैं अपने अूपर ज्यादा चिढ़ गअी थी। यह अनुभव भी बादमें मैंने अुन्हें बता दिया था। अुसीको लक्ष्य करके महात्माजीने मुझे अुस घटनाकी याद दिलाअी है।

बादमें तो मैंने रूठना छोड़ दिया। मेरा मन ही मुझे अिसके लिअे कचोटने लगा।]

तू मुझे पागलपनमें कुछ लिखे अुससे मैं नहीं अकुलाता। लेकिन मुझे तेरी जो भूल मालूम हो अुसे तेरे सामने मैं न रखूं, तो मैं तेरा हितेच्छु, साथी, मित्र या पिता नहीं कहला सकता। मुझे विचित्र तो यह लगता है कि मैं जो बात शुद्ध भावसे कहता हूं, अुससे तू रूठती कैसे है? मेरा अुपकार क्यों नहीं मानती? हमारे बारेमें किसीके मनमें जो लगे वह यदि हमसे कहे, तो हम अुसका अुपकार नहीं मानेंगे? मैंने तो यह पाठ बचपनसे सीखा है। अितना तो तू मुझसे सीख ही ले। मेरी परीक्षा गलत होगी तो मैं दयाका पात्र बनूंगा, अगर सच्ची होगी तो तेरा भला होगा। तुझे तो दोनों ओरसे लाभ ही होगा, क्योंकि जिसके साथ तेरा पाला पड़ा है, अुसे तू ज्यादा अच्छी तरह जान सकेगी। मैं यह चाहता हूं कि तुम सब मेरे दोषोंको, मेरी कमजोरीको पूरी तरह जानो और अुन्हें बतानेकी मेरी हमेशा कोशिश रहती है। मैं अपने विचारोंको भी ढकना नहीं चाहता। अुन्हें लिखनेकी मेरेमें शक्ति हो, तो मैं अुन्हें जरूर लिख डालूं। लेकिन यह संभव नहीं है, अिसे मैं जानता हूं। मैं नहीं मानता कि विचारोंकी गतिको पहुंच सके अैसी कोअी शक्ति अिस जगतमें हो सकती है। कोअी अुसे नापनेका यंत्र खोजे तो पता चले। अितना लिखते लिखते तो मेरे विचार ब्रह्मांडकी पांच-सात प्रदक्षिणा कर आये।

तू स्वीकार करेगी कि हमारे भीतर जहर है या नहीं, अिसकी परीक्षा हम स्वयं अचूक रूपमें कर सकते हैं अैसा नियम नहीं है। जहरका संग्रह करनेकी हमारी अिच्छा भले न हो, लेकिन अुससे यह नहीं कहा जा सकता कि हमारे भीतर जहर नहीं है। वह हमारे न चाहने पर भी हम पर सवारी करता है। जिसमें क्रोध है अुसमें जहर तो है ही, यह बात शायद तू स्वीकार न करे। यह स्वीकार न करे तो कहना होगा कि जहरका हम दोनों अेक ही अर्थ नहीं करते। बाने मुझे बहुत बार जहरीला माना है, अैसा मुझे याद है। मैं अुसके आक्षेपसे अिनकार कैसे कर सकता हूं? मैं अपने वचनोंमें जहर न मानूं अिससे क्या? अुसे मेरे वचन चुभे यही मेरे लिअे काफी होना चाहिये। जो वचन पूर्णतः सत्य और अहिंसा-मय है, वे कभी किसीको चुभते नहीं। शुरूमें चुभनेवाले मालूम हो यह

१११

१५-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा रूठना बताता है कि तू बहुत नादान है। मेरा कुछ कहना तू सहन न करे, तो दूसरोंका तो सुनने भी क्यों लगी? मेरे अूपर तू जो छाप डाले अुसके लिअे अुपकार मानना तो दूर, अुल्टे क्रोध करती है। तेरा धर्म तो मेरे आक्षेपको न समझ सकी हो तो मुझे मुझसे समझनेका है, मेरे साथ झगड़नेका नहीं। यहां तो तेरी शिक्षा और बुद्धिमानी पानीमें गयी मालूम होती है। तेरे रूठनेके पीछे तेरा महा अभिमान है, यह भी तू नहीं देख सकती। यह निश्चित मानना कि यह स्वतंत्रता नहीं, परन्तु स्वेच्छाचार है। मैं चाहता हूं कि तू अपनी आंखें खोल, मेरे प्रेमको समझ और तेरे बारेमें मेरी परीक्षाको गलत सिद्ध मत कर। यह समय तेरे रूठनेका नहीं है, बल्कि मुझे दुःख देनेके लिअे पछताने और रोनेका है। तुझे अितना भी भान नहीं है कि मैं तुझे कड़वे वचन कहूंगा तो वे तेरे भलेके लिअे ही होंगे? अैसा करनेमें मेरी भूल हो रही हो तो नम्रतासे भूल बताना तेरा फर्ज है। तेरी निर्दोषता पर तुझे विश्वास हो, तो मुझे मेरे सामने सिद्ध करनेकी श्रद्धा तुझमें होनी चाहिये। अिसके बजाय रूठकर तू अपने दोषको दृढ़ करती मालूम होती है। तुझसे अैसी आशा मैंने कभी नहीं रखी थी। जाग और रूठनेके लिअे माफी मांग।

बापूके आशीर्वाद

११२

२२-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आने पर मैं चिन्तामुक्त हुआ हूं। चिन्ता भी कल्पनाकी प्रजा है। पत्र न मिलनेसे चिन्ता क्यों? और मिला तो मुक्ति क्यों? अिसका अुत्तर तू मांगे तो मैं नहीं दे सकता, या दूं तो यह कहूंगा, "यह मेरा मोह है।"

तेरी तबीयतके बारेमें तो क्या कहूं? घीकी आवश्यकता तो रहती ही है। बाहर गओी कि तेरा वजन बढ़ा, आश्रममें आओी कि प्राप्त किया हुआ खोया। यह दोष तुझे दूर करना ही चाहिये। दोष कैसे दूर हो यह तो तू ही जान सकती है। बोलनेमें तो अब कोओी कठिनाओी बिलकुल नहीं आती होगी।

मैं किसीको अपने जालमें फसाना नहीं चाहता। सब मेरे ही पुतले बन जाय, तो मेरा क्या हाल हो? असे प्रयत्नको भी मैं तो बेकार समझूंगा। लेकिन शायद मैं किसीको फसानेका प्रयत्न भी करता होअूं, तो तुझे क्यों आत्म विश्वास खोना चाहिये? तू तो सावधान है ही, असा तेरे पत्रोंसे साबित होता है। हां, अितना सच है कि तुझे मेरे जालमें फस जानेका डर हमेशा रहा करता है। यह बुरा चिह्न है। निश्चय करनेके बाद डर किसलिअे? अथवा क्या यह संभव नहीं है कि 'फसना' शब्दका अर्थ भी हम अेक न करते हों?

बापू

११३

२९-१-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र पागलपन भरे हों या जैसे भी हों, लेकिन मुझे अुनकी जरूरत है। अिसलिअे तू अेक भी सप्ताह मुझे पत्रके बिना मत रखना। अब तू कैसी है?

बापू

११४

१-२-'३३

चि० प्रेमा,

तुझे गलेके बारेमें चेतनेकी जरूरत है। मैंने तो पहलेसे ही चेताया था कि गलेका तुरन्त अुपयोग तुझे नहीं करना चाहिये। अब मेहरबानी करके डॉ० हरिभाअीको गला दिखा दे और वे कहें अुसके अनुसार चलकर अुसे सुधार ले। अुसकी अुपेक्षा करके दुःख मोल न ले। अिसमें

अलग बात है, लेकिन अैसा अनुभव करनेवाला ही बादमें अुनके अमृतको स्वीकार करता है।

मैं चाहता हूं कि तू सब बातोंमें अपनी परीक्षिका न बन। यह हो सकता है कि दूसरे लोग तेरी ज्यादा अच्छी परीक्षा करें। जहरका प्रकरण मैं यहीं खतम करता हूं।

तेरे आश्रम छोड़नेका प्रश्न अभी अप्रस्तुत है। मैं छूट जाअूं और आश्रममें आकर रहूं तभी यह प्रश्न अुठ सकता है, अैसा तेरे पत्रसे मैं समझा हूं। नीतिकी दृष्टिसे तो अुसी समय अुठ सकता है। मैं आश्रममें न रह सकूं तब तक तो आश्रमकी दृष्टिसे जेलमें होनेके बराबर ही माना जाअूगा। और, मैंने जब आश्रमसे विदा ली थी तब मुझ जो यहां थे [थे] मैं वापस आअूं तब तक वहां रहनेके लिअे अुसी समय बंध चुके थे। अगर मेरा यह मत सही हो तो मेरे वहां रहने आनेके बाद क्या करना ठीक होगा, अुसका विचार अभी करना शक्ति और समयका दुर्व्यय है।

आश्रमके बारेमें जो समाचार तूने दिये वे मेरे लिअे बहुत अुपयोगी हैं। लक्ष्मीके बारेमें नारणदाससे बात कर लेना, तुम दोनों विवाह कर देनेके निर्णय पर पहुंचो तो विवाह कर देना चाहिये। वह बेचैन रहती हो तो भी गहराअीमें अुसकी विवाह करनेकी ही अिच्छा होना सम्भव है। अब वह विवाहके योग्य तो हो ही गअी है। और विवाह अुसे करना ही है। मेरे छूटनेके मोहको बिलकुल मिथ्या मानना चाहिये। लक्ष्मीको तू अच्छी तरह समझ लेना, अुसकी 'हां' की राह देखने तक रुकना जरूरी नहीं है। अिस समयमें लक्ष्मीबहन और दुर्गाबहन[१] की सलाह लेना ठीक लगता है। वे तेरी अपेक्षा अिस बातको ज्यादा समझेंगी। विवाह करनेवालीके मनमें क्या चलता है, यह तेरे अनुभवसे बाहर है, अैसा तुमसे मैं समझा हूं। अर्थात् तुझे विवाह करनेकी अिच्छा भी नहीं हुअी, नहीं होती। अैसी कुछ कुमारियोंको मैं जानता हूं। दूसरी प्रयत्नपूर्वक कुमारी रहती हैं। वे विवाह करनेके अर्थको जानती हैं।

---

१. श्री दुर्गाबहन। महादेवभाअीकी पत्नी।

है। अिसके अलावा, वह शिक्षालय है और नहीं भी है, क्योंकि वह कुटुम्ब है अिसलिअे सामान्य शिक्षाके बाह्य नियम अुस पर जडभरतकी तरह लागू नहीं किये जा सकते। नियमकी आत्माकी रक्षाके लिअे नियमके देहका — बाह्य स्वरूपका त्याग करना पडता है।

अब यह बात जरा विस्तारसे समझाता हू। लक्ष्मीके पालन-पोषणमें हमारी, तेरी परीक्षा है। कुटुम्बके बच्चोंके बारेमें हम क्या करते हैं? तेरी सगी बहनके बारेमें तू क्या करती है? लक्ष्मी नियमका पालन न करे, नियम न जाने, अिसमें दोष मेरा है, बादमें तेरा है। बीचके और लोगोंको मैं छोड देता हू, नारणदासको भी छोड देता हू, क्योंकि अुसे प्रत्येकके लिअे जिम्मेदार मानकर अुससे अुसके धर्मका पालन नहीं कराया जा सकता। वह काम ही स्त्रीका है। और अुसमें भी जिसके हाथमें वह आया हो अुसका अधिक है। मेरा अपराध पहला है, क्योंकि (आश्रमकी) कल्पनाका पिता मैं हू और माता भी मैं हू। पिताके धर्मका तो मैंने पालन किया, परन्तु माताके धर्मका पालन नहीं किया, क्योंकि मैं यहां वहा फिरता रहा। अिसलिअे शायद मुझे लक्ष्मीको रखना ही नहीं चाहिये था। परन्तु मैं कौन? अीश्वरका दास। मैं लक्ष्मीको ढूढने नहीं गया था। अुसे अीश्वरने भेजा। वही अुसकी रक्षा करेगा। अुसे संभालनेवाली पहले बा, बादमें संतोक, फिर गंगाबहन और अब तू है। तुममें से किसीने अुसे मागा नहीं था। समय और परिस्थितिवश वह तुम लोगोंके हाथोंमें आअी। अब तुझसे जो बने सो कर। जहा पूछना अुचित हो वहा मुझे पूछ। थकना नहीं, निराश न होना, श्रद्धा रखना और अुस पर प्रेम अुडेलना। अन्तमें अिसका हल अीश्वर निकालेगा। वह हरिजनोंकी प्रतिनिधि बनकर हमसे ऋण चुकवाने आअी है। वह अधूरी और आलसी है, अिसका पाप तेरे, मेरे और सवर्ण हिन्दुओं पर है। जैसा किया वैसा भरें। अुसका विवाह करनेकी व्यवस्था कर रहा हू। मारुतिके बारेमें लक्ष्मीदाससे पुछवाया है। दूधाभाअीको भी लिखा है।

दूसरी लडकियां और लडके आते जा रहे हैं, अिससे घबराना मत। जितने नियमोंका पालन वे करें अुतना ही लाभ समझना। जब तक अुनका

हुअी गुंजाअिश नहीं है। मेरा हुक्म मानना तेरा धर्म है। सरदी जड़से जानी चाहिये। गिल्टियां सबसे पहले तेरी ही नहीं निकली हैं। हजारोंने निकलवायी हैं और अुन्होंने लाभ भी अुठाया है। तेरे भाग्यमें नुकसान हो तो दैव जाने। परन्तु हानि सिद्ध करनेसे पहले डॉक्टर जो कहें अुस पर अमल करके तुझे बताना चाहिये। तुझे गला फाड़कर बोलना तो बन्द कर ही देना चाहिये। पूर्ण मौन अुत्तम वस्तु है। परन्तु डॉक्टरको दिखाकर मुझे लिखना कि वे क्या कहते हैं।

बापू

११५

१३-२-'३३

चि० प्रेमा,

यह मौनवारका प्रातःकाल है। तीन बजे अुठकर तेरा पत्र हाथमें लिया है। यह पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा है। मुझे जो चाहिये सो सब तूने लिखा है। मैंने स्त्रियोंसे जो कुछ पानेकी कल्पना की है वह सब अिसमें है। तूने जो बातें लिखी हैं अुनमें कोअी आडंबर नहीं है; अूपरसे वे छोटी मालूम होती हैं, लेकिन वैज्ञानिकके लिअे वे अत्यन्त अुपयोगी हैं। अैसे तटस्थ पत्रसे मुझे ज्ञान मिलता है और मैं तेरा और दूसरोंका मार्गदर्शन कर सकता हूं।

सचमुच आश्रम धर्मशाला है। धर्मशालाके दो अर्थ हैं: दानमें दिया हुआ निवासस्थान, धर्मको जाननेका और जानकर अुसके पालनका प्रयत्न करनेका स्थान। अिस दूसरे अर्थमें आश्रम धर्मशाला है। परन्तु सत्य ही धर्म है, अिसलिअे आश्रम सत्यकी खोज करके अुसके अनुसार चलनेका प्रयत्न करनेकी यानी सत्यका आग्रह रखनेकी शाला अर्थात् सत्याग्रह आश्रम है।

सत्यकी खोज करते हुअे जीवमात्रके साथ अैक्य साधना है। अिस-लिअे आश्रम अेक विशाल बनता जा रहा कुटुम्ब है। फिर भी वह अिससे अधिक है, क्योंकि वह धर्मके लिअे है, धर्म अुसके लिअे नहीं

होती। यह संबंध देहधारीके स्वभावमें ही रहता है। अिस स्वभावको कुछ नियन्त्रणमें रखनेके लिअे विवाह-विधिकी रचना हुअी। अिस स्वभाव पर पूर्ण अंकुश ब्रह्मचर्य है। जो पूर्ण अंकुशका पालन करेगी, वह विवाह-रूपी मर्यादित अंकुशका तो पालन करेगी ही। परन्तु विवाह जिसका पहलेसे ही आदर्श बना हुआ है, वह विवाहका स्वरूप भी नहीं समझेगी। विकारोंके लिअे तालीम कैसी? वे तो अपने आप फूट निकलेंगे। परन्तु जो लड़की ब्रह्मचारिणी है अुसे घरकी व्यवस्था चलानेका ज्ञान जरूर प्राप्त करना होगा। शिशु-पालनका ज्ञान लेना ही चाहिये। वह गुफामें बैठकर कुमारी नहीं मानी जा सकती। कुमारी सारे जगतसे विवाह करती है, सारे जगतकी माता बनती है, पुत्री बनती है, सारी दुनियाका कारबार चलाने लायक बनती है। भले ही अैसी कोअी कुमारी पैदा न हुअी हो। परन्तु आदर्श तो यही है। अिसलिअे शिक्षा सबके लिअे अेक-सी ही होगी। मुझे लगता है कि मैंने यह स्पष्ट कर दिया है। लेकिन न हुआ हो तो फिरसे स्पष्ट करा लेना।

अिससे यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि अुस मुसलमान बहनके बारेमें हमारा क्या कर्तव्य है।

लड़कियाको जो 'फिट' आते हैं अुनकी जड़ हमारा अधूरापन है। यदि हम जरा भी ढीलसे आगे बढ़े हों, तो नौजवानोंकी हस्ती हमें भयंकर नहीं लगेगी। परन्तु जहां खतरा मालूम हो वहां नौजवानोंको छुट्टी दे देनी चाहिये। नयोंको लेना बन्द करना हो तो किया जा सकता है।

मेरी सारी आशायें नारणदासमें समाअी हुअी हैं। मेरी कल्पनाका नारणदास ही आश्रमका मंत्री हो, तो सब कुशल ही समझना चाहिये। अुसके विषयमें मेरी श्रद्धा बढ़ती जा रही है। वह सही सिद्ध होगी तो जो दूसरे पुराने आश्रमवासी हैं, वे आगे बढ़ते ही रहेंगे और सबका कल्याण ही होगा। आश्रममें आदमी बहुत हैं, परन्तु आश्रमी थोड़े हैं। अिसलिअे मन पर बोझ बना रहता है। अैसी अत्यन्त अपूर्ण स्थितिमें तुम सबसे जो हो सके अुतना करो।

आश्रम मुझे मापनेका अेक गज है। मैं जहां होता हूं वहां आश्रमको साथ लेकर घूमता हूं। शरीर कहीं भी हो, आत्मा मेरी वहीं रहती है।

व्यवहार सहन हो तब तक अुन्हें रहने दें। सहन न हो तब छुट्टी दे दें। धर्मशालामें किसीका मुकाम स्थायी नहीं होता। कुटुम्बीजन भी स्थायी रूपसे नहीं रहते। जो आश्रमके चौखटेमें समायेंगे वे रहेंगे। जो नहीं समायेंगे वे चले जायेंगे। अिसका हर्ष-शोक क्या? फिर, अभी तो हम और कुछ कर भी नहीं सकते। जहां तक शक्ति है वहां तक जो चला आये और जिस पर हमारी आंख जरा जम जाय अुसका संग्रह कर लें। बहुतसे तो अपने आप ही भाग जायंगे। हमारे नियम ही बहुतोंको भगा देंगे। जो आयेगा अुसे मेहनत तो करनी ही होगी, पाखाने साफ करने होंगे। भोजन दवाके तौर पर खाना होगा। वहां गुड़ भी नहीं मिलता और गेहूं भी जब चाहिये तब नहीं मिलते। आश्रम गरीबों, कंगालों और भूखों मरनेवाले लोगोंका प्रतिनिधि है, यह हम रोज साबित करते रहें तो सदा सुरक्षित और सुखी रहेंगे। अिसलिअे आश्रममें रोज सादगी बढ़नी चाहिये, नियमोंका पालन रोज कड़ा होना चाहिये। अग्नि अपने स्वरूपमें रहे तो जो जीव अुसमें भिन्न न सकें वे रह ही नहीं सकते। यह अग्निका दोष नहीं परन्तु गुण है। अिसी तरह हम स्वयं ही अपने स्वरूपमें नहीं रहते, अिसलिअे सारी मुसीबतें पैदा होती हैं। सादगी वगैराकी कड़ाअीकी जो बात लिख रहा हूं वह हमारे ही लिअे है। हममें अिसकी मात्रा रोज बढ़नी चाहिये। हमने अपनी रक्षाका मार्ग हमारे अंतरमें ढूंढ़ा है, बाहर नहीं। और हम यानी आश्रममें समझ-बूझकर रहनेवाले लोग। अर्थात् मैं, तू और प्रत्येक व्यक्ति। सब आश्रमवासी जो नियम पालें वही मैं पालूं यह बात ठीक नहीं है। मुझसे जिन नियमोंका अधिकसे अधिक पालन हो सके, अुनका पालन मुझे तो करना ही चाहिये। अिसमें आश्रमकी अुन्नतिकी कुंजी है। दूसरेके प्रति अुदारता रखनी चाहिये, अपने प्रति कृपणता। अैसा करते हुअे भी हम अपने प्रति मुश्किलसे ही किंचित् विवेकसे बरतेंगे। क्योंकि बहुत बार दूसरोंके प्रति दिखाअी जानेवाली अुदारता सच्ची अुदारता नहीं होती। और अपने प्रति दिखाअी जानेवाली कृपणताका भासमात्र होना बहुत सम्भव है।

लड़कियोंके लिअे आदर्श अखंड ब्रह्मचर्यका होना चाहिये, अुसीमें आदर्श विवाह समाया हुआ है। विवाहकी तालीम देनेकी जरूरत नहीं

मालूम होता है कि लडकियोंकी व्यवस्था तूने ठीक कर दी है। निर्मला[1] के बारेमें तेरा सुझाव मुझे तो पसद आया। महादेवके साथ अुसकी चर्चा नही कर सका। पृथुराज[2] की बात भी समझ ली। मुसलमान बहनके बारेमें मैं अधिक जाननेको अुत्सुक हू। जिस अग्रेज भाओीको भेजा है अुससे अच्छी तरह परिचय करना। मुझसे तो वह त्यागी मालूम हुआ है। अुसकी जरूरतोंका खयाल रखना।

सुशीलाके साथ तू मिलने आयी अुस समय मेरे किस व्यवहारके बारेमें तूने सवाल किया था? मैं तो भूल गया हू। फिर सवाल करे तो जवाब देनेकी कोशिश करूगा।

डॉक्टरोंकी बात मैं समझा। अेक बार अुनके हाथमें चले जानेके बाद अुनसे जो वस्तु प्राप्त करनी हों वह हमें प्राप्त कर लेनी चाहिये। अैसा न कर तो अुनके साथ न्याय नही होता और हमें हानि होनेकी सभावना रहती है। यह बात तो हमें स्वीकार करनी ही होगी कि कुछ काम अुनके हाथों अच्छे होते हैं। हा, गफलतसे, अज्ञानसे वे अनेक भूलें करते हैं, यह तो जग जाहिर है। कोअी अुनकी सहायता कभी न लेनेकी प्रतिज्ञा करे, तो अुसका मैं जरूर आदर करूगा। करोडोंको तो अुनकी मदद मिलती ही नही। परन्तु मैंने माना है कि अैसा त्याग आश्रमकी शक्तिके बाहर है। अिसलिअे अच्छे माने जानेवाले डॉक्टरोंकी मदद हम लेते हैं। तू किसनके मामा[3] की सहायता जरूर ले।

बापू

---

१ महादेवभाअीकी बहन। अुसकी छात्रालयमें रहनेकी अिच्छा हुअी थी।

२ आनदीका भाअी। श्री लक्ष्मीदास आसरका पुत्र।

३ वे डॉक्टर थे। जब मैं बम्बअीमें थी तब जरूरत पडने पर अुनकी मदद लेती थी। अनुभव अच्छा होता था। मेरी कमरका दर्द अुनके अुपचारसे मिट गया था।

अुनमें जो दोष हैं वे सब दूसरे अथवा अनुरूप रूपमें मुझमें होने ही चाहियें। तुम सबको पहचाननेमें मेरी भूल हुअी हो तो वह दोष मेरा नहीं तो किसका है? परन्तु मैं अपनेको ही न पहचानूं तो तुम सबका साक्षी कैसे बन सकता हूं? अब नाम गिनता हूं तो छगनलाल[1] और मगनलालके सिवा मैं किसीको ढूंढने नहीं गया। अुन्हें अीश्वरने मेरी परीक्षा लेने या मेरी सहायता करनेके लिअे भेजा है।

यह तेरी भूल है कि तू डॉ० पटेलके पास नहीं गअी। डॉक्टरसे अिस प्रकार चिट्ठी द्वारा नहीं पूछा जा सकता। तू मौन ले ले। डॉक्टरको सब दिखाकर जो वह कहे वैसा ही कर। अिसमें हठ करना ठीक नहीं।

बापू

११६

य० मं०
१९-२-'३३

चि० प्रेमा,

आज तो अब लंबा पत्र नहीं लिखूंगा।

मैत्रीको तू जीत ले और तीनों बहनें अच्छी हो जायं, तो अिसे मैं तेरी और आश्रमकी विजय ही मानूंगा। नारणदासने तो प्रेमका प्रयोग किया है। सफल हो जाय तो करना।

तूने देखा होगा कि लक्ष्मीका तो अब विवाह कर ही देना है अथवा वह आश्रमसे चली जाय। मैं मानता हूं कि अुसका बोझ अब तुम्हारे किसीके सिर पर नहीं रहना चाहिये। मारुति घड़िया लड़का है। अुसके निर्णयमें लक्ष्मीदासका हाथ तो है ही। तूने देख लिया कि अुसके बारेमें मोतीने तुझसे जो कहा वह ठीक नहीं था।

---

1. श्री छगनलालभाअी। मगनलाल गांधीके बड़े भाअी।

सुशीलाके बारेमें तू जो लिख रही है वह मेरे लिअे स्वप्नवत् है। अुसके प्रति जरा भी अुपेक्षा बतानेका मुझे भान तक नहीं है। अुसीने मुझ पर यह छाप डाली थी कि अुसे न तो कुछ पूछना बाकी है और न कहना। यह तू अुसे [बता देना]। मैं क्या जानूं कि वह तेरी ही तरह लाड चाहनेवाली या खुशामद करानेवाली है। तेरी सहेली तेरे जैसी ही होनी चाहिये, यह मुझे जानना चाहिये था। यही तू कहना चाहती है न? परन्तु सुशीला कदाचित् यह बात स्वीकार न करे। क्या मेरे लिअे अेक ही प्रेमा काफी नहीं है? दूसरी भी है तो सही। परन्तु अुनमें थोड़ा थोड़ा अंतर है। खैर, अैसी गलती फिर न हो अिसका ध्यान रखूंगा।

विजयाकी अुमर कितनी है? अुसका बरताव कैसा है?

लक्ष्मीको अच्छी तरह तैयार करना।

दुर्गाके फोड़े अभी तक नहीं मिटते, अिससे मुझे सदेह होता है। वह मुझे हमेशा पत्र लिखती थी, लेकिन अब बिलकुल नहीं लिखती। अिससे भी मैं मानता हूं कि वह कुछ न कुछ छुपा रही है। जांच करना अुसे कोअी दूसरा रोग तो नहीं है?

कच्चे शाक और खजूरसे वजन घटना ही चाहिये। अुसके साथ रोज २॥ तोला ताजा कच्चा दूध लेना चाहिये। कच्चे शाकमें टमाटर, मूली, गाजर या लेटिस जैसी चीज ली जा सकती है। नमक न लिया जाय। दो-तीन नीबू पानीके साथ या खजूरके साथ लेकर देखना चाहिये। पानीके साथ नीबू अलग पीना शायद ज्यादा अच्छा होगा। अिससे दांत खट्टा जाय तो न लिये जाय। अुसमें सोडा डालकर पिया जा सकता है।

राजाजी वगैराके प्रश्नकी चर्चा मैं नहीं कर सकता। अुसमें सत्यका भंग होगा। वह तो कभी अवसर आयेगा तब। मेरे लेखोंमें तो अेक अेक शंकाका जवाब है।

आश्रमकी त्रुटियां तो तू जितनी बतायेगी अुतनी मैं स्वीकार कर लूंगा। परन्तु अुसीके साथ तू अुपाय भी ढूंढ दे तो वह अधिक अुपयोगी होगा। न ढूंढ सके तो भी तेरी आलोचना तो मुझे चाहिये ही। मेरी बुद्धि

११७

२६–२–'३३

चि० प्रेमा,

आज लंबे पत्रकी आशा न रखना। दाहिना हाथ लिख-लिखकर काफी थक गया है। समय भी नही है।

तेरी पूनिया पहुच गअी हैं। कल शामको आअीं। आज काता। तेरा (दिया हुआ अिनका) वजन ठीक है, यह मानूं तो देव-कपासकी पूनियोंसे ६० अकका सूत निकला अैसा कहा जा सकता है। अिनमें से आधी पूनिया महादेवसे कतवाअूगा। पूनियो पर अुनका काबू मुझसे बहुत अधिक है। संभव है महादेव पहले ही प्रयत्नमें १०० अकका सूत निकालें।

तूने अपने स्वास्थ्यके समाचार नही दिये। गलेकी आवाज ठीक काम देती है? कमर कैसी है?

भाअी डंकन[1] का अनुभव बताना।

बापू

११८

य० म०

६–३–'३३

चि० प्रेमा,

यह पत्र मैंने ठीक पाच बजे (मौनवार) हाथमें लिया है। आश्रमके पत्रोमें तेरा अंतमें पढ़ता हू।

तेरी पूनियोंसे मैं ७५ अकसे आगे नही जा सका। ७५ अंकका सूत बहुत कच्चा माना जायगा। पूनियोंका जो वजन तूने दिया अुसी परसे सूतका अंक निकाला है। सूक्ष्म वजन यहाके काटे पर नहीं निकलता। मेरा हाथ अच्छी तरह काम दे तो मैं मानता हू कि १०० अंक तक जरूर जाअू।

१ डंकन. दक्षिण अफ्रीकासे अेक यूरोपियन भाअी आश्रममें आये थे। अुनका अुल्लेख अूपरके पत्रमें हुआ है।

म० म०
१२–३–'३३

चि० प्रेमा,

तेरी दलील अेम अे को शोभा दे अैसी ही है। 'कोअी औंधे सिर लटके तो मैं क्या न बाजा बजाअू?' अिस तरहके जो प्रश्न रचने हो वे रचे जा सकते हैं। और अुत्तर यही मिलेगा कि अैसा न करनेका कोअी कारण नहीं मिल सकता। अेक आदमी अेक काम कर सकता हो, तो दूसरा आदमी दूसरा काम क्या न करे?

परन्तु यह जरूर है कि कुछ लोग स्वयं औंधे सिर लटकें, तो अपने अिस कार्यके लिअे भी दूसरोंके समझने लायक कारण वे बता सकते हैं, और औंधे लटकनेवालोंको देखकर मेरे जैसे जो लोग बाजा बजाने बैठ जायं, वे संभव है अपने बाजा बजानेका कारण किसीके गले न अुतार सकें। मगर ठीक है। अब तू आश्रमवासियोंके सामने अपना प्रस्ताव रखना और बहुमत हो जाय तो जरूर सारी तैयारियां कर लेना। मैं ठहरा कैदी, अिसलिअे मुझसे तो अुस बारातमें आया नहीं जा सकता। और कैदीको मताधिकार भी नहीं होता, अिसलिअे मुझसे पूछनेकी भी जरूरत नहीं हो सकती। अिसलिअे सब सिद्ध है (Q E D)।

धुरन्धरके पत्रकी धीरज रखकर राह देखूंगा।

तू अुत्तर दे या न दे, मैं तो तेरे स्वास्थ्यके विषयमें पूछता ही रहूंगा। बोल, तबीयत अच्छी रहती है न? गला चलता है या नहीं? कमर दुखती है? वजन बढ़ रहा है?

तेरी पूनियोंका जो सूत मैं कात रहा हूं अुसे देनेका समय आयेगा तब तेरी योग्यता बनी रहेगी तो तुझे जरूर दूंगा। अिस अुत्तरका तो तू ठीक मानेगी न? सूतका अंक ७५ से अूपर नहीं जा सकता। पूनियोंमें गाठें काफी हैं। संभव है देव-कपासके लिअे बेंतूका यंत्र भी पूरा काम न देता हो। देव-कपास साधारण पींजनसे तो धुना ही नहीं जाता, यह तू जानती है न?

महादेवका बुरा लगा है अिसका मुझे जरा भी पता नहीं। महादेवने कुछ लिखा है यह भी मैं नहीं जानता था। नारणदासके पत्रसे

जितनी गलती है अुतनी दौड़ाता हूं। मैं अितना जानता हूं : आश्रमका दोष आश्रमका नहीं, मेरा दोष है। कुम्हार बेडौल घड़ा बनाये, अिसमें दोष घड़ेका या कुम्हारका? यह बात मैं सौ फीसदी मानता हूं और अुससे मेरी मूढ़ताका अन्दाज लगता है। परन्तु दोष होने पर भी मुझे आश्रम पसन्द है। क्योंकि यह कहनेको मैं तैयार नहीं कि मैं स्वयं अपने आपको पसन्द नहीं आता। जितने अंशमें मुझमें 'मैं-पन' नहीं है अुतने अंशमें मैं खुदको पसंद आता हूं। और जितना 'मैं-पन' मेरे भीतर है अुसे मैं मिटानेका सतत प्रयत्न करता हूं।

बापू

११९

[अैसा लगता है कि मैंने शायद महात्माजीको यह समाचार अपने पत्रमें लिखकर बताया था, जो अुनके जल्दी छूटनेकी संभावनाके बारेमें अुस अरसेमें फैला था। परन्तु आज मुझे अुसका स्पष्ट स्मरण नहीं है।

पूज्य महात्माजीके लिअे बढ़ियासे बढ़िया पूनियां पीजन-यंत्र पर स्वयं बनाकर मैं यरवडा भेजती थी (पीजन-यंत्र अुस समय पहले-पहल ही आश्रममें बनाया गया था)। अेक बार श्री लीलावतीबहन आकर पू० महात्माजीसे मिलने गयी थीं। वहां श्री महादेवभाअी अुनसे मिले। बातचीतमें लीलावतीबहनको पता चला कि पूज्य महात्माजीके लिअे भेजी गअी पूनियोंके पुड़े पर 'पूज्य प्रिय महात्माजीके लिअे' शब्द पढ़कर महादेवभाअीके मन पर यह छाप पड़ी कि अुन शब्दोंमें दूसरों (पू० महात्माजीके साथियों) के प्रति तिरस्कार था। पू० महात्माजीने अुन्हें कातनेके लिअे मेरी पूनियां दी थीं। महादेवभाअीने लीलावतीबहनसे कहा 'अिससे मैं धर्म-संकटमें पड़ गया!' लीलावतीबहनसे यह खबर मिलते ही मैंने पू० महात्माजीको लिखे पत्रमें स्पष्टीकरण किया कि आपके प्रति प्रेम और पक्षपातका अर्थ आपके साथियोंके प्रति 'तिरस्कार' न मान लिया जाय।]

मुशीलाकी और किसनकी सेवा थी। अुन्हें सड़ने देनेमें तेरी मूर्खता थी। दूसरी समस्या हल हुअी।

तेरे अंतिम प्रश्नका अुत्तर नहीं दिया जा सकता। अिसलिअे लाचार हूं।

लक्ष्मीके साथ तूने खूब बातें की होंगी।

बापू

१२०

१९-३-'३३

चि० प्रेमा,

तू व्यर्थ शंका करती है। जैसे तू शुद्ध भावसे अपनी अिच्छानुसार आलोचना करती है वैसी ही महादेवने की है। मैंने अुनसे पूछा। बार बार 'महात्माजीके लिअे' पर जोर देनेसे महादेवको अुसमें तिरस्कारकी गंध आअी। अुन्हें जैसा लगा वैसा अुन्होंने कहा। तूने अुत्तर दिया अिसलिअे मामला निबट गया। तुझे सहन शक्ति बढ़ानी चाहिये, अधीरता मिटानी चाहिये। थोड़ी विनोदी प्रकृति बनानी चाहिये। जगतकी सारी आलोचनाको सोनेके कांटेसे न तौलकर लोहे या पत्थर तौलनेके कांटेका अुपयोग करना चाहिये। अुसमें मन आधे मनका तो हिसाब तक नहीं होता। तू अूपरसे नाजुक नहीं दीखती, लेकिन तेरा मन बहुत नाजुक मालूम होता है। अब तू अुसे कठिन या सहनशील बना ले। अब तुझसे अनुरोध करनेके बजाय आज्ञा देनेका अिरादा कर रहा हूं। भले ही तू अुसका अनादर करे। दूसरी आज्ञाओंका अनादर करनेकी तो तुझे अिजाजत नहीं मिलती, अिसलिअे मेरी आज्ञाओंका अनादर तू किया करना। यह अनादर सविनय माना जाय अथवा अविनय, दीवानी माना जाय या फौजदारी, यह देखा जायगा।

बापू

मैंने अिस विषयमें कुछ जाना। निरस्कारकी बात तो तेरे पत्रसे ही मालूम हुअी। महादेवसे अिस सबधमें मेरी कोअी बात नहीं हुअी। मैंने जब महादेवसे तेरी पूनिया कातनेको कहा तब अुन्हें धर्म-संकट मालूम हुआ, यह भी मैं नहीं जानता था। अिसमें मुझे तेरी बात बिल्कुल सच लगती है। तेरे लिखनेके ढगमें या मागमें मुझे निरस्कारकी गंध तक नहीं लगी। मुझे पता नहीं कि महादेवको यह गंध कहासे आअी। अिस समय तो मेरा मौन है, नहीं तो पूछता। तेरी मागमें मैंने मोह जरूर देखा। मेरे प्रति मोह कैसा? जो किसीका बनने योग्य न रहे, जो रोज सबका बननेका ही प्रयत्न करे, अुसके विषयमें मोह त्याज्य है, निरर्थक है। परन्तु यह अेक बात है। जिसमें से दूसरेके प्रति तिरस्कारका भाव निकालना बिल्कुल दूसरी बात है।

सरदारके वचनमें तो अुनकी प्रकृतिके अनुसार विनोद ही था, अैसा मैं मानता हू।

अब यह देख कि तेरे प्रेमकी मैंने कैसी कदर की। तेरी पूनियोका मुझे वही अुपयोग करना चाहिये न, जिसे मैं अच्छेसे अच्छा मानू? अुसीमें प्रेमकी कदर मानी जायगी न? कोअी वैद्य बहुत प्रेमसे मेरे लिअे सुवर्ण-भस्म भेजे और अुसका मेरे लिअे जितना अुपयोग हो अुसकी अपेक्षा मेरे पडासीके लिअे अधिक अुपयोग हो, तो भस्म अुसे दे देना क्या ठीक नहीं होगा? अथवा कोअी मेरे चलानेके लिअे गाडी भेजे, और मेरा पडासी मेरे बजाय अुसे अधिक सलामत ढगसे चलाये अिसलिअे अुसे चलाने देकर मैं अुसका अुपयोग करू, तो मैंने दानीके प्रेमकी सच्ची कदर की अैसा माना जायगा न? यही बात पूनियोकी है। अैसी बढिया पूनियोंका सबसे अच्छा अुपयोग हमारी मडलीमें महादेव कर सकते हैं। अिसलिअे आधी मैंने अुन्हें कातनेको दे दीं। अिससे अुनकी शक्तिका पता लगेगा, देशका धन बढेगा और मेरा सतोष बढेगा। अिसलिअे तुझे यह चाहनेका अपना स्वभाव बदलना चाहिये कि जिसे तू भेंट भेजे अुसीको अुसका अुपयोग करना चाहिये। भेंट देनी हो तो बिना किसी शर्तके देनी चाहिये। तुझे सुरेन्द्रने जो अुपाधि दी वह सच्ची थी। किसनके लिअे दिये गये फल वह समय पर न पा सके, तो तेरे खा लेनेमें ही

स्पर्धा किये विना स्वतंत्र प्रयत्न करे तो ही पहुचा जा सकता है। तू अैसा प्रयत्न कर रही है? ब्रह्मचर्यकी मेरी व्याख्या तू जानती है न? अुस व्याख्या तक तू पहुचेगी? अुसमें राग और रोपके लिअे बिलकुल अवकाश नही है। मुझे तेरी आलोचना नही करनी है, तुझे शिक्षा नही देनी है, मैं तो भिक्षा मागता हू। जब तक यह भिक्षापात्र नही भरता, तब तक आश्रम आश्रम नही हो सकता।

अपनी तबीयतके बारेमें तूने समाचार दिये यह ठीक किया। कच्ची गोबीको पीसकर खाया जाय तो शायद नुकसान न हो, परन्तु अुसे अुबालकर खानेमें कोअी आपत्ति नही है। शाक कच्चा ही खाना जरूरी नही है। थोडा भी कच्चा खाया जाय तो काफी है। परन्तु मुख्य बात यह है कि तुझे बोलना कमसे कम कर देना चाहिये। अिस नियमका पालन करनेमें जो ढिलाअी होती है वह चिन्ताजनक अिस तरह बन जाती है कि बादमें किया हुआ सयम निरर्थक सिद्ध होता है। सब कुछ अपने अपने समय पर होना चाहिये। गलेकी हालत नाजुक हो, तभी अुसे आरामकी जरूरत होगी।

मारुति[1]के साथ बात हो गअी, यह बहुत अच्छा हुआ। अुनके साथ पत्रव्यवहार जारी रखना। लक्ष्मीको आश्रमकी सहेली चाहिये? कोअी भेजने लायक है? यह भी लक्ष्मीदाससे जान लेना कि वहा जाकर वह रह सकती है या नही।

वहा बहुतसी महाराष्ट्रीय बहनें हैं। अुन्हे जमनालालजीने भेजा है अैसा वे कहते थे। अुनमें से किसी न किसीको अुनके महिला-आश्रमके लिअे तुझे तैयार करना चाहिये, अैसा जमनालालजीने तेरे लिअे सदेशा भेजा है। अैसी कोअी बहन है क्या? वह प्रौढ और अनुभवी होनी चाहिये। मुझे लिखना। नारणदासके लिअे भी यही सन्देश है। अुसे अलगसे नही लिखूगा। अुसके लिअे अिसकी पूर्ति बाकी रखता हू।

---

१ श्री मारुतिके साथ लक्ष्मीका व्याह हो गया था। पू० बासे मिलनेके लिअे मैं दोनोंके साथ अहमदाबाद सेंट्रल जेल गअी थी। दोनोंको पू० बाके आशीर्वाद मिले। रास्तेमें श्री मारुतिसे मेरा परिचय और बातचीत हुअी थी।

१२१

[पत्र स० १०५ ता० १८-१२-'३२ में जिस कार्यकर्ताका अुल्लेख है, अुसके बारेमें अिस पत्रमें और आगे पत्र स० १२३ ता० २-४-'३३ में लिखा गया है। कुटुम्बियाकी बडी अुमरकी लडकियामें यह कार्यकर्ता अधिक घुल्ना-मिलना था। यह बात मुझे ठीक नही लगी तो मैंने श्री नारणदास काकाको अपनी शका बता दी। परन्तु अुनका अुस पर बहुत विश्वास था! सबका ध्यान रखनेवाले बुजुर्ग थे, अिसलिअे मैं अुदासीन रही। बादमें परिणाम यह हुआ कि सोलह वर्षकी अेक लडकीके साथ अुसका प्रेम बढा और जब वह बाहर गअी थी तब अुसने पत्र लिखकर अुससे पूछा, "तू मेरे साथ शादी करेगी?" लडकी अुम समय बीमार थी, अिसलिअे वह पत्र अुसकी मौसीके हाथमें पहुचा। अुसने पत्र पढ़ा और स्वयं पू० महात्माजीसे मिलने गअी और वहा अुनके हाथमें पत्र रख दिया। अुसे पढकर पू० महात्माजीको भारी आघात पहुचा, क्याकि कार्यकर्ता और लडकी दोनोंसे पू० महात्माजी बडा स्नेह रखते थे। अुन्होंने कार्यकर्ताको बुलाकर पत्रके बारेमें रूबरू पूछा। अुसने जवाब दिया, "पत्रमें मैं अुस लडकीकी परीक्षा ले रहा था।" अिस अुत्तरसे पू० महात्माजीको बडा दुःख हुआ, क्योंकि वह असत्य कथन था।]

२६-३-'३३

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। यह भावना तुनमें स्थिर हो। सूत तो मैंने तेरे लिअे रखनेको कहा है न? वह रखूगा। अुस (माग)का तिरस्कार करनेकी भी जरूरत नहीं। मुझसे कुछ भी मागनेका तुझे जरूर अधिकार है। सूतकी माग निर्मल है। जिस ढगसे तूने माग की अुसमें दोष था। अुसे तूने सुधार लिया, अिसलिअे अब कहनेको कुछ नही रहता।

तू देखती है कि मेरी आशायें राख होती जा रही हैं। और . . के बारेमें तो क्या कहू? अुनके बारेमें मुझे शका हो ही नहीं सकती थी? अुन पर मैंने आशाओंका पहाड चुना था, परन्तु वह रेतकी बुनियाद पर खडा था। आश्रमके आदर्श तक कैसे पहुचा जाय? कोअी किसीकी

भी बनी हुओ है। हा, मेरी यह मान्यता जरूर है कि सत्यनिष्ठ, अहिंसक समाजमें आदर्श चुनाव हो सकता है। परन्तु आजके लोकतंत्रमें जो निर्वाचन-पद्धति है वह अपरिहार्य होने पर भी अुसके प्रति मनमें अरुचि जरूर है।

पू० महात्माजीका पत्र आया तब विचार कच्चे और भावना अुत्कट — यह परिस्थिति थी। मेरा आदर्श तो आमरण ब्रह्मचर्य-जीवन पालन करनेका था। भविष्यकी बात अुस समय तो मैं कह ही नही सकती थी। परन्तु मुझे लगा कि २५ वर्ष तक यदि मैं पुरुषोंके रागकी अिच्छा किये बिना रह सकी, तो दूसरी लडकियोंको भी अैसा करनेमें क्या कठिनाअी हो सकती है? अभी १६ वर्ष भी पूरे न हुअे हो तब काम-विकार कैसे अुत्तेजित हो सकता है? मेरे सामने यही समस्या थी। कॉलेजमें पढ़ती थी तब *Sex Literature* की कोजी तीन पुस्तकें मैंने पढ़ी थी। परन्तु वे अच्छी नही लगी, अिसलिअे मैंने वैसी पुस्तकें फिर हाथमें नही ली। डॉ० फ्रॉयडको मैंने देरसे पढा, परन्तु तब अुनके कुछ मत मुझे अतिरंजित लगे। खैर! अपनी भावनाके वश होकर मैंने कही पढा हुआ या किसीके मुहसे सुना हुआ अेक वाक्य अपने पत्रमें लिख डाला: 'I may sleep with any man on the same bed during the whole night and get up in the morning as innocent as a child!' (किसी भी पुरुषके साथ सारी रात अेक शय्या पर सोकर मैं दूसरे दिन सवेरे निर्दोष बालक जैसी ही जागूगी।) अिसमें पू० महात्माजीको अभिमानकी गंध आअी। आज मुझे लगता है कि वह मेरा अविवेक था, अभिमान नही। अनुभवहीनता तो थी ही। पू० महात्माजीके सामने मैं अपना अन्तर खोल कर रख देती थी। परन्तु मेरी अुमर बहुत बढ़ जानेके बाद भी मैंने किसी दूसरे व्यक्तिके सामने आमरण ब्रह्मचर्य-पालनका दावा किया हो, अैसा मुझे स्मरण नही है। 'पचपन वर्षकी अुमरमें भी विवाह करनेकी जीमें आ जाय तो मैं विवाह कर लूगी' यही मैं कहती थी। परन्तु आज मैं कह सकती हू (आज तो मुझे त्रेपन वर्ष पूरे हो गये) कि ब्रह्मचर्य-पालनमें जो भी टूटी-फूटी सफलता मिली है, वह पू० महात्माजीके रूपमें ओीश्वरकी जो कृपा व्यक्त हुअी अुसीके कारण मिली है। श्री सद्गुरुके प्रति अनन्य निष्ठा और ध्येयपथ पर चलते हुअे साधनाकी

दवेतपत्रके बारेमें मैं कुछ भी नहीं लिख सकता। यहाँ बैठे हुअे मेरा वह क्षेत्र भी नहीं है, अिसलिअे मैंने अुसे पढ़ा भी नहीं।

बापू

१२२

[ता० २६-३-'३३के पत्रमें पू० महात्माजीने मुझसे ब्रह्मचर्य-जीवनकी भिक्षा मागी, अिसलिअे मेरे मनमें यह भावना पैदा हो गअी कि मुझे कुछ भी लिखकर अुन्हें सन्तोष देना चाहिये। यह बात सच है कि कॉलेजमें तथा युवक-आन्दोलनके समय बहुतसे पुरुष साथियोंसे मेरा परिचय होता था, अुनके साथ घुलने-मिलनेके प्रसंग भी आते थे, परन्तु मुझे न तो किसीके प्रति आकर्षण हुआ और न किसीके प्रति काम-विकार अुत्पन्न हुआ था। छोटी आयुमें मैं आदर्शवादके सपने देखती थी, अिसलिअे 'प्रणय'की ओर मेरा मन गया ही नहीं था। सोलह वर्षकी आयु हुअी तब अेक बार मैं भागवत पढ़ रही थी। अुसमें कपिल-देवहूतिका संवाद पढ़ा, तब मुझे पता लगा कि बच्चे कैसे पैदा होते हैं। मुझे याद है कि अुस समय मेरे शरीर पर रोंगटे खड़े हो गये थे। अपने जन्मकी कल्पना मुझे आअी और अपने शरीरके प्रति तथा अपने माता पिताके प्रति भी अेक तरहकी घृणा मेरे मनमें पैदा हुअी थी! जीवन गंदा लगा था! यह घृणा बहुत वर्षों तक बनी रही। अैसा याद है कि जीवनमें मुझे तीन चीजोंसे घृणा रही — (१) स्त्री-पुरुष-समागम, (२) विवाद, (३) चुनाव। फिर समय बीतने पर वाचन और चिन्तन करनेके पश्चात् तथा विद्वान, सज्जन गुरुजनों और स्नेहियोंके साथ बहुत चर्चा करनेके पश्चात् जैसे जैसे मनुष्य-स्वभावका ज्ञान बढ़ता गया, वैसे वैसे 'समागम'के बारेमें अेक वैचारिक भूमिका मनमें दृढ़ हो गअी :

'धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।'

प्रजननके लिअे ही समागम, बाकी संयमी जीवन — यह भूमिका दृढ़ होनेके बाद घृणा कम हो गअी। लेकिन अन्य दो वस्तुओंके प्रति आज

म० म०
२–४–'३३

च० प्रेमा,

आज सुबह अेक पत्र तो तुझे लिखा ही है। वह अिससे पहले मिलना चाहिये। . . . और . . . के विषयमें तू जो लिखती है वह अर्थ सच है। भूल सब करते हैं। अुनका दुःख नहीं मानना चाहिये। परन्तु भूलको कोअी छिपाकर रखे, भूल करनेवालेकी अनिच्छा होते हुअे भी वह प्रगट हो जाये और बादमें वह भूलका अनुचित बचाव करे, तब दुःख होना ही चाहिये। यदि न हो तो अैसी घटनाओंको रोकनेका अुपाय ही हमको न मिले। अगर यह मान लें कि अैसी घटनाअें होती ही रहेंगी, अिसलिअे अुन्हें रोकनेका अुपाय ही नहीं किया जाना चाहिये, तो समाजका नाश हो जायगा। अिसलिअे अुन्हें रोकनेके अुपाय तो करने ही चाहियें। वे अुपाय हृदयको आघात पहुंचे तो ही किये जा सकते हैं। जो मिथ्या दुःख करते हैं, क्रोध करते हैं वे ठीक नहीं करते, अैसा कहा जायगा, और मेरे खयालसे तू भी अितना ही कहना चाहती है। अिससे अधिक कहना चाहती हो तो वह भूल है, अिस बारेमें मुझे शंका नहीं। दुःख, आघात वगैरा शब्दोंके बजाय दूसरा कोअी शब्द मिले, तो मैं जरूर अुसे स्वीकार कर लूं। परन्तु तेरे पत्रमें कहीं न कहीं मोह छिपा हुआ है। मोह शब्दका अुचित अुपयोग हुआ है या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता। मेरा आशय तू समझ गअी हो तो काफी है।

मुझसे जो भूल हुअी है वह तो मैंने मान ही ली है।

मैं तुझसे चाहता हूं सरलता, मृदुता, नम्रता, धीरज, सहनशीलता और अुदारता। यह तो मुझे तब मिले जब तू आकाशसे नीचे अुतरे। तू कुछ भी नहीं है, यह तू कब मानने लगेगी? रोज धरती-माताकी वन्दना करना और रोज अुसे लात मारना यह क्या है? यदि सचमुच हमारी अिस प्रार्थनामें सत्य हो तो हमें रजकण बन जाना चाहियें और

सतत सहायता — अिन दोनोंके ही कारण (मैं) पगु पहाड़को लांघ सकी! वैसे मेरा कर्तव्य तो शून्य ही है।

पूर्ण ब्रह्मचारिणीको मासिक धर्म नहीं होता, पू० महात्माजीकी यह मान्यता शास्त्रीय हो सकती है अिसमें मुझे शंका है। मैंने बहुतसे स्त्री और पुरुष डॉक्टरोंकी सलाह ली है। अेक अपवादके सिवा किसीने अिस मान्यताका समर्थन नहीं किया। अपवादस्वरूप डॉक्टरने भी कहा कि जनन-शक्ति और अिन्द्रिय तथा गर्भाशयका अुपयोग किया हो न हो, तो मासिक धर्म बन्द हो जानेकी संभावना है, परन्तु तब स्त्रीका पुरुषमें रूपान्तर हो जायगा, अुसे मूछें आ जायगी, वगैरा।]

२–४–'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अच्छा है। आज ब्यौरेवार नहीं लिख सकता। पत्र अच्छा है फिर भी अुसमें ब्रह्मचारिणीको शोभा न देनेवाला अभिमान है। नारदकी कथा याद कर। नारदने ब्रह्मचर्यका अभिमान किया कि तुरन्त अुनका पतन हो गया। ब्रह्मचारीका आधार ठेठ अीश्वर पर रहता है। अिसलिअे वह नम्र होता है। वह अपना भरोसा नहीं करता। जो जन्मसे निर्विकार है वह मनुष्य नहीं। वह या तो परमेश्वर है अथवा पुरुष अथवा स्त्रीकी शक्तिसे रहित है। अिसलिअे अपूर्ण है, रोगी है। परमेश्वरको अभिमान किस चीजका? पत्थरको पत्थरपनका अभिमान हो सकता है? रोगीको रोगका अभिमान नहीं हो सकता। स्त्री-पुरुष अपने विकारोंको वशमें रखनेकी शक्ति पैदा कर सकते हैं और अिसलिअे संग्रह की हुअी शक्तिका सदुपयोग कर सकते हैं। परन्तु जिसे अिस शक्तिका अभिमान होता है, अुसकी अिस शक्तिका अुसी क्षण नाश हो जाता है। तुझमें जो ब्रह्मचर्य होगा अुसका कितना क्षय हो रहा है, अिसका क्या तुझे भान है? तेरे ब्रह्मचर्यमें न्यूनता तो है ही। तेरे लिअे स्वाभाविक क्या है? तू विकारको जानती ही न हो तो क्या तू कोअी देवी है? देवीके लक्षण भिन्न होते हैं। तू देवी नहीं है। तुझे रोग हो अैसा मैं जानता नहीं, क्योंकि तुझे मासिक धर्म होता है। तू जांच करके देखना और मुझे लिखना।

बापू

६–४–'३३

चि॰ प्रेमा,

तू मूर्ख भी है और सयानी भी, अिसलिअे अेक ही विशेषण नहीं दे सकता। बोलना लगभग बन्द होना ही चाहिये। अूंची आवाजसे बोलना बिलकुल ही बन्द। गाना भी सर्वथा बन्द। काम न चलने पर ही धीमी आवाजसे बोलना पड़े तो बोला जाय, अन्यथा जो कहना हो वह लिखकर कहना चाहिये। अैसा नहीं करेगी तो तुझे पछताना होगा।

तेरी खुराकमें ज्वार-बाजरा अनुकूल न पड़ें तो वे बन्द हो ही जाने चाहियें। मेरी अिच्छा तो तुझे कच्चे दूध पर रख देनेकी होती है। अुसके साथ थोड़ेसे मुनक्के चबाकर चूसनेसे सन्तोष रहेगा। टमाटर तो हमारे यहां बारहों महीने पैदा होने चाहियें। और जब भाजी मिले तब हरी भाजी खुराक कर ली जाय। अितने पर तू रहे तो और किसी चीजकी मुझे जरूरत नहीं मालूम होती। तेरी शक्ति जरूर कायम रहेगी। जांच करके देखना, क्या हो सकता है।

किसनके समाचार दुःखद हैं।

बापू

१२५

१०–४–'३३

चि॰ प्रेमा,

नरहरिके हाथों भेजी हुआी पूनियां मिलीं। हिसाब बादमें। सूरती पूनियां १८ तोला हैं।

शान्ता[1] के बारेमें समझा। अुसने अभी तक मुझे कुछ नहीं लिखा है। अिन दोनों बहनोंके बारेमें तू जमनालालजीको वर्धा लिख दे तो अच्छा हो।

[1] शान्ता . पिछले पत्रोंमें जिस बहनका अुल्लेख आ गया है। श्री जमनालालजीने दो महाराष्ट्रीय बहनोंको भेजा था। अुनमें से अेक थी शान्ता पानवलकर और दूसरी नर्मदा मुरकुटे। दोनों मैट्रिक तक पढ़ी हुआी थीं। नर्मदा महाराष्ट्रके खादी-कार्यकर्ता श्री ता॰ म॰ गोखलेकी पत्नी कमलाबाअीकी (जिनका अुल्लेख पीछेके अेक पत्रमें है) छोटी बहन।

दुनियाकी त्याग सहन करने लगना चाहिये। तब धरती-माताको हमारे चरणोंका स्पर्श नहीं होगा, क्योंकि तब हम जीनेंकी राग बन गये होंगे। 'दुखीकी धूल झुकाता जा'।

तेरी पूनिया अभी चल रही हैं। अुनमें गाठें आती यह तेरा दोष नहीं है। वह कुछ पीजनका दोष है और कुछ धुननेका। अधिक धुननेसे रेशे कमजोर हो जाते। दूसरी पूनियां बहुत बारीक सूत नहीं देतीं, परन्तु अुनमें गाठें कम हैं।

परचुरे शास्त्रीके लड़केको तूने हाथमें ले लिया, यह बहुत ठीक किया।

शान्ताको तूने ठीक कहा। अब अुसे जो अच्छा लगे वही करे।

बापू

१२४

[जब मैं सत्याग्रहाश्रममें रहती थी तब आश्रम-जीवनकी तपस्याके बारेमें मेरी कुछ विशेष कल्पनायें थीं। पू० महात्माजीके विचारोंका प्रभाव भी अुसका कारण था। "बीमारी होना अपराध है" अैसा वे कहते थे। अिसलिअे किसी समय मैं बीमार पड़ती तब अथवा अुपवासमें भी मैं रोजकी तरह ही काम करती रहती थी। फिर पू० महात्माजी कहते कि, "हमें गरीबोंकी तरह रहना चाहिये।" अिसलिअे अधिक रुपया खर्च करके अच्छा भोजन खानेको जी न करता था। अिसके सिवा, अेकान्तमें खाना अच्छा न लगता। रसोअीघरमें पंगतमें बैठकर साथियोंसे अधिक घी-दूध लेना या फल आदि खाना मुझे पसंद नहीं था। पू० महात्माजीने लिखा, "आश्रममें रहनेको जेलमें रहने जैसा ही मानना चाहिये।" तब मुझे लगा, "हम जेल नहीं गये। हमने कुछ भी त्याग नहीं किया। तो फिर आश्रम-जीवन अधिक कठोर क्यों न बनाया जाय?" अिस तरहके विचारोंके कारण विशेष सुविधायें लेनेकी पू० महात्माजीकी अेक भी सूचना मेरे गले न अुतरती थी। वे दलील करते थे और मैं भी विरोधमें दलीलें करती रहती थी। यह हाल था।]

हू। तू कृत्रिम बन जाय तो मैं लाचार हो जाअू और तुझे कुछ भी न कह सकू।

रजकण बननेका पाठ मैं नही दे सकता। अीश्वरको समझनेके प्रयत्नमें हम रजकण हो ही जाते हैं। वह स्थिति अपने आप आनी होगी तब आ जायगी।

तुझे किसीका कुछ सहन नही करना पड़ता, यह बात भी नही है। परन्तु दुःख यह है कि तू अुसे क्षणभरमें खो सकती है।

तू मानती है कि मेरे आसपास तेरे विरुद्ध वातावरण बना दिया गया है। अिसमें तू भूल कर रही है। सरदार तो तेरे विरुद्ध हरगिज नही हैं। अुनके विनोदको तू विरोध न मान। महादेव तेरे विरुद्ध हैं, अैसा मुझे बिलकुल नही लगता। छगनलालने तेरे बारेमें जो कहा वह नया नही है। वे तेरा मूल्य जानते हैं, परन्तु कहते हैं कि जब तक तू अपनी जीभको वशमें नही कर सकती, तब तक तुझ पर जिम्मेदारी नही होनी चाहिये। यह अुनकी पुरानी बात है। तू जान ले कि मैं अपने तीन साथियोंके साथ शायद ही बातें करता हू। खाते या टहलते समय थोड़ेसे विनोदके सिवा और कुछ हो ही नही सकता। प्रसगके बिना हम शायद ही किसी व्यक्तिकी चर्चा करते हैं। अपने काममें मुझे चर्चा करनेका होश भी नही रहता; और व्यर्थकी चर्चा करके मैं अपनी शक्तिका व्यय भी नही करना चाहता। ...और ...की करुण कथाकी चर्चा भी मैं मुश्किलसे ही कर सका हू। विचारोंका कमसे कम आदान-प्रदान करके ही मैंने सन्तोष कर लिया है। न तो तेरे विरुद्ध मेरे आसपास कोअी वातावरण है और न मेरे मनमें है। मैं तुझे सख्त अुलाहना अिसलिअे देता हू कि मैं तुझे अपनी पुत्री मानता हूं और तुझे पूर्ण देखना चाहता हू। अिसलिअे मेरी आलो-चनासे तू दुःखी क्यों होती है? अुसमें से जो लेना हो वह लेकर बाकीको भूल जा, क्योंकि यह तो सर्वथा सभव है कि मेरी आलोचनामें अज्ञान हो, तेरी भाषा मैं न समझ सका होअू।

अेक ही वस्तुको भिन्न भिन्न मनुष्य भिन्न भिन्न रीतिसे देखें यह ठीक है। अेक ही शक्तिका अुपयोग भिन्न भिन्न प्रकारसे होता है, यह हम रोज देखते हैं।

लक्ष्मी शिकायत करती है कि अुसे कोअी पत्र नहीं लिखता। मालूम करना। तू तो लिखती है न?

दुःखों और कष्टोंका मैं आदी हो गया हूं। अीश्वर मेरी परीक्षा अनेक प्रकारसे ले रहा है। तपके बिना मनुष्यका निर्माण कैसे हो? तू कर्तव्यका पालन नहीं करती, जितना कष्ट तो जरूर देती है। मुझे ही गलेको आराम देनेके लिअे मैं लिखता रहा हूं। शरीरको भी आराम देनेकी बात मैंने लिखी है। लेकिन तू दोनों आज्ञाओंका अनादर करती है। ये आज्ञायें देनेमें स्वार्थ तेरा नहीं, आश्रमका है। तेरा गला हमेशाके लिअे बिगड़े, तेरा शरीर कमजोर हो, तो तुझे जितना नुकसान होगा अुसकी अपेक्षा आश्रमको ज्यादा नुकसान होगा। यह सादा सत्य समझमें आता है? अगर समझमें आ जाय तो नम्र बनकर शरीरको अच्छा रखनेके लिअे जो कुछ कहा जाय अुस पर तू अमल कर। अिसी तरह क्रोधके बारेमें समझना। क्रोध भी अेक व्याधि है। अुसे भी दूर कर। अधीरताको भी दूर कर।

किसन कुछ ठीक है अैसी खबर मिली है। अुसे हिस्टीरियाका दौरा (फिट) हो यह बात समझमें नहीं आती।

बापू

१२६

१२–४–'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मैंने तुझे चेतावनी दी अितना काफी है। तेरा यह मानना ठीक नहीं कि मैं तेरे पत्र अच्छी तरह नहीं पढ़ता। तेरी बात मैंने समझ ली थी। जितने अधिक आत्म-विश्वासमें ही अभिमान या गर्व निहित है। तेरा अभिमान तेरी भाषामें मौजूद है। यह लिखकर मैं अैसा नहीं चाहता कि तू अपने विचारोंको छिपाये अथवा अुन्हें गढ़ कर मेरे सामने रखे। जैसे आते हैं वैसे तू लिख भेजती है, यह मुझे पसन्द है। तू जैसी भीतर और बाहर है वैसी मुझे देखने देती है, अिसे मैं तेरा गुण समझता

१२७

१९-४-'३३

चि० प्रेमा,

तूने अुस लड़कीको क्यों मारा? शिक्षिका शिष्योंसे माफी मांगे तो अपना स्वाभिमान नहीं खोती। अुलटे वह बढ़ता है। शिष्य भी अुसे अधिक चाहते हैं। अिसलिअे यदि तूने माफी न मांगी हो और अुसे मारनेका दोष तेरी समझमें आ गया हो, तो अुस लड़कीसे माफी मांग लेना। अिसमें तेरा श्रेय ही है।

तेरा आहार ठीक है। अिसी प्रकार लेगी तो गला जरूर अच्छा हो जायगा। डॉ० शर्माकी सलाह लेना। अुन्हें पता लगेगा तो कुछ बतायेंगे।

काम करनेमें अधीरता कैसी? जितना धीरे धीरे करते हुअे हो जाय अुतनेसे सन्तुष्ट रहें, तो कामकी गति और स्वच्छता बढ़ती है। अैसा अनुभव मैंने तो हजारों बार किया है।

बापू

१२८

२३-४-'३३

चि० प्रेमा,

दायां हाथ काफी थक गया है, अिसलिअे जो कुछ शक्ति अुसमें बाकी हो अुसे 'हरिजन' के लेखोंके लिअे सुरक्षित रखना चाहता हूं। मेरा खयाल है कि पूरे आरामकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

बीचमें अेक पत्र तो मैंने तुझे लिखा ही है। अिसलिअे यह छोटा हो तो चलेगा।

परचुरे शास्त्रीके लिअे मैं पुस्तकोंकी तलाश कर रहा हूं।

मैत्री तकलीफ देगी। अगर वह सुधरनेवाली होगी तो सहन करनेसे और प्रेमसे ही सुधरेगी। अुसे भाकी कमी महसूस नहीं होनी चाहिये।

मेरा यह विचार जरूर है कि मासिक धर्मके समय किसीको नियत कार्य न सौंपा जाय। कब अुसे दर्द अनुभव होगा यह दूसरे किसीको पता नहीं लग सकता। अुस समय स्त्री पर किसी प्रकारका बाहरी भार न होना अच्छा है। अपने आप जो काम वह करना चाहे खुशीसे करे। कुछ स्त्रियोंको जिस धर्मका असर मालूम ही नहीं होता और वे अपना काम करती रहती हैं। कुछको असह्य वेदना होती है। कुछको वेदना तो नहीं होती, परन्तु अुनका शरीर काम करने लायक नहीं रहता। जो स्त्री अुस धर्मका सदुपयोग कर सकती है वह प्रति मास नअी शक्ति प्राप्त करती है। ये तीन या चार दिन नअी शक्ति प्राप्त करनेके लिअे हैं और अुसे प्राप्त करनेके लिअे स्त्रियोंको हर तरहकी जिम्मेदारीसे मुक्त कर देना अुचित है। अुसे लेटे रहना हो तो लेटनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिये। नासमझीसे कुछ स्त्रियां अुस समय भी दौड़धूप नहीं छोड़तीं। वे ज्ञानहीन हैं। अुन्हें समझानेकी जरूरत है। अिसलिअे लक्ष्मीदासकी बात कुल मिलाकर मुझे अच्छी लगती है।

किसनके बारेमें तू जो लिखती है वह संभव है। अुसके स्वस्थ हो जानेकी बात जान कर मुझे बड़ी खुशी हुअी। मालूम होता है किसनने मेरे पत्रकी प्रतीक्षा की है। परन्तु मुझे याद नहीं कि अुसके अेक भी पत्रका जवाब बाकी रहा है।

तेरी पूनियोंके बारेमें लिख चुका हूं।

कच्चा दूध पीनेसे वजन घटना नहीं चाहिये। अुबला हुआ साग अेक बार लेगी तो शायद लाभ ही होगा। संभव है तेरे गलेको अुसकी जरूरत हो। मैं मानता हूं कि कच्चे दूधकी तो है ही। आजमाकर तो देख।

बापू

१२९

२५-४-'३३

चि॰ प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू मेरे पत्रके बहुत गहरे अर्थमें अुतर गअी। अैसा अुसमें कुछ था नहीं। नारणदासके नाम मैंने जो पत्र लिखा अुसमें तेरे सबंधकी शिकायतोंका अुल्लेख था। अुसे ध्यानमें रखकर मैंने लिखा कि तेरे अनेक गुणोंमें अुदारतापूर्वक सहन करनेकी शक्ति आ जाय तो कितना अच्छा हो! मुझे नारणदासको लिखना पडा कि यह पत्र तुझे न बतायें तो अच्छा हो। अुन्हें दुःख हुआ और मैंने अपने अुद्गार प्रगट किये। अिसमें तुझे अुलाहना देनेकी तो बात ही नहीं थी। मनुष्यके स्वभावको पलटनेकी भी हद होती है, अिसलिअे तुझे कुछ लिखना मुझे ठीक नहीं लगा।

अितना स्पष्टीकरण काफी हुआ न? अब तुझे यह पत्र देखना हो तो देख लेना।

तुझे अेक मासकी छुट्टी लेनी चाहिये या नहीं, अिसका निर्णय तू ही कर लेना। यह जरूर है कि नागिनीका वहां आना हो तब तू वहां रहे तो मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु जैसा नारणदास कहें वैसा करना।

तेरे गलेके बारेमें मुझे चिन्ता तो होनी ही है। परन्तु क्या हो सकता है? वह बिगडेगा तो दोष जरूर तेरा ही निकालूंगा। तू पूर्ण मौनव्रत ले ले तो मुझे अच्छा लगेगा। अिससे तेरा काम कम नहीं होगा। ट्रेपिस्ट साधु और साध्वियां मौनव्रत लेने पर भी सतत काम करते हैं। कच्चा शाक भले ही खा, परन्तु अुसे पीसकर लेना चाहिये। कच्चा दूध और फल हो तो सागके बिना भी काम चल सकता है।

बापू

मानिक धर्मके लिअे जो छूट रखनी अुचित हो वह रखी जाय। अुसका दुरुपयोग कोअी या बहन करे तो अुसके लिअे आश्रम जिम्मेदार नहीं होगा। नीदके समयका कोअी दुरुपयोग करेगा, अिस कारणसे हम वह समय काट नहीं सकते।

तू अपना धीरज टूटने न देना। सुधारकका सेवकका काम अिसके बिना घड़ीभर भी नहीं चलता, अिसे हमेशा याद रखना, अपनी दीवार पर लिख रखना, अुसका तावीज बनाकर पहन लेना।

वहांसे मजूरी आ जायगी तो नीला नागिनी[1] थोड़े ही दिनमें आश्रममें आयेगी। अुसने खुल्लम-खुल्ला व्यभिचार किया है, कर्ज किया है, असत्य बोला है। अब वह साध्वी जैसी बन कर बैठी है। मुझे अुसमें कृत्रिमता नहीं लगी। अुसने अपने दोषोंका दर्शन किया अुसके बाद जितना मैंने अुससे कहा अुतना ही अुसने किया है। यदि अुसे अपने शुभ निश्चय पर स्थिर रहनेका मौका मिलनेवाला हो तो बची निकलगा। और नहीं तो वह भूल जायगी अथवा फिरसे स्वच्छाचारमें फंस जायगी। अुसमें शक्ति बहुत है। वह बहुत बातें जानती है। महाभारतका अुसे खूब परिचय है। वह आये तो अुसे पहचानना। दूसरी बहनोंसे भी अुसे पहचाननेको कहना। अुसके भूतकालकी बात न कराना। वह अैसी है कि खुद ही करेगी। परन्तु अुसकी बात करने-करानेमें दोष है। विषयका स्मरण हानिकर है। अपने विषयी भूतकालकी बात वह रसपूर्वक करे, तो जान लेना कि विषय अुसमें से गया नहीं। अुसे छोटी बहन समझ कर प्रेमपूर्वक अुसके हालचाल पूछना। अुसके जीवनके बारेमें मुझसे जो पूछना हो वह तू पूछ सकती है। अुसे भेजनेका समय आये तब कदाचित् मुझे बहुत लिखनेका समय न मिले, अिसलिअे आज ही अितना लिख डाला। अुसका लड़का बहुत अच्छा है।

बापू

---

[1] नीला नागिनी २४ वर्षकी अमरीकी युवती। अेक यूनानीके साथ अुसकी शादी हुअी थी। अुसे छोड़कर स्वेच्छाचार करती थी। काश्मीरमें आकर हिन्दू हो गअी थी, अैसा वह खुद कहती थी। अुसे सुधारनेके लिअे पू० महात्माजीने आश्रममें भेजा था।

(३) लोकाचारको सत्याग्रहके मार्गमें कहा तक आदर किया जाय?

(४) आप जैसे पुण्यश्लोक महात्माके और मेरे बीच किसी बातमें मतभेद हो, मुझे अपना मत अन्त प्रेरणासे सही लगता हो और अुस पर अमल करनेमें आपकी सस्थाके आचार धर्ममें बाधा होती हो, तो सत्याग्रहीके नाते मेरा क्या कर्तव्य है?

(५) सस्थाके कारण व्यक्ति प्रिय लगना चाहिये अथवा व्यक्तिके कारण सस्था प्रिय होनी चाहिये?

(६) दूसरोंके बारेमें हमें बुरे विचार आते हैं, अिसे जाननेकी कसौटी क्या है?

(७) जो मनुष्य अनेक प्रसगो पर झूठा, आलसी या स्वार्थी पाया गया हो, अुसके विषयमें शिकायत होने पर अुसके बारेमें हमें सन्देह हो तो वह सत्याग्रहीको शोभा देगा या नही?

(८) सादे जीवनकी मर्यादा क्या हो सकती है? साडी पर कसीदा करना, फैशनवाला पोलका पहनना, हाथमें या गलेमें फूलोका कगन या माला पहनना, कसीदेके कामकी चप्पले पहनना — अिनमें कला-रसिकता मानी जाय या आश्रमके सिद्धान्तोका भग समझा जाय?

(९) आश्रममें अेक आदमी दूसरेकी आलोचना करता है और स्वयं वही दोष करता है, तब जिस व्यक्तिकी यह आलोचना करता है वह आलोचकको ताने मारता है या अुसके दोष बताता है। अिसे निन्दा या हिंसा कहा जा सकता है?

(१०) आश्रममें आनेवाले सब लोग अलग अलग अिरादे मनमें रखकर आते हैं। अैसी स्थितिमें यहाके अुनके जीवनकी ओर हमारी दृष्टिसे अलग अलग ढगसे देखना चाहिये या नही?]

१–५–'३३

चि० प्रेमा,

मेरा अुपवास सब आश्रमवासियोंके लिअे होगा। अत तेरे लिअे भी होगा, यह जान कर तू अपने सारे रोगोको निकाल फेंकना।

तेरे प्रश्न तेरे पास होंगे, यह मानकर अुनके अुत्तर ही सक्षेपमें दे रहा हू। मेरे पास आज समयकी बडी कमी है।

१३०

२६–४–'३३

चि० प्रेमा,

तुझे अेक पत्र तो बीचमें लिखा है। आजकल जब वातावरण खूब डावाडोल हो रहा है, तब तेरे विचार समय समय पर आते रहते हैं। तुझे सिखावन देनेकी अिच्छा नहीं होती, और तेरे साथ चर्चामें पड़नेकी हिम्मत नहीं होती। मेरी स्थिति गजेन्द्र जैसी है। जरासी सूंड बाहर रही है। वह भी पानीमें डूब जाय तो सांस रुक जाय। अिसलिअे जिनके विषयमें आजकल मनमें विचार आते हैं, अुनके लिअे केवल प्रार्थना ही करना रहता है। परन्तु किससे करूं? जो सदा ही जागता रहता है, जिसे आलस्य नामको भी नहीं है, जो नखसे भी निकट है, जो सब कुछ सुनता है, सब कुछ देखता है, वह तो मेरी प्रार्थनाअें जानता ही है।

अिसलिअे अुसके आधार पर सूंड पानीके बाहर थोड़ीसी रही है। अुसे जो करना हो सो करे, जैसे रखना हो वैसे रखे।

बापू

१३१

[अिस पत्रमें पू० महात्माजीने मेरे नीचेके सवालोंके जवाब दिये हैं:

(१) हमसे अुमरमें बड़ा, हमारी अुमरका अथवा हमसे छोटी अुमरवाला व्यक्ति शोर करता हो, अुल्टकर जवाब देता हो या गालियां देता हो, समझाने पर भी न मानता हो और अिसका दूसरों पर खराब असर पड़ता हो, समय और काम बिगड़ते हों, तो हम क्या करें? अपनी अधीरताको हम किस प्रकार जीतें?

(२) अपना फर्ज अदा करते समय यदि अपनी किसी जरूरतके लिअे आश्रमके नियम या अनुशासनका भंग हो, तो अुसका दूसरों पर क्या असर होगा? बुरा असर होनेकी संभावना हो तो हमें अपनी जरूरतका त्याग करना चाहिये या नहीं?

(३) लोकाचारका सत्याग्रहके मार्गमें कहा तक आदर किया जाय?

(४) आप जैसे पुण्यश्लोक महात्माके और मेरे बीच किसी बातमें मतभेद हो, मुझे अपना मत अन्तःप्रेरणासे सही लगता हो और अुस पर अमल करनेमें आपकी संस्थाके आचार धर्ममें बाधा होती हो, तो सत्याग्रहीके नाते मेरा क्या कर्तव्य है?

(५) संस्थाके कारण व्यक्ति प्रिय लगना चाहिये अथवा व्यक्तिके कारण संस्था प्रिय होनी चाहिये?

(६) दूसरोंके बारेमें हमें बुरे विचार आते हैं, अिसे जाननेकी कसौटी क्या है?

(७) जो मनुष्य अनेक प्रसंगों पर झूठा, आलसी या स्वार्थी पाया गया हो, अुसके विषयमें शिकायत होने पर अुसके बारेमें हमें सन्देह हो तो वह सत्याग्रहीको शोभा देगा या नहीं?

(८) सादे जीवनकी मर्यादा क्या हो सकती है? साड़ी पर कसीदा करना, फैशनवाला पोलका पहनना, हाथमें या गलेमें फूलोंका कंगन या माला पहनना, कसीदेके कामकी चप्पलें पहनना — अिनमें कला-रसिकता मानी जाय या आश्रमके सिद्धान्तोंका भंग समझा जाय?

(९) आश्रममें अेक आदमी दूसरेकी आलोचना करता है और स्वयं वही दोष करता है, तब जिस व्यक्तिकी वह आलोचना करता है वह आलोचकको ताने मारता है या अुसके दोष बताता है। अिसे निन्दा या हिंसा कहा जा सकता है?

(१०) आश्रममें आनेवाले सब लोग अलग अलग अिरादे मनमें रखकर आते हैं। अैसी स्थितिमें यहाके अुनके जीवनको और हमारी दृष्टिसे अलग अलग ढंगसे देखना चाहिये या नहीं?]

१–५–'३३

चि॰ प्रेमा,

मेरा अुपवास सब आश्रमवासियोंके लिअे होगा। अतः तेरे लिअे भी होगा, यह जान कर तू अपने सारे रोगोंको निकाल फेंकना।

तेरे प्रश्न तेरे पास होंगे, यह मानकर अुनके अुत्तर ही संक्षेपमें दे रहा हूं। मेरे पास आज समयकी बड़ी कमी है।

(१) बड़े या छोटे काजी भी हों, भुन्हें नम्रतापूर्वक न समझाया जा सके, तब मौन धारण करके हृदयमें भुनके लिअे प्रार्थना की जाय। अैसा करनेसे अधीरता मिट जायगी।

(२) यहां जरूरतकी व्याख्या जाननी चाहिये। मैं श्लोक बुलवा रहा होअूं अुस समय मैं सापको देखूं और अुसे पकड़नेकी जरूरत हो, तो मुझे श्लोक बुलवानेके नियमका भंग करना चाहिये। अुसी समय मुझे पाखानेकी सख्त हाजत मालूम हो तो भी मुझे अुस नियमका भंग करना चाहिये। लेकिन मुझे पानी पीनेकी हाजत हो तो अिस जरूरतको दबाकर मुझे श्लोक बुलवाना जारी रखना चाहिये। तुझे गलेमें कुछ हो गया हो तो भी तू श्लोक चालू रखे, यह शायद मूर्खतासे भी कुछ अधिक बुरा कहा जायगा।

(३) सच्ची खोजमें जो व्यवहार रुकावट डाले अुसे तोड़ा जाय।

(४) यदि तुझे मेरे प्रति अनन्य श्रद्धा हो तो तुझे मानना चाहिये कि जिसे तू अन्तःप्रेरणा मानती है अुसमें भूल होनेकी संभावना है। परन्तु अन्तःप्रेरणा श्रद्धासे भी आगे जानेवाली प्रत्यक्ष वस्तु जान पड़े, तो कुछ भी मदद लेकर अुसीके अनुसार किया जाय।

(५) अिसका अेकांगी अुत्तर हो ही नहीं सकता।

(६) यह प्रश्न समझमें नहीं आता।

(७) स्वयं किसीका बार बार झूठा या आलसी पाया हो तो आगे भी अुसके वैसा होनेका सन्देह तो सत्यार्थीको भी होगा। परन्तु सत्यार्थी सन्देह होने पर भी आलसी या झूठे पर प्रेम रखेगा और अुसे (सुधरनेके) अवसर देता रहेगा।

(८) अिसमें सबके लिअे कोअी अेक नियम नहीं हो सकता। प्रत्येकके मन पर अिसका आधार है। परन्तु कलाके बहाने सादगीका त्याग नहीं किया जा सकता।

(९) ताना मारनेकी वृत्तिसे अेक-दूसरेको जवाब देना निन्द्य है। 'तू भी अैसा ही है,' यह कहनेमें हीनता है।

(१०) यह वस्तु अहिंसाके गर्भमें ही निहित है।

यह मानकर कि तेरे पास अपने प्रश्नोंकी नकल रखनेका समय न रहा हो, प्रश्न मैं साथमें भेज रहा हूं।

दो बहनोंको भेज रहा हूं। गफलत तो खूब हुआ है, परन्तु भेजनेका धर्म समझकर भेज रहा हूं। आशा है कि वे तेरा काम बढ़ायेंगी नहीं, बल्कि तेरे काममें मददगार होंगी। अुनके लिअे हिन्दी सीखनेकी सुविधा कर देना।

मैं चाहता हूं कि सुशीला अपनी अिस बारकी छुट्टी आश्रममें बिताये। तुम दोनोंको अिससे आराम मिल सकता है। बुद्धिमका परिवर्तन ही आराम है, यह अंग्रेजी कहावत जानती है न? अिसमें काफी सत्य है। अिसे तो लिखते लिखते ही मनमें अुठ आनेवाला खयाल समझना। सुशीलाने कोअी खास कार्यक्रम बना रखा हो तो मेरी अिच्छाके खातिर अुसे रद करनेकी बिल्कुल जरूरत नहीं।

बापू

१३२

[दाडी-कूचके समय सत्याग्रह-आन्दोलनमें मुझे भेजनेकी मैंने पू० महात्माजीसे प्रार्थना की थी, वह अुन्होंने स्वीकार नहीं की। आश्रममें सेवाकार्य करने लगी, अुसमें असफल सिद्ध हुअी, अिसलिअे मुझसे जिम्मेदारी ले लेनेकी मैंने दूसरी प्रार्थना की। वह भी स्वीकृत नहीं हुअी। बादमें मैं जैसे जैसे काम करती जाती वैसे वैसे मेरे सम्बन्धमें शिकायतें भी अुनके पास पहुंचती रहतीं। पू० महात्माजी देशकी आजादीका विचार करें, या हरिजन-अुद्धारका विचार करें या मेरे बारेमें की गअी शिकायतोंका विचार करें? जेलमें अुनकी जो मर्यादा थी अुस पर भी भार पड़ने लगा। यह मुझे दुःसह प्रतीत हुआ। मेरे प्रयत्नोंके बावजूद मैं आश्रममें सबको और पू० महात्माजीको भी सन्तोष नहीं दे पाती थी, अिसका भी मुझे दुःख हुआ। श्रम, कम नींद, जिम्मेदारीका भान और आराम तथा चाचन-चिन्तनके लिअे समयाभाव आदिसे मेरा जीवन जड यंत्रवत् होने लगा था। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यके लिअे मैंने अेक महीनेकी छुट्टी मांगी, परन्तु दो यूरोपियन बहनें आनेवाली थीं अिसलिअे छुट्टी नहीं मिली। श्री नारणदास काकाको परेशानीमें डालना भी मुझे पसन्द नहीं था। मैं दूसरोंकी सेवा करती थी परन्तु स्वयं किसीसे सेवा नहीं लेती

थी। जिससे बीमारीमें कभी कभी तकलीफ तो होती थी। जिस तरह चल रहा था कि पू० महात्माजीके ता० २५–४–'३३ और ता० २६–४–'३३ के दो पत्र मिले। अुन्हें पढ़कर मैं बहुत घबराओ और दूसरा मार्ग न सूझनेसे भगवानकी शरणमें जाकर मैंने अुपवास शुरू कर दिया। हेतु यह था कि भगवान कुछ न कुछ मार्ग बतायेंगे। जितनेमें पू० महात्माजीका ता० १–५–'३३ का पत्र मिला। वे २१ दिनका अुपवास शुरू करेंगे, यह समाचार पाकर मैंने अपना अुपवास तीन दिनके बाद छोड़ दिया। परन्तु अुपवासमें पू० महात्माजीको पत्र लिखकर मैंने प्रार्थना की थी कि, "मैं आश्रममें अधिक रहूंगी तो आपको मेरी ओरसे कष्ट ही हुआ करेगा। जिसलिअे मुझे हमेशाके लिअे आश्रमसे जाने दीजिये!"]

३–५–'३३

चि० प्रेमा,

तेरा हृदयद्रावक पत्र मिला। तुझे मैं किस प्रकार सन्तोष दूं? तुझे जाने देना मेरे लिअे बहुत कठिन है। मैंने तो तुझ पर आशाका मेरु बांधा है। परन्तु जिसका श्रेय आश्रममें रहनेसे सिद्ध न हो अुससे आश्रममें रहनेका मैं आग्रह करूं, तो मैं स्वार्थी बनता हूं और आश्रमका पतन होता है। आश्रममें रहनेवाले सभी लोगोंके अधिकसे अधिक श्रेयका सूचक और अुसे साधनेका स्थान आश्रम है। जिसलिअे तेरा श्रेय और आश्रमका श्रेय परस्पर विरोधी हो ही नहीं सकते। परन्तु तुझे मेरी यह बात सही न लगे तो तुझे भाग जाना चाहिये, जिसमें मुझे बिलकुल शंका नहीं है। अगर अभी तक तेरे अुपवास चल रहे हों तो मेरा अनुरोध है कि अब छोड़ दे। तू जो निर्णय करेगी अुसे मैं स्वीकार करूंगा। अंतिम निर्णय मैं नहीं करूंगा, तुझे करना है।

जैसे मैंने नारणदास पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी लादी है, वैसे ही नारणदासने तुझ पर लादी है। नारणदास तो टूटे नहीं। तू टूट गओ तो मुझे दुःख होगा। तेरे टूटनेमें मेरा भी पूरा भाग जरूर माना जायगा। नारणदास क्या करे?

तू रहनेके निर्णय पर पहुंचे तो भी अपने अूपरका बोझ तू अवश्य कम कर लेना। शक्तिसे अधिक भार लेना ही अधर्म है, अुसमें अभि-

मान भी है। जितना दोष शक्तिसे अधिक खानेमें है, अुससे ज्यादा दोष शक्तिसे अधिक भार लेनेमें है। यह फर्क जरूर है: सौमें से निन्नानवे आदमी शक्तिसे अधिक खाते हैं। सौमें से साढे निन्नानवे शक्तिसे कम ही बोझ अुठाते हैं। अिसलिअे हमें ही सदा अिस बातका पता नहीं रहता कि कब अधिक बोझ अुठाया और कब कम। अितने पर भी परिणाम तो वही आता है जो मैंने बताया। मैं अधिक खाअू तो अुसका परिणाम मुझीको भुगतना पडेगा। मैं शक्तिसे अधिक हरिजन-कार्य अपने सिर ले लूं, तो अुसका परिणाम चार करोड हरिजनोंको तो भुगतना पडे ही, शायद सारी दुनियाको भी भुगतना पडे।

अीश्वर तुझे शान्ति प्रदान करे और सही रास्ता दिखाये।

बापू

१३३

७-५-'३३

चि० प्रेमा,

मेरे पत्र तुझे मिले होंगे। तेरे अुपवास बन्द हो गये होंगे और तू शान्त हुअी होगी। तेरे अुपवासका परिणाम जिससे अधिक आये अैसा मैं चाहता हूं। यह तू जानती है।

नागिनीसे खूब परिचय करना। मैं मानता हूं कि पूर्ण प्रेम अुसे शुद्ध कर देगा और शुद्ध रखेगा। अुसके पापकी सीमा नहीं थी। अुसकी शुभ भावनाओंकी सीमा नहीं है। परन्तु व्यभिचारमें अुसने सब कुछ खो दिया है। मन पर वह काबू खो बैठी है। अुसके जीवनमें अेक क्षणमें महान परिवर्तन करानेकी जिम्मेदारी मेरी है। अिसलिअे अिच्छा बनी रहती है कि अुन परिवर्तनोंको वह हजम कर सके तो अच्छा।

बापू

१३४

८-५-'३३

चि० प्रेमा,

तुझसे अब कुछ कहना बाकी है क्या? जिसमें तू अपना कल्याण समझे अुसे सारे जगतके विरुद्ध जाकर भी करना। मेरी दृष्टिसे यह वस्तु आश्रममें सुसाध्य है। परन्तु तेरे लिअे वही चीज सही है जो तुझे सूझे।

बापू

१३५

[यह पत्र पूनामें पर्णकुटीसे लिखकर भेजा हुआ है। अिक्कीस दिनके अुपवासमें श्री धुरन्धर पू० महात्माजीकी सेवामें थे।]

३०-६-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र क्यों नहीं आते? तेरा शरीर कैसा है? मन कैसा है? गला कैसा है?

सुशीलाके क्या समाचार हैं?

धुरंधर तो मुझसे फिर मिल गये थे।

बापू

१३६

[मअी मासमें २१ दिनके अुपवासके सिलसिलेमें पू० महात्माजी जेलसे छूटे अुसके बाद मैं अुनसे मिलनेके लिअे पूना पर्णकुटीमें गअी थी। तब अुनका अुपवास पूरा हो चुका था। अुसके बाद व्यक्तिगत सत्याग्रहकी योजना सामने आअी। पू० महात्माजीने आश्रमको दानमें होम दिया। हम अंतिम सत्याग्रही बहुत करके ३१ जुलाअीकी रातको पकड़े गये और

अहमदाबाद सेंट्रल जेल पहुंचे। हमें कोअी आठ दिनकी हवालात मिली। बादमें छह महीनेकी सजा हुअी। पूज्य महात्माजी और महादेवभाअीको *पूना ले गये। वहीं दोनोंको सजा हुअी। पू० महात्माजीने फिर अुपवास* किया, छूटे और हरिजनोंकी सेवा करनेके लिअे बाहर ही रहे — यह मानकर कि अेक वर्षकी सजा अिस प्रकार हरिजन सेवा करके भुगतेंगे।

अिस पत्रमें मेरी वर्षगांठके आशीर्वाद हैं।]

१–७–'३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मेरे पत्रके साथ टकरा गया। मैंने कल ही लिखा और तूने भी कल लिखा।

हम सबके वर्ष अेकके बाद अेक बहे जा रहे हैं। हम छोटे हो रहे हैं, यह कहना कदाचित् अधिक सही नहीं होगा? जितने वर्ष चले गये *अुतने आयुमें से कम हो गये। अिस हद तक क्या हम छोटे हुअे नहीं माने* जायंगे? अिसमें से मैं तो सार यह निकालना चाहता हूं कि हम अधिक सावधान बनें। हमें सौंपी हुअी पूंजी कम होती जा रही है। जो रही है अुसका पूर्ण अुपयोग करना हम सीखें। मैं चाहता हूं कि तेरे विषयमें अैसा ही हो।

बापू

१३७

८–७–'३३

चि० प्रेमा,

. . . के बारेमें तेरा अनुभव बताना। बहुत लोग कहते हैं कि वह प्रभुदासके लिअे अयोग्य है। नारणदासकी भी यही राय है। तेरी राय बताना।

बापू

१३८

१७–७–'३३

चि० प्रेमा,

मेरा पत्र तो तुझे मिला ही होगा। मेरी आशायें तू जानती है। नारणदासको लिखे मेरे पत्रसे अधीरता नहीं पैदा होनी चाहिये। अभी तो अैसे कदम[1] के लिअे तत्परतावी जरूरत है। वह समय कब आयेगा, यह तो दैव ही जानता है।

बापू

१३९

[पू० महात्माजी १९३३ में जेलसे छूटकर आश्रमसे दूर अेलिसब्रिजके पास श्री रणछोड़लालभाओके बंगलेमें रहते थे। आश्रमका प्रयालय देखनेके लिअे अेक दिन मैंने अुन्हें सन्देश भेजा था। तब वहांसे आनेके पहले लिखी गअी चिट्ठी — बहुत करके जुलाअीमें।]

शनिवार

चि० प्रेमा,

अकल्पित बाधा न आये तो आज तीन बजे पहुंचूगा।

बापूके आशीर्वाद

१४०

[ता० २१–१०–'३३ से १७–५–'३४ तकके पत्र मुझे जेलमें मिले। छह महीनेकी सख्त सजा भुगतकर (जिसमें १६ दिनकी माफी मिली) मैं २२ जनवरी १९३४ को छूटी। बादमें २६ जनवरीको श्री काकासाहबके नेतृत्वमें फिर सत्याग्रह किया। अुसमें पकडी गअी और फिर मुझे छह मासकी सजा हुअी। जहां तक याद है, मैं १ जुलाअी १९३४ को

१. आश्रमको सत्याग्रहके यज्ञमें होम देनेका कदम।

जेलसे छूटी। सजाकी मियाद पूरी नहीं हुआी थी। परन्तु पू० महात्माजीने आन्दोलन वापस लेनेका वक्तव्य प्रकाशित किया, अिसलिअे सरकारने बहुतसे कैदियोंको जल्दी छोड दिया।]

• फिरसे नहीं पढा।

वर्धा,
२१–१०–'३३

चि० प्रेमा,

अपने किसी पत्रमें मैंने लिखा था कि मैं तुझे जान-बूझकर पत्र नहीं लिख रहा हू ताकि धुरंधरके पत्र तुझे मिलते रहें। परंतु अम्तुलके पत्रसे देखता हू कि तू मेरे पत्रकी आशा रखती है और वे तुझे मिल भी सकते हैं। लिखनेका विचार कर ही रहा था कि अितनेमें कल सुशीलाका कार्ड मिला। अिसलिअे यह पत्र प्रात कालकी प्रार्थनासे पहले लिख रहा हू।

मैं देखता हू कि तेरी गाडी वहा अच्छी चल रही है। तू लिखनेकी स्थितिमें हो तो मुझे अपनी दिनचर्या भेजना और खाने-पीने वगैराका दूसरा जो हाल लिख सके वह भी लिखना।

मेरे पास अभी बा मीरा, चद्रशकर[1] और नायर हैं। काका अभी यहा हैं। किशोरलाल और गोमती[2] परसों गये। स्वामी[3] अब आयेंगे। तारावहन[4] भी आयेंगी। पन्नालाल[5], नानीबहन, गगाबहन अहमदाबादमें

१ श्री चद्रशकर शुक्ल। श्री काकासाहबके विद्यार्थी और गुजरात विद्यापीठके कार्यकर्ता। थोडे वर्ष पहले गुजर गये।

२ श्री किशोरलाल मशरूवाला और अुनकी पत्नी श्री गोमतीबहन।

३ स्वामी अर्थात् स्वामी आनद। अेक समय नवजीवन मुद्रणालयके और 'यग अिडिया', 'नवजीवन' तथा 'हिन्दी नवजीवन' साप्ताहिकोंके व्यवस्थापक थे।

४ श्री ताराबहन श्री रमणीकलालभाअी मोदीकी पत्नी।

५ श्री पन्नालालभाअी झवेरी आश्रमके पास स्वतत्र बगलेमें रहते थे। अुनकी पत्नी श्री नानीबहन और सौतेली मा श्री गगाबहन झवेरी। श्री महादेवभाअीकी पत्नी श्री दुर्गाबहन मेरे साथ जेलमें थी। पू० बाको

है। आश्रम सदाके लिअे हरिजन-निवास हो जायगा। अुसमें अुनका (हरिजन-सेवक-संघका) दफ्तर वगैरा चला जायगा। यह सब तूने पढ़ा होगा। तुझे और दूसरी सब बहनोंको अच्छा लगा होगा।

महादेवके लम्बे पत्र आते रहते हैं। वे बेलगांवमें[1] पुस्तकालय खोलकर बैठे हैं। दुर्गाके पास अुनके पत्र आते होंगे। देवदास मुलतानमें आनन्द कर रहा है। प्यारेलाल नासिकमें है। बा तैयारी कर रही है।

लक्ष्मीबहनके पास ४० से अधिक लड़कियां हो गयी हैं। द्वारकानाथ अुनके सहायक है।[2] नर्मदा नालवाडीमें विनोबाके पास है।

प्रभुदासका विवाह बुधवारको हो गया। अुसे भगिनी जैसी चाहिये वैसी मिली है। २४ वर्षकी है। गुरुकुलमें पढ़ी है। होशियार मालूम होती है।

मेरी यात्रा ८ तारीखको शुरू हो रही है। सब बहनें आनंदमें होंगी और प्रत्येक क्षणका सदुपयोग करती होंगी। अधिक तेरा पत्र आने पर।

बापूके सबको आशीर्वाद

हमारे साथ सजा हुअी थी, परन्तु महात्माजीके अुपवासके समय अुन्हें छोड़ दिया गया था। बादमें पू० महात्माजीके हरिजन-कार्यमें लगते ही पू० बा भी जेलमें आ गअीं। पत्रमें 'तैयारी' का जो सुझाव है वह जेल जानेकी तैयारीका है।

१. बेलगांवकी जेलमें 'अनासक्तियोग' का अंग्रेजी करनेके लिअे अुन्होंने बहुत अध्ययन किया था।

२. आश्रमकी तमाम लड़कियां तथा श्री लक्ष्मीबहन खरे वर्धा जाकर महिला-आश्रममें रही थीं। लक्ष्मीबहनकी सहायता श्री द्वारकानाथ हरकरे करते थे।

१४१

२६–११–'३३

चि० प्रेमा,

तेरे समाचार सुशीला देती है। और लोग भी देते हैं। मेरा पत्र तुझे मिल गया, यह बहुत अच्छा हुआ। तूने कमाया या खोया, अिसका सही हिसाब तो तू बाहर निकलकर ही लगा सकेगी। लेकिन अनुभव अमूल्य है, अिसमें संदेह नहीं।

तेरा कार्यक्रम मैं समझ सका हू। तू शरीरको सभालकर रख सकी, यह बहुत अच्छा हुआ। अिसकी कुंजी तेरे हाथमें थी। अुसका अुपयोग तूने ठीक किया दीखता है।

हरिजन-सेवाके बारेमें तो क्या लिखू? (प्रयत्न) चल रहा है। लोगोंका अपार प्रेम अनुभव कर रहा हू। मेरा शरीर भी खूब काम दे रहा है। वजन ११० तक पहुच गया है। यह अैसी वैसी बात नहीं है। चद्रशकर महादेवकी जगह लेनेका महाप्रयत्न कर रहे हैं। मीराबहन तो है ही। रामनाथको तू नही जानती। जानकीबहनकी ओम[1] है। वह बहादुर लडकी है। और अुसकी बुद्धि भी सुन्दर है। अीश्वरने अुसे शरीर भी बढ़िया दिया है।

अब अधिक लिखनेका समय नही है। दूसरे बहुनसे पत्र लिखने हैं। मौनमें ही अधिकाश पत्रव्यवहार कर सकता हू।

बापूके आशीर्वाद

---

१ ओम अर्थात् अुमा — श्री जमनालाल बजाज और श्री जानकी-देवीकी छोटी पुत्री।

है। आश्रम सदाके लिअे हरिजन निवास हो जायगा। अुसमें अुनका (हरिजन-सेवक-संघका) दफ्तर वगैरा चला जायगा। यह सब तूने पढ़ा होगा। तुझे और दूसरी सब बहनोंको अच्छा लगा होगा।

महादेवके लम्बे पत्र आते रहते हैं। वे बेलगाव'में पुस्तकालय खोलकर बैठे हैं। दुर्गाके पास अुनके पत्र आते होंगे। देवदास मुल्तानमें आनन्द कर रहा है। प्यारेलाल नासिकमें है। बा तैयारी कर रही है।

लक्ष्मीबहनके पास ४० से अधिक लडकियां हो गयी हैं। द्वारकानाथ अुनके सहायक हैं।[2] नर्मदा नालवाडीमें विनोबाके पास है।

प्रभुदासका विवाह बुधवारको हो गया। अुसे संगिनी जैसी चाहिये वैसी मिली है। २४ वर्षकी है। गुरुकुलमें पढ़ी है। होशियार मालूम होती है।

मेरी यात्रा ८ तारीखको शुरू हो रही है। सब बहनें आनंदमें होंगी और प्रत्येक क्षणका सदुपयोग करती होंगी। अधिक तेरा पत्र आने पर।

बापूके सबको आशीर्वाद

हमारे साथ सजा हुआी थी, परन्तु महात्माजीके अुपवासके समय अुन्हें छोड दिया गया था। बादमें पू० महात्माजीके हरिजन-कार्यमें लगते ही पू० बा भी जेलमें आ गयी। पत्रमें 'तैयारी' का जो सुझाव है वह जेल जानेकी तैयारीका है।

१. बेलगावकी जेलमें 'अनासक्तियोग' का अंग्रेजी करनेके लिअे अुन्होंने बहुत अध्ययन किया था।

२. आश्रमकी तमाम लडकियां तथा श्री लक्ष्मीबहन खरे वर्धा जाकर महिला-आश्रममें रही थीं। लक्ष्मीबहनकी सहायता श्री द्वारकानाथ हरकरे करते थे।

१४१

२६-११-'३३

चि० प्रेमा,

तेरे समाचार सुशीला देती है। और लोग भी देते हैं। मेरा पत्र तुझे मिल गया, यह बहुत अच्छा हुआ। तूने कमाया या खोया, जिसका सही हिसाब तो तू बाहर निकलकर ही लगा सकेगी। लेकिन अनुभव अमूल्य है, अिसमें संदेह नहीं।

तेरा कार्यक्रम मैं समझ सका हू। तू शरीरको संभालकर रख सकी, यह बहुत अच्छा हुआ। जिसकी कुंजी तेरे हाथमें थी। अुसका अुपयोग तूने ठीक किया दीखता है।

हरिजन-सेवाके बारेमें तो क्या लिखू? (प्रयत्न) चल रहा है। लोगोंका अपार प्रेम अनुभव कर रहा हूं। मेरा शरीर भी खूब काम दे रहा है। वजन ११० तक पहुंच गया है। यह अैसी वैसी बात नहीं है। चंद्रशंकर महादेवकी जगह लेनेका महाप्रयत्न कर रहे हैं। मीराबहन तो है ही। रामनाथको तू नहीं जानती। जानकीबहनकी ओम[1] है। वह बहादुर लड़की है। और अुसकी बुद्धि भी सुन्दर है। अीश्वरने अुसे शरीर भी बढ़िया दिया है।

अब अधिक लिखनेका समय नहीं है। दूसरे बहुतसे पत्र लिखने हैं। मौनमें ही अधिकांश पत्रव्यवहार कर सकता हूं।

बापूके आशीर्वाद

---

१ ओम अर्थात् अुमा — श्री जमनालाल बजाज और श्री जानकी-देवीकी छोटी पुत्री।

१४२

[मैंने अेक पत्रमें पू० महात्माजीको बताया था कि जेलसे छूटनेके बाद लम्बा पत्र लिखूंगी।]

१५-१-'३४

चि० प्रेमा,

तुझे तो अितना ही लिखना है कि तूने जो लंबा पत्र लिखनेका निश्चय किया था अुसकी मैं प्रतीक्षा करूंगा।

किसन[1] आनंदमें है। जितनी मेरी अिच्छा है अुतना ध्यान मैं अुस पर नहीं दे सकता।

'हरिजन' के सारे अंक पढ़ लेना। गुजराती और अंग्रेजी दोनों।

बापूके आशीर्वाद

१४३

[छूटनेके बाद तुरंत ही जेल जानेकी सलाह महात्माजीने हम सबको दी थी। अिसलिअे मैं अुनसे या सुशीलासे भी मिलने नहीं गअी, अहमदाबादके पास श्री काकासाहबके साथ ही छावनीमें रही और चौथे दिन पकड़ी गअी। श्री धुरन्धर मुझे मिलने आये थे। चार दिन साथ रहे। मेरी गिरफ्तारीके बाद वे बम्बअी गये। मैं बाहर थी अुस अरसेमें पू० महात्माजीको मैंने लम्बा पत्र लिख डाला। लीलावतीबहन मेरे साथ पकड़ी गअीं। बाकी बहनें बादमें आ पहुंचीं।]

१ किसन आन्दोलनका काम करती हुअी पकड़ी गअी और थाना जेलमें पहुंच गअी। वहां अुसकी तबीयत बिगड़ गअी थी। वहांसे छूटनेके बाद अुसने कुछ मास शरीर और मनको सुधारनेमें बीते। फिर पू० महात्माजी हरिजन-यात्रा पर निकले तब अुनकी अनुमति लेकर किसन यात्रामें शामिल हो गअी और लगभग पांच महीने तक अुनके साथ भ्रमण करती रही।

२८-१-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी अभी पूरा पढ़ सका। तीन बारमें पढ़ना पड़ा।

मैं तो जानता ही था कि तू मुझसे मिलने आनेका विचार नहीं करेगी। परन्तु जब मैंने सुना कि तेरी आनेकी अिच्छा हुअी है तब मैंने सयमकी आवश्यकता बताअी, परन्तु आनेसे रोका नहीं। तुरत मन्दिरमें पहुच जानेका विचार ही तुझे और दूसरे प्रतिज्ञा लेनेवालोको शोभा देता है। परन्तु जिनके मन विह्वल हो गये हों अुन पर जबरदस्ती थोडी ही की जा सकती है?

तेरे पत्रसे मनमें प्रश्न अुठता है कि यह पत्र तुझे मिलेगा या नहीं।

तेरी पूनियोंका सूत बहुत प्रेमसे सभालकर तो रखा ही था, अुस पर महादेवके सुन्दर अक्षरोंमें लिखी हुअी चिट्ठिया भी हैं। परन्तु अुपवासमें अुसका क्या हुआ, अिसका मुझे खयाल नहीं है। सभव है महादेवने सभालकर कहीं रख दिया हो। महादेवको अिस समय पत्र लिखनेकी सख्त मुमानियत है, अिसलिअे पुछवाना भी जरा मुश्किल है।

तेरा काता हुआ जो सूत है, अुसे तो बुनवा डालना चाहिये। रामजी बुन देगा।

मै देखता हू कि तू काफी पढ रही है। अिच्छा हो तो तुलसीकृत रामायण, बाअिबल और कुरान ध्यानपूर्वक पढ़ लेना। अुर्दू शुरू किया है, अुसे पूरा किया जा सके तो कर लेना। तूने समयका सुन्दर अुपयोग किया है।

तेरे पत्रमें अभी बहुत कुछ बतानेको रह गया है। मुझे आशा है कि तूने दूसरा पत्र लिखा होगा।

लीलावतीका तो वैसा ही हाल है जैसा तूने लिखा है। अुसके भविष्यके बारेमें कुछ नहीं कहा जा सकता।

'हरिजन' के अक पढ़ लेनेकी सिफारिश मैंने अिसीलिअे की थी कि अिन महीनोमें अिस प्रश्नके बारेमें जो हुआ अुसे तू जान ले। परन्तु फुरसत न मिली हो तो पढ़नेकी कोअी बात नहीं।

अब शायद मुझे 'अ' वर्ग मिलेगा।[1] अगर मिला तो मुझे अच्छा लगेगा।

किसनका मन और शरीर ठीक हो गया दीखता है। अभी कमजोर तो वह है। अुस पर कामका बोझ डाला जा सके असा मुझे नहीं लगता। अुससे जितना हो सकता है अुतना काम वह कर लेती है। परन्तु वह जल्दी ही थक जाती है। अुसे खूब आरामकी जरूरत है। यहां अुसे जो खुराक मिलती है वह अुसके अनुकूल दीखती है। आपका अुसकी सासका दुःखी होने पर भी किसन अुनके साथ खूब घुल मिल गयी है। अिसमें सुन्दर भाग किसका है यह कहना कठिन है। दोनों बहुत मिलनसार दीखती हैं। किसन मुझे २८ वर्षकी लगती ही नहीं।

तेरा जेलसे लिखा हुआ पत्र मिला ही नहीं। आगे कारन भी क्या लिखूं? मेरा शरीर अच्छा है और कामका बोझ भारी अुठा सकता है। लिखनेका समय मुश्किलसे ही मिलता है।

बापूके आशीर्वाद

१४४

[मैंने अुपवास किये और ईश्वरसे प्रार्थना की कि वह मुझे मार्ग बताये। असा लगा कि ईश्वरने मेरी प्रार्थना मंजूर की। पू० महात्माजी जेलसे छूटे। सविनय कानूनभंगकी लड़ाई बंद कर दी गयी और आश्रमको अुसमें होम दिया गया। अुसके साथ ही आश्रमकी अंतिम टोली (बाकी रही सब बहनें और कुछ बड़ी लड़कियां) जेल पहुंची। हमें तो नीरस बनाकर रखा गया, जिससे सविनय कानूनभंगका 'रोमांस' अनुभव करनेका सौभाग्य कहांसे मिलता? परन्तु अुसमें मुझे बहुत आराम मिला और वाचन-लेखनके लिअे काफी अवकाश मिला। इस बारके कारावासका मिलाकर ११॥ महीनेमें मैंने लगभग ६० ग्रंथ पढ़े। अेच० जी० वेल्सके दो बड़े ग्रंथों (१) Outline of History (२) The Work, Wealth and Happiness of Mankind का मराठी अनुवाद किया।

१ मुझे दोनों ही बार जेलमें 'ब' वर्ग मिला था।

मैं रोज नौ कक्षायें लेती थी, स्वयं अुर्दू पढ़ती थी, सूत कातती थी और जेलका काम नियमानुसार करती थी। आश्रममें ११८ पौंडसे अधिक वजन कभी नहीं हुआ था। जेलमें वह १२८ पौंड तक पहुंचा! जेलके अधिकारी, छोटे-बड़े तथा अपराधी कैदी मेरे प्रति सद्भावनासे सद्व्यवहार करते थे और मेरे साथकी बहनें भी, जो आश्रममें मेरे प्रति अविश्वास या अरुचि प्रगट करती थीं, निकट परिचयमें आकर प्रसन्न हुअीं और सारी गलतफहमी दूर हो गअी! अैसा बहुत ही सुन्दर अनुभव मिला।

बात यह थी कि जेलमें मैं भी सबकी तरह साधारण कैदी थी और सबके साथ रहती थी। मेरे पास किसी प्रकारकी जिम्मेदारी नहीं थी। मैंने अनुभवसे देखा है और मैं अिस निर्णय पर पहुंची हूं कि सत्तामात्र भयावह और विद्वेष फैलानेवाली वस्तु है। फिर वह राजनीतिक हो या सामाजिक, शिक्षा-सम्बन्धी हो या धार्मिक। आम तौर पर लोग अनुशासनका पालन करनेवाले, दक्ष, कार्य-तत्पर और अुद्यमी नौकरोंको चाहते हैं। परन्तु अैसा मालिक मिले तो अुसे पसन्द नहीं करते! वे यह तो चाहते हैं कि सेवा-तत्पर साथी मिलें, परन्तु स्वयं अैसे बनना नहीं चाहते। अपने पर दूसराका या अपना किसी भी तरहका अंकुश अुन्हें अच्छा नहीं लगता, परन्तु यह अिच्छा वे जरूर रखते हैं कि दूसरे मर्यादाकी रक्षा करें। सार यह कि प्रत्येकको स्वेच्छाचार अधिक पसन्द होता है! मानव-मन अेक पहेली ही है।

आश्रममें मेरे पास किसी प्रकारकी 'सत्ता' या 'अधिकार' था ही नहीं। फिर भी अनेक कामोंकी जिम्मेदारी मेरे सिर पर आ पड़नेसे समुदायसे काम करवानेका कर्तव्य पैदा हुआ था। दिन-रात बजनेवाले आश्रमके घंटेके छप्पन टकोरोंके साथ कामोंका मेल बिठाना ही पड़ता था। पीढ़ियोंसे हमारे समाजमें सामूहिक दायित्वका भान नहीं रहा है। यह नया तंत्र आश्रमवासियोंको सिखाने जितना नैतिक अधिकार अथवा योग्यता भी मुझमें नहीं थी। अिसलिअे जब जिम्मेदारी वापस ले लेनेकी मेरी प्रार्थना पू० महात्माजीने स्वीकार नहीं की, तो मेरी दशा सरोंतेके बीच सुपारी जैसी हो गअी। परन्तु भगवानने लाज रख ली। जेलमें यह सारा पाप धुल गया और मैं 'मुक्त' हो गअी!

मैंने देख लिया कि सत्ताके पद पर व्यक्ति रहा कि अुसके दोष ही देखे जाते हैं। मुझमें जो दोष थे वे ही आसपासके लोगोंको कांटेकी तरह खटकने लगे। जिम्मेदारीसे मुक्त हुअी कि तुरन्त ही परिस्थितिमें परिवर्तन हुआ। अिससे मैंने यह सार निकाल लिया कि 'न गणस्याग्रतो गच्छेत्'। मैं नेता या अधिकारी होनेके योग्य नहीं हूं।

बहनोंके साथ मेरे स्नेह-सम्बन्ध दृढ़ हुअे। यों तो सब बहनें सज्जन ही थीं, परन्तु आश्रममें हमारे बीच अेक प्रकारका आवरण आ गया था।

प्रारम्भमें मुझे आन्दोलनमें जाने देनेसे पू० महात्माजीने अिनकार कर दिया। वह भी अीश्वरीय योजनाके अनुसार ठीक ही था, अैसा मैं मानती हूं। आश्रममें मुझे जो तालीम मिली या अनुभव प्राप्त हुअे, पू० महात्माजीसे निरंतर वात्सल्यभरा मार्गदर्शन मिलता रहा, अुससे मेरा जीवन समृद्ध हुआ है। मैंने अपना जीवन अुन्हें अर्पण कर ही दिया था। तब मेरे लिअे तो वे जिस परिस्थितिमें रखें अुसीमें रहना और वे जो संस्कार दें अुन्हें शिरोधार्य करना धर्म-पालन जैसा हो गया था। प्रारंभमें मैं कारावासको अपनाती तो अिस अमूल्य धनकी प्राप्ति मुझे होती ही नहीं। मैं तो तालीम लेने ही आश्रममें आअी थी। वह तालीम मुझे आश्रममें मिली और जीवनभर काम आअी। अुस समयकी मेरी आयु तालीम लेकर योग्य बननेकी ही थी। मुझमें निष्ठा थी, अुत्साह था, शक्ति थी। अिसलिअे मैं पूज्य महात्माजीके पास समय पर ही पहुंची और योग्य संस्कार ही मैंने प्राप्त किये। 'यदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्' अैसा सात्त्विक सुख मैंने प्राप्त किया।

किसन पू० महात्माजीके साथ पांच महीने रही। बादमें गरमीकी छुट्टियोंमें सुशीला पू० महात्माजीके पास अेक महीने रह आअी। तब अुनकी हरिजन-यात्रा अुत्कलमें चल रही थी। सुशीलाके साथ मेरा पत्रव्यवहार नियमित रूपसे होता था। पू० महात्माजीके साथ भी बीच बीचमें पत्र-व्यवहार होता रहा।

आन्दोलनके पूरे जोरके समय मुझे जेल जानेका मौका नहीं मिला था, परन्तु व्यक्तिगत सत्याग्रहके समय जेल जाना नसीब हुआ। अुनमें केवल सैनिकका कर्तव्य पूरा करना था, 'रोमांस' जैसी कोअी चीज

अुसमें नहीं थी। दूसरे कारावासका समय आधा बीता था कि पू० महात्माजीका वक्तव्य पढ़नेको मिला। अुन्होंने आन्दोलन वापस ले लेनेका निर्णय घोषित किया था। जिससे मुझे बहुत बड़ा आघात लगा। मुझे लगा, "हम बिलकुल नालायक साबित हुअे! पू० महात्माजी जैसे महान आध्यात्मिक शक्ति रखनेवाले कुशल संग्राम-वीरको हार स्वीकार करनी पड़ी! देशकी सारी तपस्या पर पानी फिर गया!" वहां मुझे अंग्रेजी अखबार 'टाअिम्स ऑफ अिंडिया' मिलता था। तमाम साथी बहनोंको वह वक्तव्य मैंने पढ़कर गुजरातीमें समझाया। मगर मुझे अपार दुःख हुआ। अुस समय मुझे तंबूमें रखा गया था। तंबूमें जाकर मैं रो पड़ी। मुझे सान्त्वना देनेके लिअे वहां आनेकी हिम्मत कोअी बहन न कर सकी। जेलर श्री मुखेडकर अुस दिन जेल-समितिके सदस्योंको साथ लेकर वहां आये थे। मेरा मुंह देखकर मेहमानोंको शंका हुअी कि मुझे कुछ न कुछ दुःख है। वे पूछने लगे, "आपको कोअी शिकायत है? हमें बताअिये। हम अुसे दूर करेंगे।" परन्तु मैंने सिर हिलाकर अिनकार कर दिया। सारा दिन रोनेमें गया। दूसरे और तीसरे दिन भी मेरी यही स्थिति रही। मनमें पू० महात्माजीके ही विचार आते थे। "नमक-सत्याग्रहके समयकी परिस्थिति कितनी भव्य थी! और आज कैसी गमगीनी है! देशकी ताकत बिलकुल घट गअी है। हमारे नेताओंको कितना दुःख होता होगा!" अैसे विचारोंसे मैं बेचैन हो गअी थी। दूसरे दिन जेलर मुखेडकर मुझे मिलने और सान्त्वना देने आये और कहने लगे, "मुझे आश्चर्य होता है। वहां पुरुष विभागमें सभी संतोष मान रहे हैं और जल्दी छूटनेकी बातें कर रहे हैं। और आप अितनी गमगीन क्यों हैं? दुनियामें अुतार-चढ़ाव तो आते ही रहते हैं!" वगैरा। जेलके सब अधिकारियोंको अिस घटनाका पता चला, अिसलिअे सभी मेरे प्रति विशेष सहानुभूति दिखाने लगे। अेक साथी बहनने कहा, "आपकी गमगीनीके कारण यहांका वातावरण भी गंभीर हो गया है। नहीं तो हम सब छूटनेका आनंद लूटतीं।"

मैंने सुशीलाको पत्र लिखा तब अपनी हालत अुसे बताअी। अुसने पू० महात्माजीसे बात की। अुन्होंने तुरंत पटना जाते समय रेलसे मुझे पत्र लिख भेजा और छूटनेके बाद मिलनेकी आशा दी।

मेरे स्मरणके अनुसार १९३४ की जुलाओकी पहली तारीखको हम छूटे। स्मरण अिसलिअे रहा कि अंग्रेजी तारीखके अनुसार अुस दिन मेरी वर्षगांठ थी। जेलर थी व्यासने मुझे गुलाबके फूलोंका अेक सुन्दर गुलदस्ता विदाअीके समय भेंट किया!

पू० महात्माजी अुस समय भावनगरमें थे। श्री नारणदास काका हम सबसे मिलनेके लिअे साबरमती आश्रममें आ गये थे। अुनसे मिलनेके बाद हम अधिकांश बहनें पू० महात्माजीसे मिलने भावनगर गअी। बातें हुअीं। पू० महात्माजीने सबसे कह दिया कि, "सत्याग्रह आश्रम तो बंद हो गया है। वह फिरसे शुरू होनेवाला नहीं है। मैं भी अन्यत्र रहूंगा। तुम सब अपने अपने भावी जीवन-क्रमके बारेमें स्वतन्त्र निर्णय कर लेना।"

आन्दोलन वापस लेनेका निर्णय पढा, तभीसे मेरे मनमें भविष्यके विचार भी प्रवेश तो कर ही रहे थे। अैसा लगता था कि छूटनेके बाद हमें अपना पथ स्वयं ही खोज लेना पडेगा। रोज प्रातःकालीन प्रार्थनाके बाद मैं भगवानकी शरणमें जाकर भविष्यका मार्ग बतानेके लिअे दीनतापूर्वक प्रार्थना करती थी। अिस प्रकार अंत तक चलता रहा। बादमें ग्रामसेवाके लिअे पू० महात्माजीने पुकार की, अिससे मुझे भी लगा कि महाराष्ट्रमें जाकर ग्रामसेवाके काममें लग जाअू तो अच्छा। अिसलिअे जब भावनगरमें पू० महात्माजीने मुझसे कहा कि, "मैं जमनालालका सन्देश तुझे कहना चाहता हूं। महिला-आश्रमका संचालन करनेके लिअे अुन्होंने तेरी मांग की है, और अपनी अिच्छा तुझे बतानेको मुझे प्रेरित किया है।" तब मैंने अुनसे कहा, "सत्याग्रह आश्रममें संस्था-संचालनका अनुभव मैंने तीन वर्षसे अधिक किया। अुस कामके लिअे मेरी अयोग्यता सिद्ध हो गअी। अब अैसा काम मैं कभी पसन्द नहीं करूंगी। मैं महाराष्ट्रमें बसकर ग्रामसेवा करना चाहती हूं।" अिस पर अुन्होंने कहा, "ग्रामसेवा तो मुझे प्रिय ही है। अिसलिअे अगर तू वह काम करना चाहती है तो मुझे पसन्द है। वैसा ही करना और मुझे लिखती रहना।"

अुनसे विदा लेकर मैं राजकोट गअी और सुशीलाके पास थोड़े दिन रही। महाराष्ट्रका परिचय मुझे नहीं था, अिसलिअे श्री धुरन्धरको बबअी पत्र लिखकर मैंने अपनी अिच्छा बताअी और मेरा मार्गदर्शन

करनेकी प्रार्थना की। अुनका जवाब आया, "महाराष्ट्रमें तुम्हें सेवाकार्य करना हो तो अेक ही व्यक्ति है जिसकी मददसे तुम काम कर सकती हो। वह हैं श्री शंकरराव देव। अुनसे मिलकर मैंने तुम्हारी बात की है। वे महाराष्ट्रमें आश्रमकी स्थापना करके सेवाकार्यका संगठन करना चाहते हैं। अुसमें तुम्हें प्रवेश देनेमें अुन्हें आनंद होगा। वे १५,तारीखको बम्बअी आनेवाले हैं। अिसलिअे तब तक तुम यहा आ जाना।" यह पढ़कर मुझे बडा सन्तोष हुआ और मैं तुरन्त ही बबअी पहुंच गअी। मैं जिसनके घर ठहरी थी। वहा श्री धुरन्धर श्री शंकरराव देवको ले आये और परिचयके पश्चात् अुनके आश्रममें शामिल होनेका मैंने निश्चय कर लिया। अुसी दिन शामको मैंने श्री धुरन्धरके साथ महाराष्ट्रके मुख्य नगर पूनामें प्रवेश किया। मुझे शंकररावजीके पास पहुचाकर और बातचीतके बाद निर्णय हो जाने पर दूसरे दिन वे बम्बअी लौट गये।

खोजके बाद पूनासे १९ मील दूर घाट पर बसा हुआ सासवड गांव आश्रमके लिअे पसन्द किया गया और ५ अगस्तको दूसरे आश्रमी बन्धुओंके साथ मैं वहा पहुंची। अेक बडा पुराना मकान आश्रमको मिला था। अुसमें हम चार पहले सदस्य रहने लगे। सयोजक थे आचार्य भागवत। श्री शंकररावजी महाराष्ट्र प्रांतीय कांग्रेसके अध्यक्ष थे। अिस-लिअे अुनका मुकाम तो पूनामें ही रहता था। परन्तु वे समय समय पर सासवड आ जाते थे। अिस प्रकार मेरे नये जीवनका प्रारंभ हुआ।

पूज्य महात्माजीने व्यक्तिगत सत्याग्रहकी आज्ञा देनेसे पहले आश्रमी बहनोंकी हमारी आखिरी टोलीको अुपदेश दिया था, "यद्यपि सत्याग्रह आश्रम अब होम दिया गया है, फिर भी अुसने तुम सबके जीवनमें प्रवेश कर लिया है। स्थावर आश्रम मिट गया है, परन्तु अुसका जंगम स्वरूप तुम सब हो, अिसलिअे जहा जाओ वहा तुम आश्रमका वातावरण पैदा करना।" ये शब्द मेरे हृदय पर हमेशाके लिअे अंकित हो गये। अिसलिअे क्या जेलमें और क्या बाहर, मैं अपने भीतर और आसपास आश्रमका वातावरण पैदा करनेका प्रयत्न करती थी। अत. जेलसे मुक्त होनेके बाद फिरसे पारिवारिक जीवनमें प्रवेश करना मेरे लिअे असंभव था। आश्रमके नियमोंका मैं सख्तीसे पालन करने लगी।]

चि० प्रेमा,

जितने महीने किसन मेरे पास रही, अब सुशीला है। अिसलिअे तेरे बारेमें कितनी, कैसी और कितनी बार चर्चा हुआी होगी, अिसकी कुछ न कुछ कल्पना तो तुझे होनी ही चाहिये। यह वस्तुस्थिति होनेसे तुझे संदेश भी क्या भेजे जाते? आज लिख रहा हूं, अिसके दो कारण हैं। अेक तो यह कि सुशीला लिखनेके लिअे मुझे प्रेरित कर रही है। दूसरा, अुसकी दी हुआी खबर। मेरे निर्णयसे तू तीन दिन रोओी? मैं मानता था कि यह निर्णय सुनकर तुझे आघात तो पहुंचेगा, परन्तु साथ ही तू नाचेगी और गायेगी, क्योंकि तू अुसका रहस्य, महत्त्व और शुद्ध सत्य समझे बिना नहीं रहेगी। अनुभव प्रतिदिन अुसका औचित्य सिद्ध कर रहा है। अिसमें साथियोंकी अयोग्यताकी बात नहीं है। कोओी भी अयोग्य साबित नहीं हुअे। परन्तु जो कुछ प्रगट हुआ वह सूचक था और अुसने मुझे यह निर्णय करनेको प्रेरित किया। समय आने पर— और समय तो आयेगा ही — यही साथी फिर जूझेंगे। बात अधिक शक्ति प्राप्त करनेकी, अधिक संयमकी आवश्यकताकी थी। मेरे हथियार अिस समय काम न दें तो अिससे वे अयोग्य नहीं ठहरते। अुन्हें अधिक तेज करनेकी जरूरत रही होगी, अुनका अुपयोग असमय हुआ होगा। अिससे अधिक नहीं समझाया जा सकता। तू छूटे तब मुझे खोजकर सीधे मेरे पास चली आना और न समझी हो तो जी भरकर मुझसे झगड़ना और मेरी बात समझना। अिस निर्णयके पीछे सबकी कसौटी है। मेरी कसौटी भी अुसमें आ जाती है। परन्तु ओीश्वरकी कृपासे हम सब अुसमें पास होंगे। अब ज्यादा नहीं।

बापूके आशीर्वाद

`यह पटना जानेवाली रेलमें लिखा है। परन्तु बी० आओी० रेल्वे हमेशा अैसी सरल गतिसे चलती है कि अुसमें लिखनेमें दिक्कत नहीं होती।

१४५

[नये कार्यक्षेत्रकी खोजमें कुछ समय गया। क्षेत्र निश्चित हुअे बिना पू० महात्माजीको लिखती भी क्या? यह सोचकर मैंने पत्र नहीं लिखा था। परन्तु अुनका धीरज टूट गया और अुतावलीमें अेक पत्र अुन्होंने श्री धुरन्धरके मारफत मुझे भेजा। अिसलिअे जवाब लिखना ही पड़ा। वर्षगाठके आशीर्वाद भी मुझे चाहिये थे।]

१९-७-'३४

चि० प्रेमा,

तूने पत्र लिखनेका वचन दिया था, फिर भी नहीं लिखा। यह दुःखकी बात है। मैंने आशा रखी थी कि तू भविष्यमें क्या करना चाहती है अिस बारेमें कुछ लिखेगी। अब भी रखूं क्या?

बापूके आशीर्वाद

१४६

३१-७-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा काफ़ी लंबा और स्पष्ट पत्र मिला।

माता पिता बच्चोंके स्वास्थ्यका स्मरण या वर्णन नहीं करते। अुनकी व्याधियोंका स्मरण-वर्णन करते हैं। व्याधि केवल शारीरिक ही नहीं।

तू आश्रमके नियमोंका पालन कर रही है, अिससे मुझे आश्चर्य नहीं होता। न करती तो जरूर आश्चर्य होता।

तेरे शुभ मनोरथ पूरे हों।

वर्षगाठ तो रोज होती है। हम रोज जन्म लेते हैं और रोज मर कर फिर जन्म लेते हैं। परन्तु रूढ़िके वश होकर हम अमुक दिनको ही जन्मदिन मानते हैं। अुस दिनके और सदाके मेरे आशिष तेरे पास हैं ही।

तुझे अुत्तर नारणदासके मारफत लिख रहा हूं। अिसलिअे पांच पैसे बचा रहा हूं। नारणदास तो तुझे लिखेंगे ही। अुन्हें मुझे आज लिखना

पड़ रहा है। अिसलिअे यह पत्र सुन्दरके मारफत न भेजकर नारणदासके मारफत भेज रहा हूं।

तू लिखती रहना। वहांका वर्णन अच्छा है। यह पत्र सुबहकी प्रार्थनासे पहले लिखवा रहा हूं।

बापूके आशीर्वाद

१४७

[सासवडका आश्रम शुरू होनेके बाद वहांका जीवनक्रमका वर्णन मैंने महात्माजीको भेजा था। श्री जमनालालजी बजाज आये हुअे थे। मुझे बुलाकर वर्धा जानेका अन्होंने बड़ा आग्रह किया, किन्तु मैंने अिनकार किया। फिर भी अन्होंने प्रसन्न होकर ग्रामसेवा-कार्यमें भी मदद देनेका आश्वासन दिया। मेरे पिताजीका रोष अब शान्त हो गया था। अन्होंने मुझे घर बुलाकर आशीर्वाद दिया। यह बात मैंने पू० महात्माजीको लिखी।

मैं जब सासवड गअी तब महाराष्ट्र और बम्बअीके लोगोंसे यह प्रवाद सुननेको मिला कि, 'सत्याग्रह आश्रम पू० महात्माजीके आदर्शको नहीं पहुंच सका, अुसमें बहुत दोष थे। अिसलिअे अुन्होंने आश्रमको होमकर प्रकरण खतम कर दिया।' यह बात मैंने पू० महात्माजीको पत्रमें लिखकर बताअी थी।]

२१-८-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी अुदारता अपार है। मैं न लिखूं तो भी तेरा काम चलेगा! परन्तु अिस अुदारताका अुपयोग करनेकी अभी मेरी अिच्छा नहीं। फिर भी बधाअी तो देनी ही चाहिये। जमनालालजीसे मिल आअी, यह ठीक किया। अुनके साथ प्रार्थना की, यह भी अच्छा हुआ। अुन्होंने खुद होकर खर्च अुठानेका कहा यह तो सुन्दर ही कहा जायगा। जैसा सुन्दर तेरा आरंभ है, वैसा ही आगेका समय भी रहे। अंत तो होगा ही कैसे?

हम रोज जन्म लेते हैं, यह कहकर मुझे तेरी बालिशता प्रगट नहीं करनी थी। मैंने सपनेमें भी अैसी कोअी बात सोची नहीं थी। मैं तो

तूने आशीर्वाद मांगे अुसकी प्रशंसा ही कर रहा था। अिसलिअे हर वर्षगांठ पर आशीर्वाद मंगवाती ही रहना।

आश्रमकी कोअी निन्दा करे तो अुसका मुझे बिल्कुल दुःख नहीं होता। परन्तु आश्रमका क्यों भस्म किया, अिसका जो कारण मैंने बताया अुस पर कोअी विश्वास न करे अिससे जरूर दुःख होता है। जिसे मैं पवित्र न मानूं अुसका बलिदान कैसा? यह बात मैंने अच्छी तरह समझाअी होगी। परन्तु हमें तो जो हो अुसे प्रसन्न चित्तसे सहन करना चाहिये।

पिताजीसे भेंट हुअी और अुनका रोष अुतर गया, यह अच्छी बात है। अब यह मेल बना रहेगा, अिसमें कोअी सन्देह नहीं।

मेरी गाड़ी चल रही है। शक्ति आती जा रही है।

पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

१४८

वर्धा,
सुबहके तीन बजे,
३-९-'३४

चि॰ प्रेमा,

तेरा पत्र वर्णनसे भरपूर है। मालूम होता है तेरा काम अच्छा चल रहा है। अिसी तरह कामका हिसाब भेजती रहना।

गांवमें काम करनेके बारेमें 'हरिजन' में जो लिखा है अुसे देख लेना। सब जगह अेक ही तरीका काम नहीं देता। अिस क्षेत्रमें अभी कुछ काम नहीं हुआ है। अिसलिअे काममें काफी विविधता होना संभव है। मेरे पास जो योजना है और जिसे मैंने 'हरिजन' में प्रस्तुत किया है, वह तो अेक ही प्रकारकी है। परन्तु अुसका घूंट किसके गले अुतारूं? तेरे ही गले न? अब यह देखूंगा कि तू कितनोंके गले अुतारती है।

तेरी परेशानीसे मुझे आश्चर्य नहीं होता। मेरी सलाह है कि तुझे कांग्रेसका नाम तक नहीं लेना चाहिये। सविनय भंगका तो ले ही क्यों?

अभी तो जो जो काम तू कर रही है अुनके गुण-दोष ग्रामवासियोंके सामने रखने चाहिये। कांग्रेसके कामके बिना अुसका नाम मिथ्या है। काम हो तो नाम अनावश्यक है। जो लोग कृष्ण कृष्ण कहते हैं वे अुसके पुजारी नहीं हैं। जो अुसका काम करते हैं वे ही पुजारी हैं। रोटी रोटी कहनेसे पेट नहीं भरता, रोटी खानेसे भरता है।

तेरा कहना ठीक ही है। अगर गाव छोड़नेका हुक्म मिले तो अुसका खुशीसे पालन करना चाहिये।[1] जो अरुचिकर कानूनोंका भी अिच्छापूर्वक पालन करते हैं, अुन्हींको कभी कानून भंग करनेका अधिकार मिलता है। यह बात शायद ही याद रखी जाती है।

यह न मान लिया जाय कि मेरा कांग्रेसमें आना होगा ही। मनमें बहुतसी बातें पक रही हैं। वे सब लिखनेका समय नहीं मिलता। जो हो वह देखती रहना। *तेरा कार्य निश्चित हो गया, अितना काफी है।*

किसन कभी कभी लिखती रहती है। अम्तुलसलाम[2]के नाम तेरा पत्र[3] अच्छा है।

रामदास बीमार है, यह तो तू जानती ही है। शर्माको लेकर वह साबरमती गया है। बा अुसके साथ गअी है — अुसकी सेवा करने।

बापूके आशीर्वाद

---

१ स्थानीय पुलिसने आश्रमकी जांच-पड़ताल शुरू की थी।

२ अेक मुसलमान बहन। अुनके पिता किसी समय पटियालाके दीवान थे। वे बहन परदा तोड़कर आश्रमवासीके रूपमें रहने और सेवा करने साबरमती आअी थीं। अुनसे मैंने अुर्दू सीखी थी। शरीरसे कमजोर होने पर भी सेवा करनेकी अुनमें बड़ी शक्ति थी। बादमें तो १९३३ में वे जेल भी गअी थीं। अुन्होंने नोआखालीमें भी बड़ा काम किया था।

३ अुर्दूमें लिखा था।

१४९

वर्धा,
२०-९-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। आज भी सुबहकी प्रार्थनासे पहले यह पत्र लिख रहा हूं। यह तुझ पर मेहरबानी करनेके लिअे नहीं, परन्तु जितना ही बतानेके लिअे है कि अब नियमानुसार प्रातःकाल तीन बजे अुठकर मैं काममें लग जाता हूं। दिनमें पत्र लिखनेकी फुरसत कम मिलती है। मुझे कोअी जगाता नहीं और अलार्म भी नहीं है। ज्यादातर यों ही अुठ जाता हूं। यहां[1] तो सोनेके लिअे छत है। आसपास अम्तुलसलाम, वसुमति, अमला,[2] का हो तब वा, आश्रम और प्रभावती सोती हैं।

तू अपना काम बढ़ाती जा रही दीखती है। थोड़ा परन्तु खूब पक्का काम करनेकी मेरी सिफारिश है। गांवके काममें अधीरता काम नहीं देती। 'हरिजन' या 'हरिजनबन्धु' या दोनों नियमपूर्वक पढ़ना। अुनमें जिस समय दूसरे विषयोंकी चर्चा होती है।

रामदासकी देखभाल करनेके लिअे बाके साबरमती जानेकी बात लिख चुका हूं न?

'गीताजी' की प्रति चाहिये तो भेजूं। मेरे वक्तव्य परसे जो विचार आयें वे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

---

१. तब पू० महात्माजी मगनवाड़ीमें रहते थे।

२. जर्मन बहन डॉ० स्पीगल, जिन्हें पू० महात्माजीने यह भारतीय नाम दिया था।

१५०

५-१०-'३४

चि० प्रेमा,

तेरे पिछले पत्रका अुत्तर मैंने नहीं दिया, अैसा मेरा खयाल है।

तू मेरे वक्तव्यको पूरा समझ सकती है, अिससे मुझे सन्तोष होता है। तेरा काम तो विकसित हो रहा मालूम होता है। विस्तार न बढ़ाना। जो काम हाथमें लिया है अुसकी जड़ें गहरी जमाना। हमारे कंगाल मुल्कमें हम घासके बीज बोकर अुन पर गुजर करते हैं। गेहूं आदि घासके बीज ही हैं। फल बोनेका हममें धीरज नहीं है, अिसलिअे गरीब अुन्हें पाते ही नहीं, अमीरोंके लिअे फल पोषक नहीं होते। अुनके लिअे वे भोजनके बाद मुख सुवासित करनेकी वस्तु हैं। अिसी तरह हम सेवाके क्षेत्रमें कंगाल होनेके कारण घासमें सन्तुष्ट रहते हैं। अिस भूलसे हम थोड़े भी बच जायेंगे तो जो फलझाड़ सब होंगे वे छाया देंगे और अुनके फल पीढ़ी दर पीढ़ी खाये जायेंगे। आज तो अितना ही।

बापूके आशीर्वाद

१५१

[जब बम्बअीमें कांग्रेसका अधिवेशन हुआ तब महाराष्ट्रके प्रतिनिधिके रूपमें मैं भी वहां अुपस्थित थी। अुस समय पू० महात्माजीसे मेरी मुलाकात हुअी थी।]

वर्धा,
७-११-'३४
दीवाली

चि० प्रेमा,

तू मिली भी और नहीं भी मिली। तेरे अंतिम पत्रका अुत्तर तो वहीं देना था, परन्तु वह हुआ ही नहीं। अब देनेकी जरूरत है या नहीं, यह मैं नहीं जानता। तेरे पत्रकी मैंने आशा रखी थी। अब तुझे वही प्रश्न

अथवा अन्य प्रश्न पूछने हो तो पूछना। जिस महीने तो मैं यही हूं। बादका मुझे कुछ पता नही। सुशीलाके साथ भी बात नही हुअी। किसन अतिम दिन आ गअी, यह मुझे बहुत अच्छा लगा। अुसके साथ भी बात तो हुअी ही नहीं।

. . अभी यही है। कल राजकोट जायगी। अुसकी विह्वलता काफी बढी हुअी है। शायद पहलेसे अधिक होगी। अेक भी विचार पर वह स्थिर नही रह सकती।

बा शनिवारके दिन रामदासको लेकर वापस आ रही है।

बापूके आशीर्वाद

१५२

*[बम्बअी काग्रेसके समय श्री गगाबहन वैद्य और श्री लीलावती-*बहन आसर मुझसे मिली थी। पू० महात्माजीकी नाराजीके अपने अनुभव अुन्होंने मुझे बताये थे। काग्रेस अधिवेशनमें अुपस्थित होनेसे दोनोको पू० महात्माजीने मना कर दिया था। बहुत करके यह अनुभव अुमीके सिलसिलेमें हुआ होगा।

पू० महात्माजी जब यरवडा जेलमें थे तब मैं अुनके लिअे पूनिया खुद बनाकर भेजती थी। मैंने अुनके सूतकी माग की थी और अुन्होंने मुझे वचन भी दिया था। फिर भी अभी तक अुस पर अमल नही किया गया था। अब मैंने फिर याद दिलाअी। बादमें सूत मिल गया।

बम्बअीके अधिवेशनके समय डॉ० हर्डीकर (कर्णाटकवाले) से मुलाकात हुअी थी। वे दुःखी थे। सेवादलके कार्यकर्ता घरबारका त्याग करके आन्दोलनमें पड़े थे, परन्तु आन्दोलन बन्द होनेके बाद बहुतोंकी आर्थिक स्थिति दयाजनक हो गअी थी। जिसका अुन्हे दुःख था। खुद अुनकी कोअी मदद नही कर सकते थे, जिसलिअे भी लाचार थे। अुनका दुःख मैंने पू० महात्माजीको बताया और मार्गदर्शनकी प्रार्थना की।

पत्रोंको खानगी रखनेकी मेरी दलील पू० महात्माजीने जिस पत्रमें स्वीकार की।

श्री दफ्तररावजीने सासवडमें आश्रम तो खोला, परन्तु सासवड कस्बेका गांव था। अुसकी आबादी अुस समय ५००० थी। अिसलिअे बिलकुल छोटे गांवमें आश्रम ले जानेके विचार अुनके मनमें अुठने लगे थे। अिसके बारेमें पू० महात्माजीने अिस पत्रमें आलोचना की है।]

वर्धा,
४-१२-'३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरे प्रश्नोंके सयाने अुत्तर दू तो वह सच्चे सयानेपनकी निशानी ही होगी, अैसा थोडे कहा जा सकता है?

मेरा गुस्सा तुम कोअी नही जानते। अुसका साक्षी मैं ही हो सकता हू। लीलावती या गगाबहनने जो अनुभव किया होगा, अुसे मैं थोडे ही गुस्सेमें गिना सकता हू? मुझमें जो गुस्सा भरा है अुसे बहुत-कुछ तो मैं पी जाता हू। पीते पीते जो बाकी रहता है वही गगाबहन वगैरा देख सकी होंगी। अितना भी अुन्हें न देखने दू तो मैं दबी बन जाअू अथवा सूखकर हाड-पिंजर हो जाअू। अैसा नही होता अिसका कारण यह है कि मैं अपने गुस्सेको जान-बूझकर रोकता हू और आगे रास्ता करता हू। आस-पास रहनेवालोंके प्रति सावधान रहनेकी आवश्यकता नहीं समझता, अिसलिअे वे मेरे गुस्सेकी झांकी कर लेते हैं, और मुझ पर अुनकी दया रहती है, अिसलिअे व अुसे भूल जाते हैं।

मेरे पास जो सूत बाकी रहा होगा अुसे प्रभावती भेज देगी। मेरा हिसाब तो गलत निकला। प्रभावती अिस समय बम्बअीमें है। स्वरूपरानीकी सेवा करने और जयप्रकाशसे मिलने गअी है।

.. के बारेमें जैसा तू मानती है, वैसा होना बहुत ही कम सभव है। किसीकी निन्दाकी बात माननेमें खूब हिचकिचाना, अुसे न सुने तो अधिक अच्छा हो।

डॉ० हर्डीकर जैसोंके लिअे क्या हो सकता है? अुनके मत भिन्न, मनोरथ भिन्न। जो प्रवृत्ति अुन्हे अच्छी लगे अुसे सरकार नहीं चलने देती; जो चलती हो अुसमें अुन्हें रस नहीं आता। प्रजाके तत्रमें तो जो कहीं भी जम सके अुसीका समावेश हो सकता है। अुनके जैसोंको किसी न किसी

जगह जमकर हो सके वह सेवा करनी चाहिये। अिस प्रकार मैं बहुतोंका मार्गदर्शन कर रहा हूं।

जो ओीमानदारीसे धंधा करते हैं वे भी देशकी सेवा करते हैं। सेवाका दावा करनेवाले लोग भारस्वरूप हो सकते हैं; और धंधा करके कमानेवाले लोग शुद्ध सेवक हो सकते हैं।

तेरे पत्रोंके बारेमें तूने जो लिखा है वह ठीक है। जो पत्र तुझे मेरे ही पढ़नेके लिअे लिखने हों, अुन पर तू खानगी लिख सकती है। जिन्हें मेरी मरजी पर छोड़ेगी, अुन पत्रोंका मुझे ठीक लगेगा वही करूंगा। मैं मुश्किलसे ही पत्रोंका संग्रह करता हूं।

अुद्योगोंका तो जो हो सके वह करना।

भगवान तुझे बहुत अिधर-अुधर न घुमाये तो अच्छा। अेक क्षेत्रमें टिका जा सके तो ही कुछ काम हो सकता है। जहां तू रहती है वह पूनावा अुपनगर ही हो तो बहुत लाभ नहीं होगा। परन्तु वहां जब रही है तो अेकाअेक वह जगह न छोड़ी जाय यह अच्छा होगा। परन्तु अिसमें मेरी समझदारी बेकार समझना। यदि वहां रहनेमें भूल हुअी हो, तो वहीं चिपटे रहनेमें कोअी औचित्य हो ही नहीं सकता। भूल साबित हो जाय तो अुसे सुधारना ही चाहिये।

अहिंसासे स्वराज्य दिलानेवाला मैं कौन? यदि मुझमें अहिंसा सचमुच होगी तो अुसकी छूत लगे बिना हरगिज नहीं रहेगी। मुझे अपने पर कम श्रद्धा है, लेकिन अहिंसा पर अटूट श्रद्धा है। जगतने अिस महान सिद्धान्तको जान लिया है। परन्तु अुसका आचरण बहुत थोड़ा हुआ है। मुझे तो रोज अुसके नये घूंट पीनेको मिलते हैं, क्योंकि मेरे लिअे तो वही कल्पवृक्ष है। अिस दुनियामें मेरे लिअे और कुछ संभव नहीं है। क्योंकि सत्यनारायणसे मिलनेका दूसरा कोअी मार्ग मुझे मिला नहीं है। और अुसके मिले बिना जीवन व्यर्थ लगता है। अिसलिअे अहिंसाका मार्ग कठिन हो या सरल, मुझे तो अुसी मार्गसे जाना है। यदि मेरी मृत्युके बाद मारकाट ही मचे, तो समझना कि मेरी अहिंसा बहुत थोड़ी अथवा झूठी थी — अहिंसाका सिद्धान्त कभी झूठा नहीं हो सकता। अथवा यह भी हो सकता है कि अहिंसा सिद्ध करनेसे पहले रक्तकी वैतरणीमें से

हमें गुजरना पड़े। सन् २० में राजनीतिमें अहिंसा आअी अुसके बाद क्या चौरी-चौरा अित्यादिकी घटनायें नहीं हुअीं; सरकारने अपने जुल्मोंमें कोअी कसर रखी है? परन्तु मेरा विश्वास है कि यह सारी हिंसा होते हुअे भी अहिंसाने अपना प्रभाव खूब डाला है। फिर भी वह समुद्रमें बिन्दु-मात्र है। मेरा प्रयोग आगे बढ़ता ही जाता है। भगवान करे तेरी श्रद्धा कभी विचलित न हो।

हमारी अिन्द्रियां जो कुछ देखती हैं वह सत्य ही है, अैसी बात नहीं। अक्सर तो वे असत्य ही देखती हैं। अिसीलिअे अनासक्तिका मार्ग ढूंढा गया। अनासक्ति अर्थात् अिन्द्रियोंसे परे जाना। यह तो अुनमें रहनेवाली आसक्तिको छोड़नेसे ही हो सकता है। आंखका प्रमाण मानें तो पृथ्वी समतल ही सिद्ध होगी न? सूरज मानेकी धारणा किया क्या है? आंखें देखती हैं यही अगर प्रेमा हो, तो मेरी मुसीबत हो जाय न? बातोंसे मेरे बारेमें जो कुछ तू सुने वह सब सच मान बैठे तो!

अब तो बहुत हुआ। मीराबहनका अलार्म बज गया। अब प्रार्थनाकी घंटी बजेगी। अितनेसे जो चित्र खींचा जा सके वह खींचना। १५ तारीखके बाद दिल्ली जानेका अिरादा है। वहां थोड़े समय हरिजन-आश्रममें रहनेका विचार है।

अन्तमें तो अभी जेल ही नजर आती है।

दुबारा नहीं पढ़ा।

बापूके आशीर्वाद

१५३

चि० प्रेमा,

१६-१२-'३४

तेरे पत्र नारणदासको भेजूंगा। आज भी सुबह १-४५ बजे अुठकर पत्र लिख रहा हूं। दो बजेके आसपास अुठनेकी आदत ही हो गअी है। सोना नौ बजेसे पहले होता है। दिनमें अेक दो बार मिलाकर आधेसे अेक घंटे तक सोनेको मिल जाता है। अिसे काफी मानता हूं।

'दुबारा नही पढा' लिखकर अपने लिअे और जिसको लिखता हू अुसके लिअे न्याय प्राप्त कर लेता हू। कहीं 'अजमेर' का 'आज मर' हो जाय तो सुधार लिया जाय और शका हो तो पूछ लिया जाय। दुबारा न पढा हुआ पत्र अधूरा ही मानना चाहिये। परन्तु तेरे जैसीको न लिखनेकी अपेक्षा अधूरा लिखू, तो भी मुझे तो अच्छा लगेगा और तुझे भी अच्छा लगेगा।

मेरा दिल्ली जाना बहुत करके २७ तारीखके आसपास होगा। मैं न लिखू अथवा अखबारमें तू न देख तब तक वर्धाके पते पर ही लिखती रहना।

स्वप्नमें व्रतभग हो अुसका प्रायश्चित्त आम तौर पर अधिक सावधानी रखना और जाग्रत होने पर रामनाम जपना है। स्वप्नमें हानेवाले दोष हमारी अपूर्णताके चिह्न हैं। अनजाने भी हम अुन विषयाको मनके किसी न किसी कोनेमें सेवन करते है। अिसलिअ निराश हो तो भी अधिकाधिक प्रयत्नशील बनें। निराशा विषयासक्तिकी निशानी होती है, अश्रद्धाकी तो होती ही है। जो रामनाम लेनेसे थक जाय — निराश हो जाय — अुसकी श्रद्धाको हम समाप्त हो चुकी ही कहेंगे न? जब कोलम्बसके साथियोंकी श्रद्धा खतम हो गअी तब वे अुसे मार डालनेको तैयार हो गये। कोलबस श्रद्धाकी आखसे किनारेको स्पष्ट देख रहा था। अुसने थोडीसी मोहलत मागी और वह अमरीका पहुच गया!!! न खानेकी चीज सपनेमें खाअी जाय तो अुसका भी यही अर्थ है। अैसे सपनोंके बाहरी कारण होते हैं। अुनका पता चले तब अुन्हें दूर करना चाहिये। "जो सब अवस्थाओका साक्षी है वह निष्कल ब्रह्म मैं हू", अैसा हम गाते है। अैसा बननेका हम सतत प्रयत्न करे तो ही अिसे पा सकते है। अैसे हम नही बने हैं अिसीके चिह्नस्वरूप सपने आते हैं। वे हमारे लिअे दीपस्तभका काम करते हैं।

अीश्वरकी कृपाके बिना पत्ता भी नही हिलता, परन्तु प्रयत्नरूपी निमित्तके बिना भी वह नही हिलता। प्राणीमात्रकी शुद्धतम सेवा ही साक्षात्कार है।

किशन तेरे साथ रहेगी यह बहुत अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

बिड़ला मिल्स,
दिल्ली,
३१-१२-'३४

चि० प्रेमा,

अिस समय छह बजनेको है। परन्तु घोर अंधकार है। हाथ ठिठुर गये हैं। यहां वीरान जैसा है। हरिजन-आश्रम बसाना है। दो कमरे खास तौर पर बनाये गये है। और तीन चार तंबू है।

तेरा पत्र मिल गया। तेरे जीमें आये वही प्रश्न पूछती रहना। मेरी फुरसतमें जितने अुत्तर दे सकूंगा देता रहूंगा।

किसन कैसी है? तेरे पास कुछ समय रहने आनेवाली थी अुसका क्या हुआ?

तेरा काम आगे चलता ही रहेगा और रुपयेकी मदद मिलती ही रहेगी।

रामनाम रामबाण है, यह अटल विश्वास तू रखती है, अतः अिस सत्यका अनुभव करेगी। सर्वत्र अंधकार दिखाअी देता हो तो भी राम-नामका रटन करती ही रहना। अिससे भला ही होगा।

किसानोंकी जमीनके टुकड़ोंका प्रश्न बहुत बड़ा है। हमारे हाथमें सत्ता हो तो भी वह कठिन ही रहेगा। अभी तो हमारा प्रयोग यही देखनेका है कि सत्ताके बिना क्या करना संभव है। छोटे टुकड़े पर भी बुद्धिपूर्वक खेती हो तो अुसका लाभ मिल सकता है। यह सब प्रयोगोंसे ही करके बताया जा सकता है। (खेतीका) हमारा अपना ज्ञान भी छिछला है, अिसलिअे हम पंगु जैसे हैं। अिसीलिअे हम खेतीके प्रश्नको सीधे नहीं छूते। आसानीसे सूझनेवाले और आसानीसे चलाये जा सकनेवाले अुद्योगोंको ही अभी तो हमें हाथमें लेना है, ताकि किसानोंका आलस्य मिटाया जा सके और अुद्योगके साथ बुद्धिका मेल साधा जा सके। दूसरा सब अपने आप हो जायगा।

आजकलकी अपेक्षा पहले लोगोंकी स्थिति अच्छी तो थी ही। यह बात सिद्ध की जा सकती है। पहले बाहरसे धन बहुत चला आता था। जमीनके जितने टुकडे नहीं थे, जितना धन कभी बाहर नहीं जाता था। कुदरत अपना काम कुदरती ढंगसे करती रहती थी। अब हमने पूरे ज्ञानके बिना प्रकृतिके काममें हाथ डाला है। और वह भी निरंकुश ढंगसे। असलिअे हम चूके जा रहे हैं।

रामराज्य अवश्य काल्पनिक है, परन्तु वैसा ही कुछ न कुछ तो पहले था, ही यह भी हम सिद्ध कर सकते हैं। वैसे असत्य और दारिद्र्यका पूरा पूरा लोप बिलकुल तो न पहले किसी समय हुआ और न भविष्यमें कभी होना सम्भव है।

पहाडोंकी गुफाओंमें भाग जानेकी प्रथामें दुनियासे ऊब अुठनेकी बात तो भरी ही है। असका कुछ तो अुपयोग जरूर रहा होगा। परन्तु आज बिलकुल नहीं है। सेवा करते हुअे मर जाना गुफामें रहनेके बराबर ही है।

जैसा अपने बारेमें वैसा ही दूसरोंके बारेमें। अपने बारेमें अनासक्त रहने पर भी सरदी-गरमीका भान तो रहेगा ही। ठंडमें गरमी और गरमीमें ठंड तो हम ढूंढेंगे ही, परन्तु खोज सफल न हो तो रोने नहीं बैठेंगे — यही अनासक्ति है। यही बात सरदीसे कांपनेवालोंके लिअे भी है। अनके लिअे प्रयत्न तो हम जरूर करेंगे। अुन्हें कांपते देखकर हमारे पास जो कपडे होंगे वे अथवा अुनमें से कुछ अवश्य हम अुन्हें दे देंगे। अितने पर भी अगर वे कांपेंगे तो हम अुसे सहन करेंगे। अुससे अधीर होकर मारामारी नहीं करेंगे। असत्याचरण नहीं करेंगे। यही अनासक्ति है।

खादी पेटका धंधा है भी और नहीं भी है। मैंने अुसे अन्नपूर्णा कहा है।

हिसाबको छोडकर रूससे बहुत कुछ लेने लायक है अैसा मैं मानता हूं। परन्तु सम्भव है कि जो अिस समय केवल बलात्कारसे सम्भव होता जान पडता है वह स्वेच्छासे स्वीकार्य न हो सके। परन्तु हम सब पढी हुअी बातों परसे अनुमान लगाते हैं, यह ठीक नहीं। हमें अपना विचार स्वतंत्र रूपमें करना चाहिये। हमारे लिअे क्या हितकर है यह हमींको सूझ सकता है।

विषमताका सर्वथा नाश होना असंभव है। परन्तु अधिकसे अधिक समता तक पहुचनेका अेक ही मार्ग है, जो मैंने बताया है। मैंने जो बताया है वह नया नहीं है। पुराना ही (कदाचित् नये रूपमें) मैं बता रहा हू।

किसानोंके लिअे यह बडा आश्वासन है कि सहायक अुद्योग फुरसतके समयमें करके वे अपनी आयमें अच्छी वृद्धि कर सकते है।

कर्मका नियम समझना आसान है। जो कानून हम यंत्रशास्त्रमें सीखते हैं वही अिसमें है। दृश्य शक्तिया अेक साथ काम करती है, अुनका अेक ही दृश्य परिणाम हम देख सकते हैं। यही बात कर्मके विषयमें भी है।

तुझे बिलकुल छोटे गावमें जाना हो तो भले ही जा। परन्तु जिसमें है अुसीसे तू चिपटी रहेगी तो भी काफी है। अेक जगह पूरी सफलता मिले तो वह अेक मापदण्डका काम करेगी। आज हमारे पास अैसा मापदड नही है।

मद्दा २० तारीख तक रहूगा।

बापूके आशीर्वाद

१५५

[मेरे मुह पर फुन्सिया हो जाती थी। अुनका अुपाय मैंने पूछा था। पत्रमें महात्माजीने जो अुपाय बताया अुसे मैंने करके देखा। परिणाम बहुत अच्छा आया। फुन्सिया अेक बार मिटी तो फिर कभी नही हुअी।

हरिजन-सेवाकार्यका विरोध करनेवाले श्री लालनाथका मार पडी, अिसलिअे पू० महात्माजीने सात दिनका अुपवास किया था।]

वर्धा,
३-२-'३५

चि० प्रेमा,

तेरे पत्रका अुत्तर अिस बार बहुत देरसे दे रहा हूं। समय नहीं मिलता।

आज लिख-लिखकर ही हाथ थक गया है। अिसलिअे बाया काममें ले रहा हू।

मेरा शरीर दुर्बल तो हुआ होगा। परन्तु मुझे अैसा अनुभव नही होता। अुपवासका असर कमजोरी बढानेवाला सिद्ध नही हुआ; नही होना चाहिये, यदि अुपवास छोडनेके बाद सावधानीसे काम लिया जाय।

मैं मानता हू कि मेरे भोजनका असर मेरे शरीर पर अच्छा ही हुआ है। मैं अुसका पृथक्करण नही कर सकता।

माता-पिता अित्यादि तुमसे मिल गये, यह बहुत अच्छा हुआ।

फुन्सियोंका अिलाज जरूर है। थोडे दिनो तक केवल फलो और कच्ची भाजी पर रहना चाहिये। भाप लेनेसे तुरन्त मुरझा जायगी। भाप लेनेके बाद ठडे पानीसे नहाना चाहिये। तीन चार दिनमें चमडी साफ हो जानेकी सभावना है। अुसके बाद दूध अथवा बिलकुल फीका दही और फल तथा कच्ची भाजी लेना चाहिये। भाजीमें मेथी, पालक, लोनी, सलाद अुत्तम हैं। मैं तो सरसोंकी पत्ती और मुलायम डालिया भी लेता हू।

अीश्वरसे याचना करनेका अर्थ है तीव्र अिच्छा करना। अीश्वर हमसे भिन्न भी है और अभिन्न भी है। भिन्न है क्योंकि वह सपूर्ण है; अभिन्न है क्योकि हम अुसके अश हैं। समुद्रसे अलग पड जानेवाली बूंद यदि समुद्रसे विनती न करे तो किससे करे? परन्तु समुद्रके लिअे कुछ करने या न करनेकी बात है क्या? प्रार्थना वियोगीका विलाप है, अुसके बिना देहधारी जी ही नही सकता।

राष्ट्रकी प्रगतिकी कुजी हमारे हाथमें है भी और नही भी है। यदि हम शून्यवत् हो जाय तो ही प्रगति होगी। शून्यवत् होना हमारे हाथमें है, परन्तु प्रगति हमारे हाथमें नही है। क्योंकि शून्य बने कि प्रगति अेकमात्र परमात्माके हाथमें रहती है।

'अूधो करमनकी गति न्यारी' यह शुद्ध सत्य है। कर्मका नियम है, अितना हम जान सकते हैं; परन्तु हम यह नही जानते कि वह नियम किस ढगसे काम करता है। अितनी प्रभुकी कृपा है। सामान्य राजाके नियम भी जब हम नही जानते, तो फिर नियमकी मूर्तिके समान परमात्माके [सारे] नियमोंको हम कैसे जान सकते हैं?

अिस लड़ाअीके शुरूमें जो जीत दिखाअी देती थी वह अेक कल्पना ही थी, पराभव भी केवल दिखावा ही था। सत्यकी नित्य विजय ही होती है अैसी जिसकी अटल श्रद्धा है, अुसके शब्दकोशमें हार जैसा कोअी शब्द ही नहीं होता।

बापूके आशीर्वाद

१५६

वर्धा,
७-३-'३५

चि० प्रेमा,

पत्रोंके जवाब निबटानेके लिअे मौन लिया है, अिसलिअे अितना मुझे ही लिखना पड़ रहा है। वैसे तेरा पत्र तो मेरे पास रखा ही है। बामा हाथ काममें लेने लगू तब अथवा पूरा समय मिले तब अुसका अुत्तर दे सकूंगा।

तेरे पास जो सूत है अुसका छोटासा भी कोअी कपड़ा बुनवा सके, तो बुनवाकर सीधे मणिलालको फिनिक्स भिजवा देना। अैसा हो तो ही कपड़ा अरुणके पास वर्षगांठ पर पहुंचेगा। अिसीके लिअे तो सुशीला माग रही है।

मैं कारणवश पत्र न लिख सकूं तो भी तुझे नियमानुसार अपने कामका विवरण भेजना छोड़ नहीं देना है। वजन तू काफी बढ़ा रही है। यही सुन्दर है।

बापूके आशीर्वाद

१५७

[सासवड़के आसपासके खेतोंमें मैं किसानोंके साथ काम करने जाती थी। आठ बैलोंके हल चलाती थी चार बैलोंका चरस चलाती थी, निंदाअी करती थी, कटाअी करती थी, ज्वारके मोटे डंठल जमीनसे अुखाड़ लेती थी। ये सब काम करनेमें मेरी हथेलियां सख्त और छाले पड़कर चमड़ी निकल जानेके कारण खुरदरी हो गअी थी। अिससे पू० महात्माजी बहुत प्रसन्न हुअे।]

वर्धा,
१४-३-'३५

चि० प्रेमा,

अब तो तेरा दूसरा पत्र आ जानेके कारण हाथसे लिखनेका लोभ छोड़कर यह पत्र लिखवा रहा हू।

तेरे पास रखे हुअे सूतका थान न बन सके, जिसमें तुझे माफी क्यों मागनी चाहिये? मैंने जो सूत भेजा वह पूरा न हो, तो अिसमें तू क्या करे?

अरुणकी वर्षगाठ अप्रैलमें किसी दिन है। मुझे याद नहीं। सुशीलाके पत्रमें तारीख थी।

तेरे हाथोंकी तुलना शायद मीराके हाथोंसे की जा सकती है। जिन हाथोंमें घट्ठे न पड़े हों जिनमें कभी छाले ही न पड़े हों वे हाथ किस कामके?

यहा जमनालालजीके पास नओी मोटर नहीं, घोड़ागाड़ी और बैल-गाड़ी ही है।

कच्चे दूध, भाजीकी पत्तियों और अिमली पर रहकर देखना। फुन्सिया शायद सब मिट जायगी।

यहां तेलकी घानी विठाओी है। अलसीका तेल निकालते हैं। बा वगैरा सब बहनें सारा अनाज साफ करती हैं। नौकर कोओी नहीं है। सारा काम हाथसे ही होता है। मैं हमेशा पगतमें ही खानेको बैठता हू।

यहासे अेक मील पर सिंदी नामक अेक गाव है। महादेव, मीरा, कनू, जमनालालजीकी मदालसा और रामकृष्ण रोज अुसे साफ करने जाते हैं। मैं भी अेक बार हो आया था। फिर जानेका विचार है। गावकी सफाओीका सवाल हम स्वयं भगी बनें तो ही हल होगा।

गावका जो चित्र तूने दिया है वह जितना सजीव है अुतना ही करुणाजनक है। हमें अैसे गावोंसे निबटना है। यह काम न तो बुद्धिबलसे होगा, न पशुबलसे। केवल हृदय-बलसे ही यह हो सकता है।

आज तो अितनेसे ही जितना सन्तोष मान सकें अुतना मान लेना। तेरी प्रगतिका वर्णन तो मुझे चाहिये ही।

बापूके आशीर्वाद

दुबारा नहीं देखा।

१५८

[बम्बअीमें श्री नरीमानके साथ अहिंसाके विषयमें मेरी बातचीत हुअी थी। श्री नरीमानका कहना यह था कि कांग्रेसने अहिंसाको नीतिके रूपमें स्वीकार किया है, धर्मके रूपमें नहीं। अिसलिअे जब देश स्वतंत्र होगा तब सेना और सैनिक शिक्षा तो रहेगी ही। मैंने जब पू० महात्माजीको पत्र लिखा तब अिस बातचीतका वर्णन करके पूछा था कि, "कांग्रेस अहिंसाको नीतिके रूपमें मानती है, फिर भी अुस संस्थाका नेतृत्व आप कर रहे हैं। अैसी स्थितिमें क्या यह नहीं कहा जायगा कि आपने अहिंसाके सिद्धान्तके साथ समझौता किया है?"

पू० महात्माजी कहते थे कि अेक भी पूर्ण सत्याग्रही पैदा होगा, तो वह दुनियाको हिला देगा [वह जगतका अुद्धार कर देगा। अिसका मैंने स्पष्टीकरण चाहा था। सरकार यदि यंत्र है तो यंत्रमें अहिंसासे परिवर्तन कैसे हो सकता है? यह सवाल किया था।

सासवड चले जानेके बाद मेरा वजन बहुत बढ़ने लगा था। सत्याग्रह आश्रममें ११८ पौण्डसे ज्यादा नहीं बढ़ता था। जेलमें १२८ तक चला गया था। परन्तु आन्दोलन वापस लेनेकी खबर आने पर घटता गया और जेल छोड़ते समय ११८ पर पहुंच गया था। सासवडमें शरीर-श्रमका काम बहुत करती थी, ४ बजे अुठती थी, १० बजे सोती थी, फिर भी वजन बढ़कर १३५ तक चला गया।[1] जिससे मुझे संकोच होने लगा। पत्रोंमें तो महात्माजी सन्ताप प्रकट करते थे, परन्तु अेक बार वर्धा गअी तब मुझे देखकर अुन्होंने आश्चर्य प्रकट किया और विनोद करने लगे। मेरी पीठ पर जोरसे अेक थप लगायी और बोले "जेलमें वजन बढ़े तो समझना चाहिये कि तेरा कारावास नहीं, विलास है! सासवडमें भी वही बात है!"

मेरा खयाल है कि बोझी जिम्मेदारी सिर पर न होनेसे तथा चिन्तायें बिना, किसीका रोष मोल लिये बिना और प्रसन्न चित्तसे स्वाभाविक आनन्दमें मेरा काम चल रहा था, अिसलिअे मेरा वजन बढ़ता गया।

दिल्लीकी असेम्बलीमें बहुमतको तावमें रखकर अंग्रेज सरकारने राज प्रतिनिधिके हुक्मसे सरकारी बिल पास कर दिया था (बिल किस बारेमें था यह याद नहीं है।) अुसके सिलसिलेमें मैंने लिखा था।]

वर्धा,
५–४–'३५

चि० प्रेमा,

आज तेरे ता० ८–२–'३५ और ता० ३०–३–'३५ के दोनों पत्रोंका अुत्तर देने बैठा हूं। अब किसन कैसी है? क्या करती है? समय किस प्रकार बिताती है?

तेरा हल चलाने और चरस खींचनेका धंधा अब भी जारी है?

जिन लोगोंमें तेरा असर जम जाय अुन्हें जन्म-मरणके खर्चोंसे तुझे बचाना चाहिये। सब न मानें तो भी कुछ तो मानेंगे ही।

नरीमानका और तेरा संवाद अच्छा है। यह सच है कि अधिकतर लोग अहिंसाका नीतिके रूपमें ही पालन करते हैं। परन्तु तेरे जैसे कुछ तो हैं ही, जो धर्म समझकर अुसका पालन करनेका महाप्रयत्न कर रहे हैं। अन्तमें तो यह अहिंसा ही काम देगी।

भारतके स्वतंत्र होने पर भी सेना तो रहेगी ही। मेरी अहिंसामें मैं अभी अितनी शक्ति नहीं पाता, जिससे लोग सेनाकी अनावश्यकताकी बात मान लें। और सेना होगी तो सैनिक शिक्षण भी होगा ही। यह तो अनुमान हुआ। अैसा होना असंभव नहीं कि यदि हम सचमुच अहिंसासे स्वतंत्रता ले लें तो सेनाकी जरूरत न रह जाय। जैसे अहिंसाकी शक्ति अपार है, वैसे ही अहिंसककी शक्ति भी अपार है। अहिंसक खुद कुछ नहीं करता। अुसका प्रेरक अीश्वर होता है, अिसलिअे वह स्वयं कैसे कह सकता है कि भविष्यमें अीश्वर अुससे क्या काम करायेगा? अिसलिअे

यहाँ सिद्धान्तके साथ समझौतेका प्रश्न नहीं, शक्तिके माराका प्रश्न है। आपसे ठरपर मैं शक्ति मांगूं, तो मैं कभी समझौता नहीं करता। अपनी अशक्तिका प्रदर्शन करता हूँ। अीश्वरने जिससे ज्यादा शक्ति मुझे नहीं दी अथवा अैसी शक्ति पाने लायक शुद्धि मैंने नहीं की — प्राप्त नहीं किया, यह कहा जायगा। समझौता तो मनुष्य जान-बूझकर करता है।

पूर्ण सत्याग्रही अर्थात् अीश्वरका पूर्णावतार। तेरे मनमें क्या अिस बारेमें शंका है कि अैसा पूर्णावतार जगतको हिला सकता है? यह कहनेमें अतिशयोक्ति नहीं कि यह जगत अैसा अवतार पैदा करनेकी प्रयोगशाला है। हम सब अभ्यासमें तैयारी करें तो किसी दिन पूर्णावतार जरूर प्रगट होगा, अैसा हमें विश्वास रखना चाहिये। तब तुझे तेनाका प्रश्न पूछना नहीं पड़ेगा।

सरकार यन्त्र है, मगर अुसे चलानेवाला तो मानिक है न?

गायन सुनने अथवा नृत्य देखनेमें दोष नहीं, यदि वह अश्लील न हो। परन्तु हमारे लिअे कोअी पैसे दे और हम जायँ, यह जरूर खटकेगा। अेकको दगा, औरोंको कौन दगा? हम तो अनेक हैं। परन्तु अिनमें सब अपनी शक्तिके अनुसार करें।

पावरोटी सम्बन्धी महादेवका लेख सुबहणीय है।[1]

कुओंकी सफाअीका प्रश्न बहुत बड़ा है। सीढ़ियोंवाले कुओंकी सीढ़ियाँ तू बन्द करा सके तो बड़ा काम हुआ माना जायगा।

तेल छाननेकी क्रिया मुझे अच्छी तरह लिखकर भेज, ताकि मैं अुसे आजमा सकूँ।

तेरा भजन भले ही बढ़े। खटाअीकी जरूरत है। मैंने तो यहाँ अिमली और प्याज खाना शुरू किये हैं।

सुशीला परीक्षिका नियुक्त[2] हुअी तो अपनी फीसका हिस्सा दे और परीक्षा-पत्र मौलिक तथा सरल बनाये।

---

१ जेलसे श्री महादेवभाअीने पावरोटी बनानेके बारेमें अेक लेख हाथसे लिखकर मुझे भेजा था।

२. मैट्रिककी परीक्षाके लिअे।

मासिक धर्मके बारेमें मैंने जो लिखा है वह ठीक है। अैसी निर्विकारिता आनेमें बहुत देर लगती है। यह विकार अैसी सूक्ष्म वस्तु है कि हम अुसे हमेशा पहचान नहीं सकते।

जवाहरलालको छुड़वानेकी दौड़ धूप यूरोप करे यह ठीक है।

असेम्बलीके मतका आदर नहीं किया जाता, अिससे मुझे निराशा नहीं होती। यह परिणाम तो ध्यानमें था ही। यह प्रवेश[1] आवश्यक था और है।

हिन्दू-मुस्लिम अैक्यके बारेमें मौन रखता हूं, क्योंकि मैं कुछ भी करनेमें असमर्थ हूं। गजराज थक गये तो अुन्होंने मौन धारण कर लिया और प्रार्थना शुरू कर दी। अुनकी प्रार्थना फली। मेरी स्थिति गजराज जैसी समझ। मेरी प्रार्थना चल रही है। मोक्ष ता जब आयें तब सही। अुसका काल-निर्णय जाननेकी अनासक्तको क्या अुतावली है?

यहां नये आदमी बहुत हो गये हैं। रसोअीघर बिलकुल सादा हो गया है। सब कुछ भापसे पकाया जाता है। अिसलिअे अेक ही बरतनमें तीनों बारके बरतन साथ साथ चढ़ते हैं। समय तो खूब बच जाता है। रोटी बनाने जितना ही पकानेको रह जाता है। रोटी बनानेकी क्रियाको भी आसान बनानेकी खोज कर रहा हूं।

तेलकी घानी चल रही है। पासका गांव रोज साफ होता है। मैं तो अेक ही बार गया था। महादेव रोज जाते हैं।

तुझे फुरसत मिले और तेरी अिच्छा हो तब तू आ सकती है। अिन्दौर आनेकी अिच्छा हो तो तू वहां भी आ सकती है।

अब बस।

बापूके आशीर्वाद

---

१. असेम्बलीमें।

१५९

[पू० महात्माजीने अपने आहारमें प्याज शामिल किया था और लोगोंसे भी खानेकी सिफारिश करते थे। अिस पर मैंने पूछा था कि, "पहले आप प्याजको ब्रह्मचर्य-पालनकी दृष्टिसे निषिद्ध मानते थे। अब क्यों असकी सिफारिश करने लगे ?"

आश्रममें जो सेवाकार्य शुरू किया था, असे बीचमें ही छोड़कर कहीं जाना मुझे पसन्द नहीं था।]

वर्धा,
१८-४-'३५

चि० प्रेमा,

आज मेरा मौनका अन्तिम दिन है। मौनमें पीछेका काम काफी निबटा लिया है। तेरा पत्र आज ही मिला।

तेरे खानेके बारेमें तेरा लिखना बिल्कुल ठीक है।

चावल, गुड़, प्याज वगैरा खानेके लिअे मैं किसीको मजबूर थोड़े ही करता हूं? लोग जो चीजें खाते हैं अनके गुण-दोष मैं बताता हूं। अिमली मैं तो कच्चे शाकके साथ ही खाता हूं। असे भिगोकर असका सत्त्व निकाल लेता हूं। कच्चा शाक भी मुझे तो पिसवाकर ही खाना पड़ता है।

गांवकि लोगोंकी खुराकमें प्याजका बड़ा स्थान है। वह अेक शाक है, जो अनके लिअे अमूल्य है। प्याज जहां होता है वहां घी वगैराकी अितनी जरूरत नहीं रहती। अिसलिअे मैंने प्रयोगके रूपमें शुरू किया है। जिनकी मरजी हो व खाते हैं। प्याजके बारेमें मैंने अपना विचार अिस हद तक बदला है कि जो अिसे औषधिके तौर पर खाते हैं अनके ब्रह्मचर्यमें अिससे बाधा नहीं होती। अिसके लिअे मेरे पास कोअी प्रमाण नहीं है।

लाठी वगैराके शिक्षणसे अहिंसाकी वृत्ति मंद पड़ जानेकी संभावना तो अवश्य है। लाठी रक्षाके लिअे सिखाअी जाती है न? परन्तु जो सिखाना चाहता है असे लाठीका अुपयोग न सिखानेका नियम बनानेकी अिच्छा नहीं होती।

सफेद खादीके बजाय रंगीन खादी अिस्तेमाल ही न की जाय, अैसा तो मैंने नहीं लिखा। लिखा हो तो अुसे भूल समझा जाय।

स्वराज्य मिलने पर बहुतसी वस्तुयें अैसी बदल जायगी कि आज देशी राज्योंके बारेमें निश्चयपूर्वक कुछ भी कहना कठिन है। परन्तु आमतौर पर देशी राज्योंकी शक्तिको स्वराज्य तब रोकेगा नहीं, अैसा कहा जा सकता है।

लुहार, सुनार वगैरा वश्य माने जायगे।

कल अिन्दौर जा रहा हूं। २५ तारीखको वापस आ जाअूगा।

बापूके आशीर्वाद

१६०

[सासवडके मुसलमान समाजमें मैं मिलने-जुलने लगी थी और मुसलमान बहनोंको कुरानका मराठी अनुवाद पढ़कर समझाती थी।]

वर्धा,
३-५-'३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी ही मिला। सारे वर्णन सुन्दर हैं। तू बहुतसी बातें तो निबटा ही लेगी। कुरानका अनुवाद अुर्दूमें हुआ है, वह तुझे पढ़ लेना चाहिये। तब तुझे अुसकी ध्वनि मिलेगी। और अुर्दू पाठावलिया भी पढ़ लेनी चाहिये। वे पंजाबमें प्रकाशित हुआी हैं। हैदराबादमें भी होगी।

तेल छाननेकी बात समझ ली। यहां तो घानी है। फिर भी थोड़ी मात्रामें तेल निकालना हो तो तेरी रीति काम देगी। आजमाअूगा।

शायद ६ तारीखको मुझे यहांसे बोरसद जाना पड़ेगा। वापस यहां १७ तारीखको आनेका विचार है। बीचमें १६ तारीखको कुछ घंटे बंबभीमें बीतेंगे। यह सब निश्चित ही जायगा तो तू अखबारोंसे भी जान लेगी।

बापूके आशीर्वाद

१६१

[मेरी माता मुझे दस महीनेकी छोड़कर परलोकवासी हुआी, तब अुनके कोआी तीन हजारके गहने थे। अुनसे अपना स्मारक बनवानेकी अिच्छा अुसने प्रगट की थी। वे गहने बरसों तक पड़े रहे। बादमें मेरे नाना और पिताजीके बीच यह निर्णय हुआ कि अुनमें से आधे स्मारकके लिअे काममें लिये जाय और आधे मुझे दिये जाय — अिस शर्त पर कि मैं विवाह करूं। परन्तु मैंने तो विवाह करनेसे अिनकार कर दिया और दोनोंसे कह दिया कि सारे गहने पू० महात्माजीको सौंप दिये जाय। स्मारकके लिअे अुनका अुचित अुपयोग वे ही करेंगे। दोनोंने अिस कथनका विरोध किया। मुझे समझाने लगे कि, "देशसेवासे रुपया नहीं मिलता, अुल्टे मनुष्य कंगाल बनते हैं। तेरे शरीरमें ताकत होगी तब तक शायद लोग तेरा पालन करेंगे। परन्तु वृद्ध या अपंग होने पर कौन तेरी मदद करेगा? गहने बेचकर हम अुनका ट्रस्ट बना दें और अुसके ब्याजका अुपयोग तेरे लिअे हो अैसी व्यवस्था करनेकी हमें सहमति दे।" परन्तु सच्चा सेवक अपने निर्वाहके लिअे अीश्वर पर निर्भर रहता है, खानगी पूंजी नहीं रखता। सेवकके लिअे यही जीवनका आदर्श कहा जायगा। पू० महात्माजी अैसी शिक्षा देते थे, अिसलिअे मैंने यही दलील देकर दोनोंकी योजना अस्वीकार कर दी। अिस पर दोनों नाराज हो गये। पू० महात्माजीको मैंने यह बात बताओी तब अुन्होंने अिस पत्रमें मेरे दोनों गुरुजनोंके लिअे आश्वासन दिया। परन्तु अिससे अुनका समाधान नहीं हुआ। यह बात यहीं रह गओी। सन् १९४४ के बाद नाना गुजर गये। मेरे पिताजीने सभी गहने बेचकर अुनके रुपयोंका ट्रस्ट बना दिया और अुसके ब्याजसे हमारे मूल गांव वारवारके अेक हाओीस्कूलमें मेरी माके नाम पर छात्रवृत्तियां तथा पारितोषिक देनेकी व्यवस्था कर दी, जिसमें हरिजन बालकोंके प्रति विशेष पक्षपात किया गया था।]

वर्धा,
१३-५-'३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। यह अुपाय हो सकता है। गहने अथवा अुनके पैसे तेरे लिअे पिताजी मुझे सौंप दें। जिसका अर्थ यह हुआ कि अुससे जो मासिक आय हो वह मैं तेरे लिअे काममें लूं। तेरी मृत्युके बाद आश्रमके ट्रस्टी अुसका अुपयोग आश्रमके लिअे करें। अैसा करनेमें तुझ पर कोअी दोष नहीं आता। तू तो अपना जीवन अीश्वर पर ही अवलम्बित रखती है। पिताजीके और मेरे बीच जो समझौता हो अुसके प्रति तू अलिप्त रह सकती है। मीराबहनका यही तो होता है। अुनके लिअे १५० से २०० पौण्ड आते हैं। वे आश्रमके खातेमें जाते हैं। अुसका सब आश्रम अुठाता है। मेरे सुझावमें पिता निर्भय रह सकते हैं, और तू अलिप्त रह सकती है।

मैं वहां २२ तारीखको आअूंगा। अुसी रातको बोरसदके लिअे रवाना हो जाअूंगा। तू बम्बअीमें तो मिलेगी ही। परन्तु बोरसद आना हो तो आ सकती है। वर्धा तो है ही।

बापूके आशीर्वाद

१६२

[मेरी मांके गहनोंमें से थोड़े मेरे पास थे। अुन्हें मैंने माता तथा पिताजीकी सहमतिसे पू० महात्माजीको अर्पण कर दिया — यह कहकर कि जिस दानको मेरी स्वर्गवासी मांका नाम दिया जाय।

अेक स्नेही मुझे बम्बअीमें मिले थे। वे पांडिचेरी जाकर श्री अरविन्दबाबूके दर्शन कर आये थे। अुनके कुछ अनुभव और मत मैंने पू० महात्माजीको पत्रमें बताये थे और श्री अरविन्दबाबूके बारेमें अुनकी राय भी पूछी थी।

अीश्वरका कौनसा स्वरूप आपको विशेष प्रिय है, यह प्रश्न भी पूछा था।]

बोरसद,
२८-५-'३५

चि० प्रेमा,

तुझे पौन घंटे कैसे ठहरना पड़ा? मगर मैंने यह नहीं सोचा था कि तू भाग जायगी। बहुत दिन बाद मिली, अिसलिओ कुछ सवाल पूछनेकी और जी भरकर तुझे देख लेनेकी अिच्छा थी। तू अपने स्थान पर पहुंच गओी, यह तो ठीक ही हुआ। अुस दिन तो यहां रही ही थी, अिसलिओ मनमें लोभ था।

अरविन्दबाबूके बारेमें मैं कुछ कहनेमें असमर्थ हूं। अितना ही कह सकता हूं कि मुझे अपना मार्ग फला है। हम जगतके काजी न बनें। हां, अितना स्वीकार करें कि अनुकी छायामें रहनेवाले २०० लागोंमें अैसे भी हैं जिनके जीवनमें अुनके सम्बन्धसे महान परिवर्तन हुओ हैं।

सब अपने अपने स्वभावका अनुसरण करते हैं।

पश्चिममें व्यक्तिगत जीवनकी पवित्रताकी आवश्यकता नहीं मानी जाती, यह कहना पूरी तरह सही नहीं है। यह बात भी नहीं कि हमारे यहां सभी लोग अुसकी आवश्यकताको मानते हैं। हम केवल अुसकी आवश्यकताको ही स्वीकार नहीं करते, बल्कि यह मानते हैं कि अन्तःशुद्धिरहित बुद्धिसे होनेवाले कार्य कितने ही सुन्दर क्यों न लगते हों, तो भी अुनमें स्थायित्व कभी नहीं रहेगा। तात्कालिक परिणामोंके आधार पर अैसे कार्योंकी तुलना की ही नहीं जा सकती। हां, जिनका नीतिके साथ संबंध न हो अुन कार्योंमें अन्तःशुद्धिकी जरूरत नहीं होती। व्यभिचारी बढ़ओी समकोणवाली मेज बना देगा। परन्तु अन्तःशुद्धिरहित मनुष्य अस्पृश्यताको नहीं मिटा सकता, न वह लोगोंको चरखेकी तरफ मोड़ सकता है, क्योंकि दोनोंमें हृदयकी जरूरत होती है। अैसे कामोंमें समयकी गिनती कामकी नहीं होती। सत्यनिष्ठासे किये गये कामोंके परिणाम अवश्य आयेंगे, अिस बारेमें शंका ही नहीं हो सकती। अितना विश्वास न हो तो हम नीतिकी रक्षा कभी कर ही नहीं सकते।

ओीश्वर तो कल्पनातीत है। अिसलिओ हम जिसे भजते हैं वह हमारी कल्पनाका ओीश्वर है। सच्चे ओीश्वरको किसीने देखा नहीं। जिन्होंने

देखा है मैं भी अुसका वर्णन नहीं कर सके हैं। मुझे कौनसा स्वरूप विशेष प्रिय है, यह कहना कठिन है। परन्तु जिस स्वरूपको मैं पूजता हूं अुसका नाम सत्य है। वह मूर्त अमूर्त है। अनेक प्रकारसे प्रगट होता है। पूर्ण स्वरूप अपूर्ण (मानव) को भला कैसे दिखाओ दे?

गहनोंकी बात कहीं भी (छपनेके लिअे) नहीं भेजूगा। मेरी डायरीमें तो अुसका अुल्लेख हो गया है। तेरे पत्रके बाद नयी नोंध लिखी जायगी; वह तो तेरी भावनाके लिअे रहेगी। तू जितना ही चाहती है न?

खादी आयेगी तब अुसका अुपयोग करूंगा।

लीलावती राजकोटसे आओ है। अिस बार अुसका शरीर खूब अच्छा हो गया है। वजन भी बढ़ा है। और खुश मालूम होती है।

यहांसे ३१ तारीखको रवाना होकर २ तारीखको वर्धा पहुंचनेका विचार है।

बापूके आशीर्वाद

दुबारा नहीं पढ़ा।

१६३

[अुस समयके अेक अंग्रेजी समाचार-पत्रमें खबर आओ थी कि अेक यूरोपियन नटीने अपने पतिको पिस्तौल चलाकर मार दिया। वह कैंसरसे बहुत पीड़ित था और डॉक्टरोंने यह विश्वास दिला दिया था कि वह जियेगा नहीं। वह असह्य यातना झेलकर मरे अिसकी अपेक्षा अुसीकी अिच्छानुसार अुसे मार डालनेमें अुसका हित है, अिस भावनासे नटीने अुसे मार डाला। अुस नटी पर मुकदमा चला, परन्तु अदालतने अुसे निर्दोष घोषित करके छोड़ दिया। अिस घटनाके बारेमें मैंने पू० महात्माजीकी राय पूछी थी।

जब मैं बम्बअी गयी तब विल्सन कॉलेजके प्रिंसिपालसे मिलने गओ थी। वहां कुछ यूरोपियन सज्जन मिले। बातों-बातोंमें वे पू० महात्माजीकी आलोचना करने लगे और पं० जवाहरलालजीके विचारोंकी तारीफ

करने लगे। पू० महात्माजीके विचार अुन लोगोंको मैं अच्छी तरह समझा न सकी, अुससे मुझे जो दुःख हुआ वह मैंने अुन्हें लिखकर बताया था।]

वर्धा,
२१-९-'३५

चि० प्रेमा,

तेरे बढ़िया पत्रका अुत्तर तुरन्त नहीं दिया जा सकता था। दायां हाथ आराम चाहे तब काम पूरा हो ही नहीं सकता।

मेरी बातें अैसी नहीं होतीं जिन्हें लिखकर पूछूं। अैसी बातें तो मैं (मिलने पर) पूछ ही लेता हूं। अिससे अुस समय पूछनेकी बातें अुसी समय खतम हो जाती हैं।

(तूने) बारसद ले जानेमें (अुद्देश्य यह था कि वहांका काम तू देख ले तो) भविष्यमें अैसा काम करनेमें तुझे सरल मालूम हो, मुझे भी बताना था कि महामारीके निवारणमें भी मेरा हाथ था ही।

भूकम्पका पापके साथ क्या संबंध है यह तो 'हरिजन' में लिख चुका हूं। अुसे पढ़ लेना। बिहारमें किसीका कोप नहीं आया था, अितना ही नहीं सबने समझ लिया था कि यह पापका फल है। अैक्य (विश्वारैक्य) के सिद्धान्तसे यह सब फलित होता ही है।

सर्पादिके विषयमें भी 'हरिजन' में लिखा है। वह पढ़ लेना। आजकल लिखे जानेवाले 'हरिजन' के लेख न पढ़ती हो तो अुन्हें ध्यानपूर्वक पढ़नेकी मेरी सिफारिश है। तेरे पास आता तो है न?

जो पति अत्यंत दुःख पा रहा है, जो सबासे भी शांत नहीं हो सकता, अुसकी मृत्यु साधनेमें मैं पाप नहीं देखता। परन्तु पति भानमें हो तो अुसे पूछ लेना चाहिये। वह अति दुःख पाते हुअे भी जीना चाहे तो अुसे जीने देना चाहिये।

मालिक ट्रस्टी बनें अिसका अर्थ यह है कि अपनी कमाअीका अमुक भाग रखकर बाकी सब गरीबोंको अर्थात् राज्यको अथवा अैसी ही लोकोपयोगी संस्थाको दे दें।

सब लोग अपनी कमाअी राज्यको दे दें तो किसीको साहस करनेकी प्रेरणा न मिले और मनुष्य केवल जड यंत्र बन जाय।

धनिक लोगोंके साथ मेरा संबंध रहने ही वाला है। अुन्हें मैं दुष्ट नहीं मानता। और गरीबोंको फरिश्ते नहीं मानता। पूर्व और पश्चिममें बहुतसे अैसे धनिक मौजूद हैं, जो परोपकारके लिअे कमाते हैं। वे पूजाके योग्य हैं। मैं अैसे बहुतसे गरीबोंको जानता हूं जिनका संग त्याज्य है। मेरी कल्पनाके स्वराज्यमें शेर और बकरी अेक सरोवरमें अेक ही समय पानी पियेंगे। यह निरी कल्पना ही रहे, तो भी क्या? मुझे क्या चाहिये यह भी मैं न जानूं तो मैं प्रयत्न किसके लिअे करूंगा?

यह तो सच है कि मैं मनुष्योंको अच्छी तरह परखता नहीं; परन्तु दूसरे जो परखनेका दावा करते हैं वे भी कहां परखते हैं? अिसलिअे अपने अज्ञानके लिअे मुझे खेद नहीं है। मनुष्योंको नहीं परखता, अिसीलिअे अुन पर विश्वास रखता हूं।

तुझे कोअी पूछे तब मेरे विषयमें तुझे अुत्तर देना ही चाहिये, यह जरूरी नहीं है। तू अैसा क्यों नहीं कहती? "मुझे जवाब देना नहीं आता। अुनका काम और विचार मुझे पसन्द हैं। जो हमें पसन्द हो अुसके पसन्द होनेके कारण हमेशा थोड़े ही बताये जा सकते हैं? अिसलिअे प्रश्न तो आप अुनसे ही पूछिये।" अिस प्रकारका अुत्तर दे तो बहुतसी झंझटोंसे बच जाय। मुझसे ली हुअी होने पर भी जिस वस्तुको तू पचा सकी हो वह तो तू जरूर दूसरोंको देना। परन्तु जो वस्तु हमने पचा ली वह दूसरेकी नहीं, हमारी ही हो गअी। जो हमारी हो गअी हो अुसके बारेमें शंका नहीं होती और अुसके बारेमें हमारे पास जवाब भी बहुत होते ही हैं।

आज अितना ही काफी है।

बापूके आशीर्वाद

१६४

वर्धा,
११-७-'३५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी अभी मिला। तेरी वर्षगांठके दिन लिखा गया पत्र है, अिसलिअे आशीर्वाद तो तू ले ही ले।

कैसी है? कौनसी वर्षगांठ है, यह तो तू लिखती ही नहीं। तेरी शुभकामनायें अवश्य पूरी होंगी। शुभ प्रयत्न करनेवालोंके प्रयत्न निष्फल होते ही नहीं। और अशुभ प्रयत्न करनेवालोंके कभी फलते ही नहीं। फलते दीखते हैं वह केवल आभासमात्र है।

दूसरा अवकाशसे।

बापूके आशीर्वाद

१६५

[मालवडके हरिजनोंमें से महारोंकी बस्तीमें मैंने अेक सेवाकार्य किया था। अुसका वर्णन पू० महात्माजीको पत्रमें लिख भेजा था।]

वर्धा,
१३-८-'३५

चि० प्रेमा,

पत्रोंको निपटानेके लिअे आज मैंने अढ़ाअी घंटेका मौन लिया है। अभी अेकके बाद अेक पत्रका अुत्तर देते हुअे तेरा ९-७-'३५ का पत्र मेरे हाथमें आया है।

केलकर[1] से मिली, यह बहुत अच्छा किया। अुन्हें तेरा काम देखने ले जाय तो अच्छा हो।

---

१. स्व० श्री नरसिंह चिन्तामणि केलकर। लोकमान्य तिलक महाराजके अवसानके बाद वर्षों तक महाराष्ट्र कांग्रेसके नेता।

१०-९-'३५

चि० प्रेमा,

राखी समय पर मिल गअी थी।

जुम्मरके कागज मिले। अच्छे थे। मुझसे जिसे अधिक आवश्यकता थी अैसी खुरशेदबहन[1] को वह जत्था दे दिया।

खादी मिल गअी। अुसका अुपयोग करूंगा। सूत अिकट्ठा तो हो रहा है। अिस पर बहुतोंकी नजर पडती रहती है। और मेरी कताअी भी कितनी? १६० तार हो जायें वह दिन मेरे लिअे आनंदका दिन होता है।

आज तक तो मैं यही समझा हू कि देशी कलमें बहुत आती हैं। जिससे मैं लिख रहा हू वह देशी मानी जाती है। तलाश करूंगा।

समाजवादियोंमें बहुतसे भले हैं, कुछ त्यागी हैं, कुछ तीव्र बुद्धिवाले हैं, कुछ ठग हैं। लगभग सभी पश्चिमके रंगमें रंगे हुअे हैं। किसीको भारतके गावोंका सच्चा परिचय नहीं, शायद अुसकी परवाह भी नहीं है।

तेरी रसोअी पसन्द आअी, यह गनीमत है।

लक्ष्मीबाअी ठुसे[2] का नाम तो याद नहीं।

काकाने तुझे न्यौता दिया है। लेकिन तेरा धर्म तो वहीं रहनेका है। मैंने अपने विचार नहीं बदले हैं। तुझे लालच दिया गया, अिससे देव अस्वस्थ हो गये हैं। अुन्हें मेरी ओरसे निर्भय कर देना। तेरी ओरसे तो वे निर्भय हैं ही।

हिटलरकी बात मुझे भी लगभग वैसी ही लगी है जैसी तू कहती है।

---

१ स्व० श्री दादाभाअी नवरोजीकी पौत्री और बहुत वर्षों तक पू० महात्माजीकी अेकनिष्ठ अनुयायी।

२ पूनाकी पुरानी कांग्रेस कार्यकर्त्री। सत्याग्रहमें अुन्होंने जेल भुगती थी। १९३७ के चुनावमें कांग्रेसकी तरफसे बम्बअी असेम्बलीकी सदस्या चुनी गअी थीं। सासवड आश्रममें दो वर्ष तक प्रति सप्ताह आती रही थीं। विशेषत. अुन्होंने हरिजनोंकी वैद्यकीय सेवा की थी।

[सासवडमें बहनोंके काते हुओ सूतकी खादी आश्रममें बुनवाकर सबकी अिच्छानुसार पू॰ महात्माजीके लिअे भेंटके रूपमें भेजी थी। पू॰ महात्माजी अपना सूत मुझे देनेका आश्वासन वर्षोंसे दे रहे थे, परन्तु वह अभी तक मेरे हाथमें नहीं आया था। अुससे पहले सासवडसे खादीकी भेंट अुनके लिअे रवाना हुअी।

पू॰ महात्माजी लिखते समय हाथके कागज और मोटी कलमका अुपयोग करने लगे। मैं पूनामें कलम खरीदने अेक स्वदेशी दुकानमें गअी थी। वहां दुकान-मालिकने (जो कांग्रेसी कार्यकर्ता थे) कहा कि "कलमें सब अरबस्तानसे आती हैं, भारतमें नहीं बनतीं।" यह बात मैंने पू॰ महात्माजीको पत्रमें लिख भेजी थी।

श्री जमनालालजीकी ओरसे काकासाहबने मुझे महिलाश्रमके संचालनकी जिम्मेदारी लेनेके बारेमें अनेक दलीलोंके साथ समझाया। यह काम करना मेरा धर्म है, अैसी भाषा भी अुन्होंने काममें ली। मैं स्वयं तो ग्रामसेवाका कर्तव्य छोडनेको राजी थी ही नहीं। परन्तु शायद काकासाहबको पू॰ महात्माजीका समर्थन मिलेगा, अिस कल्पनासे श्री शंकररावजी अस्वस्थ हो गये थे। वे मानते थे कि मैं सासवड आश्रम छोडकर चली जाअूंगी, तो यहांके कामको नुकसान पहुंचेगा। अिसलिअे पू॰ महात्माजीने अुन्हें आश्वासन देकर निर्णय किया।

हिटलरकी स्वलिखित पुस्तक 'My Struggle' मैंने पढ़ ली थी और हिटलरके बारेमें अेक रूसी पुस्तक भी मैंने पढ़ी थी। पू॰ महात्माजीको मैंने यह बात बताअी थी। वे भी जिज्ञासासे ये पुस्तकें पढ गये।

महाराष्ट्र प्रान्तीय कांग्रेस समितिने किसानोंकी हालतका अध्ययन करनेके लिअे अेक किसान-समिति अुस समय नियुक्त की थी। यह समिति अुस अर्सेमें सासवड आअी थी। समितिके कुछ सदस्य समाजवादी थे। आश्रममें ग्रामोद्योगी रसोअी बनी, जो अुन्हें पसन्द आअी थी।]

वर्धा,
१०-९-'३५

चि० प्रभा,

राखी समय पर मिल गओी थी।

जुग्नरके कागज मिले। अच्छे थे। मुझसे जिसे अधिक आवश्यकता थी अैसी खुरशेदबहन[1] को वह जत्था दे दिया।

खादी मिल गओी। अुसका अुपयोग करूंगा। सूत अिकट्ठा तो हो रहा है। जिस पर बहुतोंकी नजर पड़ती रहती है। और मेरी कताओी भी कितनी? १६० तार हो जायें वह दिन मेरे लिअे आनंदका दिन होता है।

आज तक तो मैं यही समझा हूं कि देशी कलमें बहुत आती हैं। जिससे मैं लिख रहा हूं वह देशी मानी जाती है। तलाश करूंगा।

समाजवादियोंमें बहुतसे भले हैं, कुछ त्यागी हैं, कुछ तीव्र बुद्धिवाले हैं, कुछ ठग हैं। लगभग सभी पश्चिमके रंगमें रंगे हुअे हैं। किसीको भारतके गांवोंका सच्चा परिचय नहीं, शायद अुसकी परवाह भी नहीं है।

तेरी रसोओी पसन्द आओी, यह गनीमत है।

लक्ष्मीबाओी ठुसे[2] का नाम तो याद नहीं।

काकाने तुझे न्यौता दिया है। लेकिन तेरा धर्म तो वहीं रहनेका है। मैंने अपने विचार नहीं बदले हैं। तुझे लालच दिया गया, जिससे देव अस्वस्थ हो गये हैं। अुन्हें मेरी ओरसे निर्भय कर देना। तेरी ओरसे तो वे निर्भय हैं ही।

हिटलरकी बात मुझे भी लगभग वैसी ही लगी है जैसी तू कहती है।

---

१. स्व० श्री दादाभाओी नवरोजीकी पौत्री और बहुत वर्षों तक पू० महात्माजीकी अेकनिष्ठ अनुयायी।

२. पूनाकी पुरानी कांग्रेस कार्यकर्त्री। सत्याग्रहमें अुन्होंने जेल भुगती थी। १९३७ के चुनावमें कांग्रेसकी तरफसे बम्बओी असेम्बलीकी सदस्या चुनी गओी थी। सासवड आश्रममें दो वर्ष तक प्रति सप्ताह आती रही थीं। विशेषतः अुन्होंने हरिजनोंकी वैद्यकीय सेवा की थी।

मेरी विचारसरणीमें रही अेक बात याद रखी जाय तो सब कुछ समझमें आ जाय। मेरी तटस्थता परिणामके कालके बारेमें है, कायके बारेमें कभी नहीं। परिणामके बारेमें भी नहीं। धनिक धन छोड़ें या न छोड़ें, यह कहनेमें परिणामके विषयमें लापरवाही नहीं है, अुसके विषयमें निश्चिन्तता है। हमारा कदम ठीक होगा तो आगे पीछे अेक ही परिणाम आयेगा और अवश्य आयेगा।

बन्दरसे मनुष्य पैदा होनेकी बात मेरे गले नहीं अुतरती। वैसे मनुष्यका देह धारण करनेवाले जीवने बानरादिकी देह जरूर धारण की है, अिस बारेमें शंका नहीं।

आततायीको मारनेकी बात मुझे पसन्द नहीं। आततायी किसे माना जाय? हत्यारे वगैरा लोगोंको जेलमें डालना पड़ेगा, अिसे फिल-हाल तो मैं मानता हूं। परन्तु यह अहिंसा है, अैसा कभी कहनेका मुझे स्मरण नहीं है मेरी यह मान्यता तो है ही नहीं। मैंने यह कहा है कि आजकी परिस्थितिमें यह अनिवार्य हो सकता है। अिसका अर्थ अितना ही है कि मेरी अहिंसा अभी बहुत अपूर्ण है और अिसलिअे अैसी हिंसाका अुपाय मुझे मिला नहीं है। पतनको पतनके रूपमें देखनेमें ही सत्य है।

अहिंसाके बिना प्राप्त की हुअी सत्तामें दरिद्र-नारायणका स्वराज्य हो ही नहीं सकता। स्वराज्य प्राप्तिमें जिस हद तक अहिंसा होगी, अुसी हद तक दरिद्रोंकी दरिद्रता मिटेगी। पूर्ण अहिंसा तो न मुझमें है, न तुझमें या और किसीमें है। परन्तु अहिंसाको माननेवाले रोज अधिक अहिंसक बनेंगे और अिससे अुनका सेवाक्षेत्र बढ़ता जायगा। हिंसाके पुजारीका क्षेत्र संकुचित होता जायगा और अंतमें अपने तक ही सीमित रह जायगा।

केलकरको निमंत्रित किया, यह अच्छा किया।

बापूके आशीर्वाद

बा देवदासको लेकर शिमला गअी है। देवदास काफी बीमार था। अिस समय यहां काफी लोग रोगशय्या पर पड़े हैं। मीरा बीमार है। अमतुलसलाम भी बीमार ही कही जायगी। नीमू और अुसके बच्चे मेरे साथ ही हैं। लक्ष्मी दिल्लीसे आज आ रही है। मद्रास जायगी। प्रभा यहीं है।

[मैं सासवड रहने गअी तबसे पहले दो वर्षमें मैं किसानोंमें अितनी घुलमिल गअी थी कि अुनके साथ खेतोंमें काम तो करती ही थी, लेकिन दो बार अेक किसान भाअीकी झोपडीमें अुनके और अुनकी पत्नीके साथ रहने भी गअी थी। अेक बार अेक महीने तक रही और दूसरी बार पद्रह दिन तक। वह झोपडी बहुत ही सुन्दर थी। और आसपासका प्रदेश अितना रमणीय था तथा वहाका मेरा जीवन भी अितना स्वाभाविक था कि अुसका वर्णन पू० महात्माजीको लिखे बिना मुझसे रहा नही गया। अुसके अनुसन्धानमें पू० बापूजीने अिस पत्रमें लिखा कि "कोठरीका वर्णन आकर्षक है। तेरा द्वेष करनेके बहुतसे कारण है।"

पू० महात्माजीसे मैं मिली तब 'द्वेष' शब्दका अर्थ मैंने पूछा। श्री महादेवभाअी पास ही थे। पू० महात्माजीके मनमें 'अीर्ष्या' की भावना थी। परन्तु 'द्वेष' शब्दमें मैंने कहा कटुता है, और महादेवभाअी भी मुझसे सहमत हुअे। परन्तु पू० महात्माजी अपनी भूमिका पर अटल रहे। कहने लगे, "नही, 'द्वेष' शब्द ही ठीक है।"

पू० महात्माजी टहलते समय लडकियोंके कधो पर हाथ रखकर चलते थे। अिस रिवाजका त्याग अुन्होने अिस समय किया था। अुस त्यागका पत्रमें अुल्लेख है।]

दुबारा नही पढ़ा।

वर्धा,
२८-९-'३५

चि० प्रेमा,

आज लिखाना ही पडेगा। दाया हाथ केवल सोमवारको 'हरिजन' के लिअे काममें लेता हू। बाकी दिनोंमें बायें हाथसे लिखता हू। अैसा करनेमें समय तो लगता है। अिसके सिवा तेरे पत्रका अुत्तर तुरन्त देना चाहिये। १६ तारीखके आसपास जरूर आना। थोडा थोडा करके जितना चाहिये अुतना समय तुझे दूगा। घूमते समय दू तो चलेगा न?

यहा तू आये तब रहनेके दिन तय करके न आये तो अच्छा। दो दिन अधिक लगें तो भले ही लग जाय। यहा फैले हुअे सब काम तू धीरे धीरे देखे तो अच्छा होगा और बातें भी अलग अलग समयमें होंगी तो ज्यादा अच्छा रहेगा।

मेरा सूत प्रभावतीने अिकट्ठा कर रखा है। भेजनेको भी मैंने अुससे कह रखा है।

तेरी प्रेरणासे हिटलरकी पुस्तक पढ़ रहा हू। लेनिनके विषयमें भी मेक्स्टनकी लिखी हुअी पढ़ी। हिटलरके बारेमें अेक और पुस्तक मगा रखी है।

कोठरीका वर्णन आवश्यक है। तेरा द्वेष करनेके बहुतसे कारण हैं।

मुझे विश्वास है कि मेरे त्याग[1] का सारा हाल तू जानेगी तब तू भी मुझसे सहमत होगी।

जमनालालजी बहुत करके दूसरी या तीसरी तारीखको आ जायेंगे।

मुझे तो अैसा याद है कि तेरे दोनो प्रश्नोके अुत्तर मैं अपने पिछले पत्रमें दे चुका हू। लेकिन तेरे अिस पत्रमें अपने अिस पत्रका कोअी अुल्लेख नही देखता। अुत्तर दुबारा सक्षेपमें दे रहा हू।-

जिन्हें कोढ़ आदि रोग हो जाय अुन्हें जबरन नपुसक बनानेकी प्रथाको पसन्द करनेमें अमुक आपत्तिया आती है। अिससे अनेक प्रकारके अनर्थ पैदा होनेकी सभावना है। फिर किसी भी रोगको असाध्य मान लेना भी ठीक नहीं। सयमका प्रचार करके जितना फल पैदा किया जा सके अुतनेसे सतुष्ट रहना ही मुझे तो सुरक्षित लगता है। पग पग पर मुझे कायरताकी गध आती है। कायर कतवैया सूतमें पडी हुअी गाठको चाकूसे निकालेगा। कुशल कतवैया धीरज और कलासे गाठ खोलेगा और सूतको अविच्छिन्न रखेगा। अहिंसक मनुष्य असाध्य मानी जानेवाली व्याधिसे पीडित लोगोके लिअे अैसा ही कुछ अुपाय करेगा।

विदेशोमें हमारा नियमित प्रचार-कार्य मुझे तो रेलगाडीके साथ बैलगाडीकी प्रतियोगिता जैसा लगता है। हम यदि प्रचार-कार्यमें सच्ची बात पर अेक हजार खर्च कर सकते हो, तो प्रतिपक्षी करोड खर्च करनेका

---

[1] पाठक परिशिष्टमें यह लेख देख लें।

सामर्थ्य रखता है। अिसलिअे मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हमें अपने आप होनेवाले प्रचार-कार्यसे संतोष मान लेना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

१६८

[ता० २२-९-'३५ के 'हरिजनबन्धु' में महात्माजीका 'अेक त्याग' नामक लेख प्रकाशित हुआ। वह लड़कियोंके कधे पर हाथ रखनेका रिवाज छोड़ देनेके बारेमें था। अुस लेखके कारण लोगोंमें चर्चा हुआी थी। अुसके बाद दिसम्बरमें पू० महात्माजी खूनके दबावसे बीमार हो गये। दस सप्ताहका अनिवार्य आराम लेनेके बाद अच्छे हुअे। तब ता० १-३-'३६ के 'हरिजनबन्धु' में अुनका 'प्रभु-कृपाके बिना सब मिथ्या' नामक लेख छपा। अिस लेखसे भी समाजमें चर्चाका बवडर खड़ा हुआ। अिस बीच मैंने सुना कि 'पूनाके अेक महाराष्ट्रीय प्रोफेसरने पू० महात्माजीको अेक पत्र लिखा है।' अुसका आशय भी कुछ हद तक जाननेको मिला। अिस पर मैंने पू० महात्माजीको लिखकर पूछा कि, "पत्रकी बात सच है या झूठ?"

सासवड़की दो विवाहिता बहनोंने मुझे अपने अनुभव बताये थे। अेक बहनने पतिके साथ चार वर्ष तक और दूसरीने पांच वर्ष तक ब्रह्मचर्यका पालन किया था।]

६-५-'३६

चि० प्रेमा,

अब तू पत्र लिख सकती है। हम ८ तारीखको नदीदुर्ग जा रहे हैं।

मालूम होता है तूने अच्छे अनुभव लिये हैं। हमारे मनमें शंका आनेसे हम जो लोग कांग्रेसके सदस्य-पत्र पर हस्ताक्षर करें अुन्हें मना नहीं कर सकते। बहाने बनाकर तो मनुष्य (कांग्रेसमें) शरीक होंगे ही। अन्तमें अच्छे आदमी अधिक होंगे तो सब कुशल ही होगा।

महाराष्ट्रीय प्रोफेसरके पत्रकी बात बिलकुल सच्ची है। मगर अुनकी कल्पना सर्वथा असत्य है। लड़कियोंके कंधे पर हाथ रखकर मैं अपनी विषय-वृत्तिका पोषण करता था, अैसा अुन लेखकके पत्रका अर्थ किया जा सकता है। अुनका कहना तो भिन्न ही था।

परन्तु बात यह है कि लड़कियोंके कंधे पर हाथ रखना मैंने बंद किया अुसके साथ मेरी विषय-वासनाका कोअी संबंध नहीं। अुसकी अुत्पत्तिका कारण केवल बेकार पड़े पड़े खाते रहनेमें था। मुझे स्राव हुआ। परन्तु मैं जाग्रत् था और मन अंकुशमें था। मैं कारण समझ गया और तबसे डाक्टरी आराम लेना मैंने बन्द कर दिया। और अब तो मेरी स्थिति जैसी थी अुससे अच्छी कही जा सकती है। अिस बारेमें तुझे अधिक पूछना हो तो पूछ सकती है, क्योंकि तुझसे मैंने बड़ी आशायें रखी हैं। अिसलिअे तू मेरे विषयमें जो कुछ जानना हो वह मुझसे जान ले।

अभी अभी मैंने जो लेख लिखे हैं[1], वे सचमुच विचार करने लायक हैं। यदि तू अुन्हें समझ गयी हो तो ब्रह्मचर्यका मार्ग सरल हो जाता है। जननेन्द्रिय विषय-भोगके लिअे हरगिज नहीं है, यह यदि स्पष्ट हो जाय तो सारी दृष्टि बदल जायगी न? जैसे कोअी रास्तेमें क्षय रोगीके खूनके बलगमका मणि मानकर अुसे हथियानेका लालचाये और वह बलगम है अैसा जानकर शान्त हो जाय, वैसी ही बात जननेन्द्रियके अुपयोगके विषयमें है। बात यह है कि यह मान्यता अितनी दृढ़ या स्पष्ट कभी थी नहीं। *और अब तो नअी शिक्षा जिसकी निन्दा करती है, मर्यादित* विषय-सेवनको सद्गुण मानती है, और अुसे आवश्यक बताती है। अिन सब बातों पर विचार करना।

बहनोंका जो अनुभव तूने भेजा है वह सुन्दर कहा जायगा।

अभी तो अितना काफी है।

कदाचित् लीलावती तेरे पास आ जायगी।

बापूके आशीर्वाद

---

१. पाठक वे लेख परिशिष्टमें देख लें।

१६९

[पू० महात्माजीका ता० १–३–'३६ का लेख (देखिये परिशिष्ट–२) पढनेके बाद आचार्य भागवतके और मेरे बीच चर्चा हुअी। अुसमें 'स्वप्नावस्था' शब्द और जिसका अर्थ मुझे जाननेको मिला। 'यह सबको होता है', अैसा आचार्य भागवतका मत था। मैंने आग्रहपूर्वक कहा कि, "पू० महात्माजी छत्तीस वर्षसे ब्रह्मचर्य पालन कर रहे हैं। जिसलिये अुनके बारेमें यह सभव नही है।" आचार्य भागवतने जिसे स्वीकार नही किया और यह बात पत्रमें छेड़नेको अुन्होने मुझे प्रेरणा की। मैंने सकोचपूर्वक पत्रमें पूछा; जिसका विस्तृत अुत्तर पू० महात्माजीने जिस पत्रमें और जिससे पहलेके पत्रमें दिया। जिससे 'हरिजनबन्धु'के अुक्त लेखमें जो कुछ सदिग्ध था अुसका भी स्पष्टीकरण हो गया।

मैं साबरमतीके सत्याग्रह आश्रममें सेवाकी तालीम ले रही थी तबसे पू० महात्माजी समय समय पर मेरे पत्रोंमें अैसा लिखते रहते थे कि, "मैंने तुझसे बडी आशायें रखी है।" मेरी समझमें यह बात नही आती थी। मेरी नजरके सामने अुस समय 'देशकी आजादी' ही अेकमात्र ध्येय था और मैं मानती थी कि अुसकी प्राप्तिके लिअे मैं कुछ न कुछ सेवाकार्य कर दिखाअू, अितनी ही आशा पू० महात्माजी मुझसे रखते होंगे। बादमें मुझे पता चला कि पू० महात्माजी राजनीतिक कार्यक्रम बनाते समय जनताके सामने भले ही केवल सत्य और अहिंसा पर जोर देते थे, परन्तु आश्रमवासियोंके सामने वे ब्रह्मचर्यका विशेष आदर्श रखते थे (देखिये १३–२–'३३ का पत्र) और मुझसे भी वे यही अपेक्षा रखते थे। पहले तो मुझे यह सहज बात लगती थी। परन्तु आगे चलकर आश्रममें और बाहरके समाजमें सेवक-सेविकाओंके जीवनके विचित्र प्रसग आखोंके आगे आने लगे, तब मुझे बेचैनी होने लगी। और अब तो पू० महात्माजीके जीवनका प्रसग जानकर मुझे कुछ डर लगा।

मेरा स्वभाव तो भावना-प्रधान और कुछ अुच्छृंखल भी ठहरा। अिसलिअे मेरे मनमें अैसे विचार आते कि मेरे हाथसे कोअी अैसी बात हो जाय, जिससे पू० महात्माजीको भारी• दाक-सताप हो तो मेरी लज्जा और पीडा भी अपार होगी। अिसलिअे मैंने पू० महात्माजीसे प्रार्थना की कि, 'मुझसे आप बहुत बडी आशा न रखें। मैं प्रयत्नशील हू, परन्तु आपके आदर्श तक पहुचनेकी शक्ति मुझमें है, अैसा सपूर्ण विश्वास मैंने तो नही रखा है। भगवानको जो करना होगा वही करेगा," अित्यादि।]

नदीदुर्ग,
२१-५-'३६

चि० प्रेमा,

नदीदुर्गमें तो रोजकी डाक लगभग रोज निबट जाती है, अैसा कहा जा सकता है। तेरा १८ तारीखका पत्र कल शामको पढा। आज अुसका अुत्तर दे रहा हू।

तुझसे आशा तो जो रखता हू वही रखूगा। तू जैसा समझेगी और तेरी जितनी शक्ति होगी अुसके अनुसार तू करती रहेगी।

तूने प्रश्न ठीक पूछा है। और भी अधिक स्पष्टतासे पूछ सकती है। मुझे (स्वप्नमें) वीर्य-स्खलन तो हमेशा हुअे हैं। दक्षिण अफ्रीकामें वर्षोंका अन्तर पडा होगा। मुझे पूरा स्मरण नहीं है। यहा महीनोंका अन्तर होता है। स्खलन होनेका अुल्लेख मैंने अपने दो चार लेखोंमें किया है। यदि मेरा ब्रह्मचर्य स्खलन-रहित होता तो आज मैं दुनियाके सामने बहुत अधिक वस्तुअें रख सका होता। परन्तु जिसने पद्रह वर्षकी आयुसे लगाकर ३० वर्षकी आयु तक — भले अपनी स्त्रीके साथ ही सही — विषय-भोग किया वह ब्रह्मचारी बनने पर वीर्यको सर्वथा रोक सके, यह मुझे लगभग असभव जैसा जान पडता है। जिसकी सग्राहक-शक्ति पद्रह वर्ष तक दिन प्रतिदिन क्षीण होती रही हो, वह अेकाअेक यह शक्ति प्राप्त नहीं कर सकता। अुसका मन और शरीर दोनों दुर्बल बन चुके होते हैं। अिसलिअे मैं अपनेको बहुत अपूर्ण ब्रह्मचारी मानता हूं। परन्तु जहा पेड नहीं होते वहा अरड ही प्रधान होता है, वैसी ही मेरी स्थिति है। यह मेरी अपूर्णता दुनियाने जान ली है।

जिस अनुभवने मुझे बम्बअीमें सताया, वह तो विचित्र और दुःख-दायी था। मेरे स्खलन सब स्वप्नमें हुअे; अुन्होंने मुझे सताया नहीं। अुन्हें मैं भूल सका हूं। परन्तु बम्बअीका अनुभव तो जाग्रत् अवस्थामें हुआ। अुस अिच्छाको पूरा करनेकी तो मेरी वृत्ति बिलकुल नहीं थी; मुड़ना जरा भी नहीं थी। शरीर पर मेरा पूरा काबू था। परन्तु प्रयत्न करते हुअे भी अिन्द्रिय जाग्रत् रही। यह अनुभव नया था और अशोभनीय था। अिसका कारण मैंने बताया वही है।' वह कारण दूर होने पर (अिन्द्रियकी) जागृति बन्द ही हो गअी अर्थात् जाग्रत् अवस्थामें बन्द हो गअी।

मेरी अपूर्णताके बावजूद अेक वस्तु मेरे लिअे सुसाध्य रही है। वह यह कि मेरे पास हजारों स्त्रियां सुरक्षित रही हैं। मेरे जीवनमें अैसे अवसर आये हैं जब अमुक स्त्रियोंको, अुनमें विषय-वासना होते हुअे भी, अुन्हें या यों कहो कि मुझे अीश्वरने बचाया है। मैं सौ फीसदी मानता हू कि यह अीश्वरकी ही कृति थी। अिसलिअे अिस बातका मुझे कोअी अभिमान नहीं है। मेरी यह स्थिति मृत्युपर्यन्त कायम रहे, यही अीश्वरसे मेरी नित्य प्रार्थना रहती है।

शुकदेवकी स्थिति प्राप्त करनेका मेरा प्रयत्न है। अुसे मैं प्राप्त नहीं कर सका हू। वह स्थिति सिद्ध हो जाय तो वीर्यवान होते हुअे भी मैं नपुंसक बन जाअू और स्खलन असंभव हो जाय।

परन्तु ब्रह्मचर्यके बारेमें जो विचार मैंने हालमें प्रगट किये हैं, अुनमें कोअी न्यूनता नहीं है, न अतिशयोक्ति है। अिस आदर्श तक प्रयत्नसे कोअी भी स्त्री या पुरुष पहुंच सकता है। अिसका अर्थ यह नहीं कि अिस आदर्श तक मेरे जीते जी सारा संसार या हजारों मनुष्य भी पहुंच जायेंगे। अिसमें हजारों वर्ष लगने हों तो भले ही लगें, फिर भी यह वस्तु सत्य है, साध्य है, सिद्ध होनी ही चाहिये।

हिंसा फैली हुअी है। जगत असत्यसे भरा है। फिर भी जैसे सत्य और अहिंसा-धर्मके विषयमें शंका नहीं, वैसे ही ब्रह्मचर्यके विषयमें भी कोअी शंका नहीं है।

जो प्रयत्न करते हुअे भी जलते रहते हैं वे प्रयत्न नहीं करते। वे मनमें विकारोंका पोषण करते हुअे भी केवल स्खलन नहीं होने देना चाहते, स्त्री-संग नहीं करना चाहते, अैसे लोगों पर (गीताका) दूसरा अध्याय लागू होता है। वे मिथ्याचारी माने जायेंगे।

मैं अभी जो कर रहा हूं वह विचारशुद्धि है।

आधुनिक विचार ब्रह्मचर्यको अधर्म मानता है। अिसलिअे कृत्रिम अुपायोंसे संततिको रोककर विषय-सेवनका धर्म पालना चाहता है। अिसके विरुद्ध मेरी आत्मा विद्रोह करती है।

विषयासक्ति जगतमें जरूर रहेगी, परन्तु जगतकी प्रतिष्ठा ब्रह्मचर्य पर निर्भर है और रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

१७०

[सन् १९३६ के दिसम्बरमें कांग्रेसका अधिवेशन महाराष्ट्र प्रान्तके फैजपुर गांवमें करनेका निश्चय हुआ था। श्री शंकररावजीके आग्रहके कारण कांग्रेस अधिवेशनके लिअे स्वयंसेविका-दलका संगठन करनेकी जिम्मेदारी मैंने स्वीकार की और अुसके बारेमें पू० महात्माजीको लिखा। अुन्होंने कांग्रेस-अधिवेशनके समय तक काम करनेकी अनुमति दे दी।

पू० महात्माजी पत्रोंके लिअे जो हाथ-कागज काममें लेते थे और ग्रामोद्योगी स्याही अिस्तेमाल करते थे, अुससे अक्षर साफ नहीं दिखाअी देते थे, पढ़नेमें बड़ी दिक्कत होती थी। यह शिकायत मैंने महात्माजीसे की थी। फिर थोड़े महीने बाद मैंने जुन्नरके बढ़िया कागज अुन्हें भेजे थे —यह बताकर कि मुझे लिखे जानेवाले पत्रोंके लिअे अिस कागजका अुपयोग किया जाय। परन्तु अुन्होंने वे सब खुरशेदबहनको दे दिये।

श्री महादेवभाओी अेक दिन सवेरे प्रो० त्रिवेदीके साथ सासवड़ आकर मुझसे आश्रममें मिल गये। अुस समय अुन्होंने मुझसे कहा कि, "मैंने 'खुदाओी खिदमतगार' नामक पुस्तक गुजरातीमें लिखी है। अुसका मराठी अनुवाद आप करें।" श्री शंकररावजी अुस समय वहीं थे। अुन्होंने प्रकाशनकी सुविधा कर देनेका विश्वास दिलाया। पुस्तकका अनुवाद पूरा हो जानेके बाद मैंने पू० महात्माजीसे अुसके लिअे चार पंक्तियोंकी प्रस्तावना लिख भेजनेकी प्रार्थना की थी।]

सेगाव-वर्धा,
२४-६-'३६

चि० प्रेमा,

कांग्रेस-अधिवेशन तक यह काम करना ठीक है।

कागज संबंधी तेरा अुलाहना अुचित है। यह कागज तो ठीक है न?

आटा, चावल, तेलके बारेमें धीरज रखकर प्रचार करती ही रहना। ये चीजें महंगी होने पर भी सस्ती समझी जायं। हम नया अर्थशास्त्र बना रहे हैं। देश देशका अर्थशास्त्र अलग होता है। अिसके सिवा, गरीब और अमीरका अर्थशास्त्र भी अलग अलग होता है। अिसलिअे तू हारना मत।

बाजरेकी बात मैं जानता हूं। बीज कैसा भी क्यों न हो, तो भी मिट्टी, पानी आदि अनुकूल न होने पर बीज अपना गुण खो देता है।

यह है चार पंक्तियोंकी प्रस्तावना:

'खुदाओी खिदमगार' अेक अैसी पुस्तक है जिसका अनुवाद हिन्दकी सब भाषामें होना चाहिये। गुजराती, अुर्दू, हिन्दीमें तो हो ही गया है। संभव है दूसरीमें भी होगा। अुचित ही है कि अब मराठीमें भी अनुवाद निकला है और अधिक हर्षकी बात यह है कि यह अनुवाद अेक सेविकाने किया है। अिस शुभ प्रयत्नके लिअे अनको धन्यवाद। मेरी आशा है कि महाराष्ट्रकी जनता

'दो खुदाओी खिदमतगार' अर्थात् ओीश्वरभक्तके चरित्रको प्रेमसे पढ़ेंगे।[1]

मो० क० गांधी

किसी समाधिस्थ मनुष्यके जीनेके बारेमें श्रद्धा न बैठे तब तक अुसे मृतदेह मानकर अग्नि-संस्कार करनेके प्रयत्नमें जितना तथ्य हो सकता है, अुतना ही ओीश्वर पर श्रद्धा बैठने तक नास्तिक होनेमें है।

भावना और श्रद्धामें भेद हो तो भावना न होने पर भी श्रद्धा जमानेके लिओ प्रामाणिक रूपसे प्रार्थनामें बैठनेमें लाभ है।

जगली लोगोंमें हम रहते हो तो अपने धर्मका प्रचार न करके नीतिधर्म (सदाचार) का प्रचार करें। जब अुनके हृदय-द्वार खुले तब अुन्हें (धर्मका) चुनाव करना हो तो करें। हम तो अुन्हे सभी धर्मोंका सामान्य ज्ञान करायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

१७१

[वर्षगाठके निमित्तसे मैंने महात्माजीके आशीर्वाद मागते हुओ भगवानसे प्रार्थना की थी कि अुनकी सच्ची शिष्या होनेका परमात्मा मुझे बल दे। पुत्रकी अपेक्षा योग्य शिष्यके सामने गुरु अपना हृदय खोल देता है और अपनी गुप्त विद्या भी अुसे दे देता है, अैसे किस्से पुराणो और सत-चरित्रोंमें मैंने पढे थे। अुनका हवाला देकर मैंने अुन्हें लिखा था कि, "श्री जमनालालजी जैसे आपको अपना पिता भले ही मानें। परन्तु मुझे लगता है कि जब तक मेरे पिता जीवित हैं तब तक दूसरे पिता ढूढनेकी मुझे जरूरत नही। आप तो महान गुरु हैं।"

सत्याग्रहाश्रममें सब अुन्हें "बापूजी" कहते थे। वहा 'महात्माजी' कहनेकी किसीको छूट नही थी। परन्तु मैं तो शुरूसे ही अुन्हे 'महात्माजी' कहकर पुकारती थी। मुझे अुन्होंने कभी रोका नही। अेक दिन शामको

[1] १. मूल प्रस्तावना हिन्दीमें ही है और यहा शब्दशः अुद्धृत की गयी है।

घूमते समय लड़कियोंने पूछा: "बापूजी, आप हमें आपको महात्माजी कहनेसे रोकते हैं, तो फिर प्रेमाबहनको क्यों नहीं रोकते?" अुन्होंने कोओी अुत्तर नहीं दिया। परन्तु मैंने ही अुत्तर दिया: "मेरी दृष्टिमें 'बापूजी' तो साधारण सम्बोधन है। अुनके जैसे अलौकिक पुरुषको सामान्य नामसे सबोधित करना मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं जब 'महात्माजी' कहती हूं तब अेक ही मूर्ति मेरी आखोंके आगे आती है। नाम अैसा होना चाहिये जो विशिष्ट व्यक्तिके लिअे ही काममें लिया जाय और जब काममें लिया जाय तब अेक ही मूर्ति आखके सामने खड़ी रहे।"

श्री बलवतसिंह और श्री मुन्नालाल दोनो साबरमतीके सत्याग्रहाश्रममें थे। बादमें सेवाग्राम आश्रममें शरीक हुअे। श्री बलवतसिंह वर्षोंसे राजस्थानमें गोसेवाका काम कर रहे है। अुन्होंने 'बापूकी छायामें'[1] पुस्तक लिखी है।

तुकड़े बुवा अर्थात् तुकड़ोजी महाराज। महाविदर्भके सत पुरुष, जो ओीश्वर-भक्ति और सर्वोदय-विचारका सगठित प्रचार वर्षोंसे कर रहे हैं।]

सेगाव-वर्धा,
२२-७-'३६

चि० प्रेमा,

तेरी जन्मतिथिके दिन लिखाया हुआ कार्ड मेरे पास पहुंच गया था। मेरे आशीर्वाद तूने मान लिये, यह ठीक किया। शिष्या बननेके लिअे तुझे काल्पनिक महात्मा बनाना पड़ेगा। जो अिस नामसे प्रसिद्ध है वह महात्मा तो है ही नहीं, परन्तु पिताका स्थान जरूर बहुतोंके लिअे पूरा करता है। और अितनेसे अुसे सतोष है। अनेक लोग अुसे पिता होनेका प्रमाण दें तो अुसे बड़ा सन्तोष होगा।

तेरा काम ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

मेरे साथ बा, मनु, लीलावती, बलवन्तसिंह और मुन्नालाल हैं। तुकड़े बुवा भी मेरे साथ रहते हैं।

---

१. नवजीवन प्रकाशन मदिर, अहमदाबादकी तरफसे प्रकाशित हुअी है।

[हिन्दू धर्मके बहुतसे सिद्धान्तोंको पू० महात्माजी नये रूपमें रखते थे, तो वे अेक नये ही पथकी स्थापना क्यों नहीं करते? यह अथवा अिसी प्रकारका प्रश्न मैंने अुनसे पूछा था।

ता० २२–७–'३६ का पत्र अेक कार्डमें समा जाता, अुसके लिअे लिफाफा क्यों काममें लिया गया और अधिक पैसे खर्च क्यों किये गये? यह मैंने पूछा था।

मेरा सवाल यह था "आप वर्णाश्रम धर्मको मानते हैं, परन्तु अुसमें तो विषमता है। पहले तीन वर्ण अूंचे कहलाते हैं और शूद्रोंके लिअे तीन वर्णोंकी परिचर्याको ही धर्मशास्त्रोंने धर्म बताया है। महाराष्ट्रमें श्री ज्ञानदेवसे लेकर श्री रामदास स्वामी तक सभी संतोंने यह विषमता अपने ग्रंथोंमें मान्य रखी है। 'शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता समदर्शिन' महापुरुषोंकी दृष्टि अैसी कैसे हो सकती है?" अित्यादि अित्यादि।]

सेगाव–वर्धा,
१०–८–'३६

चि० प्रेमा,

तीन पैसोंका कार्ड न लिखनेमें हेतु था।

तेरी राखी मेरे हाथ नहीं लगी। लगती तो मैं जरूर बांधता। परन्तु तूने भेज दी अिसलिअे अुसका रस अथवा पुण्य तुझे मिल गया।

तू नये नये काम हाथमें ले रही है, यह अच्छा है। तेरी पुस्तक अूपर अूपरसे देख तो जाअूंगा।

सेगांवके अनुभवोंमें वृद्धि तो कर सकता हूं, परन्तु अभी नहीं। न फुरसत है, न अिच्छा। अनुभव किसीको देने जैसे नहीं मानता।

जिस भाषाका मनुष्य अुपयोग करते हैं अुसका रूढ़ अर्थ तो होगा ही, परन्तु अुनका अपना अर्थ अुसमें जरूर होगा, जो आगे-पीछेके सबबसे घटाया जा सकता है। सत्यको सम्पूर्ण रूपमें किसीने जाना ही नहीं है, जिसलिअे जो मनुष्य जिस वस्तुको जिस रूपमें देखे अुसी रूपमें वह, यही अुसके लिअे सत्य है। भले ही वस्तुतः वह असत्य हो। अिसी प्रकार प्रत्येक युगमें अेक ही वस्तुके बारेमें विचार बदलते हैं और वे ही

अुस युगके लिअे सत्य माने जाते हैं। यह अर्थ अथवा विचार 'असतो मा सद् गमय' में समाया हुआ है।

जहां अूच-नीचका भाव अुड़ जाता है वहां शूद्र तीन वर्णोंकी सेवा करें, तो अुसमें मुझे दोष दिखाओ नहीं देता। शूद्रको कोओ बनाता [नहीं। तब यदि स्वाभाविक रूपमें] परिचर्या अुसका धर्म हो तो अुसे बदलनेका क्या प्रयोजन?[१] ब्राह्मण और भंगी पेटके लायक ही कमाते हों तो दोनोंमें भेद क्या? भंगीके ज्ञानी बननेमें कोओ रुकावट नहीं है। मेरी कल्पनाके वर्णमें ज्ञानका अेकाधिकार किसीका नहीं है। स्त्रियोंकी प्रार्थनाके श्लोकों[२] पर विचार करना। चार वर्णोंके सामान्य धर्म कौनसे हैं? ज्ञानदेव आदिके वचनोंमें अूच-नीच-भावका समर्थन करनेवाले वचन भले ही मिलें। किसी संतका न्याय अिस तरह अुसके दो चार वचनोंसे नहीं किया जाता। रामदासके बारेमें तू जो कहना चाहती है वह मैं जानता हूं। ये अुदाहरण अयोग्य सिद्ध हों तो भी मेरी दलीलको आंच नहीं आती।

तेरी प्रार्थना मैं स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि तूने अिस प्रार्थनाकी योग्यताका पूरी तरह विचार ही नहीं किया है। तू प्रचलित प्रवाहमें बह गओ है। तू, मैं और सब अपने अपने माता-पिताके चौकठेमें ही पड़े हैं। अुसे भूलकर नये कहलानेमें जितना अर्थ या अनर्थ है, अुतना ही पुराने चौकठेके त्यागमें है। अुसमें रहकर हम अनेक परिवर्तन कर सकते हैं। जिसीका नाम प्रगति या अुन्नति है। सर्वथा नये दीखनेका अर्थ है अुल्कापात या नया धर्म। हिन्दू धर्मके लिअे कहीं चौकठा होगा या नहीं? बच्चे रोज पानीमें नये अक्षर बनाते हैं और बनाते ही वे मिट जाते हैं। परन्तु अिसमें भी अुनके लिअे तो आनन्द है ही। अैसा ही आनन्द तू करना चाहती दीखती है। परन्तु पुराने चौकठेमें पले हुअे मुझ ६७ वर्षके बूढ़ेको तू पानीमें अक्षर लिखनेके लिअे कैसे खींच सकेगी? मैं तो किनारे

पर खडा तेरे और तेरे जैसोंके खेल देखा करता हूं। आगामी 'हरिजन' में अेक पत्रकी आलोचनामें अिससे सम्बन्धित कुछ तू देखेगी।

मेरा अज्ञान तेरे हाथ ठीक लगा। अभी और खोज करे तो अिससे भी घोर अज्ञान तेरे हाथ लगे। परन्तु जब तुझे मेरे पूर्ण अज्ञानका पता चलेगा तब तू भाग तो नहीं जायगी? अितना वचन दे दे तो मैं साफ कह दूं कि मैं कुछ जानता ही नहीं, क्योंकि अैसा अध्ययन मैंने किया ही नहीं है।

साम्यवादके विषयमें अपने मन्तोषके लायक मैंने पढ़ा है। स्वराज्यमें किसकी जरूरत होगी, यह तो स्वराज्यको देखूं तभी कह सकता हूं। मेरा विरोध तू जहां देखे वहां सत्य-असत्य तथा हिंसा-अहिंसाके सम्बन्धमें ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

१७३

[सासवड जानेके बाद मेरे हाथों लेखन-प्रवृत्ति शुरू हुआी थी। दैनिकों, मासिक पत्रों आदिके लिअे लेख तथा कहानियां लिखकर भेजती थी। बादमें मैंने पुस्तकें लिखना भी शुरू किया। पू० महात्माजीको शायद मेरी यह प्रवृत्ति पसन्द नहीं आयेगी, अैसा मानकर मैंने संकोचसे अिस विषयमें अुनकी राय पूछी थी।]

सेगांव-वर्धा,
१२-९-'३६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

महात्माकी सेवा कैसी होनी चाहिये, अिसका अर्थ तो तू महात्मा बने तभी जाने। अभी तेरी कल्पना जहां तक तुझे ले जायगी, वहीं तक तू जायगी। महात्माको अेक फुंसी भी हो जाय तो दुनिया भरमें शोर मच जाता है। बेचारे सामान्य आदमीको भगंदर हो जाय तो भी वह फुंसी मान लिया जाता है। कोअी अुसके बारेमें नहीं जानता। क्या करे?

आज ही अस्पताल छोडकर यहां आया हूं। अभी कमजोरी तो खूब है, परन्तु अब यहां शक्ति आ जानेकी आशा रखता हूं।

अब वहां बरसात शुरू हुअी मालूम होती है। यहां तो जरूरतसे ज्यादा होती रहती है।

तेरे दूसरे वर्णन रोचक हैं। तू अपना काम आगे बढा रही है। परिणाम तो जो आना होगा वह आयेगा।

तेरी लेखन-प्रवृत्तिकी आलोचना करनेकी बात ही नहीं है। जो शक्ति अीश्वरने तुझे प्रदान की है अुसका सदुपयोग तुझे अवश्य करना चाहिये।

लीलावतीका मामला बहुत कठिन तो है ही। अेक प्रयत्नमें तो मैं हार गया। अब दूसरा हाथमें लिया है। मैं बिलकुल ता हारनेवाला नहीं।

तेरा प्रश्न ठीक है। परन्तु मुझे स्वराज्य लेना है। मौतसे पहले कैसे मरूं?

मीराबहनके बारेमें भी तूने जो लिखा है वह सही है। वह मुझसे दूर बिल्कुल नहीं रह सकती। अब जो हो सो सही।

आज अधिक नहीं लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

१७४

[फैजपुर कांग्रेस अधिवेशनमें काम करनेके लिअे पूनामें स्वयं-सेविकाओंकी छावनी मैंने शुरू की थी। अिसके लिअे पू० महात्माजीके आशीर्वाद मांगे थे।]

सेगांव-वर्धा,
१४-१०-'३६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू तो अब गगन विहारिणी हो गअी है। भले ही अुड। परन्तु थककर गिरना मत।

मेरे आसपास मीरा और नाणावटीके बिस्तर हैं। दोनों मोतीझिरेसे बीमार हैं।

यह कह सकते हैं कि मेरी डाक बन्द है। परन्तु अपनी छावनीके लिअे जो आशीर्वाद मांगती है वे तो हैं ही। मेरी आशा है कि सेविका मूक बनकर किसी आडंबरके बिना सेवा ही करेगी और समझेगी कि सेवाका अिनाम सेवा ही है।

मुझे बम्बआी जाना है, यह मैं तो नहीं जानता। अहमदाबाद जाना भी अब तो अनिश्चित हो गया है। मीराको अिस स्थितिमें रखकर तो हरगिज नहीं जा सकता। नाणावटीकी तबीयत अब सुधार पर कही जा सकती है।

बापूके आशीर्वाद

१७५

[छावनी समाप्त होते समय मुझे 'अुष्मापात' जैसा कुछ हो गया था और मैं बेहोश हो गअी थी। अिसलिअे पू० महात्माजी अुलाहना देते हैं।]

सेगांव-वर्धा,
१९-११-'३६

चि० प्रेमा,

पिछले पत्रमें अुत्तर देने लायक कुछ नहीं था। तुझे लिखनेका कोअी भी निमित्त मुझे अच्छा लगता है। समय ही नहीं था। परन्तु तेरे अंतिम पत्रका अुत्तर तो देना ही पड़ेगा। काकाने तेरी बीमारीके समाचार अेक मिनटकी बातचीतमें दिये थे, परन्तु तूने लिखा है वैसी बीमारीके नहीं। अिस प्रकार तुझे बीमार क्यों पड़ना चाहिये? अिसमें मुझे तेरी लापरवाही मालूम होती है। शरीरको अीश्वरकी दी हुआी सम्पत्ति मानकर तू अुसका अुपयोग करे तो किस तरह बीमार न पड़े। शरीरसे जितना सहन हो अुतना ही काम करके संतोष क्यों नहीं मानती?

मैं वहां अेक दिसम्बरको आकर बैठूं अथवा जनवरीमें भ्रमण करने निकलूं, अैसी कोअी बात नहीं है। हां, प्रदर्शनीसे पहले मुझे फैजपुर जरूर जाना है।

बापूके आशीर्वाद

गुनक्ष :

. . वापस सेगाव आ गअी है। अुसके विषयमें कुछ भी नही कहा जा सकता। अुसके हेतु तो अूचे है ही। मेहनत भी करती है। परन्तु जब तक अधीरता न मिटे तब तक वह सच्ची प्रगति नहीं कर सकती। फिर भी यदि स्वराज्यकी आशा न छोडू, तो . . . की आशा कैसे छोडू? मेरे जैसा आशावादी तुझे मुश्किलसे मिलेगा।

हरिलाल[1] ता'खड्डेमें पडा है न? अुसकी भी आशा नहीं छोडता। फिर क्या? आर्यसमाजी बननेमें तो कुछ नहीं है।

बापू

१७६

[*सासवडमें आश्रमके लिअे जो मकान मिला था वह वहाके* तहसीलदारके षड्यत्रसे छोडना पडा। मालिक नाबालिग था, अिसलिअे अुस पर सरकारी दबाव पडा और यद्यपि कानून आश्रमके पक्षमें था (कानूनी भाडाचिट्ठी लिखी गयी थी) फिर भी यह सोचकर कि मालिकको असुविधा नही होनी चाहिये मकान छोड दिया गया। अेक और छोटा असुविधावाला मकान मिला। वहा आश्रम सवा वर्ष तक रहा। बादमें काग्रेस मत्रिमडलकी हुकूमत शुरू होने पर आश्रमको पुराना मकान फिर मिल गया।

श्री विनोबाजी काग्रेस कार्यकर्ताओको धीरज देनेके लिअे कुछ महीने फैजपुरमे रहे थे। अुनके साथ मेरा निकट परिचय अिसी अरसेमें हुआ। अुनके साथ बहुत 'विनोद' करती थी; वह सब पू० महात्माजीको मैं बताती थी। गभीर प्रकृतिके होने पर भी श्री विनोबाजी मेरे साथ *खूब घुलमिल गये थे।*]

---

१ पू० महात्माजीके बडे लडके। पहले मुसलमान हुअे, फिर आर्य-समाजी बने।

सेगांव-वर्धा,
१२-१२-'३६

चि० प्रेमा,

जितना लिखनेकी फुरसत न होते हुअे भी यह लिख रहा हूं। पेड़के नीचे पड़ा रहना पड़े तो भी सावधड़ नहीं छूटना चाहिये। परन्तु मनसे भी कारण पड़ा न हानि देना। मनमें भी क्रोध रखेगी तो पेड़के नीचे रहनेका पुण्य या फल नहीं मिलेगा।

कांग्रेस अधिवेशनमें जहां तक देहातकी शोभा देनेवाला ठाट करते आये वहां तक किया जा सकता है। 'करते आये' शब्दको दोनों अर्थोंमें लेना। अिस ठाटमें कला हो, और अुस पर अेक पाओी भी खर्च न की जाय।

मेरा आना २० तारीखका निश्चित हुआ है। हम कितने लोग आयेंगे, यह तो वहांसे आनेवाले अुत्तर पर निर्भर करेगा।

विनोबाका काफी 'मनोरंजन' कर रही दीखती है।

फिर बीमार न पड़ना। अपनी मर्यादामें रहकर काम करनेसे वह अधिक अच्छा और शोभास्पद होता है।

लीलावतीके भाओी खूब बीमार हैं, अिसलिअे वह विलेपारले गओी है।

बापूके आशीर्वाद

१७७

[फैजपुर कांग्रेसके बाद चुनावके सिलसिलेमें दौरा करते हुअे श्री शंकररावजी मोटर दुर्घटनाके शिकार हो गये थे। अुन्हें काफी समय तक अस्पतालमें (पहले पूनाके, फिर बम्बअीके) रहना पड़ा था। वे पूनाके अस्पतालमें थे तब बारह दिन मैं अुनकी सेवा-शुश्रूषामें रही थी।

श्री जमनालालजीने मुझसे विवाह करनेके बारेमें सवाल पूछे थे — यह सोचकर कि मेरी पसन्दका पुरुष पतिके रूपमें मिले तो मैं विवाह कर लूंगी। अैसा कोअी पुरुष नहीं मिलता, अिसीलिअे मैं अविवाहित रही हूं, अैसी अुनकी कल्पना थी। अिसलिअे नाम देकर 'अमुक पुरुषके साथ विवाह करना पसन्द है?' अैसे सवाल वे पूछने लगे।

ता० १३-१२-'३६ के 'हरिजनबन्धु' में 'चित्त-शुद्धिकी आवश्यकता' नामका पू० महात्माजीका लेख प्रकाशित हुआ था। अुसमें अुन्होंने हरिजन-सेवा करनेवाले अेक कार्यकर्ताके नैतिक पतनका वर्णन और अुससे सबंधित अपने विचार दिये थे। अुसने दो स्त्रियोंके साथ अेक ही समयमें अनैतिक सम्बन्ध रखा था और बादमें अुनमें से अेकके साथ विवाह कर लिया था। लेखमें दोनोंके नाम दिये थे। अुसका नाम पढ़कर मुझे लगा कि "यह तो सत्याग्रहाश्रमकी लड़की मालूम होती है!" और अिस विषयमें पू० बापूजीसे पत्रमें मैंने सवाल किया। अुन्होंने अुत्तरमें 'हां' लिखा और मेरा अनुमान सही निकला। अुसके विषयमें अिस पत्रमें थोड़ीसी चर्चा है।]

सेगाव,
५-२-'३७

चि० प्रेमा,

मेरे दायें हाथको आराम देनेकी जरूरत है और बायेंसे लिखनेमें बहुत समय चला जाता है। अितना समय कहांसे निकालूं? काम बहुत बढ़ गया है, जिसलिअे ज्यादातर तो लिखनेका दूसरोंसे ही लिखवाता हूं। सोमवारके दिन दाहिना हाथ काममें ले लेता हूं।

लिखनेका काम करनेवाली विजया और मनु हैं। कुछ हद तक प्रभावती। विजयाको तू नहीं जानती होगी। वह पटेल है। बारडोलीकी है। जबरदस्ती आ गअी है, क्योंकि सेगावमें किसी नये व्यक्तिको न लेनेका आग्रह तो था ही। यह आग्रह विजयाने तुड़वा दिया। अपना मामला अुसने अिस ढंगसे पेश किया कि मैं अुसे मना करके अुसके हृदयको तोड़ नहीं सका। अुसे आश्रममें रखनेका अभी तक तो पछतावा नहीं हुआ। वह मूक भावसे काम कर रही है। अिस प्रकार वह . . . का बदला चुका रही है।

अब शंकरराव अच्छे हो गये होंगे। मैंने अुनके स्वास्थ्यके बारेमें हरिभाअू फाटक[1] से पुछवाया तो है। परन्तु तू मुझे ब्यौरेवार समाचार दे सकेगी।

---

१. पूनाके वृद्ध कांग्रेस कार्यकर्ता: १९२० से १९३० तक महाराष्ट्रके नेताओंमें से थे।

पटवर्धन[1] जब चाहें तब आ सकते हैं, यह मैंने अुनसे कहा था। परन्तु पहाड दूरसे ही सुहावने लगते हैं न?

तरी कडी परीक्षा हो रही है। ग्रामीणोंकी जेबमें पैसा डालनेकी बात आसान है भी और नहीं भी है। यदि वे हमारा कहा मानें तो बिना पूंजी अथवा यों कहो कि कमसे कम पूंजीसे सारे गांवोंकी आय दुगुनी की जा सकती है। अिसमें देहातको चूसनेवालोंका गांवमें जो आय होती है अुसका समावेश नहीं है। परन्तु यदि वे हमारा कहा न मानें अर्थात् हम कहें अुतनी मेहनत ही न करें, सिखायें वह अुद्योग न सीखें, तो आय बढाना कठिन ही नहीं, असंभव भी है। अेक और बडी कठिनाअी यह है। केवल मुट्ठीभर आदमी ही गांवोंमें जाते हैं। वे भी अनुभवहीन होते हैं। अुनके शरीर गांवमें रहने जितने कसे हुअे नहीं होते। वे ग्रामीणोंका स्वभाव नहीं जानते। अुनकी आवश्यकताओंसे सर्वथा अनभिज्ञ होते हैं। हाथसे काम करनेकी आदत नहीं होती, बुद्धि भी नहीं चला सकते। स्कूल-कॉलेजोंमें प्राप्त ज्ञान देहातमें बिलकुल निरुपयोगी सिद्ध होता है। अैसी स्थितिमें धीरजकी आवश्यकता होती है। आत्मविश्वास चाहिये। शरीर-सम्पत्ति हो तो अन्तमें देहातकी आर्थिक स्थिति सरकारी मददके बिना बहुत कुछ, यों कहें कि ५० प्रतिशत, सुधारी जा सकती है। ५० प्रतिशत तो मैं कमसे कम कहता हूं। मेरी मान्यता तो अैसी है कि ९० प्रतिशत सुधारी जा सकती है। शरीर-सुधार समाज-सुधार, नैतिक सुधार ये तीन मुख्य वस्तुअें हैं। अिनके लिअे तो सरकारी सहायताकी कोअी आवश्यकता नहीं है।

आर्थिक सुधारमें ही थोडीसी मदद हो तो काम आसान हो जाय। परन्तु अुपरोक्त तीन सुधारोंके बिना सरकारी मदद कुछ भी नहीं कर सकती। अिसलिअे तू यदि खादी-शास्त्रमें सचमुच निष्णात हो जाय और बडेसे बडे प्रलोभनोंके बावजूद गांवसे न हटे, तो अुपरोक्त सब बातोंका प्रत्यक्ष अनुभव करेगी।

---

[1] पटवर्धन अर्थात् पु० ह० अुर्फ रावसाहब पटवर्धन, जो फैजपुर कांग्रेसके स्वयंसेवक-दलके मुखिया थे।

तू गायके दूधका आग्रह नहीं रखती, यह ठीक नहीं। बाहर जाय तब तू गायके दूधका घी और पेड़े साथमें रख सकती है। पेड़े बिना शक्करके होने चाहियें। अर्थात् शुद्ध मावेके। अुनके साथ गुड़ खाना हो तो खाया जा सकता है। अैसा करनेसे खर्च बढ़ता नहीं और दूधकी जरूरत अच्छी तरह पूरी की जा सकती है। पेड़े सूखे खानेके बजाय अुनका चूरा करके गरम पानीमें मिलाकर दूध बनाया जा सकता है। अुसमें कमी सिर्फ विटामिनोंकी रहती है। परन्तु कुछ समय विटामिन न मिले तो कोअी हानि नहीं होती।

. . . वही . . . है। यह सारा किस्सा बहुत करुण है। सभी ब्रह्मचारी न रहें यह तो बिलकुल समझमें आने जैसी बात है। जो अिन्द्रिय-निग्रह न कर सके वह खुशीसे विवाह कर ले। परन्तु विषयोंका गुप्त सेवन करे, यह मुझे असह्य लगता है। मनुष्यका पतन विषयोंके गुप्त सेवनसे होता है। अैसा करनेसे मर्यादा नहीं रहती। मुझे गृहस्थाश्रमसे जरा भी द्वेष नहीं। वह आवश्यक स्थिति है। सुन्दर है। परन्तु आश्रमका तो अर्थ ही यह है कि अुसके गर्भमें धर्म हो। गृहस्थ धर्म स्तुत्य है, स्वेच्छाचार निन्दनीय है। मेरा सारा विरोध केवल स्वेच्छाचारके खिलाफ है।

जमनालालजीने तुझसे जो प्रश्न किया वह तो ठीक था। अुन्होंने स्त्रीकी दृष्टि जानना चाही थी। विनोबा, मैं और दूसरे पुरुष कुछ भी कहें तो भी अनुभवी निष्कलंक स्त्रीका अनुभव जाननेकी आवश्यकता होगी ही। और अन्तमें सच्चा योग तो स्त्रीका ही होना चाहिये। ब्रह्मचर्यका महत्त्व और अुसकी आवश्यकता सिद्ध करनेका भार केवल पुरुष पर होना ही नहीं चाहिये। आज तक यह भार ज्यादातर पुरुषने ही अुठाया है। अिसलिअे अिस भारने अधिकारका रूप ग्रहण कर लिया है। अिससे ब्रह्मचर्यकी फजीहत हुअी है। जितना ही नहीं, जो आसान होना चाहिये था वह अितना कठिन बन गया है कि बहुतोंको तो असंभव ही लगता है। अिसमें भी अधिक दोष पुरुषोंका ही पाता हूं। स्त्रियोंको अुन्होंने किसी न किसी तरह दबाकर रखा है। अैसा करनेमें (पुरुषकी) खुशामद और पशुबलने समान भाग अदा किया है। कुछ भी हो, अिसके फलस्वरूप मनुष्य-जातिका आधा अंग निर्बल हो गया और रहा। परिणाम यह

हुआ है कि पुरुष अपने बहुतेरे प्रयत्नोंमें असफल सिद्ध हुआ है। और यही ठीक हुआ जैसा कहा जायगा। अब स्त्रियामें कुछ जागृति आयी है। लेकिन अभी तो यह जागृति विकृतिका रूप ले रही है। पुरुष स्त्रीको स्वतंत्रताके नाम पर अुस लाड़ लडा रहा है। अुसके अहकारका पोषण कर रहा है। स्त्री स्वतंत्रताका स्वच्छाचार मान बैठी है। जिससे जो स्त्री-पुरुष बच सकें वे बचें। तू बचना।

बापूके आशीर्वाद

दुबारा नहीं पढ़ सका।

१७८

[श्री नरीमान किसी समय (१९२८ से १९३६ तक) बम्बअीके माने हुअे नेता थे। अुन पर यह आरोप लगाया गया था कि दिल्लीकी बडी विधान-सभाके चुनावमें अुन्होंने वफादारीके साथ कांग्रेसके अनुशासनका पालन नहीं किया। जिस बारेमें कांग्रेसमें दो मत थे। जिसलिअे मैंने पू० महात्माजीके सामने पत्रमें यह विषय छेड़ा था।

अप्रैल-मअीके बीच हम तीन सहेलियां सुशीला, किसन और मैं श्री घुरधरजीको साथ लेकर रत्नागिरी जिलेके अेक सुन्दर स्थान वाघोटण गअी थीं। वहां अेक आरोग्यभवन जैसी संस्था थी और गरमीमें वहां बहुत लोग रहने आते थे। अूपरके पत्रमें सत्याग्रहाश्रमकी जिस लडकीका अुल्लेख हुआ है वह वहां अपने पतिके साथ आअी थी। मिलनेके बाद मैंने महात्माजीके लेखमें वर्णित घटनाके बारेमें अुससे पूछा। परन्तु अुसने अपने निर्दोष होनेका दावा किया। बादमें अुसके पतिने अुसका झूठ स्वीकार किया। यह किस्सा मैंने पू० महात्माजीको पत्रमें बताया था।

सासवडका काम बन्द करके ठेठ गांवमें जानेकी बात चल रही थी, परन्तु अमलमें नहीं आअी थी। सासवड स्थायी रूपमें कार्यक्षेत्र रहा।

अुस वर्ष राष्ट्रीय सप्ताहमें (६ अप्रैलसे १३ अप्रैल तक) गांधी-सेवा-संघका सम्मेलन कर्णाटकके हुदली आश्रममें हुआ था। श्री शंकररावजी अस्पतालमें होनेके कारण सम्मेलनमें अुपस्थित नहीं हुअे। परन्तु सासवड

आश्रमके सचालक आचार्य भागवत (जो किसी समय पूनाके राष्ट्रीय महाविद्यालयके अध्यापक थे), मैं और हमारे दो साथी वहा अुपस्थित थे। आ० भागवतकी अिच्छा थी कि हम धाराको पू० महात्माजी थोडा समय दें और हमारा मार्गदर्शन करे। परन्तु वह सफल नही हुअी।

अुसी सम्मेलनमें 'विधान-सभाके आगामी चुनावमें गाधी-सेवा-सघके सदस्य अुम्मीदवारके रूपमें भाग लें या नही' अिस विषय पर चर्चा हुअी थी। अनेक लोगोंके साथ मैंने भी अेक भाषण किया था। वह पू० महात्माजीको अच्छा नही लगा। मुझे अुलाहना मिला कि, "तेरे विचार कच्चे हैं।" अुसके बाद मैंने अेक वर्ष तक सार्वजनिक भाषण न करनेका व्रत लिया था।]

तीथल-वलसाड,
१३-५-'३७

चि० प्रेमा,

आज ही तेरा पत्र मिला और आज ही जवाब दे रहा हू। तेरा पहलेका पत्र तो मेरे बस्तेमें रखा ही है। खैर, अिसको तो निबटा दू। अुसका भी हो जायगा।

सुशीलासे कहना कि यहा तुम सब आते तो समा जरूर जाते, परन्तु वहाका अेकान्त मैं कैसे देता? और वहाकी ठडक, तेरा वहाका वर्णन ठीक हो तो? यहा तो गरमी मालूम होती ही है।

नरीमानके साथ अन्याय होनेकी बात मैं नही जानता। यह कैसे हो सकता है कि बम्बअीमें जो नेता हो वह सारे प्रान्तका नेता होना ही चाहिये? और तीन प्रान्ताके प्रतिनिधियोको कौन बहका सकता है, कौन दबा सकता है? यदि अन्याय हुआ हो तो वे ही प्रतिनिधि सब आज भी जीवित हैं, वे कैसे बरदाश्त करेंगे? अिसलिअे अन्यायकी बात मेरी तो समझमें ही नही आती। सरदारने क्या किया, यह भी मेरी समझसे बाहर है। सारा आन्दोलन मुझे तो कृत्रिम लगा है। लेकिन अगर मैं न समझता होअू तो तू मुझे समझा। मेरा नरीमानके प्रति कोअी दुर्भाव नहीं है। अुनके प्रति जो आरोप लगाये जाते हैं अुनका अिस वस्तुके साथ कोअी सम्बन्ध नही। अिन आरोपोंके सच-झूठके बारेमें तो नरीमान जब चाहे तब जाच

हो सकती है। नरोमान तेरे मित्र हैं, यह मैंने आज ही जाना। मेरा मत ना मैंने केवल तटस्थ भावसे प्रकट किया है।

. के बारेमें पढ़कर दुःख हुआ। मैंने जो अुन दानाने कहा नहीं प्रकाशित किया है। और यह भी अुनकी अिच्छासे। . . के मनमें सत्यासत्यका भेद नहीं है, अैसा मुझे लगता है। तू यह पत्र अुसे पढ़नेको दे सकती है।

देवका मैंने पत्र लिया था। अुनका अुत्तर भी आया है। मैंने तुरन्त ही कहा लिखा था।

मानवड बन्द हो गया यह अच्छा नहीं लगा। 'अनारम्भो हि कार्याणाम्' वाली बातको मैं मानता हूँ। अब कुछ हाथमें ले तो अुसे पकड़े रहना।

मुझसे तुम चारा जलाते समय मांगा होता तो अच्छा होता। तेरी जिस दलीलको मैं मानता हूँ कि सासवडकी परिस्थिति जाने बिना मैं क्या कह सकता था? तेरा यह कहना भी सही है कि गावकि अनुभवोंका अभी मेरा आरम्भकाल ही है। अिसलिअे हम सब अेकसे ही हैं। जितने पर भी मेरे विचारोंमें थोड़ी मौलिकता है और जिन सबका मूल अहिंसा है। अिसलिअे शायद तुम चाराका ही कुछ न कुछ जाननेको मिल जाता।

तू विचार करनेकी कला पाय रही है, यह मुझे पसन्द है; क्योंकि हुदलीके तेरे भाषणमें मुझे विचार-शून्यता मालूम हुअी। वे विचार मुझे दिमागसे निकलनेवाले धुअें जैसे लगे। वे तेरे हृदयके अुद्गार नहीं थे। मुझे तो समय निकालकर तुझसे अुस विषयमें बातें करनी थीं और दो और दो चारकी तरह तेरे सामने अुन विचारोंकी शून्यता सिद्ध कर दिखानी थी। परन्तु तू जल्दी भाग गअी, अिसलिअे मुझे समय ही नहीं मिला। मुझे तेरी विचार-शून्यता सिद्ध कर दिखानेकी अुतावली तो थी ही नहीं, जिसलिअे मैंने तुझे रोका नहीं। मुझे जितना विश्वास है कि तेरा यह दाग तू स्वयं कभी देख लेगी। जितनेमें तो तेरे पत्रमें ही अुसका स्वीकार देखता हूँ। हुदलीके विचारोंमें तुझे यह दाग दिखाअी न दे, यह सम्भव है। लेकिन अगर सचमुच विचार करना सीख लेगी तो हुदलीके विचारोंकी न्यूनताअें तू देखे बिना नहीं रहेगी।

अिसलिअे सिद्धान्तों पर मेरी राय मांगना तूने स्थगित कर दिया, यह मुझे पसन्द है। और जब तक विचार करनेकी कला हाथ न लगे तब तक तू भाषण देना बन्द रखेगी, तो मुझे और भी अधिक अच्छा लगेगा। अिससे तू विचार करनेकी कला जल्दी साध लेगी।

तुम सबको बापूके आशीर्वाद

१७९

तीथल-वलसाड,
२९-५-'३७

चि० प्रेमा,

शायद तेरे पत्रका पूरा जवाब न दे सकूं। प्रयत्न करूंगा। मैंने भाषण न करनेका हुक्म तो नहीं निकाला। लेकिन अगर निकाला हो तो मैं अुसे वापिस ले लेता हूं। मुझे किसी पर भी अपना हुक्म नहीं चलाना है। तेरे विचारोंमें परिवर्तन हो जाय तो अिसमें मैं क्या कह सकता हूं? तू अपने स्वभावके अनुसार आचरण करेगी, जैसे सबको करना चाहिये।

शुद्ध प्रेमके लिअे स्पर्शकी आवश्यकता नहीं होती, अिस वचनका अर्थ अैसा थोड़े ही है कि स्पर्शमात्र मलिन है। अपनी माके प्रति मेरा शुद्ध प्रेम था, लेकिन अुसके पैर दुखते तब मैं अुन्हें दबाता था। अुसमें कोअी मलिनता नहीं थी। विकारी स्पर्श दूषित है। अिसलिअे मैं यह कहूंगा कि जो लोग अैसा कहते हैं कि स्पर्शके बिना शुद्ध प्रेम अशक्य है, वे शुद्ध प्रेमको जानते ही नहीं हैं।

नरीमानके बारेमें तू क्या कहना चाहती है, यह अभी तक मैं समझा नहीं हूं। अुनके साथ अन्याय किस प्रकार हुआ और किसने किया? सत्यके खातिर भी तुझे अपने मनकी सफाअी करनी चाहिये। मेरे लिअे यह असह्य है कि अिस मामलेमें मेरे और तेरे बीच मतभेद रहे। यदि तू दृढ़ता-पूर्वक यह मानती हो कि अुनके साथ अन्याय हुआ है, तो तुझे यह अन्याय मेरे सामने साबित कर देना चाहिये। क्योंकि अिच्छा न होने पर भी मुझे

अिस मामलेमें पड़ना पड़ा था। अिसके सिवा, नरीमानसे तो मैंने कहा ही है कि जब व चाहें तब अुनके मामलेकी जाच करनेको मैं तैयार हूं; परन्तु व आयें या न आयें, तेरा धर्म स्पष्ट है।

के बारेमें तू जो मान बैठी है वह ठीक नहीं है। तुझे जो सबूत मिला है अुसकी काअी कीमत नहीं। अैसी बात माननेसे पहले सम्बन्धित व्यक्तिसे पूछना चाहिये। मैं यह नहीं कहना चाहता कि अुसने असत्याचरण नहा किया होगा। परन्तु अिसका यकीन कर लेना चाहिये। मुझे कोअी कहे कि प्रेमाने अैसा किया तो क्या तुझसे पूछे बिना मुझे अुसकी बात मान लेनी चाहिये?

तू हुदलीमें जो बोली वह तेरे हृदयके अुद्‌गार भले ही हों। परन्तु अब तू जो लिख रही है अुससे तेरा भाषण भिन्न था, अितना तू स्वीकार करेगी? जो भी हो, मैंने तो तुझे बता दिया कि मेरा अनुभव तेरे अनुमानसे अलग था। तू मेरे अनुभवसे अपने अनुमानका मूल्य अधिक जरूर आक सकती है। परन्तु मैं क्या करूं?

बापूके आशीर्वाद

१८०

सेगाव-वर्धा,
५–७–'३७

चि० प्रेमा,

आज तो अितना ही लिखना है कि लौटती डाकसे तुझे 'गीताओ' भेजी है। मिली होगी। बाकी समय मिलने पर।

बापूके आशीर्वाद

१८१

['आज ११ है' अर्थात् अेकादशी है। दशमीको जन्मदिवस था। (आषाढ़ सुदी)]

२०-७-'३७

चि० प्रेमा,

तू कैसी अजीब है! तेरा १६ तारीखका पत्र आज २० तारीखको ११ बजे मिला। आज ११ है। दशमीको कैसे आशीर्वाद पहुंचाता? मेरा पिछला पत्र मिल गया होगा। तुझे क्या कहूं? आशीर्वाद तो हैं ही। आगे बढ़ती ही रह और विजय प्राप्त कर।

बापूके आशीर्वाद

१८२

[पू० महात्माजी बहुत करके खूनके दबावसे बीमार थे; आराम ले रहे थे।

जब मैं १९२९ में सत्याग्रहाश्रममें थी, तब अेक बार पू० महात्माजीके साथ टहलते समय अेक भाअीसे हुअी अुनकी बातचीत मैं बड़े ध्यानसे सुन रही थी। पूछनेवाले भाअीने ब्रह्मचर्यके पालनकी कोशिश करनेवाले अेक विवाहित प्रोफेसरका किस्सा बयान किया था और अुस मामलेमें पू० महात्माजीका मार्गदर्शन मांगा था। महात्माजीके समझाये हुअे विचार मुझे बहुत पसन्द आये और याद रहे। तबसे अुस कथाकी बुनियाद पर अेक अुपन्यास लिखनेकी अिच्छा मनमें रही थी। सासवड़ आनेके बाद दो तीन वर्षमें अुसे पूरा किया। 'काम और कामिनी' नामक अुपन्यास मैंने लिखा। प्रस्तावनामें अुपरोक्त प्रेरक संवाद देनेकी अिच्छा हुअी और वह जैसा याद था वैसा लिखकर मैंने पू० महात्माजीको भेज दिया और सुधार करना आवश्यक लगे तो करके भेजनेकी अुनसे प्रार्थना की।

संवादको जोड़कर मैंने जो प्रश्न स्पष्टीकरणके लिअे पूछे थे, अुनके सम्बन्धमें मेरे खयालसे पू० महात्माजीने यह चेतावनी दी थी कि अिसका

अनर्थ होगा। खैर, अुन्होंने नया ही संवाद भेज दिया। अुसे मैंने ज्यादा तर मूल अितिहासके साथ, पुस्तकमें छपवा दिया। अिस अुपन्यासका गुजराती अनुवाद श्री [illegible] रावलने किया है और यह प्रकाशित भी हो गया है।]

सेगांव-वर्धा,
२५-८-'३७

चि० प्रेमा,

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें तो तूने सुना ही होगा। कमसे कम मानसिक परिश्रम और अधिकसे अधिक आराम, यह हुक्म है। मस्तिष्क और दाहिना हाथ पूरा आराम चाहते हैं, अिसलिअे तुझे अभी जितना चाहिये अुतना ही कह कर निबटा देता हूँ।

तेरी राखी बांध ली। समय पर मिल गयी थी।

तेरे प्रश्नोंका अुत्तर नया ही लिख डाला है। पुराने अुत्तर गलत नहीं हैं। अपूर्ण होनेके कारण अुनका अनर्थ हो सकता है। पुराना लौटाता हूँ। अिसे रद कर देना। यह छापा ही नहीं जा सकता। नया अुपयोगी हो तो छाप देना। तेरे पत्र सुरक्षित रखे हैं। तबीयत अच्छी होने पर अुत्तर दूँगा। अथवा लिखानेकी अिजाजत दें तो तुरन्त भी शायद मिल जाय।

मेरे बारेमें चिन्ताका कोअी कारण नहीं। परन्तु मुझे बहुत सावधान रहकर चलना है।

बापूके आशीर्वाद

प्रश्न — अेक प्रोफेसर हैं। अुनकी स्त्री भी है। प्रोफेसर ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं। पत्नीको यह स्वीकार नहीं है। अैसी परिस्थितिमें अुन भाअीका क्या धर्म है?

अुत्तर — यह प्रश्न तभी अुत्पन्न होता है जब विवाहके बाद पतिको ब्रह्मचर्यका विचार आया हो। धार्मिक विवाहका मेरा अर्थ यह है कि स्त्री-पुरुष-संग केवल सन्तानके लिअे ही हो। विकारतृप्तिके लिअे कभी नहीं। जहाँ विवाहका यह अर्थ नहीं किया जाता हो वहाँ तो दोनों अेक-दूसरेकी सुविधाका ध्यान रखें। जहाँ सम्मति न हो वहाँ तो बलात्कार ही माना जायगा।

अब अूपरका प्रश्न ले। जहा पतिको ही ब्रह्मचर्य-पालनकी अिच्छा हुअी हो और पत्नीको नही हुअी, वहा यदि पति बिलकुल निर्विकार हो गया हो अर्थात् गीताके अध्याय २, श्लोक ५९ की भाषामें अुसे पर-दर्शन हो गया हो, वहा सभोग ही असभव है। पत्नी पतिकी दशाको समझकर स्वय ही शान्त हो जायगी। परन्तु प्रश्नमें तो प्रयत्नकी ही बात है। जिस प्रयत्नकी विवाह करते समय कल्पना ही नही थी, वह प्रयत्न दोनोकी सम्मतिसे ही हो सकता है। अर्थात् पति ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन पत्नीकी अनुमतिके बिना नही कर सकता। सामान्य सयमका प्रयत्न तो सभी करे। जहा दोनोमें से अेककी भी अिच्छा सग करनेकी होती है वहा अधिकाशमें दूसरेकी तैयारी होती है। अथवा थोडी प्रार्थनाके बाद हो जाती है। जहा अैसा नही होता वहा अनबन पैदा होती है। अत बहुतोके रूपमें अनुभव परसे और अुस पर किये गये विचार परसे मैं अिस निर्णय पर पहुचा हूं कि सयमका पालन अेक दूसरेके अधीन ही है। अिसलिये यही कहना चाहिये कि प्रश्नमें दोष है। क्योकि जहा ब्रह्मचर्य स्वयसिद्ध है वहा प्रश्न अुठता ही नही। जहा विकार होने पर भी प्रयत्नकी ही बात है वहा प्रश्न करनेकी कोअी बात नही।

[पू० महात्माजीकी तबीयत खराब होनेके बाद मैंने अुन्हे पत्र लिखना लगभग बन्द कर दिया था। वर्षमें दो-तीन बार अुनसे मिलनेके मौके आ जाते थे अिसलिअे पत्रव्यवहार स्थगित कर देनेसे कोअी खास दिक्कत नही होती थी।]

१८३

[सासवडके आश्रमको गाधी-सेवा-सघकी तरफसे मदद मिलती थी, परन्तु स्वतत्र रूपसे मुझे व्यक्तिगत खर्च करनेकी आवश्यकता होती थी। आश्रममें शरीक होनेके बाद तीन-चार वर्ष तक मैंने अपना केवल भोजन-खर्च आश्रम पर डाला था। जेब खचके लिअे आश्रमसे मैं कुछ नही मागती थी। बादमें अैसा समय आया कि अुसके लिअे स्वतत्र रूपमें कुछ कमाअी करनेकी आवश्यकता मुझे प्रतीत हुअी। अिसके लिअे पू०

महात्माजीकी स्वीकृति मैंने मागी। अिस पर अुन्होंने खुद मदद देनेका आश्वासन दिया और २५ रुपये मुझे भेज भी दिये। अिस बातका पता श्री ठाकरबापाजी तथा आचार्य भागवतको लगा तब दोनोंने अुसका विरोध किया और आश्रमसे ही सारा खर्च लेनेका आग्रह किया। बादमें मैंने वैसा ही किया।]

५-६-'३८

चि० प्रेमा,

कैसी मूर्ख है! 'मुझे हर महीने ५ रुपये चाहिये, भेज दीजिये' — जितना लिखनेके बजाय कितना लम्बा पत्र! अब बता कैसे भेजूं? मनीआर्डरसे या मुझे ठीक लगे वैसे? हर महीने भेजता रहूं या तीन-चार महीनेके अिकट्ठे?

और कुछ लिखनेका समय नहीं है। तेरा पत्र फाड दिया है।

बापूके आशीर्वाद

१८४

[अपनी वर्षगांठके निमित्तसे मैंने प्रणाम लिखे थे और कुछ प्रश्न पूछकर पू० महात्माजीको बताया था कि वे बहुत काममें हों तो जवाब श्री महादेवभाअीसे लिखवा दें तो भी काम चल जायगा। तब प्रश्नोंके अुत्तर श्री महादेवभाअीने भेजे और वर्षगांठके आशीर्वाद पू० महात्माजीने अिस कार्डमें लिख भेजे।]

सेगांव,
१४-७-'३८

चि० प्रेमा,

तेरे पत्रका अुत्तर तूने तो नहीं मांगा, लेकिन अन्तमें लगा कि कार्ड तो लिख दूं। तुझे पत्र नहीं लिखता, मगर तेरा स्मरण तो अनेक अवसरों पर होता ही है। तू अुत्तरोत्तर अूंची ही अुठती रह। बाकी 'हरिजन' में और महादेवसे।

बापूके आशीर्वाद

१८५

दिल्ली,
२२-९-'३८

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी पुस्तक[1] भी मिली। परन्तु मैं अुस पर नजर डाल पाअूं अुससे पहले तो काका ले गये। लौटायेंगे तब अूपर अूपरसे देखनेकी आशा तो रखता ही हूं।

हां, अक्तूबरके अन्तमें सरहदसे लौटनेकी आशा रखता हूं। तब तू और रावसाहब आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

१८६

[पंढरपुर महाराष्ट्रका प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र है। वहां कार्तिकी अेकादशीके दिन बड़ा मेला भरता है। बम्बअी राज्यके मुख्य मंत्री श्री खेर साहेबकी प्रेरणासे दर्शनार्थियोंकी सेवाके लिअे मैं वहां गअी थी। अुसका वर्णन मैंने पू० महात्माजीको लिख भेजा था।

पू० महात्माजीके मेरे नाम आये हुअे पत्रोंमें से ९० पत्रोंका अनुवाद मराठीमें हुआ और अुस समय 'वात्सल्याची प्रसाद-दीक्षा' के नामसे पुस्तक-रूपमें, नाम और संदर्भ अध्याहृत रखकर, प्रकाशित हुआ। कुछ लोगोंने अुन पत्रोंमें से कुछ पत्रोंके बारेमें बड़ा बवंडर खड़ा कर दिया! ता० २१-५-'३६ का पत्र तो खास तौर पर अुन लोगोंका निशाना बना था। अिससे मुझे दु:ख तो हुआ ही, परन्तु अिस बातसे घबराकर गांधी-सेवा-संघके अध्यक्ष श्री किशोरलालभाअीने मुझे अेक कड़ा पत्र लिखा। मैंने पू० महात्माजीकी सलाह मांगी। अुनके अुपदेशानुसार बादमें मैंने श्री किशोरलालभाअीको ब्यौरेवार स्पष्टीकरण करनेवाला पत्र लिखकर अुन्हें दु:ख देनेके लिअे माफी मांगी। अिससे अुनका समाधान हुआ और

१. पू० महात्माजीके चुने हुअे ९० पत्रोंका मराठी अनुवाद 'वात्सल्याची प्रसाद-दीक्षा'।

अुन्होंने मुझे यह जवाब लिखा कि "जिसका अन्त भला वह भला ही है। अब जिन प्रकरण पर पर्दा डाल दें।" पू० महात्माजीको जिन प्रकाशित पत्रोंके कारण महाराष्ट्रके कुछ आलोचकोंके ववडरका सामना करना पड़ा! जिसका भी मुझे कम दुःख नहीं हुआ! परन्तु वे तो अभयदानी ठहरे!!]

सेगाव,
१५-११-'३८

चि० प्रेमा,

बहुत दिनों बाद तेरा पत्र देखनेको मिला। तू जहां जाय वहीं तुझे मदा मिले, अिसमें आश्चर्य क्या?

पटवर्धन जब चाहें तभी आ सकते हैं। कुटुम्ब-जाल कठिन वस्तु है। बीमारियां और दुर्घटनाओं होती ही रहती हैं। तुझे तो बीमार पड़ना ही नहीं चाहिये। अिसका सुनहला अुपाय सब बातोंमें मर्यादा-पालन है।

तू नअी सहेलीको खुशीसे साथ ला सकती है।

किशोरलालने मुझसे भी बात की थी। मैं स्वयं पुस्तक नहीं पढ़ सका। परन्तु जिन पत्रोंका विरोध किया गया है अुन्हें मैंने पढ़ लिया है। मुझे विरोधमें कोअी तथ्य नहीं लगा। अुनके छपनेसे मुझे हानि पहुंचना संभव नहीं। हानि तो तब पहुंचे जब मैं करनेकी बात न करूं और न करनेकी बात करूं। अिसलिअे (पुस्तक) वापस लेनेकी कोअी बात नहीं है। अुनमें से अेक पत्र अैसा है जिसे शायद प्रकाशित करनेकी अनुमति मैं न देता और वह केवल आजके समाजका रंग देखते हुअे। मैं मानता हूं कि छपवानेमें भी तूने तो सारी सावधानी रखी थी।

किशोरलालने जो कुछ लिखा है वह सब शुद्ध भावनासे लिखा है; अुसका दुःख न मानना। अुन्हें विनयपूर्वक स्पष्टीकरण दे देना।

मेरी तबीयत ठीक है।

खान साहबने अेक सेविकाकी मांग की है। मेरे मुंह पर तेरा नाम आ गया था, परन्तु तेरे मौजूदा कामसे मैं तुझे नहीं हटाअूंगा। अिसलिअे तुझे भेजनेकी बात अभी तो छोड़ दी है।

बापूके आशीर्वाद

१८७

[राजकोटमें राजा-प्रजाके बीच संघर्ष हुआ था, अुस अरसेमें पू० महात्माजी राजकोट गये थे। वहां अुन्हें अुपवास करना पडा था, जिसके कारण वाअिसरॉयने देशके बडे न्यायाधीशको अिस प्रकरणका फैसला देनेके लिअे पंच नियुक्त किया था।]

राजकोट,
८-३-'३९

चि० प्रेमा,

सुशीला पास बैठी है। अपना काम भूली हुअी जैसी कर रही है। मैं तो परम आनन्दमें था। बाकी सुशीलाने लिखा ही है। अधिक लिखना डॉक्टरोंका द्रोह करना होगा।

बापूके आशीर्वाद

१८८

[मध्य प्रदेशके तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ० खरेने कांग्रेसका अनुशासन भंग करके कांग्रेस पार्लमेंटरी बोर्डकी अनुमति लिये बिना अपने दो साथी मंत्रियोंको मंत्रि-मंडलसे अलग कर दिया, अिसलिअे अुनके खिलाफ कार्रवाअी की गअी और अुन्हें मुख्य मंत्री-पदसे अिस्तीफा देना पडा। अुसके बाद डॉ० खरे पूना आये और वहांकी वसन्त-व्याख्यानमालाकी तरफसे अुन्होंने अेक सार्वजनिक भाषण दिया। अुस भाषणमें कांग्रेस पर अनेक आरोप लगाये जायंगे, यह विश्वास होनेसे श्री शंकररावजी भी अुस सभामें अुपस्थित थे। अुनका हेतु यह था कि दूसरे दिन अुसी जगह पर वे भाषण देकर डॉ० खरेके आरोपोंका खंडन करें। अुस समय श्री शंकरराव देव कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्य थे। पूनामें कांग्रेस-विरोधी लोगोंका बडा दल तो था ही। अुसे डॉ० खरेके भाषणके बहाने मौका मिल गया। अुस सभामें ये कांग्रेस-विरोधी लोग ही मुख्यत थे। मैं अुस समय सासवड आश्रममें थी। मुझे बादमें पता लगा कि सभामें डॉ० खरेने सामने बैठे हुअे शंकररावजीकी ओर अुंगलीसे अिशारा करके अैसा भाषण दिया कि श्रोता लोग खूब अुत्तेजित हो गये और सभा समाप्त होने पर

अुन्होंने शंकररावजी पर हमला कर दिया! शंकररावजीके थोड़े-बहुत साथियोंने अुनका बचाव किया, परन्तु दूसरे दिन वहां सभा हुई तब कांग्रेसी लोगोंका बहुमत होनेके कारण विरोधी लोग सभास्थलसे बाहर निकल कर अपशब्दों और गालियोंकी गर्जना करते रहे! मेरे कुछ स्नेहियोंने मुझसे कहा कि गालियां देनेवाले लोगोंने मेरे नामका भी अुपयोग किया और होली जैसी धांधली मचाओ!! वैसे तो फैजपुरके कांग्रेस अधिवेशनके बाद तथा चुनावके आरम्भसे ही कांग्रेस विरोधी लोगोंने शंकररावजीको बदनाम करनेमें कोअी कोशिश अुठा नहीं रखी थी। और पूना, बंबअी तथा नागपुरके कुछ विरोधी अखबारोंमें नाम दिये बिना हम दोनोंके बारेमें गुप्त प्रचार चलता ही था (क्योंकि मैं शंकररावजीके आश्रममें रहकर सेवाकार्य करती थी), फिर भी मैंने अुसकी ओर ध्यान नहीं दिया था। ये ही अखबार पू० महात्माजीके बारेमें भी गंदा प्रचार करते थे। अिसलिअे अुन्हें 'पाप' मानकर मैं कभी अुन्हें हाथमें भी नहीं लेती थी। लेकिन यह प्रसंग बिलकुल अलग था। अिसमें खुली बीभत्सता थी। जिसलिअे मुझे दुःख हुआ और मनमें विचार आया कि राजनीतिक विरोधमें चरित्र-सम्बन्धी बदनामी भी होने लगेगी, तो आगे चलकर शंकररावजीके लिअे कांग्रेसका सेवाकार्य करना कठिन हो जायगा। अिसलिअे मैं अिस गांव और प्रान्तको छोड़कर चली जाअू तो ठीक होगा। मेरा निमित्त नहीं रहेगा तो फिर केवल राजनीतिक विरोध बाकी रह जायगा। परन्तु अुससे शंकररावजीका कोअी खास बिगाड़ नहीं होगा।

यह सोचकर मैंने पू० महात्माजीको ब्योरेवार पत्र लिखकर अपना अिरादा बताया और सासवड़ तथा महाराष्ट्र छोड़कर अन्यत्र जाकर सेवा करनेकी तैयारी दिखाअी। यह भी लिख दिया कि वे मुझे स्थान बतायेंगे तो वहां जानेको भी मैं तैयार हूं। अिस पत्रका अुत्तर राजकोटसे मिला।

अपने बहाचारके मामलेमें पू० महात्माजीको मैंने बताया कि श्री शंकरराव पर हुअे हमलेके साथ मेरे ब्रह्मचारका कोअी सम्बन्ध नहीं था। हम दोनों महाराष्ट्रमें थे, तो भी हमारे कार्यक्षेत्र अलग थे। वे राजनीतिके क्षेत्रमें काम करते थे, मैं रचनात्मक सेवाक्षेत्रमें थी। हम शायद ही सार्वजनिक रूपमें साथ आते थे। फैजपुर कांग्रेस अेकमात्र अपवाद हुअी। परन्तु

सासवडके जिस आश्रममें मैं रहती थी असके संस्थापक शंकररावजी थे, अितना कारण विरोधियोंके लिअे काफी था। और लोगोंने जिस घटनाका अनुचित राजनीतिक लाभ अुठाया था।]

राजकोट,
२३-५-'३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज ही मिला। पढ़कर तुरन्त नारणदासको दे दिया। देवके बारेमें मैंने अखबारोंमें पढ़ा था। अिसका अुपाय सहनशीलता और काल है। आक्षेपोंका अुत्तर भी न दिया जाय। अुनकी सभाओंमें भी न जाया जाय। देव यदि न गये होते तो डॉ० खरे अितने न गुर्राते। प्रतिपक्षी न हो तो गाली देनेवालेको मजा नहीं आता।

तू देवका संग छोड़े अिसकी मुझे आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। जब तक दोनोंके मन निर्दोष है और संग केवल सेवाके लिअे ही है तब तक देवको छोड़नेकी या तेरा काम बदलनेकी जरूरत मुझे मालूम नहीं होती। संभव है कि तेरा बाह्याचार बदलनेकी जरूरत हो, परन्तु यह तो तू ही सोच सकती है अथवा मुझसे तू मिले और मैं जी भरकर तुझसे बातें कर सकूं तो ही पता चले।

मैं दूसरी तारीखको बम्बअी पहुंचनेकी आशा रखता हूं।

बापूके आशीर्वाद

१८९

बम्बअी,
२६-६-'३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी मिला। मेरी दृष्टिमें भी तू दस वर्षकी ही है। सदा अैसी ही रहना। मैं यहां काममें डूबा हुआ हूं। यहां मैं पहली तारीख तक हूं।

बापूके आशीर्वाद

[पू० महात्माजीके पत्रोंके मराठी अनुवाद 'प्रसाद-दीक्षा' के लिअे मुझे १२५ रुपये मिले। मैंने अुन्हें पू० महात्माजीको अर्पण करना चाहा और अिसके लिअे अुनसे अनुमति मागी। अिस बारेमें अुन्होंने अपनी राय बताअी।

श्री केलकरने अुस समय अपनी आत्मकथा 'गतगोष्टी' के नामसे अेक बडे ग्रथके रूपमें प्रकाशित की थी। अुसमें पू० महात्माजीके बारेमें. अुन्होंने अपने बहुतसे कडवे मत लिखे थे। अुसकी चर्चा मैंने पू० महात्माजीको लिखे अपने पत्रमें की थी।

स्वामी सत्यदेवका कौनसा वचन मैंने अुद्धृत किया था, यह अब याद नही आ रहा है। बहुत करके 'गतगोष्टी' में श्री केलकरने यह वचन दिया होगा। परन्तु स्व० लोकमान्य तिलक महाराजके साथ पू० महात्माजीका सत्य पर आधारित नीतिके सम्बन्धमें जो मतभेद हुआ था अुसके बारेमें मैंने पूछा था।

बिहारमें रामगढ़ कांग्रेसका अधिवेशन होनेवाला था। वहा स्त्रियोमें पर्दा होनेसे स्वयसेविका-दलका सगठन करनेका काम बहुत मुश्किल था। अेक दिन श्री शकररावजीके नाम श्री राजेन्द्रबाबूका तार आया: "स्वय-सेविकाओंके शिविरके लिअे प्रेमाको भेज दें।" श्री शकररावजी मुझे जानेके लिअे कहने लगे। अपने रिवाजके मुताबिक मैंने पू० महात्माजीको पत्र लिखकर आज्ञा मागी थी।]

अेक बार मैं वर्धामें थी — या सेवाग्राममें यह याद नही — तब स्व० श्री महादेवभाअी मुझसे कहने लगे, "आप अितना सूत कातती हैं तो बापूको अपने सूतकी धोतिया क्यो नहीं देती?" मैंने कहा, "मेरी बडी अिच्छा है कि मैं अुन्हें अपने सूतकी धोती दू। परन्तु अुन्हें तो बहुतोंसे धोती भेंटमें मिलती होगी। मेरी धोती यो ही पडी पडी सडती रहे तो फिर देकर क्या करूं?" वे कहने लगे, "अरे, कहा भेंट मिलती है? कोअी नही देता!" मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने पूछा, "बम्बअीसे अवन्तिकाबाअी गोखले और गौरीबाअी खाडिलकर तो भेजती थीं!" वे कहने लगे, "अैसी दो अेक कही न कहीसे आती

हागी। परन्तु बापूजीको जरूरत तो रहती ही है।" यह सुनकर मैंने सकल्प किया कि हर साल अपने सूतकी दो धोतिया पू० महात्माजीको अर्पण करूगी — खास तौर पर अुनकी वर्षगाठके दिन। १९३९ में पहली बार मैंने धोतियां भेजी और बादमें अन्त तक सवल्पके अनुसार भेजती रही। अुनके अवमानके बाद भी धोतीके बजाय अुतने सूतकी आटिया अुनका पवित्र स्मरण करके सेवाग्राम आश्रमको अर्पण करती हू।।

जब मैंने पू महात्माजीको पहली बार धोतिया भेजी तब अुन्हाने चि० कनुसे मुझे अेक काड लिखवाया। अुसका आशय यह था "पू० बा अेक दिन पू० बापूजीसे कहने लगी 'आप जो धोती पहनते हैं वह फट गअी है। दूसरी हमारे पास नही है। क्या किया जाय?' तब पू० बापूजीने कहा, 'भगवान देगा।' और अुसी दिन आपका पत्र आया कि आपने धोतिया भेजी हैं। अिससे प्रसन्न होकर पू० बापूजी पू० बासे कहने लगे, 'देखो, भगवानने धोती भेज दी।' फिर मुझसे कहा, 'यह बात प्रेमाको लिखकर बता दना।' अिसलिअे यह कार्ड आपको लिख रहा हू।"]

सेगाव-वर्धा,
२९-८-'३९

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज ही मिला। राखी तो अमतुलसलामने बाधी और पत्र मैं लिख रहा हू।

पहले तो तेरे प्रश्नोंके अुत्तर १२५ रुपये देवको क्या नही दे दती? पुस्तकके लिअे कोअी दे तो लेनेमें आपत्ति नही, और जो आये वह सब अथवा अुसमें से जितना तू दे सके अुतना देवको दे दे।

दवकी यह बात मुझे बिलकुल समझमें आती है कि अुनका खर्च महाराष्ट्रसे ही निकलना चाहिये। यदि महाराष्ट्र खर्च न अुठाये तो समझना चाहिये कि महाराष्ट्रको अुनकी सेवा नही चाहिये।

पटवर्धन जब चाहे तब मेरे साथ आकर रह सक्ते हैं। यहां (जगहकी) तगी तो हमेशा रहती ही है।

मुझसे जब आया जाय तब आ जा। कम या ज्यादा जगहका तेरे लिअे प्रश्न ही नही है। यहा आओी कि तू अच्छी हुअी ही समझ। हां, अितनी

बात जरूर है कि मुझे बीचमें कहीं जाना पड सकता है। तो भी क्या? और जाना पडेगा तो तू तुरत जान लेगी।

केलकरको जीतनेका जो प्रयत्न मैंने किया अुसे मेरा मन जानता है और वे स्वय जानते हैं। अुन्हे (कांग्रेस) कार्यसमितिमें लेनेवाला भी मैं ही था। अुसका अुद्देश्य अेक ही था कि वे लोकमान्यके अुत्तराधिकारी माने जाय। जिस हद तक अुनके अनुकूल बना जा सके और अुन्हे जीता जा सके अुस हद तक वैसा करना मैं अपना धर्म समझता था। अब भी समझता हू। लोकमान्यके साथ मतभेद होने पर भी मैं अपनेको अुनका पुजारी मानता हू। अुनकी विद्वत्ता, अुनकी देशभक्ति और अुनकी बहादुरीके लिअे मेरे मनमें पूरा आदर था।

स्वामी सत्यदेवने जो कहा अुसमें जरा भी सचाओी नहीं है। मेरे मुहसे अैसा वचन निकल ही नही सकता। वचन निकले तो मेरा सत्य और मेरी अहिंसा लज्जित हो।

मैं अवश्य मानता हू कि देशहितके लिअे वे असत्य और हिंसाका आचरण कर सकते थे। अुन्होंने मुझसे ही कहा था। यह चीज पत्र-व्यवहारका विषय भी बनी थी। अुन्होने 'शठ प्रति शाठ्यम्' का प्रतिपादन किया था। अुसके विरुद्ध मैंने कहा था, 'शठ प्रत्यपि सत्यम्' — यह क्या तू नहीं जानती थी?

मैं मानता हू कि तेरे सब प्रश्नोके अुत्तर पूरे हो गये।

तेरे पत्रकी मैं प्रतीक्षा कर ही रहा था। अपनी प्रवृत्तिके बारेमें तूने जो लिखा अुसके सबधमें मुझे कोओी आलोचना नही करनी है। तू जो करे मुझसे पूछकर ही करना चाहिये, अैसा मैं नही मानता। भूल हो जाय तो भी क्या? मुझे विश्वास है कि तू आश्रमके व्रतोको ध्यानमें रखकर ही जो करना हो सो करती है और करेगी।

हां, राजेन्द्रबाबूने तेरे विषयमें पूछा था। मैंने कहा था कि 'प्रेमा जिम्मेदारी अुठाने योग्य अवश्य है। वह जिम्मेदारी ले तो मैं विरोध नहीं करूगा। अैसा हो तो आपके अूपरसे भारी बोझा अुतर जायगा। परन्तु मैं अुस पर दबाव नही डालूगा। जिसके लिअे आपको देवसे माग करनी चाहिये। प्रेमा अुनके मातहत काम करती है।' अब तो बस न?

सुशीलाका पत्र अिसके साथ है। धोतिया आने पर काममें लूंगा। भले वे कैसी भी हों।

बापूके आशीर्वाद

१९१

[पू० महात्माजीके अिससे आगेके दो पत्र बिना तारीखके हैं। पू० महात्माजीकी अनुमति लेकर श्री राजेन्द्रबाबूकी आज्ञानुसार मैं रामगढ़ कांग्रेसके लिअे स्वयंसेविका-दलका संगठन करने बिहार गअी। अेक बार अक्तूबरका पूरा महीना वहां रही। अुस समय प्रवास करके मैंने प्रचारका काम किया। बादमें दिसम्बर १९३९ में फिर गअी। वहां चार महीने रहकर शिविर चलाया और रामगढ़ कांग्रेसका अधिवेशन पूरा होनेके बाद २० मार्चको वहांसे रवाना हुअी।

यह पत्र मुझे अक्तूबर १९३९ में बिहारके दौरेमें मिला था, अैसा स्मरण है। अुस समय कांग्रेस कार्यसमितिने (यूरोपमें दूसरा महायुद्ध शुरू हो जानेके कारण परिस्थितिका विचार करके) अिस आशयका प्रस्ताव पास किया था कि कांग्रेसकी नीतिमें 'अहिंसा' का प्रथम स्थान नहीं है। अिससे मेरे मनमें यह भय पैदा हुआ कि कहीं कांग्रेस पू० महात्माजीका नेतृत्व न खो बैठे! मेरी तो अटल श्रद्धा थी कि पू० महात्माजीका अवतार-कार्य ही 'भारतका स्वातंत्र्य' है; और अुनके नेतृत्वमें ही कांग्रेस अुसे प्राप्त कर सकेगी। अब यदि कांग्रेस अुनका त्याग कर देगी तो देशको और दुनियाको भी कितना नुकसान अुठाना पड़ेगा, अिसका विचार मनमें आने पर मैं घबराअी और पू० महात्माजीको पत्र लिखकर अपनी वेदना अुन्हें बताअी। यह पत्र अुसका अुत्तर है।]

सेगांव-वर्धा,
(सी० पी०)

चि० प्रेमा,

तू क्या निराश होती है? तेरी श्रद्धा कितनी छिछली है? सारा जगत विरोध करे तो भी जो टिक सके वही है श्रद्धा, अुसीका मूल्य है। अुसके बिना अहिंसा कैसे टिक सकती है? तू यह कहे कि तेरेमें अहिंसा

है ही नही, तो यह दूसरी बात हुआी। अैसा हो तो अिसमें तू क्या कर सकती है? परन्तु अैसा हो तो अिसमें निराशा किस लिअे? तब तो जो हो अुसे तुझे देखते रहना चाहिये। मुझमें सच्ची अहिंसा होगी तो तुम लागोंमें से किसी न किसीमें अैन मौके पर वह दीप्त होगी ही। परन्तु मुझमें अगर नहीं होगी तो तुम सबमें वह कहांसे आयेगी? अिस-लिअे परीक्षा तो मेरी हो रही है। अिससे तुझे तो (खुशीसे) नाचना चाहिये।

बिहारमें तूने अच्छी शुरुआत की है। मगर अब क्या होगा? किया हुआ काम व्यर्थ कभी नहीं जाता। लौटते समय तो यहां तू अुतरेगी ही।

बापूके आशीर्वाद

१९२

[यह पत्र बहुत करके जनवरी १९४० में मिला होगा। बिहारमें मैंने अक्तूबर और दिसम्बर १९३९ तथा जनवरी १९४० में दौरा किया। तब वहां स्व० श्री सुभाषबाबूके फॉरवर्ड ब्लॉकका जोर जगह जगह दिखाओी देता था। अुसमें गांधी-सेवा-संघ और कांग्रेसके कुछ कार्यकर्ता फंसते दिखाओी दिये। अिस बारेमें कुछ किस्से मैंने पू० महात्माजीको पत्रमें लिख भेजे। अिस पर अुन्होंने यह पत्र दोनो संस्थाओंके अध्यक्षोंको पढनेके लिअे भेजा।

प्रभा अर्थात् प्रभावती देवी जयप्रकाश। बिहारमें स्वयंसेविकाओंका दल खड़ा होनेवाला था। जनताने अुस पुकारको स्वीकार कर लिया। परन्तु दलकी सरदारी करनेवाली कोओी बहन चाहिये थी। अिसके लिअे योग्य महिला नहीं मिली। मेरी नजरके सामने प्रभावती बहन थीं। अुन्हींको जिम्मेदारी सौंपनेका मेरा विचार था, क्योंकि वे ही अकेली योग्य दिखाओी देती थीं। परन्तु जब बिहारमें मैं पहली बार अक्तूबरमें गओी और पटनामें वे मुझसे मिलीं अुस समय अुन्होंने कोओी विशेष अुत्साह नहीं दिखाया था। अुन्होंने यह आश्वासन दिया था कि अभी मेरी तबीयत ठीक नहीं है; अेकाध महीनेमें कामके लायक ताकत आ जाने पर काम किया जा सकेगा। दूसरी बार दिसम्बरमें जब मैं वहां गओी तब प्रभा-

वती बहन सेवाग्राम गओी हुओी थी। अुन्हें भेजनेके लिओ मैंने पू० महात्माजीको पत्र लिखा। अुसीका यह जवाब है।

अिस पत्रके बाद मैंने प्रभावती बहनके साथ लगनसे पत्रव्यवहार शुरू किया। पहले तो, "तबीयत अच्छी नहीं है, मुझे अंग्रेजी पढ़ना है" अैसा अेक विचित्र अुत्तर मिला। अुसके बाद मुझे जरा ब्यौरेवार लिखना पड़ा कि 'आपके प्रान्तकी प्रतिष्ठाका सवाल है। अतः अंग्रेजी पढ़नेकी बात अभी तो आपको छोड़नी चाहिये। स्वयंसेविका-दलके लिओ नेतृत्व करनेवाली कोओी महिला चाहिये और वह बिहारकी ही हो तो शोभा दे। अिस जिम्मेदारीके लायक और कोओी महिला मुझे मिली नहीं। अिसलिओ आपको यहां आना पड़ेगा।" जिससे प्रभावती बहन अपने दायित्वके प्रति सावधान हुओी और पू० महात्माजीकी अनुमति लेकर रामगढ़ आ गओी। फिर तो अुन्होंने वहां सुन्दर काम कर दिखाया।]

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र बहुत ही सबरंगसे भरा है। राष्ट्रपति और किशोरलाल भाओीको वह पत्र पढ़वाया। दोनों विचारमें पड़ गये। प्रभाका स्वास्थ्य अच्छा नहीं कहा जा सकता। यहां आओी है। अुसमें पहले जैसा अुत्साह नहीं रह गया है। कल रातको ही आओी। मैंने अुससे बातें नहीं की। हुक्म देकर तो आज भी वापस भेज सकता हूं। परन्तु यह तो तू नहीं चाहेगी। अभी तो यह यहीं रहे तो ठीक। अुसका मन जरा शांत हो जाय, शरीर अच्छा हो जाय, फिर आगेका विचार करूंगा।

बापूके आशीर्वाद

१९३

२९-१-'४०

चि० प्रेमा,

बा की खास मांग प्रभासे मिलनेकी न होती तो प्रभा तुरंत वहां जा जाती। अुसके स्वास्थ्यका तू ध्यान रखना। तब वह तुझे जितना चाहिये अुतना काम देगी। परन्तु तू यह कहां नहीं जानती?

बापूके आशीर्वाद

१९४

दिल्ली,
५-२-'४०

चि० प्रेमा,

यह आ रही है प्रभा। अब अुसे हाथमें लेना। अुसे दूध, घी और कुछ फलोंकी जरूरत रहेगी। अिसके बिना वह शरीरको टिका नहीं सकती। अिन चीजोंके बिना काम चलाया जा सके तो बहुत ही अच्छा। परन्तु यह प्रयोग अिस समय करने लायक नहीं है। यह अिससे काम लेनेका समय है। अुसकी खुराकके लिअे जो पैसा खर्च हो वह तू मुझसे मंगवा लेना। बाकी सब तो प्रभा ही तुझे कहेगी।

हम कल सवेरे वापस जा रहे हैं। बा साथ आ रही है।

बापूके आशीर्वाद

१९५

[मैं बिहारमें थी तब मेरे हाथसे वाह्याचारकी कुछ भूलें हुअी थीं। सासवड लौटी तब राष्ट्रीय सप्ताहमें प्रायश्चित्त-स्वरूप सात दिनके अुपवास मैंने किये। रिवाजके मुताबिक पू० महात्माजीको समाचार देनेके बजाय पहले अुपवास शुरू कर दिये, बादमें पत्र भेजा। अुसका यह जवाब है। अुपवास पूरे होनेके बाद मैं सेवाग्राम जाकर अुनसे मिली और सारी बातें अुनके साथ कर लीं।]

सेवाग्राम,
१८-४-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पैड[1] भी मिला।

तूने अुपवासके बारेमें पहले लिखा होता तो अच्छा रहता। मैं शायद तुझे न रोकता। परन्तु तुझे अुसका ज्यादा अच्छा अुपयोग बताता।

[1] हाथ-कागजका पैड भेजा था।

अब अुपवासके बाद तुझमें शक्ति धीरे धीरे आ रही होगी। तेरा पत्र अधूरा है। जो कहना चाहिये वह तू नहीं कह सकी, यह तेरे लिअे ठीक नहीं माना जायगा। अब लिख सके तो लिखना। आकर बातें कर लेनी हों तो आ जा।

बापूके आशीर्वाद

१९६

[काग्रेसकी ओरसे देशमें स्त्री-सगठन करनेकी योजना तैयार की जा रही थी और अुसमें भाग लेनेका मुझसे आग्रह किया जा रहा था। मैंने पू० महात्माजीका मार्गदर्शन अिस विषयमें मागा था।]

सेवाग्राम-वर्धा,
१०–६–'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सब कुछ गडबडीमें पड गया है। अिसमें से मार्ग निकालना होगा। हम दैवाधीन हैं। अुसे जो करना होगा वह करेगा।

सगठनके बारेमें तेरी आत्मा कहे वैसा करना। मेरा विरोध नहीं है। प्रोत्साहन भी नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

१९७

[२१ जून, १९४० के दिन वर्धामें हुअी काग्रेस कार्यसमितिने काग्रेसकी नीतिकी घोषणा करनेवाला प्रस्ताव स्वीकार किया। अुसमें स्पष्ट रूपमें कहा था कि, "अब आगे काग्रेस गाधीजीके साथ अन्त तक नहीं चल सकती।" अिसलिअे पू० महात्माजी अब 'अेकाकी योद्धा' रह गये — यह कल्पना असह्य होनेसे मैंने अुन्हें पत्र लिख भेजा था। यह अुसीका अुत्तर है।]

सेवाग्राम,
२५-६-'४०

चि० प्रेमा,

घबराती क्यों है? अैसा तो होता ही रहता है। अिसीमें मेरी परीक्षा है। 'अपूर्व अवसर' (-वाला भजन) याद है? "अेकाकी विचरतो वळी स्मशानमां" — 'अेकाकी विचरता हू और वह भी स्मशानमें' अिस भजनकी अिन कड़ियों पर विचार कर लेना। कमेटी दूसरा कुछ कर नहीं सकती थी। सवाल तो सबके सामने खड़ा है। तुम सब भी क्या करोगे, यदि मैं खोटा रुपया साबित होअू? हमने वीरोंकी अहिंसा आजमाअी ही नहीं। अब समय आया है। 'मुसीबतमें अडिग खड़ा रहे वही मर्द' — यह कहावत मुझे मेरे मेमन मुवक्किल सुनाया करते थे। तू हाशियार हो जा।

बापूके आशीर्वाद

१९८

[जुलाअीके पहले सप्ताहमें कांग्रेस कार्यसमितिने दिल्लीमें प्रस्ताव पास किया। वह प्रस्ताव श्री राजाजीने तैयार किया था। खान अब्दुल गफ्फारखां अहिंसाके हिमायती थे। वे अकेले ही पू० महात्माजीके साथ रहे। पांच सदस्य तटस्थ रहे। बाकी सब — सरदार वल्लभभाअी भी — राजाजीके साथ थे। अिस प्रस्तावसे मुझे बड़ा आघात पहुंचा था। बुढ़ापेमें पू० महात्माजीका अत्यन्त कड़ी कसौटीका समय आया था, जिससे मुझे चिंता भी हुअी थी। अगस्तमें पूनामें अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठक होनेवाली थी। वहां आप जायंगे या नहीं, यह भी मैंने महात्माजीसे पूछा था।]

सेवाग्राम-वर्धा,
१२-७-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा सर्वार्पणका पत्र मिल गया। तुझसे अिससे कम मिल ही नहीं सकता। मेरी चिन्ता न करना। मुझे निराशा तो है ही नहीं। कमेटीके प्रस्तावसे तेरे जैसा आघात भी नहीं पहुंचा। तू 'हरिजन' और 'हरिजन-

बन्धु' पढ़ती रहना। मुझे नओी रचना तो करनी ही पड़ेगी। परन्तु अैसे कामके लिअे मैं अपनेको अभी तक बूढ़ा मानता ही नहीं।

तेरी वर्षगाठके आशीर्वाद गाड़ी भरके लेना। वर्षगाठ आवे तो अेक वर्ष कम हुआ न?

मेरा वहां आना जरा भी निश्चित नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

१९९

सेवाग्राम,
७-८-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। सच्ची अहिंसा तो अगर प्रगट होनेवाली होगी तो अिसी समय प्रगट होगी। पहले तो हमें *अपना घर ही सुधारना होगा।* जो हमसे जुदा हो गये हैं अुनके प्रति अुदारता दिखाना हमारा प्रथम धर्म है। अिसमें सफल होंगे तो दूसरा कदम हमें आसान मालूम होगा। यदि अिसमें असफल होंगे तो अगला कदम अुठाया ही नहीं जा सकता। अिसकी स्पष्ट प्रतीति हो रही है या नहीं? 'हरिजन' और 'हरिजन-बन्धु' खूब सावधानीसे पढ़ना।

बापूके आशीर्वाद

२००

[रामगढ़ कांग्रेससे लौटनेके बाद मैंने अेक पुस्तक लिखी थी: 'सत्याग्रही महाराष्ट्र'। अुसमें लोकमान्य तिलक महाराजके अवसानसे लेकर फैजपुर कांग्रेस तकके महाराष्ट्रके राजनीतिक अितिहासका वर्णन था। महाराष्ट्र कांग्रेसमें परिवर्तनवादी और अपरिवर्तनवादी कार्यकर्ताओंमें संघर्ष कैसे चला और बादमें महाराष्ट्रमें कांग्रेस-निष्ठा और पू० महात्माजीका नेतृत्व अिन दोनोंका अुत्कर्ष कैसे होता गया, यह सारा अितिहास अुसमें *वर्णन किया गया था।* यह पुस्तक मैंने पू० महात्माजीको समर्पण की

थी। अिसलिअे पुस्तककी अेक प्रति अुन्हें भेजी और लिखा, "आपको मराठी भाषा अच्छी तरह नहीं आती और आप अनेक कामोंमें फंसे हुअे हैं। अिसलिअे पुस्तक न पढ़ सकें तो भी कमसे कम 'अर्पण-पत्रिका' तो पढ़ ही लीजिये।" अुस पत्रका अुत्तर अिसमें है।

अुनकी वर्षगांठकी भेंट — मेरे सूतकी दो धोतियां भी भेजी थीं।

सेवाग्राम,
६–१०–'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। पुस्तक मिली। अर्पण-पत्रिका पढ़ी। धोतियां पहनी थी और अभी तक दूसरी धोतियोंके साथ पहन रहा हूं। पुस्तक अपने पास रख ली है। पढ़ लेनेकी अिच्छा तो है।

बापूके आशीर्वाद

२०१

[व्यक्तिगत सत्याग्रहकी तैयारियां हो रही थीं। मैंने पूछा कि अुसमें स्त्रियोंके लिअे स्थान है या नहीं। कारण, प्रारंभमें तो अैसा लगता था कि पू० महात्माजी नेताओं तथा धारासभाके सदस्योंको ही जेल भेजना चाहते थे।]

सेवाग्राम,
१८–१०–'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। स्त्रियोंके लिअे अिसमें अवश्य स्थान है। परन्तु मुझे यह पता नहीं है कि यह लड़ाओ मुझे और देशको कहां ले जायगी। सब ओीश्वरके हाथमें है।

बापूके आशीर्वाद

२०२

सेवाग्राम,
२८–१०–'४०

चि० प्रेमा,

तू कैसी है? अनशन तो कपालमें लिखा ही दीखता है। सत्याग्रहीको कभी कभी तो करना ही पडता है। परन्तु मेरे बिना तू न जी सके तो खुशीसे मेरे साथ चलना। परन्तु वह लघन करके नहीं। योगाग्नि प्रगट करके जल मरना। तू जो अुपवास करती है अुसे लघन ही कहा जायगा। अुपवासका अधिकार होना चाहिये। जो यह समझते हैं वे तो मेरे जैसेके अुपवाससे नाचेंगे। वे जिस अुपवासको अुत्सव मानेंगे। अुसके आसपासका दूसरा काम करेंगे। अुपवासके लिअे शर्तें तो होंगी ही। अुनका पालन हो जाय तो अुपवास बन्द हो जाय। अकल न गवा बैठना।

बापूके आशीर्वाद

२०३

[अपने अपने प्रांतोंसे चुने हुअे सत्याग्रहियोंको कानून-भंग करनेकी अिजाजत दी जाय, यह सिफारिश पू० महात्माजीने कांग्रेस कार्यसमितिसे की, अिसलिअे श्री शंकररावजीने मुझे भी जेल जानेके लिअे 'तैयार' रहनेको कहा। यह बात मैंने पू० महात्माजीको बताओ। अुसका जवाब।]

सेवाग्राम,
११–११–'४०

चि० प्रेमा,

शंकरराव कहें वैसा करना। परन्तु शंकरराव मुझसे पूछे बिना कुछ न करें।

बापूके आशीर्वाद

२०४

सेवाग्राम,
२५-११-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आया, तेरा नाम भी सूचीमें देखा। अीश्वर तेरी रक्षा करेगा।

बापूके आशीर्वाद

२०५

[पू० महात्माजीकी अनुमति पानेके बाद श्री शंकररावजीकी तैयार की हुअी योजनाके अनुसार महाराष्ट्रमें पहले-पहल सत्याग्रह मैंने किया और मुझे तीन मासकी सादी सजा हुअी। जेलसे पू० महात्माजीको पत्र लिखकर मैं अपनी जेलवासी बहनोंकी हालत अुन्हें बतलाया करती थी। जेलसे लिखे गये मेरे पहले ही पत्रका यह अुत्तर है। श्री सरोजिनी देवी नायडू मेरे पहली बारके जेलवासके समय हमारे साथ ही थीं। परन्तु अुनकी तन्दुरुस्ती बिगड़ जानेसे सरकारने अुन्हें छोड़ दिया।

पहली सजा भुगतकर छूटनेके बाद पू० महात्माजीकी अनुमतिसे मैं अुनसे मिलने सेवाग्राम गअी थी। जेलवासी बहनोंके बारेमें अुनसे मैंने कुछ प्रश्न पूछे, जिनके अुत्तर अुन्होंने लिख दिये। अिसलिअे कि मैं दूसरी बार जेल जाअू तब वह पत्र लेकर ही अंदर जाअू और अुनके हाथका लिखा हुआ पत्र बहनोंको पढ़ाअू तो अुनको सत्यनाके बारेमें किसीको शंका न रहे। अिसलिअे अिस पत्र पर तारीख या हस्ताक्षर नहीं हैं। (देखिये आगे पत्र नं० २०६)

श्री लीलावतीबहन मुन्शी अुस समय जेलमें थीं। मेरे साथ अुन्होंने पू० महात्माजीको सलाहके लिअे अेक प्रश्न भेजा था। वे बम्बअी नगरपालिकाकी सदस्या थीं। अुस नगरपालिकाके नियमानुसार प्रति वर्ष चार कौमोंमें से अेकका प्रतिनिधि मेयर चुना जाता था। यह कौमी चुनाव

बन्द करनेके प्रयत्न चल रहे थे। लीलावतीबहनका विचार यह था कि मेयर-पदके लिअे कोअी स्त्री-अुम्मीदवार खडी रहे, तो हिन्दू, मुस्लिम, पारसी, अीसाअी सब कौमें अुसका स्वागत करेंगी और कौमी चुनाव बन्द करनेमें बडी सहायता मिलेगी। अुस वर्षके मेयर हिन्दू थे। अगले वर्षके लिअे अुम्मीदवार होनेकी लीलावतीबहनकी अिच्छा थी, कारण नगर-पालिकाके कुछ सदस्योंने अुन्हें सुझाव दिया था कि वे खडी हों तो सभी सदस्य अुनके अनुकूल होंगे, मेयर कांग्रेसी रहेगा, यह भी अिसमें लाभ था। अिसलिअे अुन्होंने पू० महात्माजीका मार्गदर्शन मांगा था।

जेलमें कमजोर, रोगी और बच्चोंके साथ भी स्त्रियां आने लगी थीं। बादमें वे सत्याग्रहीकी मर्यादाओंका पालन नहीं कर पाती थीं। अूंचा वर्ग प्राप्त करनेवाली स्त्रियां अपराधी स्त्रियोंसे अधिकार जतला कर सेवा लेती थीं। अिन सब बातोंकी पू० महात्माजीके साथ चर्चा हुअी थी। सेवाग्राममें लौटते ही मैं तुरत जेल चली गअी। तब यह पत्र साथ ही था।]

सेवाग्राम-वर्धा,
२८-१२-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा सुन्दर पत्र मिला। धोत्रे[1] वगैराको भेजकर नारणदासको भेजूंगा।

सुना है कि सुशीला तुझसे मिल गअी है। तब तो सब कुछ सुना होगा। भागवत[2] ने भी मुझे लिखा तो था ही।

कताअी, प्रार्थना वगैरा नियमानुसार होती है यह सरोजिनीदेवीने भी कहा था। सब बहनें अच्छे शरीर लेकर और रचनात्मक कार्यके लिअे खूब कुशलता प्राप्त करके निकलेंगी, अैसी आशा रखता हूं।

प्रभावती अभी यहीं है। जयप्रकाशके साथ अुसने खूब यात्रा की। यहां तीन दिन रही। आज या कल जयप्रकाश आयेंगे और ले जायंगे। तेरी दी हुअी शिक्षा और दीक्षा अुसके लिअे फलवती सिद्ध हुअी है।

१. श्री रघुनाथराव धोत्रे। गांधी-सेवा-संघके मंत्री।
२. आचार्य भागवत। सासवडके हमारे आश्रमके संचालक।

पहली जनवरीको अपने काम पर लग जायगी। अेक मासकी छुट्टी लेकर निकली थी।

मेरे स्वास्थ्यके बारेमें अखबारोंमें जो निकले अुसे निकम्मा समझना। मेरी तबीयत ठीक ही रहती है। अपनी तन्दुरुस्तीकी सम्हाल रखता हूं। जब तक औश्वरको मुझसे काम लेना है तब तक तन्दुरुस्ती अच्छी ही रहेगा।

बा साथ ही है। वह शान्त है। लीलावती यहां आनेके बारेमें मानस काम ले रही है।

महादेव वगैरा सब मजेमें हैं।

बापूके सबको आशीर्वाद

२०६*

लीलावतीबहनसे कहना कि अुन्हें सिरपारा ही विचार करना है। अपना कभी नहीं। बापेलीके खातिर अनुशासन हरगिज नहीं तोड़ा जा सकता और स्त्रियोंको अुसमें नहीं जोड़ा जा सकता। यह स्त्रियोंकी दृष्टिसे भी भयानक है। परन्तु औसाअियोंकी बारी आये तब औसाओी स्त्रीको लिया जा सकता है। असी तरह हिन्दुओंकी बारी आये तब हिन्दू स्त्रीको और मुसलमानकी बारी आये तब मुसलमान स्त्रीको लिया जा सकता है।

जो बहनें कमजोर और रोगी हैं अुन्हें वापस हरगिज नहीं आना चाहिये। असी तरह कोअी बहन अपने बच्चेको लेकर जेलमें नहीं जा सकती।

क और ख वर्गवाली बहनें जितनी कम सुविधायें भोगें अुतना अधिक अच्छा है। असलमें तो न चाहे कुछ भी ज्यादा सुविधा न भोगना ही हमारा आदर्श है।

जुर्माना अदा करनेमें अुद्देश्य यह है कि जैसे जेलका भय छोड़ा है वैसे ही जुर्मानेका भी छोड़ें। असका यह अर्थ कभी नहीं कि अुधार

* देखिये पत्र २०५ की टिप्पणी।

लेकर भी जुर्माना अदा किया जाय। परन्तु अपनी कीमती चीज कौड़ियोंके मोल भी न जाने दी जाय।

यही मानकर चलना है कि लडाओी लम्बी चलेगी। समझौतेकी वातें सिर्फ अपनी कमजोरीकी ही निशानी हैं। अन्तमें जीत हमारी है, यह निश्चित समझना चाहिये।

२०७

सेवाग्राम,
१२-४-'४१

चि० प्रेमा,

सासवडसे तेरा पत्र मिला था। कल जेलका मिला। वहाका वर्णन पढ़कर मुझे खूब आनद हुआ। सब बहनें अेकदिल होकर रहे और श्रद्धापूर्वक रचनात्मक काम करती रहे, तो मै जानता हू कि स्वराज्य नजदीक आयेगा।

६ तारीखको यहा बच्चा और बीमाराको छोडकर सबने २४ घटका अुपवास किया। आज भी यही सकल्प है। कुछ अखड चरखे चल रहे है। अेक अखड पीजन और कुछ अखड तकलिया भी चल रही है। यह व्यवस्था करनेमें बाबला[1] और कनू[2]का बडा हाथ है। सब अुत्साहस काम कर रहे है।

अब तेरे प्रश्न।

१ अुपवासके विषयमें तो अितना ही कह सकता हू कि वह मेरे जीवनका अग है। कभी भी आ सकता है। अिस समय तो वह मेरे सामने नही है। परन्तु मेरा बल अुसकी शक्तिमें और अुसके प्रति मेरी श्रद्धामें रहा है। सत्याग्रही अन्तमें मरकर अपनी टेक रखेगा जैसे हिंसावादी दूसरोंको मारकर टेक रखता है। कितना बडा भेद! अिसलिअे किसीका मेरे अुपवासकी सभावनाका तलवारके रूपमें देखना

---

१ श्री महादेवभाअीका लडका नारायण देसाअी।

२ श्री नारणदास गाधीका लडका कनू गाधी।

हो नहीं चाहिये। आनेवाला ही होगा तो अुसका स्वागत करना और प्रार्थना करना कि अुसे सहन करनेका बल अीश्वर मुझे दे।

२ हरिजन बन्द हो गया क्योंकि दिल्लीसे अपेक्षित पत्र मिला। अुसे परन्तु दबाया जा सकता कि सरकारकी वृत्ति 'हरिजन'का स्वागत करनेकी नहीं थी और अिस बारकी लड़ाअीमें 'हरिजन'का लड़नेका कारण नहीं बनाना है।

३ वर्तमान राजनीतिका असर मुझ पर कुछ नहीं है क्योंकि मैंने समझ लिया है कि अभी कुछ नहीं हो सकता। अिसीलिअे मैंने कहा है कि यह लड़ाअी लम्बी है। अिसीमें हमारा हर प्रकारसे श्रेय है।

महादेव फिर अेक दिनके लिअे आज बम्बअी गये हैं। दुर्गाको बीमार छोड़कर गये हैं। दोनों हिम्मतवाले हैं। अिन दोनोंने समझकर अपनी आहुति दी है।

सब बहनोंको मेरे आशीर्वाद।

वा अभी दिल्लीमें है। अुसकी तबीयत ठीक होती जा रही है, परन्तु समय लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

२०८

सेवाग्राम-वर्धा,
११-५-'४१

चि० प्रेमा,

अिस बार तुझे देरसे पत्र लिख रहा हूं। कामकी भीड़ बहुत है। और तेरा पत्र भी पत्रोंके ढेरमें दबा रहा।

वहांके समाचार तो मुझे मिलते ही रहते हैं।

मेरा स्वास्थ्य अुत्तम रहता है।

सबकी परीक्षा अच्छी तरह हो रही है।

अम्तुस्सलाम तो बीमार ही रहती है। बा दिल्लीमें अभी कमजोर हो गअी है। सुशीला[1] खूब सेवा-शुश्रूषा कर रही है। अच्छी हो जानेकी आशा रखती है। लीलावतीको बाकी सेवाके लिअे भेजा है।

---

१ डॉ० सुशीला नय्यर प्यारेलालजीकी बहन।

महादेव अहमदावाद गये हैं। वे अब १३ तारीखको वापस आयेंगे।

वहां सब बहन खूब कातती होगी। प्रार्थना अच्छी तरह चलती होगी।

बापूके आशीर्वाद

२०९

[मैं जेलमें थी तब मेरी बम्बअीकी सहेली सुशीला पै बम्बअीमें मातीझिरेसे बीमार थी। छूटनेके बाद मैं अुससे मिल आअी।

राधाबहन — स्व० श्री मगनलालभाअीकी पुत्री — सुशीलाके घरके नीचेकी मजिलमें अपने भाअीके साथ रहती थी।]

सेवाग्राम,
४-७-'४१

चि० प्रेमा,

जिस पत्रके लिअे मैंने लिखा था कि नहीं मिला वह बादमें मिल गया।

तू लिखती है वह सच है। बहुत तेजीसे काम करनेमें कभी कभी पत्रोंके जवाब रह जाते हैं। और कभी कभी दुबारा दे दिये जाते हैं। जैसा तेरे बारेमें हुआ। जवाब देना रह जाय अिसके बजाय दुबारा दे दिया जाय यही अच्छा है न? मैंने तुझे पत्र लिखा तभी मुझे खयाल हुआ था कि अिसका अुत्तर तो दे दिया होगा। तेरे पत्रोंका अुत्तर अधिकतर लौटती डाकसे लिखनेकी आदत पड गअी है। परन्तु अूपर जवाबकी तारीख नही लिखी थी। अिससे भ्रम हो गया। यह तो हुआ व्यर्थका व्याख्यान।

सुशीलाका मोतीझिरा भयकर कहा जायगा। राधाबहनने अुसके बारेमें मुझे कुछ अधिक विस्तारसे लिखा है। आज मैं सुशीलाको लिख रहा हू। जमनादासने अुसकी बडी सेवा की।

अप्पा[1] तो बढ़िया काम कर ही रहे हैं। अिस बार तू सीधी आवेगी ही।[2]

धनुष-तकली मिली होगी। वह ठीक बनी हो तो गति अच्छी देती है।

अपना अुर्दू अच्छी कर लेना। लिखना और पढ़ना आना ही चाहिये।

अपना वजन बढ़ाना।

कनूकी मगनी हो गअी, अैसा माना तो था। परन्तु अब अैसा नहीं है। भविष्यमें क्या होगा, यह तो दैव जाने।

राजकुमारी[3] जलवायु-परिवर्तनके लिअे शिमला गअी हैं।

मेरी और बाकी तबीयत अच्छी है। महादेव देहरादून गये हैं। आज मुलाकात करके लौटेंगे। अहमदाबादमें अुन्होंने बढ़िया काम किया अैसा कहा जायगा।

सब बहनोंको

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री अप्पासाहब पटवर्धन, महाराष्ट्रके 'गांधी' कहलानेवाले पुराने रचनात्मक कार्यकर्ता। अेम० अे० की परीक्षा पहली श्रेणीमें पास होनेके बाद पूनामें प्रोफेसर हो गये। परन्तु असहयोग आन्दोलनके समय (१९२०) में नौकरी छोड़कर पू० गांधीजीके पास सत्कार त्वें सत्याग्रहाश्रम चले गये। वहांसे लौटकर महाराष्ट्रमें अपने रत्नागिरी जिलेमें रहे। आज साठसे अधिक अुमरमें भी भारी सेवाकार्य कर रहे हैं। खास तौर पर हरिजनोंके काममें अुन्होंने क्रांति करा दी है। कुछ सुन्दर पुस्तकें भी लिखी हैं।

२ अिसके बादका अेक वाक्य जेलवालोंने काट दिया है।

३ राजकुमारी अमृतकौर।

[अेक वर्षमें चार बार जेल हो आओी। तीन बार तीन तीन मासकी सादी सजा भुगती। चौथी बार तीन महीनेका कठोर कारावास मिला था। परन्तु देशमें क्रिप्स साहब आनेवाले थे, अिसलिअे जैसे सब राजनीतिक कैदी छोड़ दिये गये, अुसी तरह मैं भी सजाका समय पूरा होनेसे पहले छोड़ दी गओी। अुसके बाद पू० महात्माजीको पत्र लिखकर मैंने पूछा कि, "अब मैं क्या करूं?" यह अुसीका अुत्तर है।]

सेवाग्राम,
५-१२-'४१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

तू छूटी अिसलिअे तेरी और मेरी जिम्मेदारी बढ़ गओी है। तेरे तुरत जानेकी बात अभी नहीं है। मैं सोच रहा हूं।

९ तारीखको मैं बारडोली जाअूंगा। तू राजकोट हो आ। वहांका काम पूरा करके बारडोली आना। वहांसे तुझे तुरत नहीं निकालूंगा।

लक्ष्मीबाओी[1] के विषयमें मुझे पूरा सन्तोष है। वे बहुत भली और विचारशील हैं।

तेरी तबीयत अच्छी होगी। और कुछ लिखनेके लिअे समय नहीं है। नागपुरसे छूटे हुअे सब लोग मिलने आये हैं। भरी मंडलीमें यह सब लिख रहा हूं।

बापूके आशीर्वाद

१ श्री लक्ष्मीबाओी वैद्य। पूनाकी महिला कार्यकर्त्री। वे बी० अे०, बी० टी० हैं। काशी हिन्दू विश्वविद्यालयमें कुछ वर्ष तक अध्यापिका थीं। बादमें पूना आकर लड़कियोंके अेक हाओीस्कूलमें अध्यापिकाका काम करने लगीं। व्यक्तिगत सत्याग्रहके समय अिस कामसे अिस्तीफा देकर जेल गओीं। खादीकार्यमें अुन्हें विशेष रुचि थी। जेलमें भी अच्छी सेवा की। मेरे साथ सेवाग्राम आओी थीं। पू० महात्माजीने कामके सिलसिलेमें अुन्हें कुछ मास आश्रममें रख लिया था।

२११

[छूटनेके बाद मैं राजकोट गजी। सुशीला तथा श्री नारणदास-काकासे मिलकर बारडोली गजी। सुशीला भी मेरे साथ थी। परन्तु अेक दिनके बाद वह बम्बजी चली गजी। मैं लगभग अेक सप्ताह तक बारडोलीमें ही रही। वहां कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक अनेक दिन तक चलती रही।

कुछ नेता और अुच्च कोटिके माने जानेवाले रचनात्मक कार्यकर्ता पू० महात्माजीके बारेमें आपसमें बात करते थे तब आलोचना करते थे कि, "बूढ़ा आजकल जरूरतसे ज्यादा बोलता रहता है। सामनेवालेको मूर्ख ही समझकर बकवास करता रहता है। जिसके पास अुदाहरण तो केवल दक्षिण अफ्रीकाके ही होते हैं। 'जब मैं दक्षिण अफ्रीकामें था' यह वचन बार-बार कहता रहता है। हममें कोजी बुद्धिशक्ति है या नहीं? हमारी तो सुनता ही नहीं।" अैसी आलोचना अपने सामने होती सुनती तब मैं चिढ़ जाती और आलोचकोंसे लड़ने लगती। बादमें अेक-दो भाजियोंसे मैंने कहा कि, "देखिये, यह बात मैं महात्माजीसे कहूंगी।" "भले ही कहिये," अुन्होंने अुत्तर दिया। जिसलिअे मैंने महात्माजीको पत्रमें सावधान किया।]

सेवाग्राम,
३०-१-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरा काम वहां अच्छा चल रहा है।

तूने मेरे बातूनीपनके बारेमें याद दिलाकर अच्छा किया। मूर्ख तो मैं तुझे कहूंगा ही। परन्तु तेरी आलोचना ध्यानमें रखूंगा। तू दूसरोंकी जो साक्षी देती है, वह मेरे लिअे चेतावनीका काम करेगी। अेक बात जरूर सच्ची लगती है। मेरे पिछले अनुभव दलील नहीं कहे जा सकते। मुझे भले ही वे बल दें। परन्तु दलीलमें अुनका गौण स्थान है। पिछले

अनुभव भी दूषित हो तो अुन्हें दुबारा करनेसे दोष कम नहीं हो जाता बल्कि बढ़ता ही है।

तेरी दूसरी शिकायत तो मैं बिलकुल मान लेता हूं। मैं लम्बे रसपूर्ण पत्र लिखने जैसा नहीं रहा। यह तो जेल जाअू तब हो। वैसे ही बात करनेवाला भी मैं नहीं रहा। समयाभाव बहुत बढ़ गया है।

लक्ष्मीबाअी आज जा रही हैं। मुझे वे बहुत अच्छी लगी हैं। अुनका स्वास्थ्य बिलकुल अच्छा हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

२१२

[श्री शकररावजी बहुत बारीक सूत कातते हैं। व्यक्तिगत सत्याग्रहके समयके जेलवासमें वे रोज अेक गुंडी सूत कातते थे। ये सब गुंडियां मेरे पास ही आती थीं। अेक बार सेवाग्राम गअी तब पू० महात्माजीको मैंने शकररावजीके सूतका सुन्दर थान दिखाया। अुन्होंने अुसकी तारीफ की। परन्तु पास ही किशोरलालभाअी बैठे थे। वे कहने लगे, 'बापूजीको खादी दिखाती हो, परन्तु देती क्यों नहीं? अैसी सुन्दर खादी खुद ही रख लेती हो!' शकररावजीके सूतकी साड़ियां मैंने कुछ सहेलियोंमें बांट दी थीं। अब पू० महात्माजीको भी देनेका सुझाव आया तो मुझे बहुत आनन्द हुआ और मैंने कहा "अब आगेसे हर वर्ष शकररावजीके सूतके दो अुत्तरीय वस्त्र पू० महात्माजीको देती रहूंगी। अपने सूतकी जो दो धोतियां भेजती हूं, अुनके साथ यह जोड़ी भी भेजती रहूंगी।" महात्माजीके अवसान तक यह क्रम चला।

अिस समय श्री शकररावजीके सूतके दो अुत्तरीय पहली ही बार बुनवाये थे। ये अुत्तरीय तथा मेरे सूतकी दो धोतियां मैंने श्री शकर-रावजीके साथ ही सेवाग्राम भेजी थीं। अैसा खयाल है कि अुस समय वर्धामें कांग्रेस कार्यसमितिकी बैठक हो रही थी। पू० महात्माजीको मैंने पत्र भी भेजा। अुसमें लिखा था, "आप जब यह भेंट पहनेंगे तब आपको देखने मैं वहां नहीं हूंगी, परन्तु शकररावजीकी आंखोंसे आपको देखूंगी। अिसलिअे वे वहां रहें तब तक अिन्हें पहनियेगा।"]

सेवाग्राम,
१७-३-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। धातिया भी मिली। कल पहन कर जानेवाला हू। अधिक नहीं लिखूगा।

बापूके आशीर्वाद

२१३

[श्री सुचेताबहन कृपालानी अुस समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी महिला शाखाकी अध्यक्षा नियुक्त हुअी थी। महाराष्ट्र शाखाकी अध्यक्षा बननेके लिअे व मुझसे कह रही थीं। अिसलिअे पू० महात्माजीसे मैंने पूछा। यह अुसीका जवाब है।]

सेवाग्राम,
२२-३-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी प्रसादी रोज पहनी जाती है। खूब हलकी धातिया है। बढ़िया है।

तू सुचेताको लिख दे "मुझको कहा गया है कि यह काम मैं हाथमें लू। आप लिखें कि मुझे क्या क्या काम करने पड़ेंगे। मेरे हाथ भरपूर रहते हैं। यों तो मैं महिला-सेवा कर ही रही हू। विशेष क्या करना चाहिये, जो हम नहीं करते हैं?"

अैसा पत्र लिखना और जवाब मुझे भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

२१४

सेवाग्राम,
१६-४-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

शंकररावकी धोतियोंकी सब अीर्ष्या करते हैं। तू जो व्यवस्था करे वह स्वीकार है।

शंकररावको कोअी पकड़े, यह संभव नहीं है।

अपने लेखोंमें मैं भरसक विचार भरता हूँ। तू ध्यानपूर्वक अुन्हें पढ़ना और न समझ सो पूछना।

शंकररावकी जो शंका थी अुसका अुत्तर दे दिया है। वह तूने पढ़ा होगा।

अन्तमें तो सबको, जैसा मैंने लिखा है अपनी जिम्मेदारी पर काम करना है। जिस हद तक हम गांवोंमें फैलेंगे अुसी हद तक सुशोभित होंगे, अिस बारेमें मुझे शंका नहीं है।

सूतके माप (चलन) के बारेमें मेरी योजनाको समझना। 'खादी-जगत' में आयेगी।

बापूके आशीर्वाद

२१५

सेवाग्राम-वर्धा,
१९-४-'४२

चि० प्रेमा,

तेरे सब पत्र मिल गये हैं। अुन सबके अुत्तर दिये हैं। लंबे अुत्तर थे, परन्तु डाकका ठिकाना न हो तो मैं क्या करूं? तू ही कह। 'हरिजन' पढ़कर जो ठीक लगे वह करना।

बापूके आशीर्वाद

२१६

बम्बअी,
१८-५-४२

चि० प्रभा

तेरा पत्र मिला। तू मेरे पत्रोंकी शिकायत करती है, यह ठीक नहीं है। पत्र जिधर अुधर चले जाय तो जिसका क्या किया जाय?

तूफान जैसा है अुस जिसमें अगर तू वह भार अुठा सके तो उठा लेना। परन्तु ब्योरेवार जान तो ले कि क्या करना है। जिसके लिये मेरी तैयारियोंमें तुम्हारा स्थान कहां रहेगा, यह सोच लेना है। जिसमें तो शंकरराव ही तेरा अधिक मार्गदर्शन कर सकते हैं, क्योंकि अुन्हींको वहांका भार वहन करना है। मैं क्या करूंगा, यह तो अेकाअेक नहीं कह सकता। परन्तु जो होगा वह तुरन्त ही करना होगा।

मैं नेता बन जाना चाहता हूं, यह कहना तो ज्यादती है।

यहांसे शनिवारको निकलनेकी आशा रखता हूं। मेरी तबीयत ठीक ही है।

सुशीला कहां है जिसका भी मुझे पता नहीं है, तब मेरे पास आओगी तो कहांसे होगी?

बापूके आशीर्वाद

मेरे साथ महादेव, प्यारेलाल, कन्हैया हैं। प्यारेलाल मथुरादासको[1] देखने नासिक गये हैं।

२१७

[क्रिप्स साहबकी समझौतेकी बातचीत असफल हुआी और सामूहिक सत्याग्रह सामने दिखाअी देने लगा। जापानने ब्रह्मदेश पर कब्जा जमा लिया था और भारत पर आक्रमण होनेकी संभावना दिन-दिन बढ़ती जा रही थी। जनतामें बेचैनी बढ़ रही थी। कार्यकर्ता और नेता परेशानीमें पड़े थे। भविष्यमें क्या करना होगा, जिस बारेमें लोगोंमें

१ स्व० श्री मथुरादास त्रिकमजी। पू० महात्माजीके भानजे, जो बम्बअी नगरपालिकाके मेयर थे। अुस समय नासिकमें बीमार थे।

अनेक प्रकारके अनुमान होने लगे। नेताओंमें अेकवाक्यता नही थी। अिस-लिअे सेवाग्राम जाकर पू० महात्माजीसे बातचीत करके अपनी तमाम शंकाओंका निवारण कर लेनेकी मेरी अिच्छा हुअी। अिसलिअे मैंने अुन्हें पत्र लिखकर वहां आनेकी अनुमति मागी थी।]

सेवाग्राम
८-७-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तू आनेकी अिजाजत मांगती है, सो मेरी तरफसे तो है ही। पर देवकी अिजाजत सच्ची। आये तब शंकाओंका निवारण करा लेना। तू अपनी बुद्धि काममें ले तो सब शंकाओंका अुत्तर तू ही दे सकती है। मैं विश्वासके साथ कहता हूं कि तेरी शंकाओंमें कोअी सार नही है। अधिक लिखनेका समय नही है।

बापूके आशीर्वाद

२१८

[प्रारंभमें वर्षगांठके आशीर्वाद हैं।

बम्बअीमें अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठक होनेवाली थी, अिसलिअे मैंने सेवाग्राम जानेके बदले बम्बअी जाकर ही पू० महात्माजीसे मिलना पसन्द किया। बम्बअीसे मैं अुनके साथ सेवाग्राम जानेका मनोरथ रखती थी।]

सेवाग्राम,
२३-७-'४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरे मनोरथ पूरे हों। अिसमें सब-कुछ आ गया।

बम्बअीमें मुझसे मिलना और वहां तुझे संतोष न हो तो जरूर मेरे साथ यहां आना, यदि मैं आअूं तो। आजका लाभ अुठायें, कलकी कौन जानता है।

बापूके आशीर्वाद

२१९

[१९४२ के अगस्तम अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी जो प्रसिद्ध बैठक बम्बअीमें हुअी थी, अुसे देखने मैं गअी थी। ८ अगस्तकी रातको पू० महात्माजीका भाषण हुआ, फिर राष्ट्रपति मौलाना आजाद बोले। अुसके बाद बैठक पूरी हुअी। अुस समय व्यासपीठ पर जाकर मैं पू० महात्माजीसे मिली और अुनसे पूछा 'अब आगे क्या कार्यक्रम है?" अुन्होंने कहा "अब ११ तारीखको वर्धा जाना है।" मैंने कहा, "महात्माजी, मैंने तो सुना है कि आज रातमें आपको और सब नेताओंको पकड़ लिया जायगा।" वे हंसते हंसते कहने लगे "मेरे जितना साफ और विस्तृत भाषण देनेके बाद अगर सरकार मुझे पकड़ेगी तो वह मूर्ख कहलायेगी।" मुझे आश्चर्य हुआ। अेक क्षण चुप रहकर मैंने कहा, "आप वर्धा जाय तो मुझे आपके साथ चलना है।" वे बोले "तुझे मेरे साथ बैठकर ही वर्धा चलना है!"

परन्तु भावी कुछ और ही था। ९ तारीखको सुबह चारसे पहले सब नेता पकड़ लिये गये। श्री शंकररावजीके पकड़े जानेकी खबर मुझे समय पर मिल जानेसे मैं वहां मौजूद रह सकी। परन्तु कोअी सवारी न मिलनेसे मैं बिड़ला-भवन समय पर नहीं पहुंच सकी और न गिरफ्तारीके समय पू० महात्माजीसे मिलना ही हुआ। किसनका भाग्य था कि वह अुसी समय पकड़ी गअी और अेक ही रेलगाड़ीमें अुसने पूना तक पू० महात्माजीके साथ यात्रा की। शामकी गाड़ीसे मैं पूनाके लिअे रवाना हुअी। परन्तु पूनाके शिवाजी नगर स्टेशन पर मुझे गिरफ्तार कर लिया गया और मैं रातको यरवडा जेल पहुंच गअी।

फिर डेढ़ वर्ष तक जेलवास रहा, जिसका अितिहास यहां देनेमें औचित्य नहीं होगा। पू० कस्तूरबा बीमार पड़ी तब मुझे अुनकी सेवाके लिअे आगाखां महलमें ले जानेवाले थे। जेलके बड़े अधिकारी मेजर भंडारीने पू० महात्माजीकी मेरे लिअे की गअी सूचनाको स्वीकार भी कर लिया था। परन्तु दूसरे ही दिन दूसरे नामकी मांग की और बादमें मनु गांधीको बुलवा लिया गया, अित्यादि बातें मुझे छूटनेके बाद मालूम हुअीं। खैर,

हमेशाकी तरह अिस बारका कारावास भी मेरे लिअे तपस्याका सिद्ध हुआ — सबसे कडी तपश्चर्या कहू तो भी अतिशयोक्ति नही होगी।

मैं ३० जनवरी १९४४ के दिन जेलमुक्त हुअी। मेरे साथ श्री मणिबहन पटेल थी। राजनीतिक स्त्रियामें सबसे अतमें छूटनेवाली हम दो थी। मुझे क्या पता था कि चार वर्ष बाद ठीक अिसी दिन पूज्य महात्माजीका बलिदान होगा!!

सासवड आश्रमके अधिकाश सदस्योके जेल चले जानेसे और बाकी लोगोके अपने अपने गाव चले जानेसे आश्रम बन्द हो गया था। अुसे फिर चालू किया गया। परन्तु हमारे पुराने साथी और आश्रम-सचालक आचार्य भागवत जेल जानेके बाद भिन्न विचारके हो गये थे। वे पहले काग्रेसके पक्के अनुयायी थे और अब अुसके कट्टर विरोधी हो गये! आश्रमका और अुनका सम्बन्ध टूट गया। बादमें तो आश्रमको महिलाश्रमका रूप प्राप्त हुआ।

छूटनेके बाद मैं काग्रेसके काममें लग गअी थी। फरवरी-मार्चमें १९ दिनकी अवधिमें महाराष्ट्रके अलग अलग जिलोका दौरा करके मैं मुक्त हुअे मुख्य मुख्य कार्यकर्ताओंसे मिल आअी। बादमें अिन काग्रेस कार्यकर्ताओकी बैठक शुरू हुअी और काग्रेस रचनात्मक समितिकी स्थापना हुअी। अुसके अध्यक्ष खेरसाहब थे। अेकाध महीने मैंने कामचलाअू मत्रीका काम किया। बादमें काग्रेसके पुराने मत्री पैरोल पर छूटे तो अुन्हे मत्रीपद सौंपकर मैं साधारण सदस्य रही। सरकारने प्रान्तीय काग्रेस समितिको गैरकानूनी घोषित किया था। जब तक सरकारने काग्रेस परसे प्रतिबन्ध अुठा नही लिया तब तक प्रान्तमें रचनात्मक समितिके द्वारा ही काम होता था। प्रान्तीय अध्यक्षके आदेशानुसार मैं प्रान्तीय स्त्री-सगठनका काम करती थी। काग्रेस बन्धन-मुक्त हुअी, अुसके बाद भी वह काम चालू ही रहा। सन् १९५१ के चुनावके बाद मैंने काग्रेसकी सदस्यता छोड दी। अुस समय महाराष्ट्र काग्रेस स्त्री-सगठन समितिने प्रस्ताव पास करके स्वय ही अपना विसर्जन कर दिया! (सन् १९५२)

पू० महात्माजी छूटे तब मैं सासवडमें ही थी। बादमें अुनसे मिलने पर्णकुटी गअी। बहुत दिनो तक अुनका मुकाम पूनामें ही था। फिर कारणवश पत्रव्यवहार शुरू हुआ।

पू० महात्माजी थोड़े दिन पूनामें रहे और बादमें जुहू चले गये। वहां मैं अनसे मिलने गयी थी। तब श्री सरोजिनीदेवी अनके पास रहती थीं। डॉ० सुशीला नय्यर मुझे और मेरी सहेलियोंको महात्माजीके पास ले गयी, परन्तु श्री सरोजिनीदेवी अिससे बहुत नाराज हुओ। अन्होंने मुझसे कहा, मैं बूढ़ेकी चौकीदार हूं। मेरी अिजाजतके बिना किसीको यहां नहीं आना चाहिये। पू० महात्माजीकी बीमारीमें अन पर पहरा लगे तो अिसमें मुझे बुरा लगनेका कोओ कारण ही नहीं था। अिसलिअे फिर मैं अनसे मिलने गयी ही नहीं। परन्तु वे फिर पूना आये तब रचनात्मक समितिके सदस्योंको अनका मार्गदर्शन मिले, अिसके लिअे कार्यक्रम तय करनेका काम मुझे सौंपा गया था। प्रो० लिमये अुस समय समितिके सूत्रधार थे। अन्होंने ऑपरेशन कराया था, अिस कारण वे कमजोर हो गये थे। पू० महात्माजीको मैंने पत्र तो लिखा, परन्तु अुसमें जुहूके 'द्वारपाल' का स्मरण कराया और लिखा कि, "पूनामें यदि कोओ द्वारपाल हो तो अुसकी अिजाजत लेकर ही मैं कार्यक्रमकी योजना करना चाहती हूं।"

पू० महात्माजी जेलसे छूटे तब अुनकी तबीयत ठीक नहीं थी, अिसलिअे बहुत दिन तक किसी प्रकारका सार्वजनिक कार्यक्रम नहीं हो सका। परन्तु जुहूमें स्वास्थ्यलाभ करनेके बाद वे पूना लौट आये और डॉ० दिनशा महेताके नर्सिंग होममें रहने लगे। वहीं ता० २९-६-'४४ को लगभग ५० महाराष्ट्रीय कांग्रेस कार्यकर्ताओंको अुन्होंने मार्गदर्शन दिया।]

पूना,
१८-६-'४४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र आज मिला। तू जैसी जल्दबाज थी वैसी ही आज भी है। तेरी अिच्छा हो तब आ जाना। यहां तो द्वारपाल मैं ही हूं। लोग मेरी प्रार्थना स्वीकार करके आते ही नहीं। जिन्हें मैं बुलाबूं वे हों या जिन्होंने आनेकी मांग की हो और मैंने मान ली हो वे ही आते हैं। मुझसे जांच कराये बिना किसी अफवाहको मानना ही नहीं चाहिये। ढीठ बनकर अिस बार यहां कोओ नहीं आ सका। तेरे पास नाम हो तो

मुझसे पूछ लेना। जुहूके बारेमें भी पूछना हो तो पूछ लेना। तेरे पत्राको कार्आ नहीं रोक्ता।

प्रो० लिमयेसे मिलनेके सकल्पसे ही मैं आया हू। जिन्हे वे लाना चाहे ला सकते है। अभी तो प्रोफेसर खुद ही बीमार हैं। जो काम मैं जुहूमें नही कर सका वह यहा कर लेना चाहता हू। प्रो० लिमये तेरे द्वारा पुछवायें, अिसे मैं अपने लिअे धरमको बात मानता हू। अुनके लिअे मेरे मनमें बहुत आदर है।

आज तो अितना काफी है न? देशपाडेजीके[1] बारेमें अलग लिखनेकी जरूरत नही रह जाती न?

बापूके आशीर्वाद

२२०

[पू० महात्माजीसे मैंने विनती की थी कि वे सेवाग्राम जाय तब मुझे भी अुनके साथ चलना है। अुन्होंने अनुमति दे दी। तदनुसार मैं अुनके साथ वर्धा होकर सेवाग्राम गअी। बम्बअी जाना नही हुआ। कल्याण होकर ही हम लोग वर्धा गये।]

पचगनी,
२४–७–'४४

चि० प्रेमा,

सुशीला दिल्ली गअी है। मैं यहासे २ अगस्तको रवाना होअूगा और सीधा वर्धा जाअूगा। बम्बअी जाना पडेगा या कल्याण, यह नही जानता। तू मेरे साथ अथवा जब मरजीमें आये तब आ सकती है। मेरी तबीयत अच्छी है।

बापूके आशीर्वाद

---

[1] श्री गो० आ० अुर्फ तात्यासाहब देशपाडे। वे महाराष्ट्र प्रान्तीय काग्रेस समितिके मत्री थे।

२२१

[जेलसे छूटनेके बाद दमकी बिगड़ी हुआी हालतको देखकर पू० महात्माजी अुपवासका विचार करने लगे थे। कार्यकर्ताओंके आग्रहके कारण तथा हालत सुधारनेके लिअे जीतोड़ मेहनत करनेका वचन सबोंने दिया जिसलिअे अुन्होंने अुपवास स्थगित कर दिया। २८ और २९ अक्तूबर १९४४ को बम्बअी राज्यकी चारों प्रान्तीय कांग्रेस समितियोंके कार्यकर्ताओंकी अेक बड़ी सभा बम्बअीमें हुआी। अुसमें रचनात्मक कार्यको विशाल स्वरूप देनेका और अुसकी गति बढ़ाने तथा कांग्रेस संगठनको मजबूत करनेका सबोंने निश्चय किया और अेक योजना बनाओ।]

सेवाग्राम,
६–११–'४४

चि० प्रेमा,

तू बिलकुल पागल है। मौतसे पहले ही मर रही है क्या? अुपवासका डर ही है न? वह आया तो नहीं। अीश्वरकी आज्ञाके बिना थोड़े ही आयेगा? जो अुसका रहस्य समझता है वह तो अुसका स्वागत ही करेगा। अुस दिनको धन्य दिवस मानेगा। अुपवास आया तो वह मुझे अकेलेको ही करना होगा। मेरे साथ कोआी अुपवास नहीं कर सकता। मैं चल बसूं तो बादमें अेकके बाद दूसरेको करनेका अवसर जरूर आ सकता है। परन्तु जिसकी बात आज क्यों की जाय? तू अपने काममें मशगूल रह और दूसरोंको रख।

बापूके आशीर्वाद

२२२

[अुस समय जो अनेक प्रश्न जेलमुक्त कार्यकर्ताओंके सामने खड़े थे, अुनमें से कुछ मैंने पूछे थे। भूगर्भगत कार्यकर्ताओंके बारेमें राय मांगी थी। कांग्रेसमें ही राजनीतिक मतभेदोंकी रस्साकशी चल रही थी। अिस मामलेमें भी पूछा था। पू० महात्माजी जेलसे छूटे तब अुनकी तबीयत बिगड़ी हुआी तो थी ही, परन्तु मानसिक भार सहन करनेकी अुनकी

ताकत भी बीमारी और कमजोरीके कारण घट गअी थी। बहुत दिनके अुपचार और आरामके बाद वे पहलेकी तरह काम करने लगे।]

सेवाग्राम,
१–३–'४५

चि॰ प्रेमा,

पत्रका अुत्तर आज ही दे पा रहा हू। विवश हू।

अखबारो पर भरोसा न करना। मैंने निर्णय नही दिया है। विरोधी लगनेवाले दो मत बताये हैं। सदस्य न बनानेका मत अतिम और अधिक परिपक्व है। परन्तु जो सदस्य बनायें अुसे मनाही नही है।

भाअी पाटीलके साथ मैंने बात नही की। सभव है कि प्रस्ताव मुझे सुरदोदबहनने या और किसीने बताये हो। परन्तु मेरी अनुमतिका क्या अर्थ ? सब अपनी जिम्मेदारी पर काम करे — गाधीवादी हो या विरोधी हो। गाधीवाद जैसी कोअी चीज नही है, यह कहा जा सकता है। समाजवादियोसे मैं अधिक मिला हू। अुनकी बहुतसी बातें मेरे गले अुतरी हैं। अथवा यो कहा जाय कि वे मुझसे अधिक मिलते-जुलते हो गये हैं।

परन्तु मेरा नाम कोअी न ले। मैं भूगर्भमें रहना पसन्द नहीं करता। परन्तु रहनेवालोकी निन्दा नही करता। रहनेकी निन्दा करता हू। दोनोका भेद समझना।

जिन्नासाहबके साथ हुअी बातचीतमें मेरे साथ कोअी नही था। थे, तो थोडे ही। राजाजी। औरोने तो कुछ जाना भी नहीं था।

बाकी सब समझ गया हू। परन्तु ब्यौरेमें जानेके लिअे समय नही है। तू अपने रास्ते चलती रह। जितनी सच्ची स्त्रिया मिले अुन्हे जुटाकर काम कर। सारे देशका भार न अुठा। जो तुझसे हो सके अुसीका भार अुठाना। अधिक पूछना हो तो पूछना।

बापूके आशीर्वाद

निराशा जैसी कोअी चीज न तो मेरे जीवनमें थी और न होगी। सब मर जाय तो भी मुझे निराशा नही हो सकती। मैं जो कहता हू वह भी सच्चा है और भूलाभाअीका प्रयत्न भी सच्चा है। तू अपना काम करती जा।

२२३

[कस्तूरबा स्मारक कोष अेकत्रित हुआ था। अुसमें से संस्था खड़ी हुअी थी। अुसका विधान बन गया था। पू० महात्माजी अुसके अध्यक्ष थे और श्री ठक्करबापा मंत्री बने थे। दूसरे प्रान्तोंमें काम शुरू हो गया था। महाराष्ट्रमें सब जगह ठंडा था। महाराष्ट्रमें आठ लाखका चंदा जमा हुआ था। अेक प्रान्तीय समिति भी स्थापित हुअी थी। अुसमें अधिकांश पुरुष ही थे। महाराष्ट्रकी प्रतिष्ठा न जाय, अिसलिअे कोअी काम शुरू करनेकी मुझे अुत्कण्ठा थी। मैंने स्वयंस्फूर्तिसे अिसकी योजना बनाअी और मंत्री श्री ठक्करबापाको भेजकर महाराष्ट्रमें शिविर शुरू हो अिसका प्रयत्न आरंभ किया। आचार्य भागवतने अिस शिक्षाकार्यमें मदद देनेका मुझे आश्वासन दिया था।]

बम्बअी,
१७-४-'४५

चि० प्रेमा,

तेरे पहले पत्रका अुत्तर दिया या नहीं, यह भूल गया। दूसरा आज मिला। मैं २० तारीखको महाबलेश्वरके लिअे रवाना होअूंगा और महीना भर वहीं रहूंगा। यह घटनाचक्र पर आधार रखता है। वहां तू आये तो ही मिलना हो सकता है। जरूरत हो तो कहीं भी चले जाय। नहीं तो महाबलेश्वर किसलिअे?

तेरी बताअी पुस्तक अभी तक तो नहीं मिली। मिल जायगी। आचार्य भागवत शरीक होंगे, यह अच्छी बात है। यह माना जा सकता है कि मेरी तबीयत ठीक रहती है।

पुस्तक मिल गअी।

बापूके आशीर्वाद

२२४

[श्री भूलाभाअी अुस समय वाअिसरॉय लॉर्ड वेवलसे मुलाकातें कर रहे थे। वे ससदीय कार्यक्रम (Parliamentary प्रवृत्ति) फिरसे शुरू करनेकी हिमायत करते थे। जिस पर कुछ अखबारवाले नाराज हुअे थे। कांग्रेस कार्यसमितिके सदस्य अहमदनगरके किलेमें कैद हैं तब तक भूलाभाअीको सरकारके साथ समझौता करनेका अधिकार नही, अैसे लेख समाचारपत्रोंमें छप रहे थे। और, अेक खबर अैसी भी अखबारोंमें प्रकाशित हुअी थी कि अहमदनगरके किलेमें बन्द कार्यसमितिके सदस्योंको श्री भूलाभाअीकी यह प्रवृत्ति पसन्द नही है।

जिन सब अखबारी बातोंका अुल्लेख मैंने पू० महात्माजीको लिखे पत्रमें किया था।]

पचगनी,
१२–६–'४५

चि० प्रेमा,

तेरा लम्बा खत मिला। मैंने आदर्श बताया है, अुसे सामने रखकर सब सवालोंका जवाब तू ही दे सकती है, जैसे युक्लिडकी आदर्श लाअिन सामने रखकर सब जाननेवाले दूसरी लाअिन बना सकते हैं। अभी देख।

क्योंकि मैं आदर्श जानता हूं, लिखी-पढ़ी बहनोंका अुपयोग [मैं] आदर्श सिद्ध करनेके हो लिअे करूंगा। अुसमें जीवन-वेतन देना पड़े तो दूंगा। लेकिन वे जो लेंगी अुससे अधिक देती रहेंगी। अगर नहीं देंगी तो निकम्मी हैं। अुनको शिक्षिका बनानेके लिअे शिविरकी आवश्यकता होगी तो अैसा करूंगा।

पश्चात् (पिछड़ी हुअी) बहनोंके लिअे छह महीने दू, १२ महीने दू या, अुससे अधिक, वह तो अनुभवकी बात होगी न? मुझको अिसकी दरकार नहीं होगी, क्योंकि अुद्योगोंके मारफत ही [वे] सीखेंगी। अिसलिअे अपना खर्च अुठाती रहेंगी अथवा जल्दीसे जल्दी अुठाने लायक बनेंगी।

मैं निष्फल हुआ अैसा माना जाय तो अुससे क्या? मेरी निष्फलता तो आदर्श नहीं है। और जो आदर्शकी तरफ जाता है अुसको निष्फल कैसे

कहूँ? तू खुद आश्रममें रहकर आदर्शको नहीं पहुँची है। तो आदर्शको पहुँचना असंभव सिद्ध करेगी या तू नालायक सिद्ध होगी?

असमर्थ बहनाको शिविरमें लेनेसे असफलता ही फलित होगी, तो देहातोंको आगे ले जाना असाध्य हो जाता है। आचार्य मापदंड निष्फल सिद्ध हो जायें या तू कहती है असे ही यह कहते हो, तो भी मुझे कुछ डर नहीं। जो आज असंभवित-सा लगता है अुसीको संभवित कर बतानेमें हमारी योग्यता सिद्ध होगी।

सुशीला यहीं है। अुसको मैं यह खत देता हूँ। वह और लिखेगी।

अब दूसरी बात। भूलाभाजीके बारेमें मैंने तुझे [जो] कहा है अुस पर कायम हूँ। वे जिस वक्त यहीं हैं। अभी प्रातः ६-४० हुअे हैं। वे दस बजे जायगे। [जो] जेलमें हैं वे छूटेंगे असा मैं नहीं जानता हूँ। अगर छूटेंगे तो अच्छा ही है। भूलाभाजी पर अगर लोग गुस्से होते हैं तो मुझ पर भी होना चाहिये, क्योंकि अुनका काम जो मैं जानता हूँ अुसे नापसन्द करूँ तो मैं करनेवाला नहीं हूँ। वर्किंग कमेटीके लोगोंने कहा है असा [जो] माना जाता है, अुसे मैं नहीं मानता हूँ। और अगर अुन्होंने कुछ कहा भी है तो बगैर अधिकारके कहा है। जेलमें रहनेवाले बाहरकी बात क्या जानें? मेरे कानूनके मुताबिक तो अुनको यह जाननेका अधिकार भी नहीं है। और मुझसे मतभेद होगा तो क्या हर्ज है? बाहर निकलकर जो करना चाहें वह करनेका अुन्हें अधिकार है। मुझे तो मत देनेका कोअी अधिकार है ही नहीं। मेरी स्थिति तो सलाहकारकी ही है न? अखबारोंकी बात मानना ही नहीं, और माननेसे फायदा भी क्या है? मैं कल मरूँगा असा भविष्य जाननेसे मुझे नुकसान ही है। असा ही अिसमें भी समझो। हाँ, अितना कहूँ [कि] जो अखबारवाले जानते हैं वह भूलाभाजी नहीं जानते। मैं तो जानूँ ही क्या?

अमुक स्थितिमें क्या करूँगा अुसका तो मैं क्या कहूँ? दूसरे भी क्या कहें? मैं आज जो करता हूँ अुस परसे अगर भविष्यका परिचय मिले तो ले लेना। मुझको तो वह भी नहीं, क्योंकि दिन प्रतिदिन मैं समझता जाता हूँ कि काल्पनिक बातों पर अभिप्राय बांधकर हम अपना जीवन बिगाड़ते हैं। जो चीज बने अुस पर हम क्या करते हैं वही सार्थक है। दूसरा सब निरर्थक।

[यहां तकका भाग मूल हिंदीमें है। नीचेका भाग गुजरातीसे अनूदित है।]

मेरी मर्यादा और मेरी दृष्टि तू अभी तक नहीं जानती? कुमारप्पाने अिस्तीफा दिया तो मुझे पूछकर ही दिया न? अगस्त १९४२ के प्रस्तावमें सैनिक सहायता देनेका लिखा हुआ है, अुसमें भी मैं था न? मैं स्वयं अेक चीज करूं और दुनिया अुससे अुलटा करे और मैं अुसका साक्षी बनूं, तो अिससे क्या हुआ? मैं करूं भी क्या? मैं तुझे अितना ही कहता हूं कि अितने समय तक तू मेरे साथ रही और बादमें दूर चली गयी, फिर भी तू अैसा व्यवहार करती है जैसे मेरे साथ ही है, तो भी मैं तुझे यही कहूंगा कि मेरा व्यवहार देख, मेरे वचन देख, अुन पर विचार कर और फिर तुझे जो ठीक लगे वैसा कर। अिसीमें मेरा साथ है अैसा समझ, क्योंकि मैं सबको अपने जैसा नहीं बनाना चाहता। सब जैसे हैं वैसा व्यवहार करें, यही मेरी शिक्षा है। मेरा कहा जिसने पचा लिया होगा वह तो कभी शंकित नहीं होगा और आगे बढ़ता ही जायगा।

मणिबहन भी यहीं है। बाकी सब बातोंका अुत्तर देना सुशीला पै पर डाल रखा है।

बापूके आशीर्वाद

अिसे ध्यानपूर्वक पढ़ना। न समझे तो फिर पूछना।

२२५

सेवाग्राम,
१९–७–'४५

चि० प्रेमा,

तेरा ११ तारीखका पत्र आज पढ़ा। राजकुमारीका भी साथ ही है। डाक कालकामें मिली मालूम होती है। अिस समय साढ़े चार बजे हैं। दातुन-कुल्ली करके यह लिख रहा हूं। मच्छरदानीमें हूं। बत्ती बाहर है। अब प्रार्थनाकी घंटी बजेगी।

तेरी वर्षगांठ आज है। यह पत्र तेरे हाथमें तो दो दिन बाद मिलेगा। तुझे अभी तो बहुत वर्ष बिताने हैं। अुन्हें सुखमें और सेवामें बिताना। सेवा हमारे हाथमें है और सुख-दुःखको समान मानें तो सुख भी हमारे हाथमें ही है। विष्णु[1]को भूलना ही सच्चा दुःख है न? अुसे क्यों भूलें?

तुम पर चिढ़नेकी बात मुझे याद नहीं है। अगर चिढ़ा हूंगा तो कारण रहा होगा। परन्तु मेरी चिढ़ चिढ़ ही नहीं है। यह तो तू समझती है न?

तू अपना शिविर स्वतंत्र रूपसे चलाये और रुपया न मांगे, तो क्या हर्ज है? तुमसे दूसरे सीखेंगे। मैं भी सीखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

२२६

[बम्बअीमें अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठक २१, २२, २३ सितम्बर १९४५ को हुअी थी। अुसमें मैं अुपस्थित थी। अहमदनगरके किलेसे बड़े नेता मुक्त होकर आये अुसके बाद यह बैठक हुअी थी। पू० महात्माजी अपनेको कांग्रेसकी 'अन्तिम आवाज' नहीं मानते थे। सर्वोपरि तो कार्यसमिति ही थी। अिसलिअे सबको यह आशा थी कि अब देशको कोअी निश्चित मार्ग मिलेगा। परन्तु मुझे तो निराशा ही हुअी। कांग्रेसकी आन्तरिक शुद्धि और बाहरी मार्गदर्शन, अिन दोनों मामलोंमें कुछ भी नहीं किया गया। मुझे ऐसा लगा कि अिस बैठक पर १९४२ की पूरी छाया थी। अमुक लोगोंका अभाव भयावह भी लगा। और पू० महात्माजी मौलाना साहबके आग्रहसे अिस बैठकमें मौजूद रहनेके लिअे आये तो थे, परन्तु बीमारीके कारण निवासस्थान पर ही बिस्तरमें रहे। बैठकमें किसीने अुनकी गैरहाजिरीका अुल्लेख करके दुःख तक प्रगट नहीं किया! यह मुझे बुरा लगा। मैंने मराठी दैनिक 'नवा काळ' में अेक लेख लिख भेजा, जो अुस पत्रने छाप दिया। शीर्षक था 'आम्ही कोठें आहोत'? (हम कहां हैं?) अुसमें मैंने अिस बैठककी कड़ी आलोचना की थी।]

1. विपद् विस्मरणं विष्णोः।

पूना,
३०-९-'४५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र पढ़ा। अुत्तर लिखकर पत्र फाड डालूंगा।

तू पागल ही है! मुझे जरा बुखार आ जाय तो अिसमें प्रार्थना करनेकी क्या बात है? और मैं पडालमें न होअूं तो अिसका खेद कैसा? अितने बडे जलसेमें कोअी हो या न हो, अुसका क्या असर हो सकता है और किसलिये हो? मुझे यह सब अनुचित लगता है। जैसा मुझे लिखा है वैसा तूने 'नवा काळ' में लिख भेजा हो तो तूने भूल की है।

तेरे शिबिरके बारेमें मैंने बापाको लिख दिया है। अुसे कुछ दिन हो गये। तुझे अनुमति मिल जानी चाहिये। अुसके साथ अस्पताल हो तो अच्छा ही है।

शकररावजी पर आजकल मैं नाराज हूं, अैसी शका भी तुझे किसलिये होती है? मेरे सामने यह सवाल ही नहीं अुठता। सातारा सम्बन्धी अुनका लेख मैंने नहीं पढ़ा। अैसा बहुत ही कम मेरे पढ़नेमें आता है।

मैं मौन रखूं या न रखूं, अिसके साथ कमेटीके सदस्योंका सम्बन्ध होना ही नहीं चाहिये।

चरखा-द्वादशीके बाद चि० नारणदासके आनेकी सभावना जरूर है।

तू नजदीक होने पर भी मिल नहीं जाती, अिसमें क्या हुआ? तू काम तो करती ही रहती है। फिर मिलनेसे ज्यादा क्या हो जायगा? काम न हो तब तो मिल जानेकी छूट तुझे है ही।

बापूके आशीर्वाद

२२७

पूना,
३-१०-'४५

चि॰ प्रेमा,

तेरे पत्रका मैंने तुझे लम्बा अुत्तर भेजा है। वह अब तो मिल गया होगा। तूने अपना लिखा सच्चा कर बताया है। 'नवा काळ'का लेख मुझे भेजना।

बापूके आशीर्वाद

२२८

['नवा काळ' वाला लेख पू॰ महात्माजीने मगवाया अिसलिअे मैंने भेज दिया। श्री शंकररावजीने मुझसे कहा था कि अंग्रेजीमें अनुवाद करके अुसे अंग्रेजी अखबारोंमें छपवाया जाय। शंकररावजीको वह लेख पसन्द आया था और अुनकी जिच्छा थी कि अुसका व्यापक प्रचार हो। पर पू॰ महात्माजीने वैसा करनेसे मना कर दिया अिसलिअे वह बात वहीं रही।

सितम्बर १९४२ में सुशीला राजकोट छोड़कर बम्बअी आ गअी थी। परन्तु अुसने आन्दोलनमें भाग लिया और दो बार — तीन और अेक महीनेकी — सादी सजा भुगती।

अगस्त १९४४ में मैं पू॰ महात्माजीके साथ वर्धा गअी तब सुशीला भी कल्याणसे मेरे साथ शरीक हो गअी थी। अुसके बाद वह समय-समय पर पू॰ महात्माजीके पास स्वतंत्र रूपमें जाकर थोड़े थोड़े समय रहने और काम करने लगी थी। काम अलबत्ता दफ्तरका ही करती थी।

महाराष्ट्रमें मैं सेवाकार्य करने लगी तब आश्रममें स्वतंत्र सेविकाके रूपमें रह कर ही काम करती थी। सत्याग्रहाश्रमके अनुभवके बाद किसी भी प्रकारकी जिम्मेदारी लेकर काम करनेकी बात मैं हमेशा टालती रहती थी। शंकररावजी कअी बार मुझाते कि "संस्था ही सेवाकार्यका निश्चित रूप है। अिसलिअे स्त्रियोंकी संस्था खोलकर अुसका संचालन करनेसे काम चमक अुठेगा।" मुझे यह बात पसन्द नहीं आती थी। अिस

प्रकार दस वर्ष बीत गये। फिर कस्तूरबा कोष अिकट्ठा हुआ। परन्तु महाराष्ट्रमें काम तो शुरू हुआ ही नहीं। अिसलिअे मनमें विचार आया कि, "चलो, हम कामकी बुनियाद डालें। बादमें अिमारतका काम और किसी बहनको सौंप देंगे। यह महाराष्ट्रकी अिज्जतका सवाल है। कोअी बहन आगे आनेकी हिम्मत नहीं करती, तो हम हीं कामकी शुरुआत करें।" अिस प्रकार मैंने प्रयास आरम्भ किया। परन्तु महाराष्ट्रकी समिति (कस्तूरबा ट्रस्टवाली) कार्यक्षम नहीं है, अैसा अनुभव हुआ। प्रत्येकका मत अलग होता था, बातोंमें समय चला जाता था। परन्तु काम तो होता ही नहीं था। अिसलिअे मैंने श्री ठक्करबापासे मुलाकात करके अुनका आश्वासन प्राप्त किया और काम शुरू कर दिया। सासवडके पास अेक छोटे गावमें शिविर आरंभ किया। परन्तु अुसे शुरू करनेसे पहले जो जो मुसीबतें अुठानी पडी वे मेरी कल्पनाके बाहर थी। स्थानीय समितिकी सहायता तो मिलती ही नहीं थी। समितिके मंत्री अनेक कारणोंसे मुझ पर नाराज थे। शिविरके मामलेमें अुनका मतभेद भी था। ठक्करबापा जानते थे कि महाराष्ट्रमें काम करना आसान नहीं था, और वे स्वयं किसीको प्रेरणा देकर यह काम करा नहीं सकते थे। अिसलिअे प्रान्तीय समितिको अलग रखकर मेरे द्वारा हाथमें लिये हुअे कामको मंजूरी और रुपया दिया जाय, यही अेक मार्ग अुनके सामने था। अुन्होंने यह मार्ग अपनाया। परन्तु वे हमेशा दूर दूर प्रवासमें जाते थे, अिसलिअे रुपयेकी मदद समय पर मिलनेमें कठिनाअी होती थी। शिक्षा और संस्कारकी दृष्टिसे शिविर सफल हुआ। महाराष्ट्रके, खास तौर पर पूनाके, विद्वानोंकी बहुत सहायता मिली। आचार्य भागवत भी पांच महीने शिविरमें आकर रहे और अुन्होंने पढ़ाया।

समय बीतने पर पू० महात्माजीने देखा कि जगह जगह स्थापित समितियां कामके लिअे अुपयोगी नहीं हैं। अिसके सिवा, वे अिस संस्थाका सेवाकार्य और व्यवस्था-तंत्र सब कुछ बहनोंको सौंपना चाहते थे। अिसलिअे अुन्होंने सारी समितियां तुड़वाकर प्रत्येक प्रान्तमें महिला प्रतिनिधि नियुक्त की। महाराष्ट्रमें कोअी योग्य महिला न मिलनेसे यह स्थान कुछ समय तक खाली ही रहा।]

पूना,
६-१०-'४५

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र पढ़कर फाड़ दिया। कस्तरतं[1] सुशीलाके साथ लौटा रहा हूं।

तेरा लेख सुशीलासे पढ़वाकर सुन लिया, ताकि कोओी भूल न करूं। जिसका अंग्रेजी छपवानेमें कोओी सार नहीं। मराठीमें है वही काफी है। जिसमें भाषादोष नहीं है। परन्तु सब कुछ हर समय कहने लायक नहीं होता। तू कभी मिलेगी तब जिस विषयमें बात करेंगे। खास किसी बातके लिओे आना हो तो भी समय निश्चित करा कर आ जाना। तेरे शिबिरके बारेमें बापाने दृष्टियोंको निवेदन भेजा है। १६ तारीखको तो यहां समितिकी बैठक रखी है, तब देख लूंगा।

बापूके आशीर्वाद[2]

२२९

[श्री ठक्करबापाने महाराष्ट्रकी प्रतिनिधिके रूपमें सुशीला पैका नाम सुझाया था। मैं कांग्रेस महिला-संगठन समितिका रचनात्मक कार्य करती ही थी। शिबिरका काम महीनों तक चलता है। जिस प्रकारके सत्या-संचालनकी जिम्मेदारी लेनेके लिओे मैं अपनेको योग्य मानती ही नहीं थी। लोक-संग्रह करनेकी अपनी शक्ति पर सुशीलाको विश्वास था। जिसलिओे वह जिस कामको हाथमें ले लेती तो मुझे अच्छा लगता। जिस-लिओे मैंने भी यह जिम्मेदारी स्वीकार करनेका अुससे आग्रह किया। परन्तु महाराष्ट्रमें काम करना अुसने मंजूर नहीं किया। बुनियाद खड़ी करनेका काम कोओी खेल नहीं है!

लगभग १४-१५ वर्ष पहलेकी घटनाओंको क्रमानुसार याद करके प्रस्तुत करनेमें थोड़ी कठिनाओी मालूम हो रही है। फिर भी मैं प्रयत्न करूंगी। महाराष्ट्रकी प्रान्तीय कस्तूरबा निधि समितिके मंत्री प्रांतके अेक वयोवृद्ध और सेवाकार्यमें जीवन बितानेवाले सज्जन थे। (वे आज

१. 'नवा काळ' में छपे लेखकी।

भी जीवित हैं और सेवा कर रहे हैं।) १९२० से पू० महात्माजीके अनुयायी थे। कस्तूरबा निधि अेकत्र करनेका काम शुरू हुआ तब अुन्होंने मुझे पू० बाका अेक छोटासा जीवन-चरित्र लिख देनेको कहा, ताकि निधि जमा करते समय लोगोंको पू० बाके विषयमें जानकारी मिले। मैं अुस समय बहुत ही काममें थी। अिसलिअे मैंने अुनसे प्रार्थना की कि, "मुझे जरा भी समय नहीं है। अमुक लेखकसे लिखनेको कहिये। वे अच्छा जीवन-चरित्र लिख देंगे।" परन्तु मंत्रीजीने हठ पकड़ लिया कि, "स्त्रीका जीवन-चरित्र स्त्री ही लिखे तो शोभा दे। और आप तो कस्तूरबाको जानती थीं, अिसलिअे आप ही लिखिये।" अैसे दबावसे मैंने रात दिन अेक करके जीवन-चरित-संबंधी अेक लेख लिखा और अुन्हें भेज दिया। परन्तु मंत्रीजीने अुन दूसरे लेखकका ही, जिनका नाम मैंने पहले सुझाया था, लिखा हुआ लेख छपवाया और मेरा लेख लौटा दिया। अिससे मैं नाराज हुआी और अुन्हें अुलाहना दिया, "मैं आपसे पहले ही कह रही थी कि मुझे समय नहीं है, मुझे तकलीफमें न डालिये। अुन सज्जनसे ही लिखवा लीजिये। परन्तु आपने सुना नहीं और मैंने जो लेख भेजा अुसे लौटा दिया। मुझे नाहक क्यों तंग किया?" अिस पर वे मेरा ही दोष निकालने और झूठी दलीलें देने लगे, जिनका मैंने अेकके बाद अेक खंडन कर दिया। अिस पर संतप्त होकर वे व्यर्थकी तकरार करने लगे। वृद्ध होनेसे अुनके प्रति रहे आदरके कारण मैं वापस आ गअी। परन्तु मंत्रीजीके मनमें वह कांटा बहुत समय तक चुभता रहा। बादमें महाराष्ट्रमें कस्तूरबा ट्रस्टका शिविर खोलनेका प्रयास मैं करने लगी। अुससे वे सहमत नहीं हुअे। अुनके विचार भी स्वतंत्र थे। अुन्होंने केन्द्रीय कार्यालयको लिख भेजा कि मेरे साथ प्रान्तीय कार्यालयका सहयोग नहीं हो सकेगा। फिर भी ठक्करबापाने निश्चय किया था कि महाराष्ट्रमें काम शुरू होना ही चाहिये, अिसलिअे अुन्होंने मुझे सहायताका आश्वासन दिया। अिस पर ये मंत्रीजी ट्रस्टके अध्यक्ष पू० महात्माजीसे मिले और अुनके सामने मेरी बहुतसी शिकायतें कीं। अुनमें वह जीवन-चरित्रवाली पुस्तकवाली घटना भी बताअी। "प्रेमाबाअीने मेरा अपमान किया। मेरी सारी अिज्जत पर पानी फेर दिया।" यह वर्णन करते समय अुन

वृद्ध महाशयकी आंखोंसे आंसू बहने लगे। जिससे पू० महात्माजीको बहुत बुरा लगा और वे मुझ पर नाराज हो गये। शिविर अभी शुरू नहीं हुआ था। मुझे मदद दी जाय या नहीं दी जाय, यह बात चल ही रही थी कि बीचमें यह घटना हो गयी।

मेरा खयाल है कि पू० महात्माजीका पूनासे १२-१०-'४५ का लिखा हुआ कार्ड मुझे मिला और तदनुसार मैं १७ तारीखको अुनके साथ घूमने गयी। अुसी समय बहुत करके मुझे पू० महात्माजीकी नाराजीका पात्र बनना पड़ा। वे मुझे फटकारने लगे, "अैसे वृद्ध, सेवा-परायण, माननीय सज्जनका अपमान किया ही कैसे जा सकता है? तू अपनी मर्यादा नहीं जानती।" जैसे जैसे अुलाहने मुझे सुनने पड़े। मैंने कहा कि, "मैं अुनसे बिना कारण थोड़े ही लड़ने गयी थी। अुन्होंने मुझे लेख लिखनेका मजबूर किया था। अुसमें मेरा समय व्यर्थ गया अुसका क्या?" परन्तु महात्माजी मेरी कोअी भी दलील सुननेको तैयार नहीं थे। बहुत ही कठोर बनकर अुन्होंने मुझे आड़े हाथों लिया। मैं समझ गयी कि अब मेरे कामके लिअे मदद नहीं मिलेगी। मैं अुदास होकर अपने स्थान पर चली गयी। मुझे बहुत बुरा लगा। मैं सोचने लगी कि पन्द्रह वर्ष पहले जब मैं जवान और अनुभवहीन थी तब मुझे पू० महात्माजी फटकारते थे वह तो ठीक था। परन्तु अब मेरी अुमर ३५ से अधिक हो गयी है। मैंने स्वतंत्र रूपसे काम किया है। महाराष्ट्रमें ही नहीं परन्तु बिहार जैसे दूसरे प्रान्तमें भी किया है, अनुभव प्राप्त किया है। वह सब आज अेक वृद्ध सार्थीके आंसुओंकी बाढ़में बह गया! आखिर है क्या? अैसा लगता है कि पू० महात्माजीकी दृष्टिमें तो मैं कभी साधक बनूंगी ही नहीं। अिसके सिवा, सुशीलाकी ओरसे समाचार मिला कि, "तेरी किसीसे बनती नहीं, तेरा स्वभाव तेज है, अैसा महात्माजी कहते थे; और वे अिस निर्णय पर पहुंचे हैं कि महाराष्ट्रमें कस्तूरबा ट्रस्टका काम तुझे नहीं सौंपा जा सकता।" यह खबर मिलनेके बाद मेरा दुःख और गुस्सा दोनों बढ़ गये और मैंने भी निश्चय कर लिया कि यह शिविर मेरे हाथसे पूरा हो जाय, तो फिर पू० महात्माजी जिस संस्थासे संबंध रखते हों अुसमें मैं कभी काम नहीं करूंगी।

पू० महात्माजीका मत कुछ भी बना हो, परन्तु ठक्करबापाकी राय दूसरी रही और अुन्होंने मुझे शिविर चलानेके लिअे मदद देना जारी रखा। शिविर १५ दिसम्बर १९४५ को सासवडसे तीन मील दूर पिंपळे नामक गावमें शुरू हुआ। अुद्घाटन करने श्री शंकररावजी आये थे। श्री ठक्करबापा भी अुपस्थित थे। मनमें अुत्साह होनेसे और समर्थन प्राप्त होनेसे मैंने अुस शिविरको सफल बनानेके प्रयासमें कोअी कसर नहीं रखी। पूनासे बडे बडे विद्वान कार्यकर्ता तथा सरकारी खेती विभागके अधिकारी पढाने आते थे। शिक्षाके बारेमें ठक्करबापाकी कोअी भी अपेक्षा मैंने बाकी नहीं रखी। शिविरमें तीन गायें भी थी। शरीर-श्रम, अध्यापन तथा गावके लोगोंकी सेवा आदि सबको स्थान दिया गया था। आचार्य भागवत पाच महीनें आकर वहां रहे थे और पढ़ानेमें मदद देते थे।

परन्तु पू० महात्माजीके प्रति मेरे मनमें रोष था। मैंने बहुत दिन तक अुन्हें पत्र ही नहीं लिखा। अुनका १२-१२-४५ का कार्ड मिला था तब मैंने हमेशाकी तरह साफ दिलसे जवाब भी नहीं दिया था। यदि मैं जिम्मेदारी लेनेके लायक नहीं हूं अैसा पू० महात्माजी मानते हैं, तो फिर महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि किसे बनाया जाय अिस बारेमें मेरी सलाह भी क्यों मांगते हैं? अुसे देनेका अधिकार भी मुझे कहां है? अिस मान्यताके कारण मैंने अुन्हें कोअी भी राय देनेकी अनिच्छा लिख भेजी। अिससे पू० महात्माजी परेशानीमें पड गये। पूछताछ करनेवाला दूसरा पत्र अुन्होंने भेजा (२३-१२-'४५)। तब लंबे अुत्तरमें मैंने अपना सारा रोष अुंडेल दिया। पू० महात्माजीसे रूठनेका मेरे जीवनका यह तीसरा और अंतिम प्रसंग था। अुसका गांभीर्य और बालवत् महत्त्व समझकर बादमें महात्माजीने अपनी युक्ति फिर शुरू की। परन्तु अिस बार मैं जल्दी नहीं मानी। पू० महात्माजी पूनामें डॉ० मेहताके नर्सिंग होममें रहते थे और मैं पूनामें थी, फिर भी अुनसे मिलने नहीं गअी। अेक बार शंकर-रावजी अुनसे मिलने गये तब अुनके साथ वहां तक गअी, परंतु अंदर न जाकर बाहर सुशीलासे मिली। शंकररावजी तथा सुशीला दोनोंको मैंने चेतावनी दे दी थी कि पू० महात्माजीको यह न बतायें कि मैं यहां

आयी हूं। मैं अुनसे मिले बिना वापस अपने मुकाम पर आ गअी, जिस बातका पता लगने पर वे बहुत दुःखी हुअे। सुशीला पर नाराज हुअे और कहने लगे "वह यहां आयी थी यह तूने मुझसे क्यों नहीं कहा? मैं खुद मिलकर अुसे समझाता।" ठक्करबापाको मेरा रवैया अच्छा नहीं लगा। वे मुझे अुलाहना देने लगे कि, "तुम अैसा कैसे कर सकती हो? रोष भी कितने दिन तक रखा जाय? अुसका कोअी अंत है या नहीं? और महात्माजीके साथ अैसा बरताव?" सुशीला भी समझाने लगी, "महात्माजीको बहुत दुःख होता है। अिसलिअे अब तू गुस्सा छोड़ दे।" अपने आहत अभिमानका बदला लेनेके बाद मेरे मनमें विवेकका अुदय हुआ। विवेक मनसे पूछने लगा, "जिसे सर्वार्पण कर दिया अुससे यदि अुलाहना मिले, तो अुसके लिअे रूठनेका अधिकार हमें हो सकता है? अैसा हो तो सर्वार्पण किस कामका?" फिर तो अपने दुःखका कारण मैं ही बनी। अुसके बाद मैं पू० महात्माजीसे मिलने गअी। मुझे देखकर वे कहने लगे, "तूने मेरा त्याग कर दिया है न?" मैंने जवाब नहीं दिया। बादमें अुन्हें दुःख देनेके लिअे माफी मांगी और दुबारा अैसा न करनेका वचन दिया।

शिविरका पूर्णाहुति-समारोह २८ मअी, १९४६ को पूनामें हुआ। श्री ठक्करबापा अुस समय मौजूद थे। वृद्ध तपस्वी श्री कर्वे सेविकाओंको आशीर्वाद देनेके लिअे पधारे थे। और श्री मोरारजीभाअीने प्रमाणपत्र वितरित करके दीक्षान्त भाषण दिया। शिविरमें दी गयी शिक्षा और सेवाकार्य आदि सब बातोंका ब्यौरेवार वर्णन मैंने विवरणमें पढ़कर सुनाया। १९ बहनोंमें से अेक अपने खर्च पर सत्कार ग्रहण करनेके लिअे आअी थी। ६ बहनें आगे परिचारिका (नर्स) का अध्ययन करने जानेवाली थीं। बाकी १२ बहनें ग्रामसेवाके लिअे तैयार हो गअी थीं और अुन सबको सेवाओंका अलग अलग जिलोंके आठ गांवोंने स्वीकार किया था। अिस-लिअे अेक महीनेकी छुट्टी भोगकर वे अपने अपने कार्यक्षेत्रमें काम पर लगनेवाली थीं।

समारोह समाप्त होनेके बाद मैंने श्री ठक्करबापासे कहा, "महा-राष्ट्रकी प्रतिष्ठाके खातिर मैंने यह काम हाथमें लिया था। अब शुरुआत

हो गअी है। आप कोअी योग्य महिला ढूढ़कर मुझे बतायें तो यह काम मैं अुन्हें सौंप दू और मुक्त हो जाअू!" भगवानने मेरी टेक पूरी कर दी, अिसलिअे मैं मन ही मन अुसका अुपकार मानती थी।

बापा कुछ नहीं बोले। जूनमें या लगभग अेक महीने बाद जुलाअीके शुरूमें पू० महात्माजी पूना आकर रहे थे। तब मैं अुनसे मिलने गअी। डॉ० मेहताके नेचर क्योर क्लीनिक (नीसर्ग होम) के बगीचेमें सुबह घूमते हुअे अुन्होंने अेकाअेक मुझसे प्रश्न किया, "महाराष्ट्रकी प्रतिनिधिकी जिम्मेदारी मैं तुझे सौंपना चाहता हू। बोल, तेरा क्या कहना है?"

मैं थोडी देरके लिअे तो अवाक् रह गअी। परन्तु बादमें पूछा, "मुझे तो आप अिस कामके लिअे नालायक मानते थे। अब कैसे मानस-परिवर्तन हुआ?"

वे साफ दिलसे बोले, "बापाने मुझसे कहा कि दूसरे प्रान्तोंमें शिविर हुअे, परन्तु वहा पढ़ी हुअी बहनें तुरत ही काममें नहीं लगीं, जब कि महाराष्ट्रमें देरसे शिविर होने पर भी संस्कार पाअी हुअी सब बहनें काममें लग गअी हैं। महाराष्ट्रमें आठ ग्रामकेन्द्र शुरू भी हो गये हैं। दूसरी जगह कहीं भी अैसा काम नहीं हुआ। अिसलिअे प्रेमाको ही महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि बनाना चाहिये।"

"परन्तु मेरे स्वभावकी मर्यादा आप जानते हैं। मुझे आप बार बार टोकते और डांटते रहेंगे तो मैं क्या करूगी? अुस परिस्थितिमें मुझसे काम नहीं होगा।"

महात्माजी हसते हसते जल्दीसे बोले, "मैं तुझे कोरा चेक देता हू। मैं तुझे कभी कुछ नहीं कहूगा। तेरे जीमें आये वही तू करना।"

अिन शब्दोंसे मुझे गहरी वेदना हुअी। मेरी स्मृति परसे पर्दा थोड़ा हट गया और लगभग पंद्रह वर्ष पहलेका अेक दृश्य आखोंके सामने तैरने लगा। साबरमतीमें आश्रम और वाडजके बीच हम दोनों घूम रहे थे और मैंने महात्माजीसे कहा था, "मैं आश्रमकी जिम्मेदारी लेनेके लिअे नालायक हू। अिसलिअे आप अुसे वापस ले लीजिये।" पू० महात्माजीने जवाब दिया था कि, "मैं तुझसे भिक्षा मागता हूं। तुझे ही यह जिम्मेदारी लेनी चाहिये।"

मैंने देख लिया था कि मेरी योग्यतासे प्रसन्न होकर नहीं, परन्तु मुझसे कोअी योग्य बहन न मिलनेके कारण लाचार होकर महात्माजी मुझे यह जिम्मेदारी सौंपनेको तैयार हुअे थे। पन्द्रह वर्ष पहले जो हुआ था अुसीकी पुनरावृत्ति आज भी हुअी थी। अितने वर्षोंमें मैंने जरा भी प्रगति नहीं की थी! पू० महात्माजीके मनमें कर्तृत्वका महत्त्व नहीं था, अुदार चारित्र्यका विशेष मूल्य था। और मुझमें तो अुसकी कमी थी ही। पू० महात्माजीसे विदा ली तब मेरा अंतःकरण भारी हो गया था। पूनामें शंकररावजीके मुकाम पर जाकर मैंने अुन्हें सारी बात कही। मेरे मनकी व्यथा भी बताअी और कहा, "कस्तूरबा ट्रस्टका काम लेनेकी मेरी अिच्छा नहीं है। मैं तो महात्माजीसे ना कहनेवाली हूं।" परन्तु शंकररावजीका मत दूसरा था। वे मानते थे कि संस्था-संचालन करनेसे जीवन-विकासमें मदद मिलती है। अिसलिअे वे मुझसे यह जिम्मेदारी लेनेका आग्रह करने लगे। बादमें मैं काममें गुथ गअी। थोड़ी देर बाद शंकररावजी मेरे पास आकर बोले, "महात्माजीका फोन आया था। अुन्होंने पुछवाया था कि प्रेमा प्रतिनिधि बननेको राजी है या नहीं। तुम्हारी तरफसे मैंने स्वीकार कर लिया है।" मैं विरोध करने जा रही थी, परन्तु अुन्होंने अिशारेसे मुझे चुप करके कहा, "अपने प्रिय बूढ़ेको अब और न सताओ।" (पू० महात्माजीको मैं 'Old Beloved' कहती थी, यह मेरे स्नेही और स्वयं महात्माजी भी जानते थे।)

अिस प्रकार भीतरकी प्रसन्न प्रेरणाके बिना मैंने यह जिम्मेदारी अपने सिर ली। परन्तु अुसके पीछे मेरा 'पाप' छुपा हुआ था; वह भी साथ ही चला। परिणाम यह हुआ कि कामको कोअी निश्चित स्वरूप देकर दो तीन वर्षोंमें अुसे किसी और योग्य बहनको सौंपकर स्वयं निवृत्त होनेका जो अिरादा मैंने किया था वह सफल नहीं हुआ। पूरे नौ वर्ष मुझे अिसमें देने पड़े और जब मैं काम सौंपकर निवृत्त हुअी, तब मुझे भारी मानसिक क्लेशमें से गुजरना पड़ा। अपने प्रति असंतोष, कामके प्रति असंतोष, अिस सारे समयमें कार्यकर्ताओं या छात्राओंकी भूलोंके लिअे किये गये अुपवास और अंतमें काम सौंप देनेके बाद भी प्रायश्चित्त-स्वरूप किये गये चार दिनके अुपवास आदि घटनाओंसे मनमें विचार आया: 'गहना कर्मणो गतिः'।]

पूना,
१२-१०-'४५

चि० प्रेमा,

तू १७ तारीखको सुबह साढे सात बजे मेरे साथ टहलना। अधिक समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

२३०

सोदपुर,
१२-१२-'४५

चि० प्रेमा,

चि० सुशीलाने भाओी श्यामलालको निम्नलिखित पत्र लिखा है:

"मत्रीजी,
कस्तूरबा स्मा० निधि, कार्यालय, वर्धा,

आपका पत्र मिला। महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि बननेके लिअे अध्यक्ष महोदयकी सूचनाके लिअे मैं आभारी हू। परन्तु अिससे मुझे आश्चर्य हुआ। महाराष्ट्रमें बरसोसे काम करनेवाली अेक बहन मौजूद हैं और वे अिस समय क० स्मा० निधिका ही काम कर रही हैं। अुनका नाम प्रेमा कटक है। महाराष्ट्रकी प्रतिनिधि बननेका अधिकार अुनका है, क्योंकि अुन्होंने अपनी शुद्ध सेवासे ही अुसे प्राप्त किया है। महाराष्ट्रसे वे परिचित भी हैं। अिसलिअे अुनका पद स्वीकार करना मेरे लिअे असभव है। आशा है अध्यक्ष महोदय मुझे क्षमा करेंगे।"

मैंने तो मान लिया था कि सुशीला अिस कामकी जिम्मेदारी तुरत ले लेगी और अिसलिअे मैंने श्यामलालकी अिस सूचनाका स्वागत किया कि वही अुसे लिख देंगे। परन्तु जब सुशीला तेरी ही सिफारिश करती है और तू फिर भी स्वय आनेसे अिनकार करती है, तब तेरी सलाह

लेता हू कि अिस मामलेमें क्या करना अुचित है। काम अधिक अच्छा हो सके और सुशोभित हो सके, अैसा ही करना चाहिये न? सुशीलासे मिलकर कहना हो तो मिलकर कहना। जो सुझाव देना हो वह देना। अुपरोक्त पते पर अुत्तर देगी तो मैं जहा हूगा वहा मिल जायगा।

बापूके आशीर्वाद

२३१

सोदपुर,
२३-१२-'४५

चि० प्रेमा,

तेरा ता० १७-१२-'४५ का पत्र विचित्र है, अुसकी भाषा विचित्र है। अैसा तेरा यह पहला ही पत्र है। तू बहुत काममें लग गयी है। तू सेविका होनेका दावा करती है और समय-समय पर रुपया मागना पडे जिससे शरमाती है। यह कैसे आश्चर्य और कैसे दुःखकी बात है? सेवाके खातिर रुपया मागनेमें शरम कैसी? रेलगाडीसे सिर निकालकर पैसा पैसा मागते तूने मुझे देखा तो है ही। भीख मागनेमें तूने मदद भी दी है। परन्तु जिस पत्रका मैं अुत्तर दे रहा हू वह तो किसी सेठका पत्र मालूम होता है। अपने स्वार्थके लिअे पैसा मागे और शरमाये अिसे तो मैं समझ सकता हू। परन्तु सेवाके खातिर तो सौ बार पैसा मागे तो भी क्या ज्यादा कहा जायगा? तूने जो अधिक पैसेकी माग की है, अुसकी नकल भी नहीं भेजी। यदि तूने मुझे अध्यक्षके नाते पत्र लिखा हो तो नियमानुसार मंत्रीको लिखना चाहिये। मंत्रीके मारफत आवे तुझे पत्रका अुत्तर मैं तुरत भेज सकता हू। यदि मुझे बुजुर्गकी हैसियतसे लिखा हो तो तुझे अितना ब्यौरा देना चाहिये, जिससे मैं तुरत पैसा भेज सकू।

मैंने तो तुझे पुत्री, साथी और सुशीलाकी सगी बहनसे भी ज्यादा पासकी मानकर तेरा मार्गदर्शन चाहा। वह मार्गदर्शन देनेके बजाय तूने अैसा पत्र लिखा, मानो हम अेक-दूसरेको जानते ही न हों। यह क्या

है, समझमें नहीं आता। अिस पत्रका अुत्तर सोदपुर भेजना। मैं बंगालमें भ्रमण करता हूंगा। वहांसे वहां पत्र पहुंचा देंगे।

बापूके आशीर्वाद

२३२

रेलमें,
मौनवार,
१४-१-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। अिसका जवाब क्या दूं? जिसे तू मान लेती है अुसका अस्तित्व ही न हो, तो क्या अुत्तर दिया जाय? कोअी कहे कि *आकाशमें पुष्प है, तो अुससे क्या कहा जा सकता है?*

रजत सीप महं भास जिमी, तथा भानुकर वारी।
जदपि असत्य तिमि काल तिमि, भ्रम न सकअि कोअु टारी।।[१]

तुलसीदासका यह दोहा याद करके हंसना हो तो हंसना।

तू अितनी नाजुक मिजाज होगी, यह तो मैंने सोचा ही नहीं था। और को तू कैसे विशेषण देती है? तू जब शांत चित्तसे लिखेगी तब ज्यादा लिखूंगा। सुशीलाका पत्र मिल चुका है। मैंने तो बापाको यह सलाह दी है कि जहां योग्य बहन प्रतिनिधिके रूपमें न मिले वहां जगह खाली रखी जाय।

तेरी अिच्छाके अनुसार तेरा पत्र फाड़ डाला है।

बापूके आशीर्वाद

---

१. दोहेका शुद्ध पाठ अिस प्रकार है
रजत सीप महु भास जिमि जथा भानुकर बारि।
जदपि मृषा तिहु काल सोअि भ्रम न सकअि कोअु टारि।।

२३३

नयी दिल्ली,
२२-४-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पागलपनसे भरा सुशीलाके नामका पत्र मराठीमें सुना, अुसका अनुवाद भी सुना। ध्येय जानना अच्छा है। ध्येय-पुरुषको छोड दिया जाय। दुःख यह है कि ध्येय-पुरुष ही तेरा ध्येय है। अैसा बहुतोंके जीवनमें होता है और बादमें वे दुःखी होते हैं। ध्येय-पुरुषको जब ध्येय बनाते हैं तब अर्थ यह होता है कि वह हमारे अनुकूल बोले-चाले तब अच्छा लगता है। और अैसा न करे तो अुससे हम रूठ जाते है। अिसलिये ध्येयको हमेशा स्वतंत्र रखा जाय। जब तक अैसा नहीं करेगी तू दुःखी रहेगी। और तेरा काम भी रुकेगा। पढी तो है परन्तु गुनी नही! अब गुनना सीख, न सीखी हो तो अितना मुझसे सीख ले। अिसमें ध्येय और ध्येय-पुरुषका झगडा ही नही है। क्योंकि गुननेका अर्थ है व्यवहार-ज्ञान प्राप्त करना। व्यवहार भी सत्य और असत्य दोनों होता है, यह ध्यानमें रखना। तू जाग।

बापूके आशीर्वाद

२३४

दिल्ली,
२६-४-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा लंबा पत्र पढ लिया। अुसमें कुछ भी खानगी नहीं है। मैंने अुसे सुशीला पैको पढ़नेके लिअे दिया है।

मुझे तेरे पत्रसे दुःख नहीं हुआ। मैं अितना देखता हू कि मेरा गर्व अुतरता जा रहा है। मैं मानता था कि मैं बहुतोंको पहचानता हूं। अब अपना अज्ञान मैं अधिक स्पष्ट रूपमें देख सकता हू। यह बात मुझे पसन्द है।

मैं तेरी प्रवृत्तियोंको कब अपनी आंखोंमें देख सकूंगा, यह तो नहीं जानता[1]। परन्तु कभी न कभी देखनेकी अिच्छा तो है।

मुझे लगता है कि तू आवेशमें रहा करती है। यह सच हो तो वह मिटना चाहिये।

तुझे अेक पत्र लिख रखा था। अुसे सुशीलाने रोक लिया। अब तो वह भी अिसके साथ जायगा।

तुझ पर या किसी दूसरे पर दबाव तो मैंने डाला नहीं। डालना भी नहीं है। तेरे कामके बारेमें मैंने भूल की हो तो मैं सुधार लूंगा। तू दिये हुअे वचनों[2] का पालन कर। अिस विषयकी बापासे चर्चा करूंगा।

बापूके आशीर्वाद

२३५

दिल्ली,
२७-४-'४६

चि० प्रेमा,

अपने पत्रमें तूने तीन मुद्दे अुठाये हैं।

१. शिविरमें तालीम लेकर निकली हुअी बहनें कस्तूरबा-निधिके अधीन सेवा करनेको बंधी हुअी हैं।

२ ट्रस्ट अुन्हें वेतन और काम देनेको बंधा हुआ है।

३ हर जिलेमें अेक प्रौढ़ अुमरकी और अेक कम अुमरकी, अिस प्रकार दो बहनोंको साथ रखा जाय।

यद्यपि ट्रस्टके नियमोंमें ये मुद्दे नहीं आते, फिर भी नियम बनानेमें पहले तुझे वचन दे दिया था, अिसलिअे अुपरोक्त तीनों मांगें मान ली गअी हैं।

---

१. पिंपळे गांवका शिविर और काम देखनेका मैंने महात्माजीको आमंत्रण दिया था।

२. शिविरमें आअी हुअी बहनोंको नीचेके पत्रमें लिखे तीन मुद्दोंके रूपमें वचन दिये थे।

साथ ही यह सिफारिश की जाती है कि :

१ सम्बंधित स्थान और जिलेसे जितना चंदा अिकट्ठा किया जा सके किया जाय।

२ जहां अेक अनुभवी परिपक्व अुमरकी बहनसे काम चलाया जा सके वहां अेकको ही भेजा जाय, क्योंकि बराबरीकी दो बहनें अेक ही स्थान पर जाय तो दोनामें टक्कर होनेकी संभावना है। परन्तु अेक छोटी अुमरकी और अेक बडी अुमरकी हो तो दोनोंको साथ रखनेमें कोअी हर्ज नहीं।

यह अपवाद-स्वरूप है। अिस बातका ध्यान रखना होगा कि यह अपवाद नियम न बन जाय।

२३६

[शिविरमें दफ्तरके कामके लिअे मैं हाथका कागज काममें लेती थी। पूनाकी कुछ संस्थायें दिखानेके लिअे (जिनमें ज्यादा सरकारी थीं) मैं छात्राओंको ले जानेवाली थी। अुन संस्थाओंके संचालकोंको मैं पत्र लिखती थी अुन कागजों पर अंग्रेजीमें पता लिखनेकी आवश्यकता लगी, अिसलिअे थोडेसे कागजों पर अंग्रेजीमें पता छपवा लिया था। अुपयोगके बाद बाकी रहे कागज दूसरोंको पत्र लिखनेके काम आ गये। अुनमें से अेक पू० महात्माजी तक पहुंच गया।]

मसूरी,
७-६-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मजेदार है। तू अब पत्र लिखनेमें अितना परिश्रम न करे तो तेरा समय बच जायगा। जो वर्णन तूने मुझे लिखा है तू अुसे छपवायेगी अथवा अैसा ही जो कुछ हो अुसकी नकल मुझे भेजेगी, तो मैं सब जान लूंगा। तेरा झगडा भी मुझे मीठा लगता है। अिसलिअे झगडकर भी तू अपना काम करती रहना और मेरे जैसेसे जो कुछ लेना हो वह ले लेना।

तूने अपने पत्र लिखनेके कागजो पर पता अंग्रेजीमें क्यों छपवाया? नागरी-अुर्दूमें अथवा यह तुझे पसन्द न हो तो केवल नागरीमें क्यो नही छपाया? अंग्रेजी किसके लिअे?

मणिबहन नानावटी[1] तुझे ब्यौरा न दे, यह मुझे आश्चर्यकी बात लगती है। मणिबहनसे मैं पूछू?

दिल्लीके बाद मेरा कार्यक्रम पूनाकी ओर आनेका और हो सके तो पचगनी जानेका है। जहा जाअू वहा आनेकी तुझे छूट है।

बापूके आशीर्वाद

२३७

[पू० महात्माजी मुझे राजी करनेको अितने अुतावले हो गये थे कि पूनामें अपने आप ही सासवड आनेका अुन्होंने प्रस्ताव किया। मुझे तो बहुत आनद हुआ। सासवडके लोग खुश हुअे और स्वागतके लिअे सारी तैयारिया होने लगी। दाकररावजीकी सुविधाके अनुसार १३ तारीख *(जुलाअी १९४६ की होनी चाहिये)* निश्चित की गअी। पू० महात्माजी अेकाअेक बोल अुठे, "तेरहवी है। देखना, कोअी मुसीबत न आ जाय।" अैसे वहममें मेरा विश्वास नही था। परन्तु सतवाणी फली, अुसका कोअी क्या करे? मेरा खयाल है कि १० तारीखकी रातको पढरपुरसे बम्बअी राज्यके आरोग्य विभागके मत्री डॉ० गिल्डरका तार पू० महात्माजीको मिला कि, "सासवड न जाअिये, वहा प्लेग है।" मुझे ११ तारीखको खबर लगी। मुझे आश्चर्य हुआ। अेक-दो दिन मैं दौरे पर रही। अिसलिअे ११ तारीखको सासवड जाकर देखा तो वहा प्लेग था ही नही। परन्तु दूर कोनेके किसी गावमें प्लेगका अेक केस हुआ था, अैसा मालूम हुआ। बादमें डॉ० गिल्डरसे मिलकर मैंने बडी बहस की। परन्तु वे न माने और पू० महात्माजी सासवडमें न आ सके।]

---

१ बम्बआके अुपनगरमें रहनेवाली खादीप्रेमी बहन, जिन्होंने अन्य बहनोंकी मददसे वर्षों तक अेक खादी भडार चलाया था। आगे चलकर वे अखिल भारत चरखा-सघकी कार्यकारिणीमें चुनी गअी थी।

साथ ही यह सिफारिश की जाती है कि :

१. सम्बंधित स्थान और जिलेसे जितना चंदा अिकट्ठा किया जा सके किया जाय।

२ जहा अेक अनुभवी परिपक्व अुमरकी बहनसे काम चलाया जा सके वहा अेकको ही भेजा जाय, क्योंकि बराबरीकी दो बहनें अेक ही स्थान पर जाय तो दोनोंमें टक्कर होनेकी सभावना है। परन्तु अेक छोटी अुमरकी और अेक बड़ी अुमरकी हो तो दोनोंको साथ रखनेमें कोअी हर्ज नहीं।

यह अपवाद-स्वरूप है। अिस बातका ध्यान रखना होगा कि यह अपवाद नियम न बन जाय।

२३६

[शिविरमें दफ्तरके कामके लिअे मैं हाथका कागज काममें लेती थी। पूनाकी कुछ संस्थायें दिखानेके लिअे (जिनमें ज्यादा सरकारी थी) मैं छात्राओंको ले जानेवाली थी। अुन संस्थाओंके सचालकोंको मैं पत्र लिखती थी अुन कागजों पर अंग्रेजीमें पता लिखनेकी आवश्यकता लगी, अिसलिअे थोड़ेसे कागजों पर अंग्रेजीमें पता छपवा लिया था। अुपयोगके बाद बाकी रहे कागज दूसरोंको पत्र लिखनेके काम आ गये। अुनमें से अेक पू० महात्माजी तक पहुच गया!]

मसूरी,
७-६-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मजेदार है। तू अब पत्र लिखनेमें अितना परिश्रम न करे तो तेरा समय बच जायगा। जो वर्णन तूने मुझे लिखा है तू अुसे छपवायेगी अथवा अैसा ही जो कुछ हो अुसकी नकल मुझे भेजेगी, तो मैं सब जान लूगा। तेरा झगडा भी मुझे मीठा लगता है। अिसलिअे झगड़कर भी तू अपना काम करती रहना और मेरे जैसेसे जो कुछ लेना हो वह ले लेना।

[महाराष्ट्रमें कस्तूरबा ट्रस्टके केन्द्र चलने लगे। अिस बीच अेक अजीब मुसीबत आअी। सेविकायें ट्रस्टके साथ शर्तमें बंधी हुअी थीं कि शिविर-शिक्षणके बाद दो वर्ष तक वे गांवोंमें जाकर काम करेंगी। आचार्य भागवत शिविरमें मेरे साथी थे। महिलाओंके जीवन-विकासके मामलेमें वे स्वतंत्र विचार रखते थे। वे शिविरमें और केन्द्रोंमें जाकर भी सेविकाओंको विवाहके लिअे तैयार करने लगे और अुनकी सगाअी भी कर देने लगे। मैंने अुनसे अैसा न करनेकी प्रार्थना की। परन्तु वे कहने लगे कि सेविकायें कस्तूरबा ट्रस्टके साथ जीवन भरके लिअे बंधी हुअी नहीं हैं। केवल दो वर्षके कामके लिअे बंधी हुअी हैं। विवाहके बारेमें विचार करनेको वे स्वतंत्र हैं। मैंने अुन्हें समझाया कि दो वर्षका करार पूरा होने तक अुनके मनमें बुद्धिभेद पैदा नहीं होना चाहिये। अुन्हें विवाहके लिअे तैयार करनेसे वे सेवाकार्य छोड देती हैं, अैसा अनुभव हुआ है। परन्तु आचार्य भागवत नहीं माने। तब मैंने पत्र लिखकर पू० महात्माजीसे मार्गदर्शन मांगा। अिस पत्रमें वह आया। अिसलिअे आचार्य भागवतको मैंने सूचना दी कि आअिंदा वे केन्द्रोंमें न जायं और सेविकाओंसे न मिलें-जुलें। अुन्होंने अिसे स्वीकार किया।]

नअी दिल्ली,
१६-१०-'४६

चि० प्रेमा,

तेरे दो पत्र मेरे सामने हैं। दूसरा आया कि मैंने जवाब शुरू कर दिया था। परन्तु जिनके लिअे यहां आया हूं वे आ गये अिसलिअे अधूरा रहा। अिससे आज फिर शुरू कर रहा हूं।

न्यूरेम्बर्गकी बात जाने देता हूं। जहां जंगलीपन ही चल रहा हो वहां यह क्या और वह क्या। सब 'यही' है।

यह कथन अनुचित है कि मैं रचनात्मक काम छोडकर यहां आया हूं। अिसी तरह यह कहना भी ठीक नहीं कि मैं राजनीतिके वश हो गया हूं। असलमें जीवनके टुकड़े नहीं होते। अवयवोंके नाम अलग अलग

पचगनी,
२६-३-'४६

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरा दुःख मैं समझता हू। मैं अिस बारकी यात्रामें सासवड नही आ सकूगा अिसका मुझे कम दुख नहीं है। परन्तु तुझे और मुझे डॉ० गिल्डरका मानस भी समझना चाहिये। वह सीधे आदमी हैं। अुन्हे जो ठीक लगता है वह कहते हैं और करते हैं। मुझे प्लेगका डर नही। परन्तु सार्वजनिक व्यक्तिके नाते मैं सार्वजनिक कार्यमें अपनी मरजीके मुताबिक नही चल सकता। हम दोनों अेक तत्रके अधीन हैं। मैं अुसकी आज्ञा या अिच्छाका अनादर करू तो दूसरा पर अुसकी आज्ञाका प्रभाव हलका पडेगा। यह मैं कैसे कर सकता हू? देव तो यह बात समझ गये वैसे ही तुझे भी समझना चाहिये। मैं पूना छोडू अुससे पहले भी यदि सासवड आनेकी अिजाजत मिल जाय तो मैं आ जानेको तैयार हू। मैं २८ तारीखको पूना पहुच रहा हू। डॉ० गिल्डरके साथ बातें करके देखूगा और जरा भी सभव हुआ तो सासवड आ जाअूगा। नही तो तू यह पत्र लोगोको पढवा सकती है। यह भी अेक अच्छा पाठ होगा।

सुचेता[1] मेरी अिच्छासे नही गअी। अुसने सयानापन किया यह तू भले माने, मैं नही मानता। परन्तु तेरा या मेरा मानना किस कामका? अुसे सूझे वही ठीक। अब मुझे दूसरी बहनकी तलाश करनी होगी। मैंने तो सुशीलाके साथ बात की है। परन्तु वह तेरे साथ सलाह करेगी। वह दूसरी सहेलियोसे भी पूछ ले, हितेच्छुओको पूछे और बादमें निश्चय करे। तेरी मदद मिलेगी न?

तू मेरे साथ ही वर्धा चलना। मुझे अच्छा लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री सुचेताबहन कृपालानी कस्तूरबा गाधी स्मारक ट्रस्टकी सयोजक-मत्री थी। परन्तु अुत्तर प्रदेशकी विधान सभामें प्रवेश प्राप्त करनेके लिअे वे चुनावमें भाग लेनेवाली थीं, अिसलिअे ट्रस्टके नियमानुसार अुन्हे अपने पदसे अिस्तीफा देना पडा।

२३९

[यह पत्र नोआखालीसे भेजा हुआ है। सुशीला भी महात्माजीके साथ वहा गअी थी। वहा कुछ महीने काम करके वह वापस बम्बअी चली गअी।]

३–१२–'४६

चि॰ प्रेमा,

तेरा पत्र आज ही मेरे हाथ आया। मैं बहुत दूर हू। यहा डाकघर नहीं है। तार तो हो ही कैसे सकता है?

मैं तो यहीं चिपट गया हू। शायद यहासे हटना ही न हो। सब कुछ ठीक हो जाय तो ही हट सकता हू। न हो तो यहा मरना मुझे प्रिय लगेगा। अभी तो यह समझ ले कि सेवाग्राम, अुरुलीकाचन वगैरा सब मैंने छोड दिया है।

मैं अकेला पडा तो हू। परन्तु मुझे अकेला रहने कौन देता है? यह कसौटी तो शायद मेरे भाग्यमें नहीं है।

धोतिया आयेगी तब तुझे लिखूगा। तुरत पहनूगा।

मेरी अहिंसाकी सच्ची परीक्षा यहा होगी। काम कठिन है।

सुशीला गावमें जानेके बाद कल ही पहली बार आअी। वर्षगाठ थी न? काममें खूब गडी है।

तू अपने कामासे कैसे छूट सकती है? तुझे तो अेक गाव आसानीसे सौंपा जा सकता है। तू बिल्कुल योग्य है। परन्तु तेरा वहाका काम मैं छुडवाना नहीं चाहता। आसानीसे आया जा सके तो आ जा।

सुशीलाने तो तुझे विस्तारसे सब कुछ लिखा ही होगा, अिसलिअे अब अधिक नहीं लिखूगा।

बापूके आशीर्वाद

होने पर भी शरीर अेक ही है। अिसी तरह जीवन भी अेक है। तू भूल देख सकती है अिसलिअे तुझे तो भूल ही माननी चाहिये। यह देखते हुअे तू अपनी भूल देखेगी और मेरे जीवनका अैक्य देखेगी, अथवा मुझे सुधारेगी। मैंने यह मोह कभी नहीं रखा कि मैं जो मानता हू वही सच है। हा, यह सच है कि मैं जो मानू वह मेरे लिअे तो सत्य ही है, नही तो मैं सत्याग्रही नही रहता। यही नियम सबके लिअे है।

अब तेरा असली सवाल लेता हू। लडकिया कुमारी रहे, यह मुझे अच्छा लगेगा। पर यह चीज जबरन् हो ही नहीं सकती। अिसलिअे जिसे विवाह करना हो अुसके लिअे सुविधा पैदा करनी चाहिये।

आचार्य भागवतका यह धर्म था — और है — कि अुन्हे तुझे और दूसरे साथियोंको समझाकर नियमपूर्वक जो करना हो सो करना चाहिये था। अुन्होने सलाह मशविरा किये विना जो किया वह अनुचित किया। और तुझे भी अुनसे कुछ प्राप्त करनेके लाभसे अुनका अनुचित व्यवहार सहन नही करना चाहिये, जो तूने किया है। यहा भी अंतिम निर्णय तो तुझीको करना होगा, क्योकि अैसे अवसर आते है जब अिस तरहके कडवे घूट पीने पडते हैं। मैंने तो तुझे अेक नियम बताया है।

अिससे अधिक लिखनेका समय नही है।

सुशीलाने यदि यहा बैठकर अधिक समझा होगा तो तुझे लिखेगी। मेरा मौन चल रहा है। अुससे मुझे लाभ हुआ है। मेरे स्वास्थ्यके टूट जानेका डर था। अधिक मिलेंगे तब।

अेजेण्टो[1] की सभा नही हुअी, यह मुझे खटकता है।

बापूके आशीर्वाद

---

१. अेजण्ट यानी कस्तूरबा ट्रस्टके प्रान्तीय प्रतिनिधि। ट्रस्टका अेक प्रस्ताव अैसा था कि प्रान्तीय प्रतिनिधियोंकी बैठकें वर्षमें दो बार की जाय। अुनमें से अेक पू० महात्माजीकी अुपस्थितिमें होनी चाहिये।

२४१

१८–४–'४७

चि० प्रेमा,

. . . जिसे हमने यज्ञ माना हो अुसे प्रियजनाकी वेदना मिटानेके लिअे भी बन्द नही कर सकते। परन्तु जहा हम स्वय ही कर्ता हो और कर्म भी हो, वहा तटस्थताको कठिन मानकर अपने विरुद्ध कोअी कदम अुठाया जा रहा हो तो अुसे अुठाने देना चाहिये। विचार तो जो थे वही हैं। और अुनमें मैं अधिक दृढ होता जा रहा हू। वहा मैं दोष नही देखता। . .

बापूके आशीर्वाद

२४२

[मैं नोआखाली पू० महात्माजीसे मिलने गअी थी तब मैंने यह माग की थी कि जाडा पूरा होनेके बाद पू० महात्माजीके ओढनेकी शाल प्रसादस्वरूप मुझे मिलनी चाहिये। पू० महात्माजीने मेरी माग स्वीकार की और शाल भेज दी।

कस्तूरबा गाधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्टके अध्यक्ष होने पर भी पू० महात्माजी अुस समय अुस सस्थाकी बैठकोमें अुपस्थित नहीं रह सकते थे। थोडे दिन बाद प्रान्तीय प्रतिनिधियोकी बैठक हुअी थी। अुसमें कर्णाटकके प्रतिनिधिने वहाकी ग्राम-सेविकाओके कुछ दुःखद किस्से पेश किये थे। अुनका अुल्लेख मैंने अपने पत्रमें किया था। अुसके बारेमें पू० महात्माजीने सवाल किया।]

पटना,
१९–५–'४७

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र कल मिला। आज मौनवार है, अिसलिअे जवाब तुरत दे सकता हू।

२४०

[पू० महात्माजी दूर चले गये थे, असलिअे वर्षगांठके दिन धोतिया और जुत्तरीय वस्त्र अुन्हें देनेकी व्यवस्था नहीं हो सकी। बादमें जनवरी १९४७ में ठाकररावजी जब अुनसे मिलने नोआखाली गये तब यह भेंट ले गये थे। १४ जनवरीको संक्रांति थी। अुसके लिअे सुशीलाको मैंने 'तिलगुड' भेजा था। वे अुसने पू० महात्माजीको संक्रांतिके दिन ही दिये। सुशीलाने लगातार पत्र लिखकर मुझे वहां नोआखाली आ जानेको प्रेरित किया, तो मैंने पू० महात्माजीसे अिजाजत मांगी। अुन्होंने अिजाजत दी तब फरवरीमें वहां जाकर दोनोंसे मिल आअी।]

कला,
२४-१-'४७

चि० प्रेमा,

तेरा कार्ड मैंने संभालकर रख छोड़ा है। आज दूसरे गांवकी यात्रा करते हुअे यह लिख डालता हूं। तेरे तिलगुड सुशीलाने ठीक संक्रांतिके दिन दिये और सबको खिलाये। मैंने तो खाये ही। ठाकररावने धोतिया भी दी थी। वे भी पहनी। अब तू फुरसतसे आयेगी तब मिलूंगा। परन्तु अितना कह दूं कि तू अितनी झंझटसे बच। अितने रुपये बचा और अपना कर्तव्य करती रह। वह अिस यज्ञमें भाग लेनेके बराबर ही होगा। जो तू वहां बैठकर प्राप्त कर रही है वह यहां आकर प्राप्त नहीं कर सकेगी। परन्तु तुझे जैसा रुचे वैसा करना।

तू शान्त होगी।

बापूके आशीर्वाद

[श्री शंकरराव देव अुस समय कांग्रेसके मंत्री थे। महाराष्ट्रमें राष्ट्र-सेवादल (जो पहले कांग्रेसकी संस्था थी, बादमें समाजवादी दलको मिली) की तरफसे शंकररावजीके विरुद्ध अैसा झूठा प्रचार हो रहा था कि . 'जनरल शाहनवाज अखिल भारतीय कांग्रेस सेवादल विभागके अध्यक्ष थे, परन्तु शंकररावजीने अुन्हें त्यागपत्र देनेको विवश किया। अिसमें महात्मा गांधीजीकी सहानुभूति तो ज० शाहनवाजकी ओर थी।" अिसके बारेमें पू० महात्माजीके साथ मेरा पत्रव्यवहार चला और अुपरोक्त प्रचार झूठा सिद्ध हुआ। अिस पर वह पत्रव्यवहार प्रकाशित करनेकी मैंने अुनसे अिजाजत मागी थी।]

नअी दिल्ली,
१५–६–'४७

चि० प्रेमा,

अिस समय ४–३० बजे हैं। प्रार्थनाके बाद लिखने बैठा हू। आस-पासके लोग सो रहे हैं। निब टूट गअी है, अुठकर लेने जाना नहीं चाहता। अितनेमें चि० मनु फलोंका रस लाती है, अिसलिअे निब मगाता हू। अब नअी निब है अिसलिअे अुसके अूपरकी चरबी नहीं जाती तब तक वह चलेगी नहीं। अिसी तरह जीर्ण मनुष्योंकी गाडी घिसटती हुअी चलती है। स्वातंत्र्यकी नअी लहरमें तुम सब अुडो वहा मेरे जैसेका क्या?

अब देखता हू कि अीश्वर मुझे कहा ले जा रहा है।

मेरा पत्र छापनेकी अनुमति मैं नहीं दूगा। मेरा तो कुछ नहीं बिगडेगा परन्तु मेरी अधूरी स्मरण-शक्तिसे दूसरोंका कहीं नुकसान हो जाय अिस भयके कारण।

जनरल शाहनवाजने कहा कि अुनके हाथमें सारा अधिकार न हो तब तक वे अपने कामको चमका नहीं सकते। अिस पर मैंने कहा कि अैसा हो तो अुन्हें निकल जाना चाहिये। अिसके सिवा मेरा कोअी सम्बन्ध अिस बातसे नहीं।

तुझे शाल भेजी, जिसमे अुपकार कैसा? तब तो तू कोअी चीज मुझे भेजे तब मुझे भी तेरा अुपकार मानना चाहिये।

'विनयनी पूरणी मागे ते न होय प्रेम प्रेमीनो'
— जो विनयकी पूर्ति चाहे वह प्रेमीका प्रेम नही।

कर्णाटककी बात पूरी नही समझा। मुझे फिर लिखना। क्या बहुतसी लडकियां बिगड गयी?

मालूम होता है महाराष्ट्रका काम तू अच्छी तरह समझ रही है।

मुझे अुपवास करना ही पड़े तो अुस समय तेरा पास रहना मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु अच्छा लगेगा अिसीलिअे क्या अैसा किया जा सकता है? अुस समय जो मेरा और तेरा धर्म होगा वह सोच लेंगे। अभीसे अिसका विचार भी हम न करें। जिसका तूने अुल्लेख किया है अुतनी नोटिस भी मैंने सकोचपूर्वक ही दी। न देता तो ठीक नहीं होता।

गाडगिल[1] जो खबर लाये वह गलत है। स्त्रियोंके विरुद्ध अुपवास करनेकी बात मुझे सूझती ही नही। अुपवासका विचार मनसे निकालकर तू अपने काममें लगी रह।

डॉक्टर गिल्डर डॉक्टरी दृष्टिसे यही कहेंगे कि मेरी दृष्टि स्पष्ट है। गीताजीके दूसरे अध्यायके जो श्लोक शामको रोज हम रटते हैं वैसा स्थितप्रज्ञ जो मनुष्य हो जाय, वह १२५ वर्ष अवश्य जियेगा। अीशोपनिषद्‌में 'शतम्' शब्द है। अुसका अर्थ ९९+१ नही है। १२०, १२५ या १३० वर्ष होता है। मैंने तो बम्बअीमें ७ अगस्त १९४२ को १२५ वर्ष गिनाये थे। वही मैं कहा करता हू। परन्तु मैं अपने काम-क्रोधको न जीतू, तो १२५ वर्ष जी ही नही सकता। जीनेकी अिच्छा भी मुझे छोडनी चाहिये। अिसलिअे मेरी यह अिच्छा टलनेवाली है।

बापूके आशीर्वाद

---

१ श्री न० वि० गाडगिल, १९३९ से ७–८ वर्ष तक महाराष्ट्र प्रांतीय कांग्रेस समितिके अध्यक्ष। यह पत्र लिखा गया अुस समय केन्द्रीय मंत्रि-मडलमें बिजली, खान वगैरा अुद्योग-विभागके मंत्री थे। आजकल पंजाबके राज्यपाल है।

के बारेमें तू जो कहती है वह सही हो यानी मैं तेरा कहना पूरी तरह समझा होअू, तो कहूंगा कि तू बहुत बारीक भेद निकालती है। विचार कर।

अितना जरूर है। तू आकर मेरे साथ कुछ समय रह जाय तो शायद ज्यादा समझमें आ सके। अर्थात् थोडे अतरसे दो चार दिनका समय निकालना, अथवा जो काम हाथमें आये अुसे करते रहना। दुनियाको जैसे चलना हो वैसे चले।

तू अपना काम सुशोभित कर रही है।

सुशीला पं गअी।

बापूके आशीर्वाद

२४५

[मेरे पिताजीके अवसानके समाचार मिलनेके बाद मुझे लिखा हुआ सात्वनाका पत्र।]

नअी दिल्ली,
२७-९-'४७

चि० प्रेमा,

तूने अपना पिता खोया और समझ सके तो बहुतसे पाये। हम सबके लिअे जो अुमरमें बडे अथवा ज्ञानमें बडे हैं वे सब पिता हैं। अैसी स्त्री हो तो हमारी मा है। हमारे बराबरवाले सब भाअी-बहन हैं और छोटी अुमरके सब लडके-लडकी हैं। अिसलिअे हमारा ससार अमर कहा जायगा। फिर तू पिताके लिअे शोक क्यों करे? और मृत्यु तो हमारा सच्चा मित्र है। यह ठीक हो तो हमारे प्रियजन अपने घनिष्ठ मित्रसे मिले, अिसमें दुःख क्या हो? प्रियजनोंका वियोग हो तब हमें अपने सेवाकार्यमें अधिक गुथ जाना चाहिये।

बापूके आशीर्वाद

. बिहारमें मेरे अधीन काम करना चाहती थी अिसलिअे मैंने रख लिया। मुझे तो बहुत ही मदद देती है। यह बिलकुल सच है कि अुसे अहिंसा और सत्यकी कोअी परवाह नहीं। अैसे कितने ही आदमी हैं जो काम कर रहे हैं। आज अहिंसा और सत्यकी कीमत ही कहां है? तू अधूरा विचार करती है। अपना काम सुशोभित करती रह और स्वयं सुशोभित होती रह।

बापूके आशीर्वाद

२४४

[पू० महात्माजीके अवसानसे पहलेकी मेरी अन्तिम वर्षगांठके अवसर पर (अुस समयके वातावरणसे दुःखी होकर और अुमका अंत अज्ञात होनेके कारण) मैंने पत्रमें यह अिच्छा प्रगट की थी कि, "आप यह लोक छोड़कर जायं अुससे पहले भगवान मुझे बुला लें।"]

नअी दिल्ली,
२५-६-'४७

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तेरी वर्षगांठकी बात समझा। मुझसे पहले सब जाना चाहा, यह कैसी बात है? फिर मेरा क्या हाल होगा? यह कैसा स्वार्थ? परन्तु यह अच्छा है कि मरना-जीना किसीके हाथमें नहीं है। सारे प्रयत्न व्यर्थ हैं। हाथमें सो साथमें, यह कहावत अच्छी है।

ज० शाहनवाजके मामलेमें मैं सार्वजनिक रूपमें क्या कहूं? कोअी कुछ लिखे अुसके लिअे मैं जिम्मेदार कैसे हो सकता हूं?

मैं जो कहूं या करूं अुसके लिअे मैं जरूर जिम्मेदार हूं। बाकीके लिअे नहीं।

मेरा और तेरा पत्रव्यवहार प्रकाशित करनेमें कोअी सार नहीं है। देवको कुछ प्रकाशित करना होगा तो वे मुझे पूछ लेंगे।

२४७

[पू० महात्माजीने मिलनेके लिअे आनेकी अनुमति तो दी, परन्तु मैं तुरन्त ही नहीं गअी। कस्तूरबा ट्रस्टके प्रान्तीय प्रतिनिधियोंकी बैठक दिसम्बरके दूसरे सप्ताहमें नअी दिल्लीमें करना तय हो गया था, अिसलिअे मैं अुस समय जाकर अुनसे अन्तिम बार मिल आअी।]

नअी दिल्ली,
२८-१०-'४७

चि० प्रेमा,

तेरा कार्ड मिला। तू आ सके तब आ जाना और मेरे साथ दो-चार दिन बिताना। तब हम भावनाकी बातें करेंगे।

बापूके आशीर्वाद

२४८

[नअी दिल्लीमें पू० महात्माजीके अवसानसे पहलेका अन्तिम अुपवास शुरू हुआ, अुसके समाचार मिलनेसे पूर्व मैंने अेक पत्र तथा तिल-गुड़की पोटली अुन्हें भेजी थी। वर्षोंसे अुन्हें तिल गुड़ भेजनेका मेरा रिवाज था। १४ जनवरीके दिन सक्रान्ति थी। अुपवासकी खबर मिलनेके बाद मैंने दूसरा पत्र लिखा। श्री शंकररावजी अुस समय नअी दिल्लीमें थे। अुन्हें लिखा कि, "अुपवासके दिनोंमें दिल्लीसे बाहर न जायें। रोज पू० महात्माजीको देखने जाअिये और मुझे पत्र लिखिये।"

अपने पहले पत्रमें मैंने तीन प्रश्न पूछे थे :

१ समाजवादी दलके विषयमें आपका मत।

पंडित जवाहरलालजी भारतके प्रधानमंत्री हो गये अुसके बाद कांग्रेसके अध्यक्षपदसे अुन्हें त्यागपत्र देना पड़ा। अुसके बाद किसे अध्यक्ष बनाया जाय, अिस बारेमें कांग्रेस कार्यसमितिमें चर्चा हुअी थी। मुझे यह

[पू० महात्माजीकी वर्षगांठके अवसर पर अपने सूतकी दो धोतियाँ और शंकररावजीके सूतके दो अुत्तरीय (ओढ़नेकी चादरें) मैं वर्षोंसे अुनके लिअे भेजती थी। १९४० में दोनों वस्त्र बुनकर आनेके बाद धोबीके पास भेजकर दो बार भट्ठीमें चढ़ानेके बाद वर्षगांठके दिन अुनके पास पहुंचाने जितना समय नहीं था। अतः अेक बार भट्ठीमें चढ़ाकर धो डालनेके बाद धोतियां वैसीकी वैसी शंकररावजीके साथ पूनासे नअी दिल्ली भेज दीं। वे सफेद नहीं हुअी थीं। पू० महात्माजी अुन्हें अुसी रूपमें पहनना चाहते थे। परन्तु मालूम होता है अुनके साथ रहनेवाले किसीने अुनसे पूछे बिना धोबीके यहां भेज दीं।

मेरे पिताजीके अवसानसे मुझे जो दुःख हुआ अुसे दूर करनेके लिअे अुन्होंने जो दलीलें दी थीं खास तौर पर सेवाकार्यमें अधिक गुथ जानेकी सिफारिश, वे मुझे पसन्द नहीं आअीं। अिसलिअे मैंने अपना विरोध पत्रमें बताया था।]

नअी दिल्ली,
१२-१०-'४०

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मेरे पास समय तो है ही नहीं।

मैंने जो लिखा वह मेरा हो था। *किसीके कहनेसे लिखनेवाला मैं नहीं हूं।*

तेरे पत्रमें जो अुलाहना है अुसे मैं समझता हूं। मैं क्या लिखूं? तुझे दुःख देनेके लिअे तो मैं कुछ नहीं लिखूंगा।

धोतियां शंकरराव बड़ी श्रद्धासे लाये थे। पर गफलतसे धोने दे दी गअीं। मेरा अिरादा तो अुसी रूपमें अुन्हें पहननेका था। मांगने पर पता चला कि क्या हुआ। अिसमें क्या? तुम सबकी सावधानीसे ठीक ११ तारीखको तो मिल ही गअी थीं।

अधिक जब तू आयेगी तब।

बापूके आशीर्वाद

नअी दिल्ली,
१६-१-'४८

चि॰ प्रेमा,

तेरे दोनों पत्र कल मिल गये। 'तिल-गुड़' तो मकातिके दिन ही मिल गये थे। वह (डाकमें आअी) छोटीसी पोटली अपनी मेज पर पड़ी हुअी मैंने देखी। अुसके साथ लगाया हुआ जो पुट्ठा था वह नजरके बाहर था। देखा तो अुस पर तेरा नाम पढा। मकाति याद आअी और मैं समझ गया। आभासे खुलवाअी और कहा कि यहा जितने लोग हैं अुनमें अेक भाग तो बाट दिया जाय और दूसरा भाग मेरे लिअे रख लिया जाय — क्योंकि अुपवासमें तो मैं खा नहीं सकता। अुस समय जो लोग मौजूद थे अुनमें अुसी समय तिल-गुड़के दाने बाट दिये गये। तिल-गुड़के महत्त्वके विषयमें तेरा काव्य पढ़ा। खुशी हुअी। जिस त्योहारका शुद्ध भावना बढानेमें अुपयोग हो अुसकी मैं अवहेलना नही करूंगा, परन्तु *जिस त्योहारके साथ राग-रग वगैराका प्रदर्शन जुड़ा हुआ हो, वह त्योहार* मुझे खटकता है।

शकररावदेवने कल बताया कि तूने खास तौर पर लिखा है कि तेरी ओरसे वे मुझे रोज देख जाय और पत्र लिखें। अुन्हें अैसा करना ही पड़ा तो वे अपना कर्तव्य चूकेंगे, अितना तू विचार कर ले। अुन्हे अलग अलग जगहो पर जाना चाहिये। जिसके बजाय अेक बूढेको देख जानेके लिअे वे अपनी जिम्मेदारी छोड़ दें? और मुझे देखनेके लिअे तेरे यहा आनेकी क्या जरूरत? तू अितना समझ कि यहां भी सेवा करनेवाले बहुत लोग हैं। अुन सबको आने दू तो मेरा अुपवास लम्बाता ही रहे, क्योंकि मेरी सेवामें अुन्हे सर्वस्व मिल गया अैसे भ्रममें पड़ कर वे अपने अपने कर्तव्यमें चूकें। फिर भी अैसा लगे कि तुझे आना ही चाहिये, तो आनेकी तुझे छूट है।

तेरे दोनों पत्र सुन्दर काव्य जैसे हैं। मैं नही जानता था कि *भाषा पर तेरा अितना बड़ा अधिकार है।*

समाजवादियोंके बारेमें मैं यह मानता हू कि वे त्यागी हैं, अध्ययनशील है और साहसी हैं। वे क्या कर रहे हैं, यह मैं नहीं जानता।

खबर मिली (जो अन्यत्र भी फैली थी) कि जवाहरलालजीने स्वयं ही आचार्य नरेन्द्रदेवका नाम सुझाया। तब पू० महात्माजीने अुन्हें अपनी अनुमति देते हुअे कहा, "जयप्रकाशको भी अध्यक्ष बना सकते हो।" — ये अथवा अिसी अर्थके शब्द अुन्होंने कहे।

अिसलिअे मैंने पत्रमें पू० महात्माजीसे पूछा "जयप्रकाशजीके पीछे बहुमत नहीं है, फिर भी अुनका नाम आपने कैसे सुझाया? यह कदम लोकतांत्रिक संस्थाके संविधानसे बाहर माना जायगा या नहीं?"

२ भारतमें भाषावार प्रान्त-रचना होनेकी चर्चा अुस समय खुले रूपमें हो रही थी। बम्बअी राज्यके महाराष्ट्र और गुजरात दो अलग राज्य हो जाय तो भौगोलिक दृष्टिसे और महाराष्ट्रीय लोगोंका बहुमत होनेसे बम्बअी शहर महाराष्ट्रमें आना चाहिये, अैसा दावा महाराष्ट्रीय करते थे। अिस विषयमें पू० महात्माजीकी राय मैंने पूछी थी।

३ कांग्रेस अब सत्ताधारी बन गअी थी अिसलिअे केवल पुलिस पर ही नहीं, सेना पर भी अुसका अधिकार हो गया है। अिसलिअे कांग्रेसमें सत्यके साथ अहिंसाको भी जीवन-सिद्धान्त माननेवालोंको आअिंदा सदस्यके रूपमें रहना चाहिये या बाहर निकल जाना अुचित है, अिस बारेमें अुनका मार्गदर्शन मांगा था।

पू० महात्माजीका १६ तारीखको लिखा हुआ पत्र श्री शंकरराबजीने विमान-मार्गसे सासवड भेजा, जो मुझे १७ तारीखको सुबह ११ बजे जब मैं डाक लाने गअी तब मिला। साथमें श्री शंकररावजीका पत्र था जिसमें लिखा था :

"आज दोपहरको चार बजे (पू० महात्माजीसे मिलने गया) तब अुन्होंने मुझसे कहा, 'प्रेमाके पत्रका अुत्तर आधा लिखवा डाला है और तुम रातको आओगे तब अिसे पूरा कर दूंगा। तुम जल्दी भेजनेका प्रबन्ध करना।' अिसलिअे मैं रातको आठ बजे गया तब पत्र लिखनेका काम चालू ही था। अुपवासके चौथे दिन अितना लंबा पत्र जिस व्यक्तिको गांधीजी लिखवा रहे थे, अुससे वहां बैठे हुअे सभी लोगोंको औीर्ष्या होना स्वाभाविक था। मनु आभासे कहने लगी, 'पुत्रीको पत्र लिखवा रहे हैं, अिसलिअे अितना लम्बा है!'"]

वही जब सारे राष्ट्रका सरदार बन जाय, तब अगर अुसमें जरा भी देशप्रेमकी भावना हो तो वह अपना विरोध अवश्य छोड़ देगा। यह कानून मेरे घरका नहीं है। यह सर्वमान्य कानून है — अर्थात् लोकतंत्रमें। आश्चर्य है कि यह बात तू कैसे नहीं समझी। मैंने अपने मानसकी बात समझा दी। जिसका यह अर्थ कभी नहीं कि कोअी अपने विचारोंको छोड़कर मेरे खातिर या मुझसे भी बड़ेके खातिर अपने विचारके विरुद्ध काम करे।

२ यह चीज पूरी तरह समझानेमें मुझे अेक पुराण लिखना पड़ेगा। जिसकी आशा तो तू अिस अुपवासके चौथे दिन नहीं रखती होगी। मैंने पहले क्या लिखा है, यह तो मुझे याद नहीं। अुसका विचार अिस समय अप्रस्तुत होगा। अिस समय मैं क्या सोचता हूं यही मेरे लिअे और तेरे लिअे भी सच्चा होगा। सभी काम बहुमतसे ही किये जाय, यह नीति घातक है। जहां धर्मका भंग न होता हो वहां लेन-देनकी गुंजाअिश है। मेरे दिमागमें तो अितना ही है कि यदि आज ही कानूनसे भी भाषावार प्रान्त बना देने जरूरी हों, तो जो कुछ कांग्रेसने १९२० में किया वही क्यों न कायम रखा जाय? अैसा हो और सब मिलकर प्रत्येक प्रान्तकी सीमा भी निश्चित कर दें, तो महाराष्ट्र, गुजरात और बम्बअीके प्रश्नका निबटारा हो सकता है। अब तो मुझे अिसे समेट लेना चाहिये, क्योंकि यह पत्र ले जानेके लिअे देव यहां बैठे हैं। मैंने अुन्हें बुलाया था।

३ कांग्रेस अब भी राजनीतिक संस्था है और आगे भी होगी। परन्तु जब अुसके हाथमें राज्यकी लगाम होगी, तब वह स्वाभाविक रूपमें ही अेक दल, चाहे कितना ही बड़ा क्यों न हो, बन जायगी। अिसलिअे जो अहिंसामें संपूर्ण निष्ठा रखते हों वे राज्याधिकारी नहीं होंगे।

अितने विस्तृत अुत्तरकी आशा तूने अिस अवसर पर तो नहीं रखी होगी। परन्तु लिख सका हूं, यह बताता है कि अिस बारका अुपवास मुझे कमसे कम कष्ट दे रहा है।

बापू

अखबारोंमें जो कुछ आता है अुतना जानना काफी हो तो अुतना ज्ञान मैं रखता हूं। वह भी सूक्ष्म रूपमें नहीं। मुझे लगता है कि वे कांग्रेसमें रह और वह भी कार्यसमितिमें, तो वे कांग्रेसकी शक्तिको बढ़ायगे। जिसका कारण यह है कि कांग्रेसके खर्च पर अैसे आदमी अपने दलकी शक्ति बढानेकी कोशिश कभी नहीं करेंगे और करेंगे तो अुनके दलका क्षय होगा। यदि अिससे अुलटी बात सच हो तो मेरे विचारोंका अनुसरण करनेवाले लोग समाजवादियों अथवा अन्य विरोधियोंके प्रति प्रेमभाव रखें और अविश्वासको प्रेमसे जीतें। प्रेमसे कट्टरसे कट्टर विरोधीको भी जीता जा सकता है। न जीता जा सके तब समझना चाहिये कि दोष हमारा है। हमारा प्रेम अधूरा है।

मैंने जब जयप्रकाशका नाम राष्ट्रपतिके रूपमें रखा तब जो शब्द मेरे मुहमें किसीने रखे हैं वे मैंने जरूर कहे होंगे, क्योंकि अुस समय तो वह बात सत्य थी। आज अुसमें कुछ फर्क पड गया है। वह कैसे, जिसमें जानेकी जरूरत नहीं। यह हो सकता है कि मेरे प्रेमसे राष्ट्रपति बननेकी योग्यता अनायास किसीमें पैदा हो जाय। परन्तु मेरे प्रेमके साथ अैसी योग्यताका कोअी सम्बन्ध नहीं है। जितना जरूर है कि जो वाक्य मैंने कहा है वह किस सदर्भमें और किस ढगसे कहा है, जिसका तो मैं भी वर्णन नहीं कर सकता।

यह बात सच है कि बहुमतवाले दलके लोगोंमें से कार्यसमिति चुनी जाती है, फिर भी बहुमत अपने ही दलमें से अध्यक्ष चुने यह बात हमेशा सच नहीं होती। समझदार कार्यसमिति हो और अल्पमतवाले दलमें से भी कोअी होशियार और प्रामाणिक मनुष्य मिल जाय तो वह अुस मनुष्यको जरूर पसन्द करेगी। तो ही लोकतत्र अन्तमें सफल होगा। कृपण बहुमत सदा भयकर परिणाम लाता है।

अुनके विचार और नीति जहा तक मैं जानता हू वहा तक राष्ट्रके लिअे घातक नहीं हैं, अुनकी रीति राष्ट्रहितकी विरोधी है। परन्तु यदि वे अध्यक्ष हो जाय तो अुन्हें कांग्रेसकी नीतिका ही अनुसरण करना चाहिये। खूबी यह है कि विरोधी वातावरणके बीच अुन्होंने स्वय ही राष्ट्रपति बनना नामजूर कर दिया। जिस मनुष्यने बाहर रहकर विरोध किया

बाद यह प्रथा जारी रही। थोडे ही दिन पहले मेरे दो साथी वर्धा आये थे। अुन्होंने मुझसे कहा, 'यह प्रथा दूसराके सामने बुरा अुदाहरण पेश कर सकती है। अिसलिअे आपको यह प्रथा बन्द कर देनी चाहिये।' अुनकी दलील मेरे गले नहीं अुतरी। फिर भी मैं अिन मित्रोंकी अिस चेतावनीकी अुपेक्षा नही करना चाहता था। अिसलिअे मैंने यह सूचना पाच आश्रम-वासियोके सामने छानबीन करने और अुनकी सलाह देनेके लिअे रखी। यह विचार चल ही रहा था कि अितनेमें अेक निश्चयात्मक घटना घटी। यूनिवर्सिटीमें पढनेवाले अेक होशियार विद्यार्थीका किस्सा किसीने मुझे बताया। यह विद्यार्थी अेक लडकीके साथ, जो अुसके प्रभावमें थी, अेकान्तमें सब तरहकी छूट लेता था और अिसका कारण यह बताता था कि वह लडकी अुसकी सगी बहनके समान है, अिसलिअे अुसके प्रति प्रेमका थोडा-बहुत शारीरिक प्रदर्शन किये बिना अुससे रहा नही जाता। कोअी अुस पर अपवित्रताका जरा भी आरोप लगाता तो अुसे क्रोध चढ़ जाता। वह युवक क्या क्या करता था अिसका वर्णन अगर मैं कर सकू, तो पाठक बिना सकोच कहेंगे कि अुसकी ली हुअी छूटमें मलिनता ही थी। अिस बारेमें हुआ पत्र व्यवहार मैंने और दूसरे जिन लोगोने पढ़ा, अुन्होने यही राय बनाअी कि वह युवक या तो पहुचा हुआ ढभी होना चाहिये या अपने मनको धोखा देनेवाला होना चाहिये।

चाहे जो हो, लेकिन अिस खोजने मुझे विचारमें डाल दिया। मैंने अुन दो साथियाकी चेतावनी याद की और मनसे पूछा कि वह युवक मेरे अिस रिवाजकी बात करके अपने कामका बचाव करता था अैसा यदि मुझे पता चले तो मुझे कैसा लगे? यहा अितना कह दू कि जो बाला *अिस युवककी चेष्टाका शिकार बनी हुअी है वह अुस युवकको सर्वथा* निर्मल और भाअीके समान मानती है, फिर भी अुसे वे चेष्टाअे अच्छी *नहीं लगती, अुनका वह विरोध भी करती है, लेकिन अुन चेष्टाआके खिलाफ* विद्रोह करनेका अुसमें बल नहीं है। अिस घटनासे मेरे मनमें जो आत्म-परीक्षण चल रहा था अुसके परिणामस्वरूप, यह पत्रव्यवहार पढनेके बाद दो या तीन दिनमें मैंने अपनी अूपर बताअी हुअी प्रथाका त्याग कर दिया और पिछली १२ तारीखको वर्धाके आश्रमवासियोंके सामने अिसकी घोषणा

१
अेक त्याग

[पू० महात्माजीके ता० २८–९–'३५ के पत्रमें "मुझे विश्वास है कि मेरे त्यागका सारा हाल तू जानेगी तब तू भी मुझसे सहमत होगी", यह वाक्य जिस लेखको ध्यानमें रखकर लिखा गया है, वह नीचे उद्धृत किया गया है। अिसका अुल्लेख महात्माजीके ता० ६–५–'३६ के पत्रमें भी आता है। यह लेख और साधका लेख पढ़कर समाजमें अुस समय बड़ा अूहापोह मचा था। अिस कारणसे पू० महात्माजीसे अुनके ब्रह्मचर्य-जीवन सम्बन्धी प्रश्न पूछनेकी मुझे प्रेरणा हुअी थी। अुत्तरमें पू० महात्माजीने ता० ६–५–'३६ और ता० २१–५–'३६ के पत्र लिखकर स्पष्टीकरण किया और ब्रह्मचर्यका महान आदर्श जीवन विकास तथा सामाजिक कल्याणके लिअे अुपस्थित किया।]

सन् १८९१ में मैं विलायतसे लौटा अुसके बाद मैंने हमारे परिवारके बालकोंका लगभग पूरा कब्जा ले लिया और अुनके — लड़के-लड़कियोंके कंधे पर हाथ रखकर घूमने जानेकी प्रथा डाली। ये बालक मेरे भाअियोंके थे। अुनके बड़े हो जानेके बाद भी यह प्रथा जारी रही। ज्यों ज्यों मेरे परिवारकी मर्यादा बढ़ती गअी, त्यों त्यों अिस प्रथाका दायरा धीमे धीमे अितना बढ़ा कि लोगोंका ध्यान अिस ओर गये बिना न रहा।

जहां तक याद है मुझे कभी अैसा नहीं लगा कि मैं कोअी बुरा काम कर रहा हूं। कुछ वर्ष हुअे साबरमतीके अेक आश्रमवासीने मुझसे कहा, "आप जब बड़ी अुमरकी लड़कियां और स्त्रियोंके कंधे पर हाथ रखकर चलते हैं, तब अुसमें समाज द्वारा स्वीकृत सभ्यताकी कल्पनाका भंग होता दिखाअी देता है।" परन्तु आश्रमवासियोंके साथ चर्चा होनेके

२

प्रभुकृपाके बिना सब मिथ्या है

डॉक्टर मित्रों और स्वेच्छासे मेरे जेलर बने हुअे सरदार वल्लभभाअी तथा जमनालालजीकी कृपासे 'हरिजनबन्धु' के पाठकोंके साथ मेरी साप्ताहिक बातचीत थोड़े-बहुत अंशमें फिरसे शुरू करनेकी मुझे प्रयोगके रूपमें छूट मिली है। यह छूट देते समय अुन्होंने कुछ शर्तें मुझ पर लादी हैं और अुन्हें मैंने अभी तुरन्त तो स्वीकार कर लिया है। वे शर्तें ये हैं (१) मेरे साप्ताहिकोंके लिअे भी अत्यन्त आवश्यक हो अुतना ही मैं लिखूं और वह भी सप्ताहमें अेक-दो घंटेसे ज्यादा परिश्रम न करना पड़े अुतना हो, (२) अपने व्यक्तिगत या पारिवारिक प्रश्नों और समस्याओंके बारेमें लिखनेवालोंके साथ मैं पत्रव्यवहार न करूं (अैसे अेक दो प्रश्नोंके सिवा जिनमें मैं शुरूसे लेकर अब तक पूरी तरह फंस चुका हूं), (३) किसी भी सार्वजनिक कामकाजको मैं स्वीकार न करूं और अेक भी सार्वजनिक सभामें शामिल न होअूं या भाषण न दूं। अिसके अलावा, निद्रा, आराम, व्यायाम और आहारके बारेमें भी नियम बनाये गये हैं। लेकिन अुनसे पाठकोंका कोअी सम्बन्ध न होनेके कारण मैं यहां अुनका अुल्लेख नहीं करूंगा। मुझे आशा है कि मेरे साप्ताहिकोंके पाठक और पत्रलेखक अिस बारेमें मुझे सहयोग देंगे और महादेव देसाअी पर, जिनके द्वारा मेरे सामने आवश्यक पत्र रखे जाते हैं, दया करेंगे।

मेरी तबीयत बिगड़नेका कारण जाननेकी पाठकोंको सहज ही जिज्ञासा होगी। डॉक्टर मित्रोंने बहुत सावधानी और परिश्रमपूर्वक मेरी परीक्षा की और अुनका कहना मैं जहां तक समझा हूं वहां तक अुन्हें मेरे अेक भी अवयवमें कोअी बिगाड़ मालूम नहीं हुआ है। अुनकी राय यह है कि मेरी तबीयत बिगड़नेका कारण यह है कि मेरी खुराकमें पौष्टिक तत्त्व (प्रोटीन) और गरमी पैदा करनेवाले तत्त्व (शक्कर और स्टार्च) अुपयुक्त प्रमाणमें नहीं थे और मैंने काफी अरसेसे अतिशय मानसिक परिश्रम किया है। मेरे

की। अिस निर्णय पर पहुचनेमें मुझे गहरा दुःख हुअे बिना नहीं रहा। अिस प्रथाके चालू रहते या अुसके कारण मेरे मनमें कभी अेक भी मलिन विचारने प्रवेश नही किया। मेरा आचरण हमेशा खुले आम हुआ है। मै मानता हूं कि वह आचरण पिता करता है वैसा ही था, और अुसके कारण जिन अनेक बालाओंका मैं मार्गदर्शक और रक्षक बना हू, अुन्होने दूसरे किसीके सामने न की हो अितने विश्वासके साथ और अितनी निर्भयतासे अपने मनकी बातें मेरे सामने की हैं। जिस ब्रह्मचर्यको हमेशा अन्य स्त्री या पुरुषके स्पर्शके सामने रक्षणकी दीवार रखनेकी जरूरत हो और जो जरासे भी प्रलोभनके सामने आते ही स्खलित हो जाय, अुस मैं सच्चा ब्रह्मचर्य नही मानता। फिर भी मैंने जो छूट ली है अुसमें रहे खतरोंसे मैं बेखबर नहीं था।

अिसलिअे मैंने अूपर बताअी हुअी खोजके परिणामस्वरूप, मेरी प्रथा चाहे जितनी शुद्ध रही हो तो भी अुसका त्याग कर दिया है। मेरे प्रत्येक आचरणको हजारो स्त्री-पुरुष सूक्ष्मतासे देखते हैं क्योंकि मैं जो प्रयोग कर रहा हूं अुसमें अखंड जागृतिकी आवश्यकता है। जिन कामोंका मुझे दलीलोंसे बचाव करनेकी जरूरत पड़े, वे काम मुझे नहीं करने चाहियें। मेरे अुदाहरणका कोअी भी मनुष्य अनुसरण कर सकता है, अैसी धारणा मेरी कभी नहीं थी। अिस युवकके अुदाहरणने मुझे सावधान कर दिया है। मैंने अिसे चेतावनी समझा है और आशा रखी है कि जिन्होंने मेरे अुदाहरणके असरसे या अुसके बिना भूलें की हैं, वे वापस सन्मार्ग पर मुड़ेंगे। निर्दोष यौवन अेक अनमोल धन है। क्षणिक अुत्तेजनाके लिअे, जिसे आनन्दका गलत नाम दिया जाता है, यह धन नष्ट नहीं करना चाहिये। अिस घटनाकी लड़कीकी तरह जो निर्बल मनकी लड़कियां हों, वे अितना बल सम्पादन करें जिससे दुष्ट या अपने कियेका भान न रखनेवाले युवकोंकी चेष्टाओंका — भले वे कितनी ही निर्दोष क्यों न हों — विरोध करके वे अुन्हें रोक सकें।

हरिजनबंधु, २२-९-'३५

गभीर त्रुटियां थीं। चाहे जितने गभीर व्यक्तिगत प्रश्न मेरे सामने आवे, लेकिन, जिस लिये मैंने मनोमंथनमें पड़कर अतिशय कष्ट भोगा, मैंने अुनका विचार पूरी अनासक्तिसे क्यों नहीं किया? अुनके लिये मैंने सारी वेदना अुठाओ और अपना खून जलाया, यह तो स्पष्ट ही है। गीताके पुजारीके शरीर और मन पर जैसे प्रश्न व्यथा अुत्पन्न नहीं कर सकते, वह तो 'मन-दुःख-सुख' और 'धीर' रहता है। लेकिन मैं धीर नहीं रहा। मेरी सचमुच यह मान्यता है कि गीतामाताके अुपदेशके अनुसार व्यवहार करनेवालेके मन और आत्माको जरा और व्याधि लग ही नहीं सकती। जैसे गीतानक्तका शरीर नीरोग वृक्षके पके फल या सूखे पत्तोंकी तरह समय आने पर गिर जाता है, लेकिन अुसकी आत्मा तो सदा ताजी ही रहती है। बाणशय्या पर लेटे हुओ भीष्म पितामह द्वारा युधिष्ठिरको दिये गये अलौकिक अुपदेशका रहस्य यही है।

डॉक्टर मित्रोंने हमेशा मुझे अपने आसपास घटनेवाली घटनाओंसे बेचैन न होनेकी सलाह दी है। जैसी बेचैन करनेवाली घटनाओंकी खबर मुझे न देनेकी भी खास सावधानी रखी गओ थी। ये लोग मुझे जितना अलग गीताभक्त समझते थे अुतना अलग तो मैं नहीं था, फिर भी अुनकी सावधानी और सूचनाके पीछे रहस्य था। जमनालालजीने मुझे मगनवाड़ीसे महिलाश्रम ले जानेकी मांग की'तब मुझे कितना दुःख हुआ था यह मैं जानता हूं। लेकिन जमनालालजी क्या करे? अनासक्तिपूर्वक काम करनेकी मेरी शक्तिके बारेमें अुन्हें श्रद्धा रही ही न थी। मेरी तबीयत गिर गओ, जितनी ही बात अुनके सामने मेरे अनासक्तिके दावेको न माननेके लिओ काफी थी। अुनका लगाया हुआ अपराध मैं स्वीकार करता हूं।

लेकिन अभी तो मेरे दुःखका कटोरा पूरा भरा नहीं था। मैं सन् १८९९ से ब्रह्मचर्यका ज्ञानपूर्वक और आग्रहपूर्वक पालन करनेका प्रयत्न करता आया हूं। ब्रह्मचर्यकी मेरी परिभाषामें शरीरकी ही नहीं बल्कि विचार और वाणीकी शुद्धिका भी समावेश होता है। शारीरिक शुद्धि तो मैं ओश्वरकी कृपासे पालन कर सका हूं। पिछले छत्तीस वर्षोंके सतत प्रयत्न-कालमें मानसिक शुद्धि भी अेक ही बार ख़तरेमें पड़ी थी। वैसे ही मनोविकारका दर्शन अिस बीमारीके दिनोंमें अेक बार मुझे हुआ और

रोजके सार्वजनिक कार्योंके अलावा कष्टदायी व्यक्तिगत प्रश्नों पर भी मैंने घटा सिरपच्ची की। मुझे खुदको भी याद है कि पिछले बारह महीनोंसे या अुससे भी ज्यादा समयसे मैं यह शिकायत करता आया हूं कि मेरा बढ़ता हुआ काम मैं कम नहीं करूंगा तो मेरा शरीर टूट जायगा। अिसलिअे जब मेरी तबीयत बिगड़ी तो मुझे कोअी आश्चर्य नहीं हुआ। मेरे आसपासके अेक व्यक्तिने मेरी अस्वस्थता देखकर घबराहटमें तुरन्त जमनालालजीको लिख न दिया होता और अुन्होंने वर्धाके सब डॉक्टर अिकट्ठे न किये होते और बम्बअीसे डॉक्टर न बुलाये होते, तो सम्भव है कि मेरी बीमारीका दुनियाको जरा भी पता न चलता।

जिस दिन मेरी तबीयत बिगड़ी अुस दिन सुबह अुठते ही मुझे चेतावनी तो मिल चुकी थी। मेरी गरदनके अूपरके भागमें विचित्र दर्द शुरू हुआ था। लेकिन मैंने अुसकी परवाह नहीं की और किसीसे कुछ कहा भी नहीं। दिनका कार्यक्रम हमेशाकी तरह चालू रखा। शामको घूमते समय अेक मित्रके साथ अत्यन्त गम्भीर और थकानेवाली बात करनी पड़ी, जिसके परिणामस्वरूप मेरी तबीयत बिगड़ी और मैंने बिस्तर पकड़ा। साथियोंके व्यक्तिगत प्रश्न मेरे लिअे तो स्वराज्यके प्रश्नों जितने ही महत्त्वके ठहरे। अैसे प्रश्न अेक बार छिड़ जाय फिर मैं अुन्हें छोड़ नहीं सकता। अैसे प्रश्नोंकी चर्चा और अुनके निराकरणमें अेक पूरे पखवाड़े तक मेरे खूनका पानी हुआ था। फिर और कोअी परिणाम कैसे आ सकता था?

अगर मेरी बिगड़ी हुअी तबीयतके बारेमें धाधली न मचाअी गअी होती तो भी कुदरतकी चेतावनीकी मैं अवहेलना न करता, मैंने काफी आराम किया होता और मैं अच्छा हो जाता। लेकिन जो हो गया अुसे देखते हुअे मुझे लगता है कि अितनी धाधली ठीक ही थी। डॉक्टर मित्रों द्वारा रखी गअी असाधारण सावधानी और मेरे दोनों जेलरों द्वारा की गअी असाधारण संभालके परिणामस्वरूप मुझे जबरन् अतिशय आराम लेना पड़ा। अितना आराम स्वेच्छासे तो मैंने नहीं ही लिया होता। अिस आरामके समयमें मुझे आत्मनिरीक्षणके लिये खूब अवकाश मिला। अिससे मुझे लाभ हुआ, अितना ही नहीं बल्कि मेरे आत्मपरीक्षणने मुझे बता दिया है कि गीताका जो अर्थ मैंने किया है अुसके मेरे पालनमें

प्रेम-पन्थ

प्रेमपन्थ पावकनी ज्वाळा, भाळी पाछा भागे जाने,
माही पड्या ते महासुख माणे, देखनारा दाझे जोने।
हरिना मारग छे शूरानो॥[1]

मेरे जीवनमें प्रार्थनाने बहुत हिस्सा अदा किया है। मैं बिलकुल बच्ची थी तब मुझे किसीने व्यक्तिगत या सार्वजनिक प्रार्थनाके बारेमें कुछ कहा हो या संस्कार दिये हों अैसा मुझे याद नहीं है। लेकिन ननसालमें मैं रहती थी तब मेरे नाना कभी कभी पोथी पढ कर सुनाते थे। अुसकी कथाअें मैं सुनती थी। छोटी या बडी सभी अुमरके भक्तोंका भगवान संकटसे बचाते है, अैसे किस्से अनेक बार सुननेसे मेरे मनमें श्रद्धा जागी और यह विश्वास पैदा हुआ कि अुन भक्तोंकी तरह मैं भी भगवानसे प्रार्थना करू तो वह मेरी भी सहायता करेगा। बादमें मैंने अिसका अनुभव किया। बचपनके संकट भला कितने बडे हो सकते हैं! फिर भी समय समय पर अुस अुस समयकी मेरी भावनाके अनुसार मुझे जब संकटभरी परिस्थिति लगती तब मैं चुपचाप मनमें भगवानकी करुणाके लिअे याचना करती, पोथीमें से सुने हुअे भक्तोंके करुणावचनोंका अुपयोग करती। संकटके प्रसंग अैसे होते थे बीमारी, परीक्षा, अंधेरेमें जानेके प्रसंग, अच्छा न लगनेवाला काम, अनिच्छासे करनेके प्रसंग, स्कूल जाते समय चिलबिले आदमियों द्वारा सताये जानेके प्रसंग। लेकिन अनुभव अैसा हुआ कि प्रार्थनासे या तो संकट दूर हो जाते हैं, या मदद अथवा बल मिलता है। अिसलिअे मेरी श्रद्धा बढ़ती ही गअी।

पूज्य महात्माजीके आश्रममें जाकर साधना करनेकी मेरी अिच्छा सब तरहसे अनुकूलता प्राप्त करके आखिरमें सफल हुअी। यह भी

---

१ अर्थ: प्रेमका मार्ग आगकी ज्वालाके समान है। लोग अुसे देखकर कायर भाग जाते हैं। जो अुसके भीतर प्रवेश करते हैं, वे महासुख भोगते हैं। और बाहरसे देखनेवाले जल जाते हैं। हरिका मार्ग शूरोंका है।

मैं काप अुठा। मुझे अपने प्रति तिरस्कार पैदा हुआ। विकारका दर्शन होते ही मैंने अपने साथियों और डॉक्टरासे बात की। वे बेचारे मेरी क्या मदद करते ? मैंने अुनसे किसी तरहकी मददकी आशा भी नहीं रखी थी। मुझ पर पूरे आरामकी जो बडी शर्त अुन्होंने लगाओी थी, अुस शर्तका मैंने भंग किया और 'कामकाज शुरू किया। मैंने अपने दुःखद अनुभवकी बात सब पर प्रगट की, अिसलिअे मेरा मन काफी हलका हो गया। मुझे अैसा लगा कि मेरे अूपरसे भारी बोझ अुतर गया। मुझे काओी भी हानि हो अुससे पहले मैं सावधान हो गया।

लेकिन गीतामाताका क्या ? अुसका अुपदेश तो स्पष्ट है। अुसमें कोओी परिवर्तन नहीं कर सकता। अिस ध्रुवतारेकी निशानी सामने रखकर जिसका मन चलता है, अुसे विकार छू नहीं सकते। अिस ध्रुव-तारेसे — अिस सर्वनियन्तासे मैं कितना दूर होअूगा यह तो वही जानता है। 'महात्मा' के रूपमें प्रसिद्ध हो जानेके बावजूद अीश्वरकी कृपासे मैं कभी फूला नहीं, बेवकूफ नहीं बना। लेकिन मेरे भीतर गर्वका थोडा भी जो अंश रहा होगा, वह जबरन् आराम करना पडा अुससे गल गया है। अिससे मेरी मर्यादाअें और अपूर्णताअें स्पष्ट हो जाती हैं। लेकिन अिन मर्यादाओं और अपूर्णताओंसे शरमानेकी जरूरत नहीं है। अिन्हें दुनियासे छिपाअू तो ही शरमानेकी जरूरत हो सकती है। गीतामाताके अुपदेशके बारेमें मेरी श्रद्धा पहले जितनी ही आज भी जाग्रत है। अिस अुपदेशका जीवनमें साक्षात्कार तभी होता है, जब अुस अुपदेशके पालनके लिअे सतत प्रयत्न किया जाय। लेकिन वही गीताजी कहती हैं कि यह साक्षात्कार प्रभुकृपाके बिना नहीं होता। प्रभुकृपाकी शर्त भगवानने न रखी होती, तो आदमीका सिर फिर जाता और अुसके अभिमानकी सीमा न रहती।

हरिजनबन्धु, १८-३-'३६

दूर थे। पत्रव्यवहार नियमित चलेगा या नही, अुनके मनमें मेरा स्थान रहेगा या नही, अैसी अैसी चिन्तायें मनमें हुआ करती थी। सूर्यमालामें अपने कक्षमें घूमनेवाले ग्रह जिस प्रकार सूर्यसे प्रकाश और शक्ति प्राप्त करते है, वैसे ही दूर रहते हुअे भी पूज्य महात्माजीसे स्नेह, सहानुभूति तथा बल प्राप्त करनेकी आशा मैं रखती थी। अिस प्रकार दो तरहकी चिन्तामें मन व्यग्र हो गया था। और भविष्य अंधकारमय लगता था।

अैसी स्थितिमें रातको यह स्वप्न आया:

मैंने देखा कि अेक विशाल मैदानमें मैं बैठी हू। मैदान अितना विस्तीर्ण था कि दूर गोल घूमता हुआ आकाश क्षितिजके पास अुससे मिलता हुआ दिखाओी देता था। पेड़, मकान, रास्ता कुछ भी नही दीखता था। मनुष्य भी नही थे। सर्वत्र हरी घास अुगी हुअी थी और मैदानमें मध्यबिन्दुके रूपमें अेक कुरसी पर मैं बैठी हुअी थी। थी तो अकेली ही, लेकिन अैसी प्रतीति होती थी कि मेरे पीछे ही अेक व्यक्ति खडा है। मुझे वह व्यक्ति दिखाओी नहीं पडता था, दृष्टिसे ओझल था; लेकिन वह पुरुष था; मेरा रक्षक कहो या तारनहार कहो, लेकिन वह साथ देनेवाला था, अिस बारेमें मुझे शका नही थी। अिस स्थितिमें मैं बैठी थी तभी अचानक सामनेसे चार-पाच सुन्दर बालक, सुन्दर पोशाक पहने हुअे, हाथमें फूलोके गुच्छे लिये दौड़ते आये और पास आकर अुन्होंने वे गुच्छे मुझे दे दिये। मैं अुनके साथ बातें करने लगी, अितनेमें वैसे ही दूसरे बच्चे दौडते हुअे आये और अुन्होंने भी मुझ गुच्छे दिये। अिसी तरह बालकोंके झुण्ड वहा आते गये और सभी मुझे गुच्छे देने लगे। आखिरमें बालक ठहर गये और चारो दिशाओंसे और अूपर आसमानसे पुष्प-गुच्छोंकी वृष्टि मेरे अूपर होने लगी, अिससे मैं ढक गअी और चौंककर नींदसे जाग गअी!

जागनेके बाद स्वप्नका विचार आया। मैंने जाना कि स्वप्नमें जो पुरुष मेरे पीछे अदृश्य रूपमें खडा था वे पूज्य महात्माजी ही थे। अुनके आशीर्वाद मेरे साथ हमेशासे है, अिसलिअे अुनका असर मेरे सेवाकार्यमें दृश्य फल दिये बिना नही रहेगा, अैसा विश्वास मनमें दृढ़ हो गया।

प्रार्थनाका ही फल है अैसी मेरी श्रद्धा है। वहां चारेक वर्ष बितानेके बाद और जेलमें ग्यारह महीने रहनेके बाद फिर निर्णयकी मुसीबत आकर खडी हुअी तब भी प्रार्थना काम आअी। जेलसे छूटनेके पहले भविष्यके मार्गदर्शनके लिअे भगवानसे प्रार्थना की, तब अुसकी कृपासे यह काम सरल हो गया।

प्रार्थनाके साथ मेरे जीवनसे जुडी हुअी अेक गूढ़ घटना सूचक स्वप्नोंकी है। बुद्धिनिष्ठ विद्वान अिसे हंसकर टाल देंगे। लेकिन मैं तो अपने अनुभवके आधार पर कहती हूं। जब जब मेरे जीवनमें कोअी खास परिवर्तन होनेका समय आता है अथवा मार्गदर्शनकी अपेक्षा होती है, अथवा अपेक्षा न होने पर भी मेरे हाथसे कोअी काम होनेकी अपेक्षा नियति रखती है, तब तब मुझे सूचक स्वप्न आते हैं! सत्याग्रह आश्रममें आनेके बाद मुझे अेक अैसा स्वप्न आया था, जिसका स्पष्टीकरण पूज्य महात्माजीने अपने ढंगसे किया था। सासवड आनेके बाद भी फिरसे (वह) स्वप्न आया!

सासवड आनेके बाद मेरे मनमें दो विचार प्रवाह बहने लगे। अेक, मनमें अैसी चिन्ता बनी रहती थी कि जिस क्षेत्रमें अभी तक कोअी कार्य नहीं हुआ है अुसमें नया प्रयोग करते समय ज्ञान और अनुभव न होनेसे कार्यशक्तिमें अुतनी कमी रहेगी। साथी नये, क्षेत्र नया, अपनी बुद्धि तथा शक्तिके मापका कोअी अन्दाज नहीं। अिसके सिवा यहांका वातावरण भी सत्याग्रह आश्रमके वातावरणसे मिलता नहीं था। महाराष्ट्रमें रचनात्मक कार्यकर्ता भी राजनीतिमें पूरा रस लेते हैं। विद्वत्ताको प्रथम आदर मिलता है और चर्चा तथा वाद विवाद पूर जोशसे चलते हैं! दो महाराष्ट्री मिले कि वाद विवाद आरम्भ हुआ ही समझिये। ये सब बातें मेरे स्वभावके विरुद्ध थीं। अिस वातावरणमें अपने ढंगका सेवा-कार्य कैसे होगा, अिसकी चिन्ता मनमें बनी रहती थी।

दूसरा विचार पूज्य महात्माजीके बारेमें था। सत्याग्रह आश्रममें थी तब वे भले ही दूर रहे तो भी पास ही लगते थे। पत्रव्यवहार द्वारा अुनके साथ सान्निध्य कायम रहता था। बीच बीचमें मिलना भी हो जाता था, अुनका सहवास भी मिलता था। अब मैं दूर आ पडी थी। वे भी बहुत

दूर थे। पत्रव्यवहार नियमित चलेगा या नहीं, अुनके मनमें मेरा स्थान रहेगा या नहीं, अैसी अैसी चिन्तायें मनमें हुआ करती थीं। सूर्यमालामें अपने कक्षमें घूमनेवाले ग्रह जिस प्रकार सूर्यसे प्रकाश और शक्ति प्राप्त करते हैं, वैसे ही दूर रहते हुअे भी पूज्य महात्माजीसे स्नेह, सहानुभूति तथा बल प्राप्त करनेकी आशा मैं रखती थी। अिस प्रकार दो तरहकी चिन्तामें मन व्यग्र हो गया था। और भविष्य अंधकारमय लगता था।

अैसी स्थितिमें रातको यह स्वप्न आया :

मैंने देखा कि अेक विशाल मैदानमें मैं बैठी हूं। मैदान अितना विस्तीर्ण था कि दूर गोल घूमता हुआ आकाश क्षितिजके पास अुससे मिलता हुआ दिखाअी देता था। पेड़, मकान, रास्ता कुछ भी नहीं दीखता था। मनुष्य भी नहीं थे। सर्वत्र हरी घास अुगी हुअी थी और मैदानमें मध्यबिन्दुके रूपमें अेक कुरसी पर मैं बैठी हुअी थी। थी तो अकेली ही, लेकिन अैसी प्रतीति होती थी कि मेरे पीछे ही अेक व्यक्ति खड़ा है। मुझे वह व्यक्ति दिखाअी नहीं पड़ता था, दृष्टिसे ओझल था; लेकिन वह पुरुष था; मेरा रक्षक कहो या तारनहार कहो, लेकिन वह साथ देनेवाला था, अिस बारेमें मुझे शंका नहीं थी। अिस स्थितिमें मैं बैठी थी तभी अचानक सामनेसे चार-पांच सुन्दर बालक, सुन्दर पोशाक पहने हुअे, हाथमें फूलोंके गुच्छे लिये दौड़ते आये और पास आकर अुन्होंने वे गुच्छे मुझे दे दिये! मैं अुनके साथ बातें करने लगी, अितनेमें वैसे ही दूसरे बच्चे दौड़ते हुअे आये और अुन्होंने भी मुझे गुच्छे दिये। अिसी तरह बालकोंके झुण्ड वहां आते गये और सभी मुझे गुच्छे देने लगे। आखिरमें बालक ठहर गये और चारों दिशाओंसे और अूपर आसमानसे पुष्प-गुच्छोंकी वृष्टि मेरे अूपर होने लगी; जिससे मैं ढक गअी और चौंककर नींदसे जाग गअी!

जागनेके बाद स्वप्नका विचार आया। मैंने जाना कि स्वप्नमें जो पुरुष मेरे पीछे अदृश्य रूपमें खड़ा था वे पूज्य महात्माजी ही थे। अुनके आशीर्वाद मेरे साथ हमेशा हैं, अिसलिअे अुनका असर मेरे सेवाकार्यमें सुफल दिये बिना नहीं रहेगा, अैसा विश्वास मनमें दृढ़ हो गया।

यह स्वप्न मैंने पू० महात्माजीको नहीं बताया, क्योंकि अेक पत्रमें अुन्होंने मुझे लिखा था कि सपनाको महत्त्व नहीं देना चाहिये। यहां मुझे अेक सुवन्संवाद याद आता है।

दाडीकूचसे पहले पू० महात्माजीका निवास सत्याग्रह आश्रममें था, तबकी यह घटना है — शायद लाहौर कांग्रेससे पहलेकी हो। शामकी प्रार्थनाके बाद पूज्य महात्माजी हृदय-कुंजके आंगनमें अपनी खाट पर बैठे थे। सामने बेंच पर दो अमेरिकन मित्र बैठे थे। अुनमें से अेक अमेरिकाके लेखक श्री शेरवुड अेड्डी थे, अैसा स्मरण है। मैं पास खड़ी ध्यानपूर्वक अुनकी बातें सुन रही थी। अैसी मुलाकातोंसे मुझे बहुत सीखनेको मिलता था।

व लेखक पू० महात्माजीसे पूछ रहे थे "जब आपके सामने कोअी कठिन समस्या खड़ी होती है, तब आप अुस किस तरह हल करते है? अर्थात् जब आपको मार्ग स्पष्ट नहीं दीखता तब आप क्या करते हैं?"

पू० महात्माजी बोले 'I think and ponder over it for hours together and when I cannot see the light I say, 'Let it go to the devil' and sleep over it But when I get up in the morning, lo! the solution is there!" (मैं घंटों तक अुस पर विचार और मनन करता हूं, और जब मुझे प्रकाश नहीं दीखता तब मैं कहता हूं कि, 'अभी अिस बातको छोड़ो?' और अेक रात नींद निकाल लेता हूं। लेकिन सुबह मैं अुठता हूं तो अचानक हल सामने आकर अुपस्थित हो जाता है!)

लेखकने पूछा, "Do you mean to say that you get the solution in your dream, as if through a miracle?" (आपके कहनेका क्या यह अर्थ है कि चमत्कारकी तरह स्वप्नमें आपको हल मिल जाता है?)

पूज्य महात्माजी बोले, "No, no miracle! It is something like the case of a mathematician He ponders over his problem for hours together and after a great deal of concentration and effort he finds the solution all of a sudden and cries, 'Ah! here it is!' That exactly is the

case with me." (नही, चमत्कार नही! यह तो गणितज्ञके जैसी बात है। वह घटो तक अपनी समस्या पर विचार करता रहता है। और खूब अेकाग्रता और प्रयत्नके बाद अेकाअेक अुसे अुसका हल मिल जाता है और वह बोल अुठता है 'अहा, हल मिल गया!' मेरे बारेमें ठीक अैसा ही है।)

श्री विनोबाजीसे मैंने अेकबार स्वप्नोके बारेमें पूछा था। मेरी स्मरण-शक्ति ठीक काम करती हो तो "मुझे स्वप्न आते ही नही।" अैसा अुत्तर अुन्होने दिया था। अत अुनके लिअे स्वप्नकी बात विचार करने योग्य थी ही नही।

जिस तरह जिस युगके दो महान आध्यात्मिक शक्तिवाले पुरुषोके मत मैंने जान लिये। लेकिन प्रत्येक व्यक्ति अपने अनुभवसे ही चलता है। मुझे स्वप्नोकी सूचक और सच होनेकी प्रतीति कअी बार हुअी है। मेरे पिताजी कारवारमें अचानक नीदमें गुजर गये, अुमी रातको लगभग अुमी समय मुझे भय-सूचक स्वप्न आया था! तब मैं सफरमें थी। दो दिन बाद पूना पहुची और तार मिला! और मुझे रामायणका राजा दशरथकी मृत्युके बारेमें भरतको आये स्वप्नका वर्णन याद आ गया।

*

सासवडमें सेवाकार्य शुरू हुआ। पूज्य महात्माजीके साथ पत्रव्यवहार चालू रहा। समय समय पर मिलना भी हो जाता था। गाधी-सेवा-सघकी सदस्या बननेके बारेमें स्व० श्री किशोरलालभाअीकी सूचना मुझे मिली और मैं सदस्या बनी। अिससे हर साल सम्मेलनमें सात दिन रहकर पूज्य महात्माजीका सहवास प्राप्त करनेका सुख मिलने लगा। सासवडका आश्रम महाराष्ट्रमें गाधीजीके विचार और कार्यका केन्द्र बने, अैसी थी शकर-रावजीकी अिच्छा और प्रयत्न था। आचार्य भागवत जैसे विद्वान और तत्त्वचिंतक सचालक आश्रमका मार्गदर्शन करते थे। धीरे धीरे आश्रमकी प्रवृत्तियां बढ़ने लगी। चरखा, बुनाअी, तेलघानी, राष्ट्रभाषा प्रचार, साक्षरता प्रचार हरिजन सेवा आदि काम चलते ही थे। अिसके सिवा, महाराष्ट्र चरखा-सघकी तरफसे सासवडमें खादी विद्यालय शुरू हुआ और तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठकी तरफसे बुनियादी शिक्षाकी चार शालायें भी सासवड़ और पासके तीन गावोमें चलने लगी। सन् १९४० तक सासवड़में

रचनात्मक काम बड़ी तेजीसे चल रहा था। फिर सत्याग्रहका आंदोलन शुरू हुआ। आश्रमवासी अेकके बाद अेक जेल जाने लगे। आश्रमकी प्रवृत्तियां बन्द होती गयीं और सन् १९४२ में आश्रम और खादी-विद्यालय दोनों बन्द हो गये।

सन् १९४४ से आश्रम नये रूपमें शुरू हुआ। आचार्य भागवतके विचार — खास तौर पर राजनीतिक क्षेत्रके — बदल गये थे। वे कांग्रेसके विरोधी और समाजवादी दलके पक्षपाती हो गये थे। पू० महात्माजीके अवसान तक समाजवादी दल कांग्रेसमें था, फिर भी दोनों दलोंके बीच अविश्वास बढ़ता जाता था।

मैंने सासवड़का केन्द्र कायम किया था। आश्रम फिर शुरू हुआ। श्री शंकररावजी जून १९४५ में जेलसे छूटे तब तक आश्रममें बहनें ही आकर रहती थीं। फिर पुरुष कार्यकर्ता आने लगे।

कांग्रेस स्त्री-संगठन समितिके कार्यके सिलसिलेमें मुझे महाराष्ट्रमें बार बार भ्रमण करना पड़ता था। फिर कस्तूरबा ट्रस्टका काम बढ़ने लगा। अिसलिअे ग्रामकेन्द्रोंके निरीक्षणके लिअे भी घूमना पड़ा।

पूज्य महात्माजी नोआखालीमें घूम रहे थे तब अेक बार मैं अुनसे मिल आअी थी। सन् १९४७ का समय तमोयुगकी तरह मालूम होता था, अैसा याद पड़ता है। देश आजाद हुआ अुसका आनन्द मनाने जैसी परिस्थिति नहीं रही थी। मैं जहां जाती वहां अुनका ही चिंतन करती थी। अुनकी जीवनभरकी तपस्याका फल अैसे अुग्र वातावरणमें, हलाहलसे व्याप्त मानव-सागरके क्षोभमें, आसुरी द्वेषके ताडवमें प्रकट होगा, अैसी कल्पना ही नहीं थी। अीश्वरके अैसे महान भक्तको अैसी भयानक कसौटीमें से क्यों गुजरना पड़ता होगा, यह मेरी समझमें ही नहीं आता था। मुझे अपने अूपर भी चिढ़ आती थी। हम अुनके अनुयायी, खास-तौर पर मैं खुद, क्यों कुछ नहीं कर पाते? क्यों अुनकी मदद नहीं कर सकते? हमारी प्रार्थना क्यों नहीं फलती? क्या भगवानका कोप हुआ होगा?

आगाखां महलसे पूज्य महात्माजीके छूटकर आनेके बाद मैंने दो बार अुनसे कहा था, "आपके अवसानसे पांच मिनट पहले मुझे मर जाना

है। आपके बाद मैं जीना नही चाहती। मुझे घोर अंधेरा लगेगा!" अुन्होंने अेक बार हंसकर कहा 'हां'। दूसरी बार पूछा, "पहले मरकर तू क्या कर लेगी?"

लेकिन सन् १९४७ में देशमें चारों ओर जो यमराज्य चल रहा था, वह मौतसे पहले मरने जैसा दिखाओ देता था, अुसे क्या 'जीवन' कहा जा सकता था? पूज्य महात्माजीका जन्मदिन आता तब प्रतिवर्ष मैं अुनकी दीर्घायुके लिअे प्रार्थना करती थी और पत्रमें भी वैसी ही शुभेच्छा लिखती थी। लेकिन १९४७ में अुनके जन्मदिन पर अिस प्रकार लिखनेकी याद आती है. "जीवनभर आपने जिस आदर्शकी तपस्या की अुससे अुलटा ही परिणाम भविष्यमें आनेवाला हो, तो अुसे देखनेके लिअे आप जीयें और हम आपके अनुयायी निकम्मे बनकर बैठे रहे और आपकी मददमें मर मिटनेकी हिम्मत न बता सकें — अिसकी अपेक्षा भगवान अपनी कृपासे आपको अैसी स्थिति पैदा होनेसे पहले ही अपने पास बुला ले, अैसी प्रार्थना मन करता है!"

सन् १९४७ के दिसम्बरमें पूज्य महात्माजीका निवास नओ दिल्लीमें था। दिसम्बरके दूसरे सप्ताहमें कस्तूरबा ट्रस्टके प्रान्तीय प्रतिनिधियोंकी बैठक पूज्य महात्माजीकी मौजूदगीमें होनेवाली थी, अिसलिअे मैं दिल्ली गओ थी। लगभग १० महीने बाद मैं अुनसे मिलने गओ थी। जेलमें न होनेकी स्थितिमें अितना लम्बा समय मैं कभी न जाने देती थी। अुनकी मुलाकातको ४–५ महीने होते कि या तो मुझे किसी कारण-वश अुनके दर्शनका मौका मिल जाता, या कोओ कारण ढूंढकर मैं ही अुनसे मिलने चली जाती थी। मेरी अिस आदतसे शंकररावजी अच्छी तरह परिचित थे, कभी कभी विनोद भी करते थे। मेरी आतुरता देख-कर वे कहते, "अब बैटरी खतम हो गओ मालूम होती है। अब वहां (पूज्य महात्माजीके पास) जाकर फिर अुसे भर लाना।" और सचमुच ही मैं चाहे जितनी थकी हुओ होती, तो भी हमारे अुन प्रियदर्शी नेताका दर्शन हुआ कि कोओ नओ ही चेतना मेरे मनमें प्रवेश करती थी, थकान अुतर जाती थी, मनमें अुल्लास भर जाता था। अुनकी बातचीतसे चित्तको सुखका अनुभव होता था, अुनके प्रसन्न हास्यसे हृदय डोलने

लगता था और अुनका वात्सल्यपूर्ण हाथ कंधे पर फिराया जाता तब अखिल जगतको जीतनेका अुत्साह मनमें पैदा हो जाता था। अिसलिअे अुनसे मिलते ही बैटरी भर जाती और मैं नये अुत्साहके साथ वापस आकर स्वधर्ममें जुट जाती थी, अिसमें आश्चर्यकी कोअी बात नहीं।

जिस वर्ष वे नोआखाली और बिहारमें भीषण परिस्थितिमें काम करने गये थे, शैतानका हृदय पिघलाने गये थे, अत हमारे लिअे — अुनके अनुयायियोंके लिअे — तो 'स्वे स्वे कर्मण्यभिरत:' होकर रहना ही स्वधर्म था। सासवड़ और पुरन्दर तालुकामें हिन्दू बहुमतके बीच थोड़ेसे मुसलमान सुरक्षित रहे थे। कस्तूरबा ट्रस्टकी सेविकायें और कांग्रेस स्त्री-संगठन समितिकी बहनें महाराष्ट्रमें अपने अपने कर्तव्यका दृढ़तापूर्वक पालन कर रही थीं। यह समाचार लेकर मैं दिल्ली गअी थी।

पूज्य महात्माजीसे मेरी मुलाकात हुअी। मेरी स्मृतिके अनुसार ९ दिसम्बरकी शामको पूज्य महात्माजीके साथ मोटरमें बैठकर मैं बिड़ला-भवनकी तरफ जा रही थी। हम दो ही थे। पूज्य महात्माजी हृदयकी वेदना अुड़ेलने लगे। अपने पुराने साथियोंके बारेमें, जो अुस समय राज्याधिकार भोग रहे थे, वे बात कर रहे थे। "मैं अकेला हूं, मेरे साथ कोअी नहीं है।" यह था अुनके वचनका आशय! मैं थोड़ी देर अवाक् होकर बैठी रही। मैंने पहले कभी अुनके मुहसे अन्तर्वेदनाको अिस तरह प्रगट होते नहीं देखा था।

प्रतिनिधियोंकी बैठकमें भी अैसा ही हुआ। अनेक प्रश्न पूछे गये; मैंने भी अेक प्रश्न पूछा था। सारे देशमें कस्तूरबा ट्रस्टकी सेविकाओंके लिअे कार्यकी अेक नीति है। लेकिन देशमें अनेक संस्थायें अलग अलग तरीकेसे मनमाना काम करें तो, अुससे कोअी निश्चित परिणाम नहीं आता। अिसलिअे सारे देशके लिअे अेक योजना बननी चाहिये, जिसमें सरकार और जनता दोनों शामिल हों, जिससे ट्रस्टका काम चमक अुठे और सबके लिअे सरल भी हो जाय। आजकी विकेन्द्रित शक्तिके केन्द्रित होनेसे राष्ट्रीय कार्यके साथ राष्ट्रीय गुणोंका भी अुत्कर्ष होगा — अैसा मैंने कहा।

पूज्य महात्माजीने पूछा, "अैसी योजना कौन बनायेगा?"

मैंने कहा, "यह तो आप ही बना सकते हैं।"

वे बोले, "अुससे क्या होगा?"

मैंने कहा, "क्या? केन्द्रीय मंत्रि-मंडलमें आपके ही अनुभवी नेता हैं। अुनके गले यह योजना आप अुतारें। फिर राष्ट्रीय पैमाने पर काम शुरू होगा।"

पूज्य महात्माजी गंभीर हो गये। कहने लगे, "तू मानती है कि वे सब मंत्री मेरा कहा सुनेंगे? मैं कहता हूं कि मेरी बात कोअी नहीं सुनेगा। मैं अकेला हूं।" फिर हरजेकका नाम लेकर व अपने और अुनके बीचके मतभेदका विवेचन करने लगे। यहां अुसके विस्तारमें जाना व्यर्थ है। लेकिन पूज्य महात्माजीके मनमें भीतर ही भीतर कितनी निराशा पैदा हो गअी थी, अिसकी झांकी मुझे मिली।

मैं बेचैन हुअी। मैं तो बिलकुल सामान्य सेविका थी। असंभवको संभव बनानेके लिअे मैं भला क्या कर सकती थी? फिर भी मैं पूज्य महात्माजीको फिरसे प्रसन्न और अुत्साहपूर्ण देखना चाहती थी। अिसलिअे दुबारा हम मिले तब मैंने पास जाकर अुनसे पूछा, "सरकारको जाने दीजिये। हमारा गांधी-सेवा-संघ तो है। जिसका आपने विसर्जन किया था अुसीको फिरसे खड़ा क्यों नहीं करते? वह आपकी योजनाको पूरी करनेमें मदद करेगा।"

वे सिर नीचा करके लिख रहे थे। मेरा अुत्तर सुनकर अुन्होंने अेकदम सिर अूंचा करके मेरी ओर देखते हुअे जरा हंसकर कहा, "गांधी-सेवा-संघको फिरसे खड़ा करनेकी बात ही तू मत बोल। क्या तू चाहती है कि मैं अपने चारों तरफ hypocrites (दांभिकों)का अेक दल खड़ा कर दूं? अुस संघमें से अैसा ही दल पैदा हुआ था। मैं दुबारा वैसा *नहीं करना चाहता।"*

मुझ पर जैसे वज्रपात हुआ। मैं भी संघकी सदस्या थी। पूज्य महात्माजी हमसे जो अपेक्षा रखते थे अुसका पूरा होना तो अेक किनारे रहा, अुन्हें हमने दुःख ही दिया। कैसा पाप?

पूज्य महात्माजीसे कुछ भी कहनेकी मैंने फिरसे हिम्मत नहीं की। विचार आया: "अवतारी पुरुषकी अुत्कट अभिलाषा रखना अेक चीज है। लेकिन अुसके अवतरित होनेके बाद युगकी मांग पूरी करनेके लिअे

आवश्यक शक्ति पैदा करना दूसरी चीज है। युग-पुरुषकी सेवाके लिअे योग्यता होनी चाहिये।"

बैठक खतम होनेके बाद वापस लौटनेसे पहले मैंने पूज्य महात्माजीसे विदा ली। अुस दिन दिसम्बरकी १३ तारीख थी। शामकी प्रार्थनाके बाद अुनके साथ मैं बगीचेमें घूम रही थी। अेक तरफ आभा थी, दूसरी तरफ मैं। डॉ० किचलूके साथ अुनकी बातचीत चल रही थी। अेक और सज्जन डॉक्टर साहबके साथ थे, लेकिन वे कौन थे यह अब याद नहीं है। सुशीला मुझे लेने आअी तब मुझे अत्यंत दुःख हुआ। अिस बार दस महीनेके वियोगके बाद मुलाकात हुअी है। भविष्यमें कब होगी? अैसा विचार मनमें आया और अनजानमें वैसे शब्द मुहसे निकले।

पूज्य महात्माजी मुझसे पूछने लगे, "बोल, तू फिर कब मुझसे मिलना चाहती है?"

मैंने क्षणमात्र विचार किया और कहा, "अैसी अिच्छा होगी तब आपको लिखकर बताअूगी।"

"ठीक, वैसा ही करना," अैसा आश्वासन देकर अुन्होंने मेरी झुकी हुअी पीठ पर अभयहस्त रखा। प्रणाम करते करते मनमें भान हुआ, "अरे, आज तेरहवीं तारीख है!!!"

सुशीलाके साथ जाते जाते मैंने कितनी ही बार मुंह घुमाकर अुनका दर्शन किया। सुशीला हसते हसते मुझसे पूछने लगी, "आज विदा लेते समय तू अितनी विह्वल क्यों हो गअी थी?" अिसका जवाब मैंने अुस समय नहीं दिया। डेढ़ महीने बाद राजघाटकी तरफ जाते हुअे श्मशान-यात्रामें हम साथ मिलीं, तब अुसे अिसका अुत्तर अपने आप मिल गया।

मैं सासवड़ वापस आअी तब मनमें अनेक विचार अुठते रहते थे। पूज्य महात्माजी कभी भी अपने साथियोंके बारेमें अिस तरह नहीं बोलते थे। कभी मैं किसीकी आलोचना करती तो अुन्हें यह अच्छी नहीं लगती थी। काम सफल होता तब वे सब साथियोंको श्रेय देते, काम बिगड़ता तब अपनी भूल निकालते। लेकिन अिस बार तो अुनकी रीति कुछ और ही दिखाअी देती थी। अिसका कारण क्या होगा? साथियोंसे नाराज

हुअे होंगे ? या यह भावीकी सूचना कहलायेगी ? अैसा कहा जाता है कि स्वामी रामकृष्ण परमहंसने अपनी मृत्युके बारेमें पूर्व सूचना दे दी थी। वे कहते थे कि, "न करने जैसी बातें मैं करने लगूं तब समझना कि मेरी मृत्यु समीप आ गअी है।"

दिसम्बर पूरा हुआ। जनवरीका महीना आया। चौदहवीं तारीखको संक्रांति थी। हमेशाकी तरह मैंने पूज्य महात्माजीको पत्रके साथ तिल-गुड़ भेजा। अुसके बाद अखबारोंमें पढ़ा कि अुन्होंने अुपवास शुरू किया है। हृदयको अेक आघात लगा। मनमें डर पैदा हुआ कि, "अिस संकटके समयमें अहिंसा-मूर्तिकी आहुति तो नहीं पड़ेगी!" लेकिन मैंने देखा कि भारतका हृदय अविचल है, बलवान है। अूपर दिखाअी देनेवाली हिंसाके पर्देके नीचे पूज्य महात्माजीके प्रति प्रेम और निष्ठाकी तहें हैं। अुनकी टेकको पूरा करके जनताने आत्माके प्रति द्रोह करनेसे अिनकार कर दिया है।

वातावरण कुछ पलटता-सा लगा। अुपवासमें अपमृत्यु टल गअी। फिर बम-संकटसे भी पूज्य महात्माजी बच गये। मुझे लगा कि भगवान भक्तोंके रक्षक हैं। हम व्यर्थ ही डरते थे। जितना महान पुरुष अुतनी ही महान अुसकी कसौटी! अुसके लिअे संकट भी महान ही आयेंगे। महान संकटोंमें से पार हुअे बिना महापुरुषकी महानता भी कैसे सिद्ध हो सकती है? भगवान अपनी लीला दिखाते हैं। महात्माजीकी महानता तो शिखर पर पहुंच गअी है, अैसा कुछ मनको लगा और हृदय अत्यंत प्रसन्न हो गया।

अुस समय श्री शंकररावजी कांग्रेसके महामंत्री थे। वे कांग्रेस संस्थामें आअी हुअी शिथिलताको दूर करके अुसको मजबूत बनानेका प्रयास कर रहे थे। वे सर्वोदयकी बुनियाद पर देशमें आर्थिक नियोजन करनेका विचार रखते थे। अिसलिअे रचनात्मक कार्यकर्ताओंका अेक संघ संगठित करनेकी आवश्यकता अुन्हें महसूस होती थी। पूज्य महात्माजीने गांधी-सेवा-संघको पुनरुज्जीवित करना अस्वीकार कर दिया था, फिर भी रचनात्मक कार्यकर्ताओंको मार्गदर्शन देनेकी तैयारी बताअी थी। स्वतंत्रता प्राप्त करनेके बाद अुद्यम और पुरुषार्थ करनेका समय आया था। देशसे

दारिद्र्यके रोगकी जड़ काटनेके लिअे रचनात्मक शक्तिकी बुनियाद पर भगीरथ प्रयास करनेकी जरूरत थी। अिसलिअे शंकररावजीके प्रयत्नसे ८, ९ और १० फरवरीको सेवाग्राममें रचनात्मक कार्यकर्ताओंका सम्मेलन करनेका निश्चय हुआ था। पूज्य महात्माजी फरवरीके शुरूमें नअी दिल्लीसे सेवाग्राम जानेवाले थे।

अुस सम्मेलनमें शरीक होनेकी मेरी भी अिच्छा थी। अिसलिअे २६ जनवरीको मैंने सासवड छोड़ा। दूसरे दिन कुलाबा जिलेके पेण गांवमें महाराष्ट्र कांग्रेस स्त्री-संगठन समितिकी कार्यसमितिकी बैठक थी। वह दो दिनमें पूरी हुअी। फिर तीसरे दिन दूरके अेक गांवमें कस्तूरबा ट्रस्टके ग्रामसेवा केन्द्रको देखने गअी। और ३० जनवरीको दोपहर १२ बजे मैं बंबअी पहुंची। मेरी मौसीके यहां ठहरी थी।

शाम तक सारे काम पूरे करके मैं साढ़े पांच बजे फलाहार करने बैठी थी। बम्बअीसे वर्धा जाना चाहती थी। अिसीके विचार मनमें घुल रहे थे। अेकाअेक किसीने बाहरका दरवाजा धड़ामसे खोला। मौसी देखने गअी तो अुनका छोटा लड़का रेडियो सुनकर हांफता हुआ दौड़कर आया और चीख अुठा, 'मां, गांधीजी गये . . . !'

मेरी छातीमें दो बार दर्द अुठा। मुझे ठीक याद नहीं कि मैं कब अुठी और मुंह धोकर बाहर आरामकुर्सी पर बैठ गअी। दिमाग बिलकुल जड़ हो गया था। मैं जीवित हूं या मृत, अिसकी भी कल्पना नहीं थी!

मौसी पास आकर सिर पर हाथ रखकर मुझे समझाने लगी, "शान्त रह बेटी, वह कमबख्त गलत खबर लाया होगा। मैं मालूम करती हूं।" मालूम करनेके बाद तो तीन गोली लगनेके ही समाचार मिले।

आंखसे आंसू भी नहीं बह रहे थे, मैं स्थिर बैठी थी। बहुत देर बाद भान हुआ। किसन आकर मुझसे लिपट कर रोने लगी। अुसके बाद मुझे भी रोना आया, अैसा याद है। सारी रात वह मेरे पास ही सोअी। सुबह जल्दी अुठकर मैंने सिर धोकर स्नान किया और चौपाटी पर सार्वजनिक प्रार्थनाके लिअे जानेकी तैयारी की। अितनेमें फोन आया। सुशीला सुबह सफर करके बम्बअी पहुंची थी। अेक स्नेहीके मारफत अुसने मुझे हवाअी जहाज द्वारा दिल्ली चलनेका सन्देश दिया था। वह

स्वय हवाओी मार्गसे रवाना हुओी, फिर किसन और मैं दोनों विमानसे दिल्ली पहुची। अुन सारे समयकी मन स्थितिका वर्णन करना कठिन है। तब तब अखबार हाथमें आया और सारे समाचार विस्तारसे जाननेको मिले। अेक तो अुस भीषण मृत्युका आघात। हमारा और देशका जीवन अब शून्य हो गया, अैसी भावनासे पैदा हुओी घोर निराशा। और फिर हत्यारा महाराष्ट्री कुलागार निकला! (अुनका नाम भी अुस समय तक मैंने नहीं सुना था, यद्यपि वह पूनाका रहनेवाला था और काग्रेस-विरोधीके रूपमें प्रख्यात था।) महाराष्ट्रमें बुद्धिमान, नेता कहे जानेवाले वर्गमें से कुछ व्यक्तियोंने वर्षों तक पूज्य महात्माजीके विरुद्ध जो व्यक्तिगत जहरीला प्रचार किया था अुसीका यह पका फल था। अुस समय हवाओी जहाजमें हमारे साथ श्री खेरसाहब, अुनकी पत्नी और लीलावतीबहन आसर थीं। लीलावतीबहन क्रोधावेशमें बोल अुठी, "मुझे लगा कि हत्यारा कोओी निर्वासित होगा। लेकिन बादमें मालूम हुआ कि वह तो मुआ घाटिया था।" अिन शब्दोंने मुझे सावधान कर दिया। ओीसाकी मृत्युको लेकर यहूदी और ओीसाओियोंके बीच सदियों तक वैर बना रहा था। अब अैसी ही बात क्या भारतमें भी होगी? गुजराती-महाराष्ट्रियोंके बीच क्या स्थायी अहि-नकुलका वैर पैदा होगा? अैसे दु सह विचार मनमें आने लगे। मन जड़ और बधिर हो गया।

जुलूसमें शामिल होकर मैं अश्रुमोचन करती हुओी सुशीलाके साथ चलने लगी। वह खूब शात थी और मुझसे विवेककी बातें करने लगी। राजघाट पर श्रीदेह लाया गया तब श्री मणिबहन पटेलकी मददसे मैं अुस जर्जर किन्तु पावन देहको देख सकी। मैंने मस्तक पर हाथ रखा। बरफ जैसा ठडा लगा। मेरे शरीरमें कपकपी छूटी। जब चिता प्रगट हुओी और शरीर भस्म होने लगा अुस समयके आक्रन्दका वर्णन कैसे करू? जो शरीर हम सबको प्रियदर्शी और प्रिय लगता था, जिसकी सेवाको हम सब साक्षात् भगवानकी ही सेवा मानते थे, वह शरीर आखिर 'भस्मातम्' हुआ!! कैसी विचित्र लीला है!

'जिसको तूने जगमें जिलाया वो ही तुझको जलाये।'

*

दारिद्र्यके रोगकी जड़ काटनेके लिअे रचनात्मक शक्तिकी बुनियाद पर भगीरथ प्रयास करनेकी जरूरत थी। असिलिअे शंकररावजीके प्रयत्नसे ८, ९ और १० फरवरीको सेवाग्राममें रचनात्मक कार्यकर्ताओंका सम्मेलन करनेका निश्चय हुआ था। पूज्य महात्माजी फरवरीके शुरूमें नअी दिल्लीसे सेवाग्राम जानेवाले थे।

अुस सम्मेलनमें शरीक होनेकी मेरी भी अिच्छा थी। अिसलिअे २६ जनवरीको मैंने सासवड छोड़ा। दूसरे दिन कुलाबा जिलेके पेण गांवमें महाराष्ट्र कांग्रेस स्त्री-संगठन समितिकी कार्यसमितिकी बैठक थी। वह दो दिनमें पूरी हुअी। फिर तीसरे दिन दूरके अेक गांवमें कस्तूरबा ट्रस्टके ग्रामसेवा केन्द्रको देखने गअी। और ३० जनवरीको दोपहर १२ बजे मैं बंबअी पहुंची। मेरी मौसीके यहां ठहरी थी।

शाम तक सारे काम पूरे करके मैं साढ़े पांच बजे फलाहार करने बैठी थी। बम्बअीसे वर्धा जाना चाहती थी। अिसीके विचार मनमें घुल रहे थे। अेकाअेक किसीने बाहरका दरवाजा धड़ामसे खोला। मौसी देखने गअी तो अुनका छोटा लड़का रेडियो सुनकर हांफता हुआ दौड़कर आया और चीख अुठा, 'मां, गांधीजी गये . . .!'

मेरी छातीमें दो बार दर्द अुठा। मुझे ठीक याद नहीं कि मैं कब अुठी और मुंह धोकर बाहर आरामकुर्सी पर बैठ गअी। दिमाग बिलकुल जड़ हो गया था। मैं जीवित हूं या मृत, अिसकी भी कल्पना नहीं थी!

मौसी पास आकर सिर पर हाथ रखकर मुझे समझाने लगी, "शान्त रह बेटी, वह कमबख्त गलत खबर लाया होगा। मैं मालूम करती हूं।" मालूम करनेके बाद तो तीन गोली लगनेके ही समाचार मिले।

आंखसे आंसू भी नहीं बह रहे थे, मैं स्थिर बैठी थी। बहुत देर बाद भान हुआ। किसन आकर मुझसे लिपट कर रोने लगी। अुसके बाद मुझे भी रोना आया, अैसा याद है। सारी रात वह मेरे पास ही सोअी। सुबह जल्दी अुठकर मैंने सिर धोकर स्नान किया और चौपाटी पर सार्वजनिक प्रार्थनाके लिअे जानेकी तैयारी की। अितनेमें फोन आया। सुशीला सुबह सफर करके बम्बअी पहुंची थी। अेक स्नेहीके मारफत अुसने मुझे हवाअी जहाज द्वारा दिल्ली चलनेका सन्देश दिया था। वह

चलता गया वैसे वैसे मनमें निराशा फैलती गअी। आन्तरिक श्रद्धाका सारा बल तो भगवानमें था। अुसके अूपर रही श्रद्धा टूट जाय तब तो जीवनका दिवाला ही निकलेगा न!

फिर भी प्रार्थना और सतवाणीका परिशीलन मैंने नही छोडा। मन तो रातदिन सतप्त रहता था। अन्तरमें कही बडी रिक्तता आ गयी थी।

१२ फरवरीको राष्ट्रीय पैमाने पर अशौचकी निवृत्ति हुअी। अुस दिन मैंने पूरा अुपवास किया था। तेरहवीको शुक्रवार था। अुस दिन अेक बार खाया और हर सप्ताह अैसा करनेका सकल्प किया।

शुक्रवारको कुछ मानसिक ग्लानि बढ गअी थी। अिस दुनियामें अब अपना कोअी नही है, भगवान भी नही है, अैसी कुछ विचित्र शून्यावस्था चित्तमें पैदा हो गअी थी। पूज्य महात्माजीके अवसानसे पहले मर जानेकी अिच्छा पूरी नहीं हुअी। मैं जीवित हू। निराश और निरुत्साहित हू। अब जीवन कैसे बिताअू? सेवाकार्यमें मेरा पथदर्शक कौन होगा? हृदयका दु ख और भूलोंका भार किसके सामने हलका करूगी? अैसे विचारोंसे मन अुद्विग्न हो गया था।

हमारे मकानकी दूसरी मजिल पर अेक छत थी। बरसात नही होती तब आठ महीनेसे ज्यादा समय मैं वहीं सोती थी। मुझे कमरेमें सोना कभी अच्छा नही लगता था, खुलेमें सोना ही अच्छा लगता था। आज भी यही स्थिति है।

तेरहवी फरवरीको माघ शुक्ल तृतीया थी। रातको साढे ग्यारह बजे मैं छत पर गअी। आचार्य भागवतको क्षयका ससर्ग हो गया था, अिसलिअे वे पहली मजिल पर कमरेमें ही सोते थे। आश्रम-माता वृद्ध माअी और अेक छात्रा दोनो नीचेके अेक कमरेमें सोती थी। मकान गांवके अेक किनारे होनेसे चारो ओर अेकान्त था। फिर आधी रात हो चली थी। चारो ओर शाति विराज रही थी। मैं थकी हुअी थी। क्योंकि मनमें वेदना होनेके बावजूद काम तो बराबर चलता ही था। मनको खाली रखनेसे अुद्वेग बढ जाता था, अिसलिअे काममें लगे रहना ही लाभप्रद मालूम होता था।

छत पर'बिस्तर बिछाकर मैं लेटी। चारो तरफ अधकार था। आकाशमें नक्षत्र चमक रहे थे। यामिनी नि शब्द थी। पूज्य महात्माजीका

किसन और मैं श्री मावलकरजीके यहां गयीं। शंकररावजीको मालूम हुआ तो वे आकर हमें अपने घर ले गये। अुस दिन तो किसीको खाना-पीना सूझा ही नहीं। दूसरे दिन अखबारमें खबर आअी, "महाराष्ट्रमें — खास तौर पर पूना-कोल्हापुर-सतारामें कांग्रेस-विरोधी तथा गांधी-विरोधी लोगों पर बहुसंख्यक समाज टूट पड़ा है। अुनके मकान जलाये जा रहे हैं। अत्याचार हो रहे हैं।" आदि आदि।

हृदयमें क्रोध और संताप भरा था। आवेगमें मैं बोल अुठी, "मुझे अुन लोगों पर जरा भी दया नहीं आती।"

शंकररावजी शांतिसे मुझे समझाने लगे, "हमें अुदार होना चाहिये, प्रेमाबाअी, अिस तरह नहीं बोलना चाहिये।"

तीन दिन बाद किसनके साथ मैं दिल्लीसे रवाना हुअी। अन्तरमें वैराग्यकी आग जलने लगी। मैंने अपने बाहरी वेशमें परिवर्तन कर डाला। देखनेवालोंको आघात लगा। लेकिन मुझसे कुछ कहनेकी किसीकी हिम्मत नहीं हुअी। अेक दो बहनोंने सहज प्रयत्न किया, लेकिन मैंने अुन्हें रोक दिया। पूनासे आचार्य भागवत मेरे साथ हुअे। सासवड़ पहुंचनेके बाद मेरी वेदना और क्लेश बढ़ गये और अब परमात्माके साथ झगड़ा शुरू हुआ।

मैं भगवानसे कहने लगी, "तू दयामय नहीं है। कोअी क्रूर राक्षस जैसा है! अपने भक्तोंकी भी तू रक्षा नहीं करता। तू वचनका झूठा है। 'न मे भक्त: प्रणश्यति।' अिस आश्वासनको तूने झूठा सिद्ध किया है! सुकरात, अीसा और महात्माजी — तेरे अिन भक्तोंको अपना बलिदान देना पड़ा। अहिंसाका पूर्ण पालन करनेवाले व्रतियोंको भी तू भीषण मृत्यु देता है। दुनियामें भलेका नतीजा भला, बुरेका बुरा — यह नीति अब तेरे पास नहीं रही। अिसलिअे पूज्य महात्माजीका अैसा भयानक अन्त देखकर लोगोंकी श्रद्धा टूट गअी और कानूनको हाथमें लेकर वे तोड़फोड़ और मारकाट करने लगे, अिसमें आश्चर्य क्या? अंतिम अुपवासके दिनोंमें पूज्य महात्माजीका असाधारण धर्मतेज प्रगट हुआ, तब मुझे श्रद्धा हुअी थी कि अिस पुण्यभूमिमें संतकी हत्या नहीं होगी। लेकिन तूने तो मेरी आंखें खोलनेमें जरा भी देर नहीं लगाअी।" अिस तरह जैसे जैसे झगड़ा

चलता गया वैसे वैसे मनमें निराशा फैलती गयी। आन्तरिक श्रद्धाका सारा बल तो भगवानमें था। अुसके अूपर रही श्रद्धा टूट जाय तब तो जीवनका दिवाला ही निकलेगा न!

फिर भी प्रार्थना और सतवाणीका परिशीलन मैंने नहीं छोड़ा। मन तो रातदिन सतप्त रहता था। अन्तरमें कहीं बड़ी रिक्तता आ गयी थी।

१२ फरवरीको राष्ट्रीय पैमाने पर अशौचकी निवृत्ति हुअी। अुस दिन मैंने पूरा अुपवास किया था। तेरहवींको शुक्रवार था। अुस दिन अेक बार खाया और हर सप्ताह अैसा करनेका सकल्प किया।

शुक्रवारको कुछ मानसिक ग्लानि बढ़ गयी थी। अिस दुनियामें अब अपना काअी नहीं है, भगवान भी नहीं है, अैसी कुछ विचित्र शून्यावस्था चित्तमें पैदा हो गयी थी। पूज्य महात्माजीके अवसानसे पहले मर जानेकी अिच्छा पूरी नहीं हुअी। मैं जीवित हू। निराश और निरुत्साहित हू। अब जीवन कैसे बिताअू? सेवाकार्यमें मेरा पथदर्शक कौन होगा? हृदयका दु ख और भूलोका भार किसके सामने हल्का करूगी? अैसे विचारोंसे मन अुद्विग्न हो गया था।

हमारे मकानकी दूसरी मजिल पर अेक छत थी। बरसात नहीं होती तब आठ महीनोंसे ज्यादा समय मैं वहीं सोती थी। मुझे कमरेमें सोना कभी अच्छा नहीं लगता था, खुलेमें सोना ही अच्छा लगता था। आज भी यही स्थिति है।

तेरहवीं फरवरीको माघ शुक्ल तृतीया थी। रातको साढ़े ग्यारह बजे मैं छत पर गयी। आचार्य भागवतको क्षयका मसर्ग हो गया था, अिसलिअे वे पहली मजिल पर कमरेमें ही सोते थे। आश्रम-माता वृद्ध माअी और अेक छात्रा दोनों नीचके अेक कमरेमें सोती थीं। मकान गांवके अेक किनारे होनेसे चारों ओर अेकान्त था। फिर आधी रात हो चली थी। चारों ओर शाति विराज रही थी। मैं थकी हुअी थी। क्योंकि मनमें वेदना होनेके बावजूद काम तो बराबर चलता ही था। मनको खाली रखनेसे अुद्वेग बढ़ जाता था, अिसलिअे काममें लगे रहना ही लाभप्रद मालूम होता था।

छत पर बिस्तर बिछाकर मैं लेटी। चारों तरफ अधकार था। आकाशमें नक्षत्र चमक रहे थे। यामिनी नि शब्द थी। पूज्य महात्माजीका

चिन्तन करती हुआी मैं पड़ी थी। फिर सो गअी। नीदमें कभी स्वप्न आया अुससे जाग अुठी। अुसके बाद कुछ देर तक नीद नही आअी। फिर पावन स्मरण, फिर अश्रुमोचन, अिस तरह चलता रहा। अचानक जोरसे हवा चलने लगी। मुझे ठंड-सी मालूम हुअी। ओढ़नेका खेस ओढ़कर मै पड़ी रही। अितनेमें मेरे सिर पर अुंगलियोंका स्पर्श हुआ। धीरे धीरे बालोंमें अुंगलिया घूमने लगी। मेरे तकियेके पास कोअी बैठा है अैसा मुझे लगा! और मनमें डर पैदा हुआ। मैंने आखें मींच ली। कुछ सैकंड बीते होंगे। स्पर्श लुप्त हुआ। तो भी मै वैसे ही पड़ी रही। अेकाध मिनिट बाद हिम्मत करके मैंने सिर अूंचा करके देखा। कोअी नही था। सर्वत्र शान्ति थी और आकाशके तारे पृथ्वी पर प्रकाश-किरणें फेंक रहे थे।

मेरे तकियेके पास घड़ी थी। देखा पौने तीन बजे थे।

बादमें तो मैं फिर सो गअी। सुबह आचार्य भागवतसे मिली तब रातका अनुभव मैंने कह सुनाया। वे कहने लगे, "आपने स्पर्श हुआ तभी तुरन्त सिर अूंचा करके देखा क्यों नही? डर क्यों लगा?"

"डर नही लगना चाहिये था।" मैंने कहा, "लेकिन पता नही क्यों देखनेकी अिच्छा होते हुअे भी मेरी हिम्मत नही हुअी।"

*

हृदयकी शांति भंग हुअी थी। लेकिन श्रद्धा भंग हो जाती तो जीवनमें रहा मांगल्य भी चला जाता। फिर भी लगभग अेक वर्ष तक भगवानके साथ मेरा झगड़ा चलता ही रहा। पूज्य महात्माजीकी मृत्युका गूढ रहस्य मैं समझ नहीं पाती थी। अनेक लोगोंने अनेक प्रकारसे मीमांसा की। मार्चमें सेवाग्राममें गाधी-अनुयायियोंकी अेक बड़ी परिषद हुअी। वहां लम्बा-चौड़ा वार्तालाप हुआ। अुसमें से सर्वोदय समाजका जन्म हुआ। अुन दिनोंमें मैं श्री विनोबाजीके साथ काफी सपर्कमें आअी। मेरी सान्त्वनाके लिअे अुन्होंने खास समय दिया। अुनके सहवासमें अच्छा तो लगता था, लेकिन अंतिम समाधान तो अंतरमें से प्राप्त करना चाहिये अैसा लगा।

यह समाधान या शान्ति प्राप्त करनेका मार्ग तो सूझा नहीं था। पूज्य महात्माजी गये, लेकिन अुनका मुझे सौंपा हुआ काम (कस्तूरबा ट्रस्टका) तो मेरे पास ही था। अुसमें तथा दूसरे कामोंमें मन

लगानेका मैंने बहुत प्रयत्न किया। गांधी-स्मारक-निधिकी स्थापना होते ही महाराष्ट्रमें अेक कामचलाअू शाखा-समिति स्थापित हुअी। अुसके चार मंत्री नियुक्त हुअे। अुनमें से अेक मैं भी थी। कोष अिकट्ठा करनेके लिअे तीनों मंत्रियोंने अपने अपने जिले चुन लिये। तीनों द्वारा 'त्यक्त' दो जिले मेरे हिस्से आये। वे थे रत्नागिरी और कुलाबा! कंगाली और यात्राके साधनोंकी असुविधाके लिअे ये दोनों जिले महाराष्ट्रमें 'प्रसिद्ध' हैं। लेकिन मुझे यह बात अच्छी लगी। क्योंकि दोनोंमें, विशेषतः रत्नागिरीमें अुच्च कोटिका सृष्टि-सौंदर्य है। अिसलिअे यह जिला मुझे बहुत पसन्द है। फिर तपस्वी श्री अप्पासाहब पटवर्धन अिस जिलेके प्राण कहे जा सकते हैं। बरसातके मौसममें मैं रत्नागिरी जिलेमें घूमी। छोटे बड़े वृक्षोंसे ढके हुअे सह्याद्रिके पहाड़, अुनमें से कलकल नाद करते नीचे अुतरते हुअे झरने, दूर अनन्त तक जाते मालूम होनेवाले लाल मिट्टीसे रंजित रास्ते, सहस्रधाराओंमें बरसती वर्षा, चारों ओर विराजती शांति और आसपासकी सुन्दर प्रकृतिके साथ अेकरूप होनेसे प्राप्त होनेवाला अद्वैतानन्द! यह रत्नागिरीकी ही विशेषता है।

पूज्य महात्माजीके स्मारकके लिअे मैं कोष अिकट्ठा करने गअी थी। अुनका पावन स्मरण पग पग पर होता था। चौमासेमें सृष्टि भले ही रमणीय लगती हो, लेकिन अैसा प्रतीत हुआ कि अेकान्त वनश्री और मेघ-गर्जना मनके वियोग-दुःखको भी तीव्रतर बना देती है। पूज्य महात्माजीको मीराबाअीके दो भजन बहुत प्रिय थे। अेक 'म्हाने चाकर राखोजी' और दूसरा 'तोहारे कारन सब सुख छोड़िया'। जब मैं अुनके पास थोड़े समय रहने जाती, तब वे हमेशा मुझे प्रार्थनामें ये गीत गानेके लिअे कहते थे। रत्नागिरीके प्रवासमें मुझे दूसरा भजन बराबर याद आता था।

> तोहारे कारन सब सुख छोड़िया अब मोहे क्यों तरसाओ? प्रभुजी ॥
> अब छोड़िया नहि बने प्रभुजी, तब चरणके पास बुलाओ ॥१॥
> विरहव्यथा लागी अुर अन्दर, सो तुम आय बुझाओ ॥२॥
> मीरा दासी जनम जनमकी, तव चित्तसु चित्त लगाओ ॥३॥

*

रत्नागिरीके बाद कुलाबाकी बारी आअी। तब दीवालीका त्योहार पास आ गया था। पूज्य महात्माजीके अवसानके बाद राष्ट्रमें शोक व्याप्त हो गया था, अिसलिअे अुत्सव मामूली-सा मनाया गया था। फिर भी बच्चोंके और ग्रामीणोंके रसिक मनको दुःख भी क्षणजीवी ही लगता है। अच्छा हुआ कि यात्राके मेरे अधिकांश दिन मुसलमानोंकी बस्तीवाले प्रदेशमें बीते। भाअीदूजके दिन काम नहीं था। यात्रा करके मैं ठहरनेके लिअे महाड नामके गांवमें पहुंची। रातके १० बजे थे। छत पर सोने गअी। प्रार्थना और नामजप करके लेटी, लेकिन पड़ोसमें रेडियो और अुत्सवकी धूमधाम चालू थी, अिसलिअे थकी होने पर भी जल्दी नींद नहीं आअी। नींद कब आअी यह पता नहीं चला।

नींदमें स्वप्न आया। विठ्ठल हॉवर में बैठी थी और पूज्य महात्मा-जीका स्मरण कर रही थी। तभी अन्तर्नाद होते सुना "मैं यहीं हूं, पास ही हूं।" चौंककर मैं देखने लगी तो पूज्य महात्माजी सामने हंसते हुअे खड़े थे और मुझे आश्वासन दे रहे थे। खुशीमें मैं लोगोंको आवाज देकर बुलाने लगी, "आओ यहां, दौड़कर आओ। ये रहे महात्माजी!" लोग दौड़ते आये, लेकिन पूछने लगे, "कहां हैं? कहां हैं?" मैं बताने लगी, लेकिन लोगोंको वे दिखाई नहीं देते थे। केवल मैं ही अुन्हें देख सकती थी! फिर तो मैं जोरसे रोने लगी और महात्माजीसे कहने लगी, "आप मुझे छोड़कर चले गये! अैसा क्यों किया? अब मैं कैसे जीअूंगी? मुझे तो सब ओर शून्य ही शून्य लगता है।" वे कहने लगे, "पगली, रोती क्यों है? शोक मत कर। मैं तो तेरे पास ही हूं। कहीं नहीं गया। आंख खोलकर देख।" और भी कुछ कहा, लेकिन रुदनमें मैंने सुना नहीं। रुदनकी तीव्रता अितनी बढ़ गअी कि धक्का लगनेसे मैं जाग पड़ी। देखा तो चारों ओर अंधेरा और शांति!!

पूज्य महात्माजीके अवसानके बाद वे पहली बार ही मुझे स्वप्नमें दिखाअी दिये थे। जीवित थे तब अनेक बार स्वप्नमें आते थे। लेकिन अवसानके बाद नौ महीनों तक अुनका दर्शन नहीं हुआ। अिस स्वप्नमें आश्वासन मिला, जिससे हृदयको कुछ शांति हुअी। मनमें विचार आया कि मृत्युको मित्र माननेकी सीख वे हमें अनेक बार देते थे। रामना

दर्शन न हो तो भी अुसका काम करते रहना चाहिये, अुसीमें रामका ध्यान और दर्शन आ जाता है, अैसा अुनका मानना था। हमें भी अिसी पाठका अनुसरण करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

बादमें तो मैं काममें डूब गअी। स्वतंत्रता-प्राप्तिके बाद करनेके लिअे अनेक काम पडे थे। अपनी शक्तिके अनुसार मैं भी करने लगी। नवम्बरके आखिरी सप्ताहमें मैं वर्धा गअी थी। वहां श्री रैहानाबहन तैयबजी मिलीं। अुन श्रद्धालु बहनका मानस भक्तका है। अपने स्वप्नकी बात मैंने अुनसे कही। वे खुश होकर कहने लगीं कि, "यह अेक सूचक स्वप्न है। बापूने आपको संदेश दिया है। अुनका काम करके काममें ही अुन्हें देखनेका प्रयत्न करिये। अुसीमें आपको शांति मिलेगी।" फिर अुन्होंने अपने अेक स्वप्नका वर्णन किया, जिसमें अुन्हें भी पूज्य कस्तूरबाके साथ पूज्य महात्माजीके दर्शन हुअे थे और अुनका संदेश मिला था।

महाराष्ट्रमें कस्तूरबा ट्रस्टका काम बढ़ता गया। शिविर चले और बादमें ग्रामसेविका-विद्यालयकी स्थापना हुअी। १९४९के जूनमें सासवडका आश्रम गांवके मकानसे हटकर गांवसे बाहर अेक रमणीय स्थान पर चला गया। पर्वत, नदी, मंदिर, झरनों और प्रकृति-सौंदर्यके लिअे यह स्थान प्रसिद्ध था। अिसके सिवा वह 'सिद्धस्थान' माना जाता था। वहां आश्रमके पक्के मकान बने। बाग-बगीचे लगे। आश्रम वहां गया अिसलिअे कस्तूरबा ट्रस्टका प्रान्तीय कार्यालय भी वहां गया। अतः आश्रमके पास ही ग्रामसेविका-विद्यालयके लिअे मकान बने। खेती-बाड़ी शुरू हुअी, गोशाला खुली, बैलगाडी आअी, करघा आया, अनेक प्रवृत्तियां चलने लगीं। ट्रस्टके अध्यक्ष स्व० श्री दादासाहब मावलंकर हर साल आकर आश्रममें अेक दो दिन रह जाते थे। आश्रममें अेक हिरनी भी पाली गअी। ग्रामसेवा केन्द्र बढ गये। स्त्री-संगठन-समितिका काम व्यापक होने लगा। कांग्रेसका काम, फिर भूदान-यज्ञ संबंधी प्रवृत्तियां, साहित्य-सेवा और दूसरी अनेक प्रवृत्तियां — अिन सबमें मैं डूब गअी। पढने या चिंतन करनेकी फुरसत ही नहीं मिलती थी। श्री शंकररावजी वहां बार बार आते थे, अिसलिअे कार्यकर्ताओंकी भीड़ लगी रहती और तरह तरहकी चर्चाअें भी होतीं। बादमें नेता, मंत्री और सरकारी अधिकारी सभी आने

लगे। मेरी यात्रा और भ्रमण भी चलता था। श्री मांदारजी देवाओ हर साल अेक बार आकर आश्रममें रह जाते थे। मेरे सेवाकार्यमें अुन्होंने अपनी मर्यादामें रहकर बहुत मदद की। मुझे बिना खर्च किये लोकसभामें भेजनेके लिअे वे तैयार हो गये थे, लेकिन मैंने मना कर दिया। फिर अुनके आग्रहसे मैंने तत्कालीन सरकारी कमेटियोंमें काम किया। अैसे काम मेरी प्रकृतिके अनुकूल न होनेके कारण आगे अैसा न करनेकी मैंने अुनसे प्रार्थना की और वे मान गये। विदेश जानेके मौके भी मैंने टाल दिये। सस्था अन्न-वस्त्रके बारेमें स्वावलम्बी होनी चाहिये, यह आदर्श पूज्य महात्माजीने हमारे सामने रखा था। अुस आदर्श तक पहुंचनेका मैं महाप्रयत्न करती रही।

अिस प्रकार महात्माजीके अवसानके बाद सात वर्ष बीते। १८ नवम्बर, १९५४ को राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसाद आश्रममें पधारे तब राज्यके बड़े बड़े शासक बहनें, सेवकगण और आम लोग हाजिर थे। राष्ट्रपतिने सब जगह घूमकर सन्तोष व्यक्त किया और कहा, "सचमुच यह जगलमें मंगल हो गया है। यहां फिरसे आनेकी मेरी अिच्छा है।"

किसी भी सेवक या सेविकाके लिअे अुसकी सेवा कृतार्थ हुअी, अैसा अनुभव करनेका यह धन्य क्षण था। लेकिन अैहिक वैभवसे मेरा मन अपनेको कृतार्थ मान ले अैसी मेरी मनःस्थिति या मनोरचना नहीं है।

मैं समाजके प्रति कृतज्ञ थी, क्योंकि हजारों हाथोंसे वह मुझे सहायता देता था। सामाजिक सेवाकार्यमें अनेक कठिनाअियां आती हैं। लेकिन मेरे कार्यमें कभी भी बड़ी कठिनाअियां खड़ी हुअी हों अैसा मुझे याद नहीं है, हमेशा अनुकूलता ही मिली है। सहयोग और स्नेहका अभाव भी मैंने कभी अनुभव नहीं किया। जो काम हाथमें लिया अुसमें लोगोंकी सहायता और पूज्य महात्माजीके आशीर्वाद दोनोंके फलस्वरूप मुझे सफलता ही मिली है।

लेकिन जितना वरदान मिलता गया अिस कारण अुत्तरदायित्वका भार मन पर बढ़ता गया। समाजके अनन्त हाथ हैं, जब कि मेरे दो ही हाथ हैं, जिसका मुझे सतत स्मरण रहा है। दिया अुससे अधिक लिया — यह वस्तुस्थिति मुझे नम्रताका पाठ सिखाती आयी है। जिसके

मिवा, सेवाको मैंने कभी भी अपनी भौतिक अुन्नतिका साधन नही माना; मैं अुसे चित्तशुद्धिका साधन मानती आअी हू। सेवासे अन्त करणका मैल धुलना चाहिये, योग सधना चाहिये, परमात्म-दर्शनका मार्ग सुलभ होना चाहिये, अैसी मेरी मान्यता थी। लेकिन मैंने देखा कि मेरी यह अिच्छा सफल नहीं हुअी। कामका क्षेत्र जैसे जैसे बढ़ता गया वैसे वैसे सन्ताप भी बढता गया। अपने काममे मुझे ही असन्तोष होने लगा। अूपरसे वैभव दिखाअी देता था, लेकिन दीपकसे दीपक प्रगट होता है अुसी तरह सेवाके द्वारा सेवाभावी चारित्र्यवान सेविकाओंका सघ तैयार करनेकी मेरी अभिलाषा सफल नही हुअी। बाहरी शिक्षा और चरित्रके सस्कार ये दो चीजें भिन्न हैं। सस्कारकी दृष्टिसे शिक्षा देनेका काम सरल नही है अैसा अनुभव मुझे हुआ। अलबत्ता, अिसमें मुझे अपनी ही कमी नजर आअी। और अपने प्रति मेरा असन्तोष बढ़ने लगा।

मैं आत्म-निरीक्षण करने लगी। मेरी कितनी प्रगति हुअी है? अपने क्रोधको मैं जीत सकी हू या नही? मानवके मनमें षड्विकार तो रहते ही है। लेकिन मुझे क्रोधके विकारको जीतनेके लिअे सतत प्रयत्न करना पडा है। दूसरे विकार साधारणत सुप्त अवस्थामें ही रहते हैं। कभी अेकाध विकार जाग्रत हो जाय तो सामान्य विवेककी वाणी ही अुसे शात करनेके लिअे काफी होती है। लेकिन क्रोधको जीतना मुझे कठिन लगा है। क्योंकि प्रयत्नसे मैंने निग्रह-शक्ति थोडी मात्रामें प्राप्त की है। लेकिन सेवाकार्यमें क्रोध-विकारने बार बार मुझे खूब सताया है।

मैंने देखा कि आजके यत्रयुगका असर सेवा पर भी पडा है। आजकल सेवा किसी सस्था या सगठनके मारफत ही होती है और सेवाको यत्रकी गति मिल गअी है। परिणामस्वरूप सेवा करनेवाला व्यक्ति जड यन्त्र जैसा बन जाता है। आत्माके विकासके लिअे अुसमें अवकाश नहीं रहता। सेवाकार्यमें आवेशके आनेमे शक्ति नही आती। तलवारको तपानेमे अुसकी धार भोथरी हो जाती है!

अिसके सिवा, मनको सबसे खराब लगनेवाला काम है सेवाके विवरण तैयार करके छपाना। सेवाका हिसाब करने बैठें तो अुसकी कीमत पैसोंमें आकनी पडती है। लोगोंसे पैसे लेते हैं अिसलिअे पैसोंका

हिसाब तो देना ही पड़ता है। लेकिन सेवाका भी हिसाब देना पड़े यह बात मुझे पसंद नहीं थी। मुझे लगता कि अिससे सेवाकी पवित्रता भ्रष्ट होती है। अैसी कार्य-पद्धतिसे मनमें अहंकार बढ़ जाय तो अिसमें आश्चर्य क्या?

मुझे मानसिक शांति भी नहीं थी। हृदयमें गहरा घाव हो चुका था। अुसे व्यापक सेवाकार्यकी पट्टी बांधकर मैंने ढक दिया था। जीवनमें या सेवाकार्यमें होनेवाली भूल, आचार-दोष, विचार-दोष, दुःख — सभी 'पाप' जिसमें अर्पण करनेसे मनको मुक्ति और शांति मिलती थी, वह 'महातीर्थ' तो दृष्टिसे ओझल हो गया था!! अब मनको पावन करनेवाली और शांति देनेवाली कोअी महाशक्ति मौजूद नहीं थी। अिससे मेरी अकुलाहट बढ़ने लगी। सात वर्षमें जो 'संयम' हुआ था, अुसका भार मुझसे सहन नहीं हुआ। मुक्तिकी अभिलाषा रहने लगी। समाजसे दूर कहीं अेकान्तमें भाग जानेकी व्याकुलता मनमें बढ़ने लगी।

मैंने यह भी अनुभव किया कि सामाजिक या व्यक्तिगत स्नेहकी मर्यादा होती है। दो या अनेक व्यक्ति मिलकर अेक सामान्य ध्येय या आदर्शके लिअे सह-प्रयत्न करते हैं और व्यक्तिगत जीवनमें अनेक अपेक्षायें भी रखते हैं। अिसलिअे सेवाक्षेत्रमें भी हिसाबी व्यवहार हो जाता है। बहुत बार यह अपेक्षा अहंकारकी पोषक होती है। अिसलिअे वह पूरी न हो तो क्लेश पैदा होता है। जगतकी अिस मर्यादाको समझकर ही साधु-सन्तोंने लिखा होगा

जगतमें कोअी नहीं अपना। मेरा श्रीराम प्यारा है॥

निरपेक्ष प्रेम करनेवाला या तो भगवान है या सद्गुरु! जगतका प्रेम व्यावहारिक ही रहता है। यह कहकर मैं जगतकी निंदा नहीं करती, बल्कि अुसकी मर्यादा बताती हूं। क्योंकि हम भी जगतके ही अंश हैं, अिसलिअे अुसकी मर्यादासे परे नहीं हैं।

•

अिस तरह अिस जंजालमें से छूटनेके लिअे मन तड़प रहा था, तभी हमेशाकी तरह दृष्टिसे अगोचर रहनेवाले परन्तु अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड तक वस्तुमात्रका कल्याण करनेवाले, मेरे मजनहार और तारनहार भगवानने

फिर मेरी मदद की! अेक अेक चिन्ता दूर होने लगी। सन् १९५२ मे स्त्री-सगठन समितिका विसर्जन हुआ। लगभग अुसी समय मैंने काग्रेसकी सदस्यता छाड दी। अल्ग अलग क्मेटियोंस मुक्त हुआी। रहा कस्तूरबा ट्रस्टका काम। अुसके लिअे भी योग्य व्यक्ति मिल जानेसे सन् १९५४ के आखिरमें अुसकी सारी जिम्मेदारी भी मैंने सौंप दी। और सचमुच मैं मुक्त हो गआी!!

अिन सात वर्षोंमें मुझे भारी श्रम करना पडा था। नींद कम मिलती थी, वाचन-चिंतनके लिअे पूरा समय नही मिलता था। सफरके समय गाडीमें हिलती-डुलती कुछ पढती थी। मनमें हमेशा कामनायें और मनोरथ 'अुत्पद्यन्ते विलीयन्ते' किया करते थे, अिसलिअे गम्भीर चिन्तन तो हू ता हीं कैस? मेरी अवस्था शराबी जैसी हो गआी थी। अिसे 'कर्मयोग' कैसे कहा जाय? कर्मयोग हो, भक्तियोग हो अथवा ज्ञानयोग हो— चाहे जो योग हो, परन्तु योगका अर्थ है जोडना। हमारा मन अीश्वरके साथ सतत जुडा हुआ रहना चाहिये, बडेसे बडे काममें भी यह अवस्था कायम रहनी चाहिये। तभी योग साधा अैसा कहा जा सकता है। नही तो वह 'कर्म-जजाल' हो जाता है। जैसे बुनियादी शिक्षामें शिक्षाका प्रत्येक प्रकार 'जीवन' के साथ जुडा हुआ होना ही चाहिये, तभी अुसे जीवन-शिक्षण कहा जा सकता है, वैसे ही योगमें चित्तका सम्बन्ध भगवानके साथ जुडा रहना चाहिये, तभी कर्ममें अनासक्ति आती है और मनको शान्ति मिलती है।

भविष्यका कोआी खास विचार अिस समय मनमें पैदा नहीं हुआ था। अैसा निश्चय किया था कि अेक वर्ष तक आश्रममें शातिसे बैठकर वाचन, चिन्तन, लेखन और थोडा भूदान-यज्ञका काम करूंगी। अेक वर्ष बाद आगेका विचार! लेकिन मैंने देखा कि मेरा जीवन मेरे हाथमें था ही नही। वर्षों पहले मैंने यह जीवन पूज्य महात्माजीको अर्पण किया था। वे देहधारी थे तब मेरा मार्गदर्शन करते थे। अुनके अवसानके बाद अुनके साथ मेरा जीवन भगवानके हाथमें गया। अब भगवान मार्गदर्शन करने लगे। अुनकी अिच्छा थी अुतना सार्वजनिक सेवाकार्य अुन्होंने मेरे हाथसे करा लिया। अब अुन्होने मेरे लिअे कुछ और ही योजना बनाअी

थी। वह भी अुनकी अिच्छाके अनुसार हुआ। अेक अैसी विलक्षण घटना घटी कि मेरा जीवन बिल्कुल दूसरी ही दिशामें मुड़ गया।

•

पूनामें अेक तत्त्वज्ञानी और विद्वान भक्त रहते हैं, जिनका नाम महाराष्ट्रमें प्रख्यात है प्रो० दापर वामन अुर्फ मामासाहब दांडेकर। कुछ वर्ष तक वे पूनाके सर परशुराम भाअू कालिजके प्रिंसिपाल थे। ब्रह्मचारी हैं। महाराष्ट्रके संत-शिरोमणि श्री ज्ञानदेव महाराज और श्री तुकाराम महाराजके परम भक्त हैं। पंढरीके वारकरी (महाराष्ट्रके अेक भक्ति-सम्प्रदायके अनुयायी) हैं। सुन्दर प्रवचन करते हैं। मैं कस्तूरबा ट्रस्टका काम करती थी, तब दो बार अुन्हें विद्यालयमें आमंत्रित करके छात्राओंके सामने अुनके अनेक प्रवचन कराये थे। पहली बार वे आये तब मैंने अुनसे पूछा था, "ज्ञानेश्वरीके छठे अध्यायमें ध्यानयोगका जो अनुपम वर्णन है, वह वास्तविक है या काव्य है?" वे बोले, "वह सत्य है।" मैंने कहा, "आज योगशास्त्रका जाननेवाला कोअी अधिकारी व्यक्ति है क्या? मुझे अुस शास्त्रमें रस है। कोअी अधिकारी व्यक्ति मिले तो अुस सीख लेनेकी मेरी अिच्छा है।" अुन्होंने कहा, "हां, अैसे अधिकारी पुरुषको मैं जानता हूं। अुनका नाम श्री गुळवणी है।" फिर मैंने कहा, "मुझे अुनका पता दीजिये। मैं अुनसे मिलूंगी।" अुन्होंने कहा, "वे यात्रामें रहते हैं। पूना आयेंगे तब आपको लिखकर बताअूंगा।"

अुसके बाद लगभग दो वर्ष बीत गये। मैं पूछती तब "श्री गुळवणी यात्रामें हैं", यही अुत्तर मिलता। सन् १९५४ के दिसम्बरमें मैंने प्रो० दांडेकरको विद्यालयमें दूसरी बार बुलाया तब अुनसे मिलना हुआ। मैंने श्री गुळवणीके बारेमें पूछा तो वे कहने लगे, "आप सच्चे दिलसे पूछती थीं क्या? आपको सचमुच ही श्री गुळवणीसे मिलना है? मुझे लगा कि आप शिष्टाचारके लिअे ही पूछती होंगी, अिसलिअे मैंने आपकी बात पर कोअी खास ध्यान नहीं दिया।" तब मैंने अुनसे कहा कि, "मैं सच्चे दिलसे ही पूछती थी। मुझे योगके बारेमें जिज्ञासा है और अब मैं कामसे मुक्त हो जानेवाली हूं।" तब अुन्होंने अुत्तर दिया, "मुझे विश्वास हो गया। अब मैं पूना जाअूंगा तब मालूम करके आपको लिखूंगा।"

जनवरीमें प्रो० दाडेकरका कार्ड मिला कि, 'श्री गुळवणी पूनामें है। मैंने आपके बारेमें अुनसे कह रखा है। अुनके साथ पत्रव्यवहार करके आप अुनसे मिल लीजिये।"

मुझे आनन्द हुआ। १४ जनवरीको मकरसंक्रांति थी। अुस मुहूर्त पर मैंने कस्तूरबा ट्रस्टकी जिम्मेदारी नये प्रतिनिधिको सौंप दी और हर्षयुक्त अन्त:करणसे श्री गुळवणीको लिखकर पूछा, "१८ तारीखको आपसे मिलने आअू?" अुनका अुत्तर आया, "आ जाअिये।"

मैं पूना गअी। मेरे साथ मेरे अेक वृद्ध स्नेही श्री हरिभाअू मोहनी थे। श्री हरिभाअू नागपुरके बहुत पुराने कांग्रेसी कार्यकर्ता और पूज्य महात्माजीके पुजारी हैं। वर्षोंसे मुझे जानते और मुझ पर स्नेह रखते थे। मेरे भावी जीवनके बारेमें अुन्हें चिंता थी। अिसलिअे वे मेरे साथ गये।

श्री गुळवणीसे मुलाकात हुअी तब अुनकी आयु ७३ वर्षकी होगी। कदके छोटे लेकिन प्रसन्न-गंभीर दिखते थे। अुन्हें देखकर मुझे संतोष हुआ। हम पास बैठे और हमारे बीच बातचीत शुरू हुअी। वे योगके अभ्यासी और अनुभवी थे अिसलिअे बातोंमें रस आया। योगके बारेमें जिज्ञासा बताते हुअे मैंने अपनी जीवन-कथा संक्षेपमें अुन्हें सुनाअी। बातों ही बातोंमें अपने जीवनके चार आश्चर्यजनक अनुभव मैंने अुनसे कह सुनाये।

पहला अनुभव : मैं बहुत छोटी थी। पांचवां वर्ष पूरा होनेके बाद स्कूल जाने लगी अुससे पहलेका यह अनुभव है। स्कूल जानेसे पहले ही मैंने अक्षरोंकी पहचान कर ली थी और रोज सुबह स्नानसे पहले अेक जगह बैठकर पट्टी पर सारी बारह-खडी और पहाड़े लिखकर पूरे करनेकी मेरी आदत थी। अिसीके अनुसार मैं लिखने बैठी थी। लिखते लिखते मुझे अेक विचित्र अनुभव हुआ। लिखना बन्द करके मैं विचार करने लगी —मुझे ज्ञान हुआ अैसा भी कहा जा सकता है —कि, "मैं अेक जीवित मनुष्य हूं। मेरे शरीर है। हाथ-पैर हैं। मैं लिखती हूं। विचार करती हूं। मेरा अस्तित्व है।" छोटे मस्तिष्कमें अिससे अधिक स्फुरित नहीं हुआ। लेकिन मैं सिर अूंचा करके अिधर-अुधर देखने लगी। "वे मनुष्य घूमते हैं। मेरी तरह वे भी जीवित हैं। मनुष्य हैं। बोलते हैं। मैं भी

थी। वह भी अुनकी अिच्छाके अनुसार हुआ। अेक अैसी विलक्षण घटना घटी कि मेरा जीवन बिलकुल दूसरी ही दिशामें मुड़ गया।

•

पूनामें अेक तत्त्वज्ञानी और विद्वान भक्त रहते हैं, जिनका नाम महाराष्ट्रमें प्रख्यात है प्रॉ० शंकर वामन अुर्फ सोनोपंत दांडेकर। कुछ वर्ष तक वे पूनाके सर परशुराम भाऊ कॉलिजके प्रिंसिपाल थे। ब्रह्मचारी हैं। महाराष्ट्रके संत-शिरोमणि श्री ज्ञानदेव महाराज और श्री तुकाराम महाराजके परम भक्त हैं। पंढरीके वारकरी (महाराष्ट्रके अेक भक्ति-सम्प्रदायके अनुयायी) हैं। सुन्दर प्रवचन करते हैं। मैं कस्तूरबा ट्रस्टका काम करती थी, तब दो बार अुन्हें विद्यालयमें आमंत्रित करके छात्राओंके सामने अुनके अनेक प्रवचन कराये थे। पहली बार वे आये तब मैंने अुनसे पूछा था, "ज्ञानेश्वरीके छठे अध्यायमें ध्यानयोगका जो अनुपम वर्णन है, वह वास्तविक है या काव्य है?" वे बोले, "वह सत्य है।" मैंने कहा, "आज योगशास्त्रको जाननेवाला कोअी अधिकारी व्यक्ति है क्या? मुझे अुस शास्त्रमें रस है। कोअी अधिकारी व्यक्ति मिले तो अुसे सीख लेनेकी मेरी अिच्छा है।" अुन्होंने कहा, "हां, अैसे अधिकारी पुरुषको मैं जानता हूं। अुनका नाम श्री गुळवणी है।" फिर मैंने कहा, "मुझे अुनका पता दीजिये। मैं अुनसे मिलूंगी।" अुन्होंने कहा, "वे यात्रामें रहते हैं। पूना आयेंगे तब आपको लिखकर बताअूंगा।"

अुसके बाद लगभग दो वर्ष बीत गये। मैं पूछती तब "श्री गुळवणी यात्रामें हैं", यही अुत्तर मिलता। सन् १९५४ के दिसम्बरमें मैंने प्रॉ० दांडेकरको विद्यालयमें दूसरी बार बुलाया तब अुनसे मिलना हुआ। मैंने श्री गुळवणीके बारेमें पूछा तो वे कहने लगे, "आप सच्चे दिलसे पूछती थीं क्या? आपको सचमुच ही श्री गुळवणीसे मिलना है? मुझे लगा कि आप शिष्टाचारके लिअे ही पूछती होंगी, अिसलिअे मैंने आपकी बात पर कोअी खास ध्यान नहीं दिया।" तब मैंने अुनसे कहा कि, "मैं सच्चे दिलसे ही पूछती थी। मुझे योगके बारेमें जिज्ञासा है और अब मैं कामसे मुक्त हो जानेवाली हूं।" तब अुन्होंने अुत्तर दिया, "मुझे विश्वास हो गया। अब मैं पूना जाअूंगा तब मालूम करके आपको लिखूंगा।"

जनवरीमें प्रो० दाडेकरका कार्ड मिला कि, 'श्री गुळवणी पूनामें हैं। मैंने आपके बारेमें अुनसे कह रखा है। अुनके साथ पत्रव्यवहार करके आप अुनसे मिल लीजिये।"

मुझे आनन्द हुआ। १४ जनवरीको मकरांति थी। अुस मुहूर्त पर मैंने कस्तूरबा ट्रस्टकी जिम्मेदारी नये प्रतिनिधिको सौंप दी और हर्षयुक्त अन्तःकरणसे श्री गुळवणीको लिखकर पूछा, "१८ तारीखको आपसे मिलने आअू?" अुनका अुत्तर आया, "आ जाअिये।"

मैं पूना गअी। मेरे साथ मेरे अेक वृद्ध स्नेही श्री हरिभाअू मोहनी थे। श्री हरिभाअू नागपुरके बहुत पुराने कांग्रेसी कार्यकर्ता और पूज्य महात्माजीके पुजारी हैं। वर्षोंसे मुझे जानते और मुझ पर स्नेह रखते थे। मेरे भावी जीवनके बारेमें अुन्हें चिंता थी। अिसलिअे वे मेरे साथ गये।

श्री गुळवणीसे मुलाकात हुअी तब अुनकी आयु ७३ वर्षकी होगी। कदके छोटे लेकिन प्रसन्न-गंभीर दिखते थे। अुन्हें देखकर मुझे संतोष हुआ। हम पास बैठे और हमारे बीच बातचीत शुरू हुअी। वे योगके अभ्यासी और अनुभवी थे अिसलिअे बातोंमें रस आया। योगके बारेमें जिज्ञासा बताते हुअे मैंने अपनी जीवन-कथा संक्षेपमें अुन्हें सुनाअी। बातों ही बातोंमें अपने जीवनके चार आश्चर्यजनक अनुभव मैंने अुनसे कह सुनाये।

पहला अनुभव. मैं बहुत छोटी थी। पांचवां वर्ष पूरा होनेके बाद स्कूल जाने लगी अुससे पहलेका यह अनुभव है। स्कूल जानेसे पहले ही मैंने अक्षरोंकी पहचान कर ली थी और रोज सुबह स्नानसे पहले अेक जगह बैठकर पट्टी पर सारी बारह-खड़ी और पहाड़े लिखकर पूरे करनेकी मेरी आदत थी। अिसीके अनुसार मैं लिखने बैठी थी। लिखते लिखते मुझे अेक विचित्र अनुभव हुआ। लिखना बन्द करके मैं विचार करने लगी — मुझे ज्ञान हुआ अैसा भी कहा जा सकता है — कि, "मैं अेक जीवित मनुष्य हूं। मेरे शरीर है। हाथ-पैर हैं। मैं लिखती हूं। विचार करती हूं। मेरा अस्तित्व है।" छोटे मस्तिष्कमें अिससे अधिक स्फुरित नहीं हुआ। लेकिन मैं सिर अूंचा करके अिधर-अुधर देखने लगी। "वे मनुष्य घूमते हैं। मेरी तरह वे भी जीवित हैं। मनुष्य हैं। बोलते हैं। मैं भी

बड़ी होजूंगी। लेकिन मै हू, मैं हू मैं भी कामी हू !" अुसी समय मुझे अपने अस्तित्वकी प्रथम बार प्रतीति हुआी और अुसके बाद यह अनुभव सतत याद रहा।

मैं बडी होती गजी वैसे वैसे मुझे लगता गया कि और लोगोंको भी मेरी तरह जीवनमें कभी न कभी अपने अस्तित्वकी स्वतन्त्रताकी प्रतीति जरूर हुजी होगी। लेकिन मैंने बहुतोंसे पूछा (काफी बडी अुमरमें) तब प्रत्येकने कहा, "अैसा अनुभव तो मुझे कभी नहीं हुआ।" जिससे मुझे आश्चर्य हुआ।

दूसरा अनुभव मैं कालेजमें पढ़ती थी तबका यह अनुभव है। गरमीकी छुट्टियोंमें मैं कभी कभी अपने पूर्वजोंके गाव कारवार जाती थी। समुद्री मार्गसे कम समय लगता है। लेकिन १५ मजीके बाद जहाज चलने बन्द हो जाते हैं जिसलिजे रेलमार्गसे जाना पड़ता है। कारवारसे बसमें हुबली जाना होता था और वहासे रेलगाडीमें बैठकर बम्बजी आना होता था। अुस समय हुबलीमें अेक प्रसिद्ध सिद्ध योगीका निवास था। लोग अुन्हें 'श्री सिद्धारूढ़ स्वामी' के रूपमें पहचानते थे। हमारे सगेसंबधियोंमें बहुतसे अुनके पुजारी थे। पिताजीके साथ मैं भी दो बार अुनके दर्शन करने गजी थी। लेकिन अुनकी कन्नड भाषा मुझे नहीं आती थी, जिसलिजे मैं कुछ बातचीत नहीं कर सकी।

अेक बार बम्बजीमें पिताजीके यहा थी तब रातको अेक अद्भुत स्वप्न देखा। अेक सिद्ध पुरुष मेरे सामने खड़े थे। वे वही सिद्धारूढ़ स्वामी थे या और कोजी यह याद नहीं है। लेकिन अुन्होंने मुझसे पूछा, "बेटी, तेरी क्या कामना है?" स्वप्नमें भी मुझे कैसे प्रेरणा हुजी यह भगवान ही जाने। मैंने कहा, "स्वामिन्, मुझे समाधिका अनुभव लेना है।" जिस पर कुछ हसकर वे सिद्धपुरुष बोले, "जिसमें कितनी देर?" और अुन्होंने अपना हाथ मेरे मस्तक पर रखा। हाथ रखते ही मुझे बिजलीके जैसा धक्का लगा और अैसा मालूम हुआ मानो अेकदम मेरा शरीर नीचे गिर गया हो। जो सच्ची 'मैं' थी (अर्थात् मेरी जीवात्मा) वह अुस शरीरसे बाहर आकर दौड़ने लगी। चारों ओर सारा विश्व लुप्त हो गया और जहां देखती वहा प्रकाश ही प्रकाश दिखाजी देता। वह भी सूर्यके

प्रकाश जैसा नहीं, कुछ अनोखा अद्भुत! प्रकाशके ढेर बादलों जैसे या लहरों जैसे दिखाअी देते थे और मैं हलकी होकर बडी तेजीसे दौडती थी! मेरे भारी शरीरके गिर जानेका मुझे भान आया और मैं चिल्लाने लगी, "मेरा शरीर! अरे मेरा शरीर कहां गया?" लेकिन यह शब्द मुहसे निकले तब तक तो मैं सैकडों योजन आगे बढ़ गअी थी। जैसी अजस्र गतिसे (पवनवेगसे कहीं अधिक गतिसे) मैं दौड रही थी। सामने दूर क्षितिजके पास प्रकाशका केन्द्र दिखाअी देता था, जिसमें से विश्वमें फैला हुआ वह प्रकाश निकल रहा था। अुस केन्द्रकी ओर मैं दौड रही थी। वह केन्द्र पास आने लगा था, लेकिन मेरी वासना मेरे शरीरसे जुडी होनेके कारण अुस शरीरका स्मरण मुझे आगे नहीं जाने देता था! फिर अेकाअेक मैं चौंक अुठी "मेरा शरीर कहां खो गया।" और अुसी डरके कारण मैं जाग पडी तब अपने बिस्तर पर ही शरीरमें आबद्ध मैंने अपनेको देखा।

तीसरा अनुभव मैं सत्याग्रह आश्रममें थी तब दाडी-कूचसे पहले चौमासेमें अेक रातको यह अनुभव आया। हृदय-कुंजके आंगनमें पूज्य महात्माजी और मैं खाटें डालकर सो रहे थे। हमारे बीच ६–७ फुटका अंतर होगा। बरसात नहीं हो रही थी, अिसलिअे बाहर खुलेमें सोये थे। कुछ बहनें बरामदेमें सोअी थीं। आधी रातको मैं गहरी नींदमें थी। स्वप्न था ही नहीं। अेकाअेक किसीने मुझे तमाचा लगाकर अूंची आवाजसे कहा, "अुठ, अुठ, बरसात होने लगी है। महात्माजी भीग जायेंगे।" हड़-बडाकर मैं जागी, अुठकर बैठी और देखने लगी। कोअी दिखाअी नहीं दिया। मुझे तमाचा किसने मारा? कौन बोला? सब कोअी सोये हुअे थे। पास या दूर कोअी नहीं था। सिर्फ झरमर झरमर पानी बरसने लगा था और पूज्य महात्माजी पर पानीकी बूंदें गिरने लगी थीं। मैंने तुरन्त बरामदेमें सोअी हुअी कुसुमबहन देसाअीको जगाया और हम दोनोंने महात्माजीकी खाट अंदर कर दी। फिर मैंने अपनी खाट भी अन्दर की। फिर भी मुझे आश्चर्य होता रहा कि यह चेतावनी मुझे किसने दी होगी? स्वप्न तो था ही नहीं। मुझे तमाचा लगा था और शब्द भी मैंने साफ सुने थे।

चौथा अनुभव आश्रममें आनेके बाद पूज्य महात्माजीने मुझे ग्यारह व्रतोंकी दीक्षा दी। अुसमें ब्रह्मचर्यका सहायक अस्वाद-व्रत भी लेनेके लिअे अुन्होंने कहा। मुझमें मैं सिर्फ आश्रममें ही अिन व्रतोंका पालन करती थी, बाहर नहीं। लेकिन १९३३ में आश्रमका विसर्जन करके पूज्य महात्माजीने हम आश्रमवासियोंसे कहा, "अबसे तुम लोग अपने अपने साथ जंगम आश्रम लेकर ही घूमना और आश्रम-व्रतोंको कभी न छोड़ना।" तब मैंने देखा कि आजाद होने तक सारे व्रत पालनेकी प्रतिज्ञा की, और आजादीके बाद वे व्रत मेरा स्वभाव बन गये अिसलिअे आगे भी चलाये। अनुभवके आधार पर मुझे कहना है कि किसी भी व्रतकी अपेक्षा अस्वाद-व्रत मुझे अधिक सरल लगा। पीढ़ियोंसे चला आया अपना आहार छोड़कर अस्वाद-व्रतका आहार स्वीकार करनेमें मुझे जरा भी कठिनाअी मालूम नहीं हुअी। शरीर, वाणी और मनसे मुझे जरा भी क्लेश नहीं हुआ और न कोअी विशेष प्रयत्न करनेकी जरूरत मालूम हुअी। पूज्य महात्माजीको भी यह देखकर अचरज होता था और अुन्होंने अनेक बार मेरे सामने और दूसरे आश्रमवासियोंके सामने अुसे व्यक्त किया था। मुझमें कभी कभी स्वप्नमें मैं मिठाअी वगैरा खाती थी। लेकिन जैसा अेक दो बार होनेके बाद स्वप्नमें भी मुझे अिसका भान रहने लगा कि क्या चीज खानी चाहिये और क्या नहीं खानी चाहिये। मुझे स्वयं भी आश्चर्य-सा लगा करता था कि यह व्रत मेरे लिअे अितना सहज कैसे बन गया।

अिस तरह अपने ये चार अनुभव मैंने श्री गुळवणीजीको कह सुनाये।

श्री गुळवणी बोले, "आपको समाधिका जो स्वप्न आया वह स्वप्न नहीं, सच्चा अनुभव है। समाधि अैसी ही होती है। अुस अनुभवको और आपके दूसरे अनुभवोंको देखते हुअे यह स्पष्ट दिखाअी देता है कि अपने पूर्वजन्ममें आपने योगाभ्यास किया होगा। वह अधूरा रहा, अिसलिअे अिस जन्ममें आपको अुसे पूरा करना होगा। आप प्रवृत्ति-मार्गमें अितनी फंस गअी हैं कि आपमें रजोगुणकी बहुत बड़ी वृद्धि हो गअी है। अिसलिअे आपका अब प्रवृत्ति-मार्गसे निवृत्त होना आवश्यक है। अब अेकान्त स्थल पर जाअिये और दो तीन घंटे तक पलथी मारकर स्थिर बैठना सीख लीजिये। यही आपका पहला पाठ है। अुस समय कुछ भी नहीं करना चाहिये।

केवल शान्त और स्थिर बैठी रहें। अिस तरह दो तीन घंटे बैठ सकेंगी तो आपका आसन स्थिर हो जायगा। मनको स्थिर करनेके लिअे प्राणायाम कीजिये। लेकिन अभी लंबे समय तक नहीं। आरम्भमें थोड़े मिनिट तक करें और फिर धीरे धीरे समय बढ़ायें।" अैसा कहकर अुन्होंने मुझे प्राणायाम करनेका तरीका बताया।

श्री गुळवणी द्वारा किया हुआ अपने अनुभवोंका स्पष्टीकरण मुझे जचा। अस्वाद-व्रतके बारेमें मुझे भी कभी कभी लगता था कि, "बहुत संभव है अपने पिछले जन्ममें मैंने अुसका अभ्यास किया होगा, जो अिस जन्ममें सफल हुआ दिखता है।" मेरे दूसरे अनुभवोंके बारेमें तो अुनका बताया हुआ कारण ही सन्तोष देने जैसा था।

मुझे अेकान्त स्थान पर जाकर योग-साधना करनेके लिअे श्री गुळवणीने कहा। परन्तु अैसा स्थान कहां मिले? सासवडके आश्रममें अेकान्त असंभव ही था। पास ही विद्यालय था और अुससे सम्बन्धित प्रवृत्तियां थीं, जिनके साथ मेरा ९ वर्षका निकट सम्बन्ध था। अिसके सिवा, आश्रममें शंकररावजी आते तब वे भी अपने साथ बहुतसी प्रवृत्तियां ले आते थे। मेरा आज तकका जीवन सार्वजनिक था और आसपासके सब लोग अुसके आदी हो गये थे। अिसलिअे वहां शान्ति और अेकान्त मिल नहीं सकता था। तब अैसा स्थान कहां खोजूं?

और, वर्षोंसे अन्तरमें रही अेक अुत्कट अिच्छा अूपर आअी, अुसने अुत्तर दिया, "हिमालयकी गोदमें!"

अुस पवित्र स्मरणसे मनमें अुल्लास पैदा हुआ और मैंने श्री गुळवणीसे पूछा, "मैं हिमालयमें जाकर रहूं और अभ्यास करूं तो?"

"तब तो अत्यन्त सुन्दर! योगाभ्यासके लिअे हिमालयसे अधिक अनुकूल जगह और कहीं है ही नहीं। फिर, आप अपने कार्यक्षेत्रसे जितनी दूर चली जायं अुतना ही आपको लाभ होगा।"

मुझे भी अैसा ही लगा। सन्त ज्ञानेश्वरकी यह अुक्ति याद आअी:

व्याधाहातोनि सुटला। विहंगम जैसा॥

व्याधके हाथसे छूटा हुआ पक्षी जैसे पूरा जोर लगाकर दौड़ता है, अुड़ जाता है, वैसे ही हमें भी करना चाहिये।

फिर हिमालयकी सुविधाओंके बारेमें तथा अन्य अिधर-अुधरकी बातें हुआीं और मैं अुनसे विदा लेकर वापस सासवड़ आअी।

श्री हरिभाअूको यह बात अच्छी नहीं लगी। प्रौढ़ अुमरमें मेरे जीवनमें अैसा मोड़ आये यह अुन्हें कुछ भयावह लगा। वे मुझे समझाने लगे लेकिन मेरा तो निश्चय ही हो गया था। अिसलिअे मैं अुनकी दलीलें सुननेको तैयार नहीं हुआी।

मैं सासवड़ वापस आअी तब कस्तूरबा ट्रस्टका जुड़ा हुआ अेक काम बाकी था। विद्यालयकी अेक छात्राने गम्भीर भूलें की थीं। "सच बता देगी तो अपराध माफ कर दिये जायंगे, नहीं तो मुझे प्रायश्चित्त करना पड़ेगा"—अैसा मैंने अुससे कहा था, फिर भी वह तीन बार झूठ बोली। अिसलिअे मुझे त्यागपत्र देनेसे पहले प्रायश्चित्त करना था। लेकिन प्रतिनिधियोंका वार्षिक सम्मेलन पास आ गया था, अिसलिअे अुस मौके पर अुपवास स्थगित कर दिया था। अब पूनासे आनेके बाद प्रायश्चित्तके लिअे मैंने चार दिनका अुपवास किया। अिस बीच मैंने हिमालय जानेके बारेमें चिन्तन भी खूब किया।

मुझे लगा कि मेरा किया हुआ निश्चय पूज्य महात्माजीके अुपदेशसे अलग जाता है। अुन्हें हिमालय जाकर तपस्या करनेकी कल्पना पसन्द नहीं थी। वे जनसेवा पर ही जोर देते थे। अुनका अुपदेश अमलमें लानेमें मैंने कभी आलस्य नहीं किया था। अपनी सारी शक्ति लगाकर जनसेवा करनेका प्रयत्न किया था। लेकिन मैं असफल रही, अुसका क्या हो? सत्याग्रह आश्रममें जो हुआ वही सासवड़में हुआ। संस्थाके संचालनके लिअे मैं अयोग्य हूं। फिर मुझे बाहर काम क्या करना चाहिये? अथवा मेरी कार्य-पद्धतिमें दोष होगा। प्रत्येक काम निर्दोष हो, अैसा मैं आग्रह रखती हूं। अुससे भी काममें दोष पैदा होता होगा। चाहे जो हो, लेकिन यदि अैसे ही चलाती जाअूं तो मेरा कचूमर निकले बिना न रहेगा।

पूज्य महात्माजीके पास मैं पहली बार आअी थी, तब मनमें निश्चय किया था कि देशकी आजादीके लिअे यही सेवाकी पद्धति अुचित है। वे तो अपना कार्य करके गये। अब देशके 'विकास' का काम शुरू हुआ है। जिस कामका कभी अन्त ही नहीं आनेवाला है। तब मैं कब तक अिस

कामका अेक अंग बनकर रहूं? फिर, आज जिस दिशामें चक्र घूम रहे हैं वह पूज्य महात्माजीकी बताओी हुओी दिशा तो नहीं है। अुलटे, अधिकतर बातोंमें अुनके दिये हुअे मार्गदर्शनसे अुलटी दिशामें ही सरकार और अुसकी प्रेरणासे लोग चलते हैं। मैं तो तुच्छ मानव ठहरी। अिस धांधलीमें मुझे नहीं पड़ना है। अब मार्गदर्शनके लिअे पूज्य महात्माजी नहीं हैं। मैंने अपना जीवन अुन्हें अर्पण किया था और अुन्होंने अन्त तक वह अैसा ही रहे यह आशीर्वाद दिया था। अब मार्गदर्शन करनेकी जिम्मेदारी अुनकी है। मैं तो अब भगवानकी शरणमें ही जाअूंगी, जिनके पास व पहुंच हैं। भगवानकी अिच्छा होगी वैसा होगा!

अिस तरह चिन्तन करते हुअे चार दिन बीते। २३ को मेरा अुपवास छूटा। रातको स्वप्न आया।

पूज्य महात्माजीका दर्शन हुआ। वे अेक कमरेमें बैठे थे। लोगोंका आना जाना चालू था। वे अब जीवित नहीं हैं, अैसा भान मुझे स्वप्नमें नहीं था। पहलेकी तरह वे अिस दुनियामें ही हैं, अैसी मनकी भावना थी।

अुनके साथ बातचीत करनेका मौका मिला तो मैंने पूछा, "महात्माजी, पहलेके और आजके भारतमें आपको क्या फर्क दिखाओी देता है?"

अुन्होंने पूछा, "पहलेके भारतसे तुम्हारा क्या मतलब है?"

मैंने कहा, "पहलेका यानी सन् १९३० में आप दांडी-कूच पर गये थे अुस समयके अिस देशके लोगोंमें और आजके लोगोंमें आपको क्या फर्क दिखाओी देता है?"

मुझे स्वप्नमें भी लग रहा था कि आन्तर-राष्ट्रीय शान्तिके लिअे भारत द्वारा किये गये सफल प्रयत्नका और पंचवर्षीय योजना जैसे सिद्ध किये हुअे रचनात्मक कार्यक्रमका विचार करके पूज्य महात्माजी गौरवपूर्ण शब्द कहेंगे।

लेकिन वे स्मित हास्य करते हुअे बोले, "आजके लोगोंमें hypocricy (दंभ) बढ़ गया है।"

मुझे लगा कि मैंने ठीकसे सुना नहीं होगा। अिसलिअे दुबारा मैंने वही प्रश्न पूछा। अुन्होंने फिर वही अुत्तर दिया। तीसरी बार वही प्रश्न मैंने किया और तीसरी बार भी वही अुत्तर मिला!!

मैं जागी तब मुझे विस्मय हुआ। संयोगवश अुसी दिन मुझे किसी कारणवश श्री मोरारजीभाअीको पत्र लिखना था। अुसमें मैंने अपने स्वप्नकी बात लिखी।

अुत्तरमें अुन्होंने लिखा, "स्वप्नकी बात पर कितना जोर दें यह कहना मुश्किल है। मनुष्यके आन्तर मनमें अनेक प्रक्रियाअें चलती रहती हैं। अुनका प्रतिबिम्ब स्वप्नमें पड़ना सम्भव है। लेकिन यह प्रतिबिम्ब मनुष्यके सच्चे मनका व्यक्त नहीं कर सकता। गांधीजीके प्रति आपकी भक्तिके कारण वे आपके स्वप्नमें आये। क्या अैसा हम नहीं कह सकते कि आपके प्रश्नका अुन्होंने जो अुत्तर दिया, वह आपके मनके भीतरकी ही बात व्यक्त करता है? देशमें और दुनियामें होनेवाले परिवर्तन अनेक कारणोंसे होते हैं। जगत विकास करता है या अुसकी अधोगति होती है, यह कहना भी कठिन है। हम शुभदर्शी रहकर समाजके हितके लिअे मेहनत करनेमें विश्वास करते हैं, अिसलिअे हमारे लोग ज्यादा 'हिपोक्रेट' हो गये हैं अैसा हम कैसे कह सकते हैं? अलबत्ता, अिस प्रश्न पर पत्र द्वारा चर्चा करना कठिन है।" आदि।

श्री मोरारजीभाअी वस्तुनिष्ठ राजनीतिक पुरुष ठहरे, अिसलिअे अुनकी दृष्टिमें स्वप्नकी ज्यादा कीमत नहीं हो सकती। लेकिन मुझे तो स्वप्नमें संकेत मिला ही करता था। अगर समाजमें दंभ बढ़ा हो तो भी मैं अुसी समाजका अंग हूं, अिसलिअे मेरे भीतर भी दंभ बढ़ा ही होगा, जिसमें मुझे शंका करनेका कारण नहीं था। अिसलिअे शुद्धिके लिअे तपश्चर्या ही अेकमात्र अुपाय था और वह अुपाय पहलेकी तरह सार्वजनिक सेवाकार्योंकी जिम्मेदारी सिर पर लेकर नहीं, लेकिन सर्वथा मुक्त रहकर नत-मस्तक होकर अीश्वरकी शरणमें जाकर ही करनेकी जरूरत थी। विकासके शिखर पर चढ़ना हो तो सिर पर बोझ रखकर कैसे चढ़ा जा सकता है? समाजरूपी शिवकी सेवा करनेके लिअे पहले हमें शिव बनना चाहिये। 'शिवो भूत्वा शिवं यजेत्।' अयोग्य सेवक या सेविकासे समाजका भला नहीं होता, नुकसान होता है। सेविकाका भी अुससे अधःपतन होता है।

अैसे विचार मनमें आये और अेकान्तमें जाकर तपस्या करनेका मेरा निश्चय अधिक दृढ़ हुआ।

जनवरीके अन्तिम सप्ताहमें श्री शकररावजीकी षष्ठिपूर्तिका समारोह था। आश्रममें ही होनेवाला था। वह पूरा हुआ अुसके बाद मैंने अपना भविष्यका कार्यक्रम अुन्हे और दूसरे स्नेहियोको बताया, यद्यपि लोगोने अलग अलग राय जाहिर की। थोडे लोगोको ही मेरी यह बात पसन्द आयी, ज्यादातरको नही आयी। शकररावजीको दुख हुआ। मेरी कर्म-प्रवण वृत्तिको छोडकर मैं 'सन्यास' लू, यह कल्पना ही अुन्हे असह्य लगी। फिर महाराष्ट्रसे दूर, बिलकुल देशकी सरहद्द पर जाकर मैं गुफामें बैठी रहू, यह चीज भी अुन्हे अच्छी नही लगी। लेकिन मुझे तो अिस कर्म-प्रवण जीवनके प्रति प्रबल वैराग्य अुत्पन्न हो गया था। वे समझाने लगे, "सासवडके आश्रममे रहनेकी अिच्छा न हो तो महाराष्ट्रमें ही कोअी अेकान्त स्थल मैं ढूढ दूगा, लेकिन आप अितनी दूर मत जाअिये।" हिमालय जानेकी बात करना जितना सरल है अुतना वहा बसना सरल नही है। मेरी अुमर अुस समय ४९ वर्षकी थी। अैसी अुमरमें अेकाअेक नया ही प्रयोग जीवनमें करनेका निश्चय खतरनाक है, हिमालयमें सब कुछ अज्ञात है, वगैरा दलीलें वे देने लगे। लेकिन मैंने अुनकी अेक भी बात नही मानी। स्वामी रामदासके शब्दामें कहू तो 'देह पडे का देव जोडे' *(या तो देह नष्ट होगी, या भगवान मिलेगा।)* अैसी टेक पर मन आ टिका था।

निराश होकर शकररावजी मुझे स्वामी आनन्द[1], श्री मायजी और

---

१ स्वामी आनन्द मूल बडौदाके निवासी है। बचपनमें अुनकी प्राथमिक शिक्षा मराठी स्कूलमे शुरू हुअी। औश्वरकी खोजमें छोटी आयुमें घर छोडकर वे भागे और अनेक बाबा-बैरागियोके सहवासमें ठेठ हिमालय तक पहुचे। बहुत घूमे, लेकिन औश्वर-दर्शनकी अिच्छा पूरी नही हुअी। फिर सौभाग्यसे रामकृष्ण मिशनके साथ अुनका सबध हुआ और कलकत्ताके बेलूर मठमें रहकर अुन्होंने बगला और अग्रेजी भाषाओका ज्ञान प्राप्त किया, शिक्षा पूरी की और सन्यासकी दीक्षा ली तब अुन्हे स्वामी आनन्दकी अुपाधि मिली। युवावस्थामें वे पूज्य महात्माजीके पास पहुचे और अुनके मार्गदर्शनमें सेवाकार्य किया। पिछले कुछ वर्षोसे वे वर्षमें आठ महीने हिमालयके कौसानी गावमें बिताते है।

श्री कृष्णमूर्ति[1] से मिलाने ले गये। अुन्हें आशा थी कि ये सज्जन मुझे समझायेंगे। श्री कृष्णमूर्ति तो त्याग और वैराग्यके विरुद्ध ही हैं। लेकिन स्वामी आनन्दने कहा, "अिन्हें तीव्र अुत्कंठा हुअी है तो अिन्हें जाने दीजिये। मैं मानता हूं कि छह महीने हिमालयमें रहकर अिन्हें शान्ति मिलेगी और ये वापस लौट आयेंगी। न आयें और वहीं शांति मिले तो भले वहीं रहें। लेकिन जहां तक मैं सोचता हूं छह महीने बाद अिन्हें वहां रहनेकी जरूरत नहीं होगी।" वहांकी जानकारी देते हुअे स्वामीने मुझसे कहा, "मैं हिमालयके पेटमें कौसानीमें रहता हूं। छह महीने बाद आप मुझसे मिलने आअिये। बादमें हम आगेका कार्यक्रम बनायेंगे।" फिर हम नायजीसे मिलने गये। अुन्होंने भी स्वामी आनन्दकी सलाहका समर्थन किया। अिस तरह मेरा निश्चय हो गया।

शंकररावजीके आग्रहसे १८ मार्च, १९५५ तक मैं आश्रममें रही। अुस दिन सबसे विदा लेकर मैंने आश्रम छोड़ा। शंकररावजीके साथ मैं पुरी गअी। वहां सर्वोदय सम्मेलनमें भाग लिया। फिर नअी दिल्ली जाकर पहली अप्रैलको वहांसे हरद्वार गअी। शंकररावजी साथ ही थे। मेरे मनमें जरा भी शंका नहीं थी कि यह सब भगवानका वरदान है। वहां भी मुझे किसी तरहकी कठिनाअी नहीं हुअी। सब कुछ अिस तरह होता गया जैसे भगवानने पहलेसे योजना बना रखी हो। पुरीमें श्री सुरेन्द्रजी मिले थे। अुन्होंने कहा कि "हृषीकेशमें पशुलोकके संचालक हमारे पारनेरकरजी हैं। अुन्हें आप मिलिये। वहां कुछ मदद मिलेगी।" वैसा ही हुआ। शंकररावजीके साथ मैं पारनेरकरजीसे मिलने गअी। मेरा मानस देखकर वे कहने लगे, "मुझे लगता है, आप यहां पशुलोकमें ही

१ स्व० श्री अेनी बेसेंटके मानस पुत्र। वे जगद्गुरु होंगे अैसी भविष्य-वाणी श्रीमती बेसेन्टने की थी, अिसलिअे कृष्णमूर्तिको बचपनमें विलायत भेजकर अूंचीसे अूंची शिक्षा देनेकी व्यवस्था की गअी थी। आगे जाकर थियॉसॉफिकल सोसायटीके छह लाख सदस्योंने अुन्हें अपने सद्गुरुके रूपमें स्वीकार किया। लेकिन कृष्णमूर्तिने स्वयं अुस पदको तोड़ डाला और स्वेच्छासे अज्ञात-वास पसन्द किया। आज दुनियाके विरले आध्यात्मिक शिक्षकोंमें अुनकी गिनती होती है।

रहिये। मैं आपको पूरी मदद दूगा। यहासे आप हिमालयकी यात्रा भी कर सकती है।" पशुलोक हृषीकेशसे तीन मील दूर है। हिमालयकी तलहटीमें है। गगाजीके किनारे बसा हुआ है। अेकान्त, शान्ति और अरण्य — जितनी अनुकूलता, अुस पर पारनेरकरजी जैसे सत्याग्रह-आश्रमके मेरे पुराने साथी। जिससे ज्यादा और क्या चाहिये!

शकररावजीको भी यह बात पसन्द आओी। परिचितामें रहनेका मौका मिला जिससे वे चिन्तामुक्त हो गये। हम दोनो अुत्तरकाशी गये और चार दिन वहा रहकर वापस पशुलोक आये। वहा चार दिन रहकर शकररावजी १४ अप्रैलकी रातको दिल्लीके लिअे रवाना हुअे। पारनेरकरजीने मुझे अेक सुन्दर झोपडी रहनेको दी। अुनकी अपनी झोपडी पास ही थी। सुन्दर बगीचेके बीच थोडे थोडे अन्तर पर दो चार झोपडिया बनाओी गओी थी, जिससे पडोस और अेकान्त दोनोका लाभ मिलता था। वहा रहनेवाले कार्यकर्ता सारे दिन काममें व्यस्त रहते थे, सफरमें न हो तब दूर दफ्तरमें काम करने जाते थे। रातको खाने और सोनेके लिअे झोपडीमें आते थे। मुझे पूर्ण अेकान्त मिलता था। रहनेके लिअे आवश्यक चीजें मिल गओी थी। पारनेरकरजीने मेरी बहुत मदद की। सरकारी कामके लिअे वे गगोत्री गये तब मैं भी अुनके साथ गओी। जिसके बाद केदारनाथ, तुगनाथ और बदरीनारायणकी यात्रा मैंने स्वतत्र रूपसे दो परिचित भाभियोके साथ की।

तप्त और अुदास मनको प्रसन्न और शान्त करनेके लिअे हिमालय जैसा कोओी स्थान नही है। अुसके भव्य और दिव्य दर्शनसे मनुष्यका मानस-परिवर्तन हुअे बिना रहता ही नही। हिमालयकी गोदमें घूमते समय अैसा अनुभव हुअे बिना नही रहता कि हम अेक नओी ही दुनियामें हैं। पुरानी दुनिया पीछे रह जाती है। मुझे तो वह याद भी नही आती थी। हिमालयकी दुनिया ही सत्य लगती थी। वहा मैं अपना सारा दुख भूल गओी।

गगोत्रीका प्रदेश बहुत ही रमणीय और पवित्र है। वहा तपस्या करनेवाले साधक और सिद्ध रहते हैं, अैसा मैंने पहलेसे सुन रखा था।

वहां अेक सिद्धयोगीके और तीन चार साधकोंके दर्शन हुअे। अुन सिद्ध-योगीकी आयु ९० वर्षकी होगी, अैसा लोग कहते थे। लेकिन आश्चर्यकी बात यह थी कि १०,००० फुटकी अूंचाओवाले गंगोत्रीके प्रदेशमें वे योगी नग्नावस्थामें रहते थे! अुनके कपड़े ओढ़कर मिलने गये हुअे हम लोग सरदीसे कांपते थे, लेकिन अुन नग्न योगीके शरीरके रोअें भी खड़े नहीं होते थे! वे सीधे तनकर बैठे थे और अुनके चेहरेका गाम्भीर्य सहज लगता था। अुनका नाम कृष्णाश्रम था। पास ही अेक शिष्या थी। वह तीस वर्षसे अुनकी सेवा करती थी। पहाड़ी होने पर भी संस्कारवान मालूम हुआी। स्वामीजी मौनव्रती हैं, बोलते नहीं, लेकिन अगर अुत्तर देनेका अुनका मन हो तो अिशारेसे या अुंगलीसे लिखकर प्रश्नोंके अुत्तर देते हैं। पारलेरकरजी और दूसरे मित्रोंके साथ मैं गओी तब वहां अितनी शान्ति थी कि हम भी अेकदम शान्त हो गये। कोओी बोले नहीं! अुस शिष्याने ही हमें बिठाया और फिर वही मध्यस्थ बनकर स्वामीके अिशारोंका अर्थ हमें समझाने लगी।

स्वामी कृष्णाश्रम योगकी अंतिम भूमिका तक पहुंचे हैं, अैसी जान-कारी वहांके दूसरे साधकोंने हमें दी थी। अिसलिअे अुनसे मार्गदर्शन लेनेको मैं अुत्कंठित थी। लेकिन वे बोलते नहीं थे। शिष्याकी सम्मति लेकर मैंने ही आरम्भ किया। मेरी भूमिका अुन्हें बताकर मार्गदर्शन मांगा।

स्वामीने कहा, "प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों अलग अलग मार्ग हैं। प्रवृत्ति-मार्गसे ओीश्वर-प्राप्ति हो सकती है, लेकिन क्रमशः होगी; जब कि निवृत्ति-मार्गसे मनुष्य सीधे ओीश्वर तक पहुंचता है। तुम्हारा पिंड कर्म-प्रवण है। अिसलिअे तुम कुछ समय निवृत्तिमें बिताना। साधना करना। भगवानकी कृपा प्राप्त करना। फिर अपने क्षेत्रमें प्रवेश करना।"

मैंने और भी कओी प्रश्न पूछे, जिनका अुन्होंने अुत्तर दिया। अुनका अधिकार तो दिखाओी देता ही था। गंगोत्रीमें रहते हुअे मैं अुनसे दो बार मिली। मुझे खूब आनन्द हुआ। जाते समय अुनके चरण-स्पर्श करके मैंने आशीर्वादकी याचना की। अुन्होंने सिर हिलाया और मैं वापस आओी। शिष्यासे खबर मिली कि स्व० पंडित मदनमोहन मालवीयजी

स्वामीजीको बहुत मानते थे और अुनके आग्रहके वश होकर स्वामीजी अेक बार हिन्दू युनिवर्सिटीमें जाकर तीन दिन रहे थे। अिसके बाद वे फिर हिमालयसे नीचे नहीं अुतरे और बारहों महीने गंगोत्रीमें ही रहते हैं।

मेरी साधनाके लिअे यह शुभ शकुन हुआ, अैसा मैंने माना।

पशुलोकमें १६ अप्रैल, १९५५ को मेरी साधना शुरू हुअी, जो २५ जनवरी, १९५६ तक चली। अिस बीच मैं तीन बार यात्रा कर आअी: (१) गंगोत्री, (२) केदार-बदरी और (३) कौसानी। साधनामें मार्गदर्शन करनेवाला भगवान ही था। मैंने अष्टांग-योग और भक्तियोगका परिशीलन और अभ्यास किया। मैंने देखा कि वाचन, चिन्तन और अभ्यास करते करते आगेका रास्ता अपने आप मालूम हो जाता है। अिसके सिवा, हमारी कल्पना भी न हो अैसी रीतिसे और अैसे अवसर पर अतर्क्य रूपमें सहायता और मार्गदर्शन भी मिल जाता है। मुझे वहां साधनामें किसी तरहकी मुसीबत नहीं आअी। दयाघन भगवानने कअी दिव्य अनुभव भी कराये, जिससे मेरी श्रद्धा बढ़ गअी।

प्रतीति मिलनेसे विश्वास हुआ कि योगमार्ग या भक्तिमार्गमें मिलनेवाले जिन अनुभवोंके वर्णन साधकोंने लिख रखे हैं, वे सब बिलकुल सच्चे हैं। दोनों मार्ग सच्चे हैं। केवल बुद्धि पर आधारित तर्क करनेसे कुछ भी हाथ नहीं आता। अुस अुस मार्गका शास्त्रोक्त अभ्यास करनेसे अुसके सत्यकी प्रतीति होती है। अिसलिअे अिन प्राचीन मार्गोंके बारेमें अब कोअी कितना ही विरोधी तर्क करे और बुद्धियुक्तिके नाच करके दिखाये, तो भी मेरे मन पर अुसका कोअी असर होनेवाला नहीं है। क्योंकि अब प्रतीतिके बादका ज्ञान मुझे हुआ है। पहले तो केवल श्रद्धा ही थी।

सितम्बरमें मैं कौसानी गअी। पूज्य महात्माजीने वर्षों पहले वहीं रहकर 'अनासक्तियोग' लिखा था। कौसानीमें लक्ष्मी-आश्रम नामकी पहाड़ी कन्याओंकी अेक संस्था है। वहां मैं तीन हफ्ते तक रही। स्वामी आनन्दसे मिली। मेरी साधनाका वर्णन सुन लेनेके बाद अुन्होंने कहा,

"मुझे लगता है कि आप योग्य मार्ग पर चल रही हैं और आपकी प्रगति होती दिखाई देती है।" बादमें शंकररावजी भी ५-६ दिन वहां आकर रह गये। इसके बाद मैं पत्नुलोक आयी। साधना चालू ही रही। अनुभव होने लगे। दिसम्बरमें शंकररावजी कुछ मित्रोंके साथ वहां आये। मेरा काम ठीक चल रहा था। अब यदि सागरड़ जाकर रहूं और वहां ओकान्तकी अनुकूलता मिले, तो साधना आगे चलानेमें कठिनाई नहीं होगी, ऐसा विचार मनमें पैदा हुआ और ईश्वरकी इच्छानुसार १० जनवरी, १९५६ को मैं यहां सागरड़ आश्रममें आ पहुंची।

हिमालय आते समय मनमें किये हुओ अधिकतर संकल्प पूरे हो गये थे। ओक ही बाकी था। वह सागरड़ आश्रममें पूरा हो गया तब तक ओकान्त-सेवन और साधना करनेका मैंने निर्णय किया था और शंकररावजी तथा दूसरे स्नेहीजनोंसे कह रखा था। साधना शुरू हुओ अब लगभग साढ़े चार वर्ष हो चुके थे। यहां भी भगवानकी कृपासे कुछ प्रसाद मिल गया; फिर भी संकल्प पूरा नहीं हुआ, अिसलिओ साधना चालू रहेगी।

हिमालयमें क्या और यहां क्या, निरपवाद ओकान्त तो मिलता ही नहीं। लोगोंके साथ थोड़ा-बहुत संबंध तो रहा ही है। सहज सेवा जितनी हो जाय अुतनी करती हूं। लेकिन किसी तरहकी जिम्मेदारी नहीं लेती। मन मुक्त रहना चाहिये। तभी वह ओकाग्रता साधता है। मनको ठिकाने लाना हो तो अुसे क्षोभ हो ऐसी परिस्थिति पैदा न होने देनेके लिओ जाग्रत रहना पड़ता है। अिसलिओ स्वाभाविक रूपमें ही जन-संबंध पर अंकुश रखना पड़ता है। दूसरे, मैंने यह भी देखा कि साधकके लिओ मौन लाभदायी सिद्ध होता है। बकबक करनेसे या अधिक समय तक बोलनेसे चित्त चंचल होता है।

व्यर्थ बल्गना बहु न करावी। साधक जीवें॥
अरि स्वल्पशिल योगी व्हावें॥

साधक मनुष्यको व्यर्थ बकबक नहीं करनी चाहिये, यदि वह योगी होना चाहता हो।

ध्यानयोग, कर्मयोग या भक्तियोग, सभी तरहके योगोंमे यह नियम अनिवार्य है।

पद्मुलोकमें मैं श्री तब श्री गुळवणीके साथ मेरा पत्रव्यवहार चलता ही था। यहा आनेके बाद कभी कभी अुनसे मिल भी लेती हू, यद्यपि अब लगभग बाअी वर्ष हुअे, मैं क्षेत्र-सन्यास लेकर यहीं बैठी हू। दूर सफरमें जाती ही नही, पूना भी कभी कभी ही जाती हू।

सन् १९५७ में श्री गुळवणी ७५ वर्षके हुअे तब पूनामें अुनका अमृत-महोत्सव ७ दिन तक चला था। तब मुझे मालूम हुआ कि वे महाराष्ट्रमें प्रसिद्ध हैं और अुनका शिष्य-परिवार भी बडा है।

*

अिस साधनामय जीवनसे मुझे बहुत शान्ति मिली है, फिर भी अमुक वस्तु मिली है अैसा नही कहा जा सकता। छोटे बालकका धीरे धीरे बडा पुरुष होता है, अकुरमें से वृक्ष बनता है, अुसी तरह आध्यात्मिक प्रगति वृद्धि पाती है। वह सहज होनी चाहिये। अुसका माप, हिसाब या विवरण नहीं दिया जा सकता। लेकिन अभ्यास और चिन्तनके बाद मैंने यह देख लिया है कि आध्यात्मिक या दिव्य अनुभव प्राप्त करना अेक वस्तु है और अपने स्वभाव-दोष सुधारना दूसरी वस्तु है।

सदृश चेष्टते स्वस्या प्रकृते ज्ञानवानपि।

ज्ञानी मनुष्य भी प्रकृतिवश होता है। योगी अथवा भक्त अेकसे स्वभावके नही होते। सब अपनी अपनी प्रकृतिका अनुसरण करते हैं। तपश्चर्याका बहुत बडा सामर्थ्य रखनेवाले ऋषि मुनि क्रोध, अीर्ष्या आदि विकारोसे मुक्त नही थे, अैसा हम पढते हैं। अिसलिअे अपने स्वभाव-दोष बदलनेके लिअे विशेष तपस्याकी ही जरूरत होती है। रावण किसी भी समय भगवान शकरके दर्शन कर सकता था और तपस्यासे अुसने तीनो लोकोका राज्य प्राप्त किया था। फिर भी अुसने परस्त्रीका हरण किया ही, अपने विकारोको वह वशमें नही रख सका। अेक और भी कारण है। आत्म-साक्षात्कार अिन सब प्रकारकी साधनाओकी अतिम परिणति,

अंतिम फल है। अुसके बिना अस्मिता — देहभावना नहीं मिटती। और जब तक देहभावना है तब तक भेद अर्थात् रागद्वेष रहता ही है। अभेद अर्थात् 'वासुदेव. सर्वमिति' भावना अन्तरमें दृढ़ होनी चाहिये। तभी मनुष्य 'परा शान्ति' प्राप्त करता है।

अिस अवस्थाका जीवनमें क्या अुपयोग है? कोअी व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार या जीवन्मुक्ति प्राप्त करे अिससे समाजको क्या लाभ? समाजको मुक्ति न मिले, अुसका अुद्धार न हो, तब तक व्यक्तिका स्वार्थ साधनेमें क्या लाभ? अुसकी कीमत भी क्या हो सकती है? अिस तरहके अनेक प्रश्न अुठेंगे। आजकल 'समाजके लिये व्यक्ति' की पुकार चारों ओर मची हुअी है और समाजवादी राज्य स्थापित करनेके स्वप्न दुनियाके सभी राज्य देख रहे हैं। अुद्धारका अर्थ लोग अलग अलग तरहसे करते होंगे। आध्यात्मिक दृष्टिसे जगतका अुद्धार तो परमेश्वर ही कर सकता है, मनुष्य नहीं कर सकते। साधक अथवा सेवक नम्र होकर व्यक्तिमात्रमें तो क्या, भूतमात्रमें रहनेवाले अीश्वरको देखकर अुसकी पूजा और सेवा ही करता है और अुसके द्वारा अपनी चित्तशुद्धि कर लेता है। समाजका अुद्धार करनेवाले अवतारी पुरुषोंको भगवान भेजता है। यह काम हमारा नहीं है। हमें तो भगवानकी सेवा ही करनी चाहिये। जिस रूपमें भगवान सामने आता है अुसी रूपमें अुसे पहचानकर शक्तिभर अुसकी सेवा करनी चाहिये। जब हम अपना ही अुद्धार नहीं कर सकते, तब समाजका अुद्धार कैसे कर सकेंगे?

आश्रमके बगीचेमें हरे चपाका अेक पेड़ है। बहुत बार अुसमें फूल खिलते हैं। अुनकी सुगन्धसे हवा महकती रहती है, लेकिन फूल ढूढ़ने जाअू तो बहुत प्रयत्न करने पर भी वे नहीं मिलते। मुझे लगता है कि सच्चे सेवकका यही आदर्श है। कोनेमें रहकर सुगध फैलने देना चाहिये। किसीकी जानकारीमें नहीं आना चाहिये। भगवानकी भक्ति करना चाहिये। अैसी सेवा करते हुअे अीश्वरको अुसके हाथसे ज्यादा सेवा लेनी होगी तो वह लेगा, लेकिन वह सहज रूपसे विकास पायेगी। कलीमें से फूल कैसे खिला अिसकी किसीको जानकारी नहीं होती, सेवकको तो कभी भी नहीं होती। माके पेटमें बालक पैदा होता है तभीसे माता अुसकी सेवा

करती है, वह सेवा बालक बढकर बडा पुरुष होता है तब तक चलती है। वह सेवा सहज होती है। अुसकी जानकारी किसीको नहीं होती — न देनेवालेको होती है, न लेनेवालेको होती है और न आसपासके लोक-समाजको होती है। समाजसेवा भी अिसी तरीकेसे होनी चाहिये। मनुष्य स्वाभाविक रूपमें ही समाजमें रहना पसन्द करता है। अेकाकी रहना अुसके लिअे लगभग असभव बात होती है। समाजकी सुव्यवस्थाका लाभ वह अुठाता है, अिसलिअे अुस व्यवस्थामें शान्ति बनी रहे, कलह अथवा हीन सस्कृति अुत्पन्न न हो, अिसके लिअे यत्नशील रहना अुसका स्वधर्म बन जाता है। सेवा स्वधर्मसे अलग नहीं होती।

लेकिन स्वधर्म क्या है? समाजकी आजकी सकर-अवस्थामें स्वधर्म या धर्मका ज्ञान प्राप्त करना कठिन हो गया है।

भगवान मनुने कहा है

विद्वद्भि सेवित सद्भिर् नित्यम् अद्वेषरागिभि ।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धमस् त निबोधत ।।

विद्वान, सन्त और रागद्वेषसे मुक्त वीतराग सज्जनोंने जिसका सेवन किया है और जिसे हृदय मान लेता है वही धर्म है। अुसे जान लो।

यह परिभाषा जिनको पूरी तरह लागू हो सके अैसे धर्माचार्य आज कहा हैं? आज समाजको धर्म नहीं सिखाया जाता, कानून दिये जाते हैं। सेवाधर्मकी दीक्षा नहीं दी जाती, सेवाके लिअे तरह तरहके राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सगठन निर्माण करके अुनके द्वारा सचालक, व्यवस्थापक, योजक और नेतागण लोगोंकी शक्ति खर्च कर डालते हैं। राज्यकर्ता लोग (सरकार) भी अिसी कोटिके माने जायग। प्राचीन कालमें समाजको कानून नहीं परन्तु धर्म दिया जाता था। भगवान व्यासने पुकार पुकार कर कहा है कि, "मानवोंके दो पुरुषार्थ — अर्थ और काम — धर्मके आधार पर ही प्राप्त करने चाहिये। धर्मके बिना दोनों भया-वह हैं।"

अुस सार्वभौम धर्मका ज्ञान प्राप्त करनेके लिअे महर्षिगण भगवान मनुके पास गये और अुन्होंने भगवान मनुसे धर्मकी व्याख्या करनेकी प्रार्थना की।

मनुम् अेकाग्रम् आसीनम् अभिगम्य महर्षयः।
प्रतिपूज्य यथान्यायम् अिदं वचनम् अब्रुवन् ॥१॥
भगवन्! सर्ववर्णानां यथावद् अनुपूर्वशः।
अन्तरप्रभवाणां च धर्मान् नो वक्तुमर्हसि ॥२॥
त्वम् अेको ह्यस्य सर्वस्य विधानस्य स्वयंभुवः।
अचिन्त्यस्याप्रमेयस्य कार्यतत्त्वार्थविद् प्रभो! ॥३॥

अेक बार महर्षि लोग अेकाग्रचित्त होकर भगवान मनुके पास गये और विधिके अनुसार परस्पर शिष्टाचार होनेके बाद कहने लगे, "भगवन्, सब वर्णोंका धर्म यथाक्रम और सम्पूर्ण रूपमें हमें बतानेके लिअे आप ही अेकमात्र योग्य हैं। कारण, आप स्वयम्भू हैं, और अचिन्त्य और अप्रमेय निखिल वेदोंका कार्य और अुनका प्रतिपाद्य विषय अिन दोनोंका अर्थ-ज्ञान आपको ही है।"

समाजके लिअे धर्म-प्रतिपादन करनेवालेका यह अधिकार था। आज अलग अलग मतदान-विभागोंमें बहुमत प्राप्त करके लोकसभा अथवा विधान-सभामें चुनकर जानेवाले सैकड़ों सदस्योंकी धर्म-प्रतिपादन या 'कानून-प्रतिपादन' सम्बन्धी योग्यताका समर्थन कौन कर सकेगा?

कानून धर्म नहीं है। कानूनमें अधर्म प्रवेश कर सकता है। लेकिन मान लीजिये कि प्रजाके कल्याणके लिअे ही सारे कानून बनाये जाते हैं। लेकिन जहां रागद्वेषके लिअे अनुकूल क्षेत्र है (दलीय राजनीतिके सम्बन्धमें), जहां सत्ता ही सर्वोपरि लक्ष्य है, जहां कानून बनानेवाले खुद ही आपसमें झगड़ा-फसाद करते हैं, गाली-गलौज करते हैं, चप्पलोंका अुपयोग करते हैं, मारपीट करते हैं, वहां अैसे लोग प्रजाके लिअे अनुशासन किस तरह बना सकते हैं? अगर काजी स्वयं ही अपराध करने लगे तो वह दूसरोंका न्याय कैसे करेगा? कानूनकी प्रतिष्ठाकी रक्षा अुसे पुस्तकोंमें लिखनेसे नहीं होती। पूज्य महात्माजीकी अेक बार कही हुअी बात सोलह आने सच्ची है: "धर्मके बिना राजनीति भयानक है!"

काम और अर्थ अिन दो पुरुषार्थोंमें कामकी अपेक्षा अर्थ अधिक भयावह लगता है। क्योंकि आजकी दुनियामें अर्थका मूल्य सर्वोपरि माना

जाता है। युद्ध भी अर्थके लिअे ही होते हैं। कामका अधिक मूल्य होता तो सीता-हरणके कारण हुअे राम-रावण-युद्धकी पुनरावृत्ति आज भी कभी बार हो जाती। पुराने जमानेमें भी अैसे युद्ध कभी कभी ही हुअे हैं। अिसीलिअे महाभारतमें कहा गया है. 'अर्थस्य पुरुषो दास.।'

अिस विवेचनका अर्थ अितना ही सिद्ध करना है कि सगठित संस्था, जिसमें स्थूल अनुशासनको स्थान है, धर्म अथवा सेवाके लिअे सच्ची पथप्रदर्शक नही हो सकती। अुपसहारमें भगवान मनु कहते हैं:

अव्रतानाममन्त्राणा जातिमात्रोपजीविनाम्।
सहस्रश समेताना परिषत्त्व न विद्यते॥

ब्रह्मचर्यादि व्रत न पालनेवाले, वेदाध्ययनशून्य, केवल जाति पर निर्वाह करनेवाले ('हम ब्राह्मण हैं' यह कहकर) हजारो मनुष्य अिकट्ठे हों, तो भी अुनकी परिषद नही कहलायेगी।

य वदन्ति तमोभूता मूर्खा धर्मम् अतद्विद।
तत् पाप शतधा भूत्वा तद्वक्तॄन् अनुगच्छति॥

तमोगुणसे व्याप्त, धर्मको न जाननेवाले मूर्ख लोग यदि धर्मका निर्णय करने लगेंगे, तो पाप करनेवालेका पाप सौगुना बढ़कर गलत निर्णय देनेवालोंके सिर पर आ पडेगा।

मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि आजके जमानेमें राजनीति या दूसरे क्षेत्रोंमें सज्जन, धर्मनिष्ठ मनुष्य नही हैं। लेकिन पद्धतिमें और दृष्टिमें दोष है, यह प्रमाण-ग्रंथके वचन अुद्धृत करके मैंने बताया है।

अध्यात्मकी दृष्टि 'व्यवहार' की दृष्टिसे अलग होती है। जीवनमें देहको अग्रस्थान दिया जाय या आत्माको — यह प्रश्न है। व्यवहारमें देहको अग्रस्थान दिया जाता है। आत्माकी अुपेक्षा न हो तो भी अुसे गौण स्थान तो मिलता ही है। परिणामस्वरूप सभी प्रयत्न देहका सुख बढानेके लिअे होते हैं। जिनका फल है असुख और असतोष। अगर आत्माको अग्रस्थान मिले तो देहकी अुपेक्षा न हो, परन्तु आत्माकी प्राप्तिके लिअे देह साधन बन जायगी; और अुसकी मर्यादामें अुसे स्थान मिलेगा।

जिनमिसे सारे व्यवहार, योजना, ध्येय धर्मके आधार पर गढ़े होंगे। अर्थात् मानव-जातिका कल्याण करनेकी दृष्टिसे होंगे। जीवनमें संयम, अहिंसा, सत्य, श्रम, दानशीलता, निर्भयता आदि दैवी सम्पत्तिका विकास देखनेमें आयेगा।

सार्वजनिक सेवाकार्यके बारेमें भी यही नियम लागू होता है। जिस संस्थाके मार्गदर्शक धर्मबल और तपोबल रखनेवाले दीर्घदर्शी सत्पुरुष होते हैं, अनके द्वारा काम करनेवाले सेवकोंकी नैतिक अुन्नति और चरित्र-वृद्धि हुअे बिना नहीं रहेगी। जिसके विपरीत, जहां विषमताकी भावना, सत्ताका अभिमान और दलबंदी महत्त्व होता है, वहां सेवा भौतिक लाभका साधन बन जाती है। अुसमें चित्तशुद्धि नहीं होती। समाजमें साम्य अुत्पन्न नहीं होता।

सेवाके द्वारा अपना स्वार्थ या अैहिक लाभ प्राप्त करनेका लोभ महापातक माना जाना चाहिये। अपने लाभके लिअे सेवा करनेवालेका जीवन-विकास नहीं होता। चित्तशुद्धिका अर्थ यह है कि अुससे मनुष्यका मन विशाल होता जाता है। मानव-जातिमें अुसे भगवानका साक्षात्कार होता है। अुसके भीतर भक्तिकी अुमंग अुठती है। समय बीतने पर सेवा अुसका सहज स्वभाव हो जाता है। चित्तमें क्लेशका मैल कभी भी पैदा नहीं होता। अुस व्यक्तिके सहवासमें आनेवाले सब लोग प्रसन्न-चित्त हो जाते हैं। अुनको छूत लगनेसे वे भी भक्ति-परायण और श्रद्धालु बन जाते हैं।

तुज मनें कोअी वैष्णव थाजे, तो तु वैष्णव साचो;
तारा सगनो रंग न लागे, त्यां लगी तु काचो।[1]

यह है सच्चे सेवक या सेविकाकी कसौटी!!

*

अैसे विचार मनमें आया करते हैं। नवविधा भक्तिमें अंतिम भक्ति आत्म-निवेदन है। समर्थ रामदास स्वामी लिखते हैं:

---

१. तेरे संगमें कोअी वैष्णव बन जाय तो तू सच्चा वैष्णव है। तेरे संगका किसीको रंग न लगे वहां तक तू कच्चा ही है।

मी भक्त' अैसें म्हणावे। आणि विभक्तपणेंचि भजावे॥

"' मैं भक्त हूं यह कहना चाहिये और विभक्त होकर ही भगवानको भजना चाहिये।" यह आश्चर्यजनक लगता है, लेकिन अनुभवसे समझमें आता है।

अैसी अुच्च अवस्था तक पहुंचनेके बाद "सेवा' कोअी अलग वस्तु नहीं रहती। लेकिन हमारे जैसे सामान्य मनुष्योंके लिअे भूतमात्रमें भगवानको देखकर भक्तिपूर्वक अुनकी सेवा करनेका आदर्श ही योग्य है। शुभ संकल्पोंका दाता भगवान होता ही है। शांतिका शाश्वत और अेकमात्र स्थान भी वही है। पूज्य महात्माजीने अेक बार मुझसे कहा था, "हमें सेवाकी योग्यता प्राप्त करनी चाहिये। भगवान मौका देगा ही।" अुनके अिस कथनका पालन मैंने आज तक यथाशक्ति किया है और अिसकी सत्यता अनुभवसे जान ली है।

*

आज गांधी-जयन्तीका पुण्य अवसर है। मन अुनके अवतार-कार्यका चिन्तन करता है।

महाराष्ट्रमें चार सौ वर्ष पहले श्री अेकनाथ महाराज नामके महात्मा हुअे हैं। श्रीमद् भागवतके ग्यारहवें स्कन्ध पर अुन्होंने महान टीकाग्रंथ लिखा है। अुसे 'अेकनाथी भागवत' कहते हैं। महाराष्ट्रमें ज्ञानेश्वरीके बाद अिस ग्रंथका महत्त्व माना जाता है। अिस ग्रन्थमें ३१ अध्याय हैं। अंतिम अध्यायमें भगवान श्रीकृष्णके निर्वाणका वर्णन है। अुसे पढते समय भक्त-हृदय अश्रुमोचन किये बिना रह ही नहीं सकता, अैसा हृदयंगम वर्णन वह है। साधना-कालमें अिस ग्रन्थका मैंने तीन बार वाचन और चिंतन किया और हर बार मुझे अुसमें नवीनता ही मालूम हुअी है। ग्रन्थके तीसवें अध्यायके अुपसंहारमें श्री अेकनाथ महाराज भगवान श्रीकृष्णके अवतार-कार्यका सार कहते हैं

अजन्मा तो जन्म मिरवी। विदेहत्वें देहपदवी।
स्वयें अक्षयी तो मरण दावी। अैसा यादवी श्रीकृष्ण॥

जो अजन्मा है वह जन्म दिखाता है, जो विदेह है वह देहकी उपाधि लगा लेता है, जो स्वयं अक्षय है वह मरण दिखाता है। भगवान श्रीकृष्ण बड़े नटवर हैं।

> अेकादशाचा कळस जाण। श्रीकृष्णाचें निजनिर्याण।
> जेथ नाहीं देहाभिमान। तें ब्रह्म पूर्ण परिपक्व ॥

भगवान श्रीकृष्णके निजनिर्याणको ग्यारहवें स्कन्धका कलश मानना चाहिये। जिसमें देहाभिमान नहीं है वह पूर्ण परिपक्व ब्रह्म है।

> भय नाहीं जन्म धरितां। भय नाहीं देहीं वर्ततां।
> भय नाहीं देह त्यागितां। हे ब्रह्मपरिपूर्णता हरि दावी ॥

जन्म लेनेमें भय नहीं है। देहमें रहनेमें भय नहीं है। देहका त्याग करनेमें भय नहीं है। अैसी ब्रह्मपरिपूर्णता भगवान श्रीकृष्ण बताते हैं।

मुझे लगता है कि यह अंतिम ओवी पूज्य महात्माजीके अवतार-कार्यका भी दिग्दर्शन करती है।

> भय नाहीं जन्म धरितां। भय नाहीं देहीं वर्ततां।
> भय नाहीं देह त्यागितां। हे ब्रह्मपरिपूर्णता हरि दावी ॥

•

अिकतीसवें अध्यायमें भगवानका स्वेच्छासे किया हुआ निर्याण वर्णित है।

मूल संस्कृत श्लोक यह है—

> लोकाभिरामां स्वतनुं धारणाध्यानमंगलाम्।
> योगधारणयाऽऽग्नेय्याऽदग्ध्वा धामाविशत्स्वकम् ॥

अिस श्लोक पर सन्त अेकनाथ महाराजकी टीका अिस प्रकार है:

> घृत थिजले विघुरले। तेंवि सगुण निर्गुणत्वा आलें।
> या नांव योगाग्निधारण बोलें। कृष्णें देह दाहिलें हें कदा न घडे ॥

जैसे जमा हुआ घी पिघलता है वैसे ही सगुण ब्रह्मने निर्गुणत्वको प्राप्त किया; अिसीको योगाग्नि-धारण कहा जाता है। कृष्णने अपनी देह जला डाली, यह कभी हो ही नहीं सकता।

> कृष्णें देहो नेला ना त्यागिला। तो लीलाविग्रहें सचला।
> भक्तध्यानीं प्रतिष्ठिला। स्वयें गेला निजधामा॥

कृष्णने देह न तो धारण की, न अुसका त्याग किया। वह लीला-देह सब जगह ओतप्रोत हो गयी। भक्तोंके ध्यानमें अुसकी प्रतिष्ठापना करके भगवान स्वयं निजधामको पधारे।

*

मेरा मन कहता है, "३१ जनवरी, १९४८ की शामको मैं नअी दिल्लीमें राजघाट पर थी। पूज्य महात्माजीके पार्थिव शरीरको वहां चंदन-काष्ठकी चिता पर जलकर भस्म होते मैंने अपनी आंखोंसे देखा। अुस पवित्र चिताभस्मका थोड़ासा अंश अिस आश्रममें अेक डिब्बीमें सुरक्षित रख छोड़ा है। अब पूज्य महात्माजी विश्वरूप हो गये हैं!"

वहां हृदयके अेक छोटेसे कोनेमें मृदु निनाद गुंजन करता है, "नहीं, नहीं, पूज्य महात्माजीकी सगुण विभूति भी अक्षय है!! अमर है!!!"

*

लेखनमें खंड हुआ। परन्तु जीवन-प्रवाह अखंड है!

मेरे अिस साधना-कालमें बाहरकी सारी प्रवृत्तियां मैंने छोड़ दी हैं। लेखन-प्रवृत्ति भी बन्द ही थी। अेकाग्रतामें विक्षेप डालनेवाला कोअी भी काम करनेकी मेरी अिच्छा नहीं होती थी। लेकिन अिस लेखनका निमित्त मेरा हाथ हुआ है, फिर भी प्रेरणा अुसकी है। अुसकी अिच्छानुसार सब हो गया है। अेकाग्रता भी वही है। विक्षेप भी वही है। अुसे ढककर रखनेवाली अुसीकी शक्ति 'माया' है! वह प्रगट होती है तब वही शक्ति अुसकी 'लीला' बन जाती है!!

मन श्री तुकाराम महाराजके पवित्र वचनसे अिसकी समाप्ति करती हूं :

> आपुलिया बळें नाही मी बोलत।
> सखा भगवंत वाचा त्याची ॥१॥
> साळुंकी मंजुळ बोलतसे वाणी।
> शिकविता धणी वेगळाची ॥२॥
> काय म्या पामरें बोलावी अुत्तरें।
> परि त्या विश्वंभरें बोलविलें ॥३॥
> तुका म्हणे त्याची कोण जाणे कळा।
> चालवी पांगळा पायाविण ॥४॥

मैं अपनी शक्तिके बल पर नहीं बोलता। भगवान मेरा सखा है, अुसकी यह वाचा है। मैना मंजुल वाणी बोलती है, अुसे सिखानेवाला स्वामी कोअी और ही है। मैं पामर क्या वचन बोलूं? लेकिन अुस विश्वंभर भगवानने मुझे बोलनेको प्रेरित किया। तुकाराम कहता है, अुसकी कलाको कौन जान सकता है? वह लंगड़ेको बिना पैरोंसे चलाता है।!

ॐ तत्सत् ब्रह्मार्पणमस्तु।

हमारे कुछ महत्त्वके प्रकाशन

	रु.न.पै.
अहिंसक समाजवादकी ओर	१.००
आरोग्यकी कुंजी	०.४४
खादी	२.००
गांवोंकी मददमें	०.४०
गीताका संदेश	०.३०
पंचायत राज	०.३०
मंगल-प्रभात	०.३७
मेरे सपनोंका भारत	२.५०
विद्यार्थियोंसे	२.००
विश्वशांतिका अहिंसक मार्ग	०.४०
सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा	१.५०
सत्य ही ओश्वर है	०.८०
सर्वोदय	२.००
स्त्रियां और अुनकी समस्यायें	१.००
हमारे गांवोंका पुनर्निर्माण	१.५०
हिन्द स्वराज्य	०.७०
सरदार पटेलके भाषण	५.००
विचार-दर्शन — १	१.५०
विचार-दर्शन — २	१.५०
सरदार वल्लभभाओ — भाग १	६.००
सरदार वल्लभभाओ — भाग २	५.००

अुस पारके पड़ोसी	३.५०
जीवन-गीता	३.००
सूर्योदयका देश	२.५०
स्मरण-यात्रा	३.५०
हिमालयकी यात्रा	२.००
गांधी और साम्यवाद	१.२५
गीता-मंथन	३.००
जड़मूलसे क्रान्ति	१.५०
तालीमकी बुनियादें	२.००
संसार और धर्म	२.५०
स्त्री-पुरुष-मर्यादा	१.३१
अेकला चलो रे	२.००
बा और बापूकी शीतल छायामें	२.५०
बिहारकी कौमी आगमें	३.००
[illegible] अेकमात्र मार्ग	२.००
अैसे थे बापू	१.००
गांधीजी और गुरुदेव	०.८०
गांधीजीकी साधना	३.००
ठक्करबापा (जीवन-चरित्र)	३.००
बापू — मैंने क्या देखा, क्या समझा?	२.५०
हमारी बा	२.००

डाकखर्च अलग

नवजीवन ट्रस्ट,
अहमदाबाद-१४